CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नाट्यकल्पद्रुम

माणि माधव चाक्यार

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

संगीत नाटक अकादेमी

दिल्ली

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नाट्यकल्पद्रुम

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नाट्यकल्पद्रुम

केरल की कूटियाट्टम् नाट्यकला की रूपरेखा

माणि माधव चाक्यार

अनुवाद
पी॰ के॰ गोविन्दन् नम्बियार

सम्पादिका
प्रेमलता शर्मा

संगीत नाटक अकादेमी
दिल्ली

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

© संगीत नाटक अकादेमी

प्रथम संस्करण : फरवरी, १९९६

मूल्य : ३००.०० (तीन सौ रुपये मात्र)

मुद्रक : तारा प्रिंटिंग वर्क्स, कमच्छा, वाराणसी-१०

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सम्पादकीय भूमिका

मार्च १९९५ में दिल्ली में हुए विशाल कूटियाट्टम् महोत्सव की तैयारी के दौरान ऐसी सम्भावना उठी कि प्रो. अय्यप्पा पणिक्कर द्वारा सम्पादित कूटियाट्टम् के विभिन्न पक्षों पर लेखों के संग्रह के साथ-साथ स्व. आचार्य माणि-माधव चाक्यार के संस्कृत-मलियालम् ग्रन्थ नाट्यकल्पद्रुम के— उन्हीं के सुपुत्र श्री पी.के. गोविन्दन् नम्बियार द्वारा कृत— हिन्दी अनुवाद का भी प्रकाशन इसी महोत्सव के अवसर पर हो सके तो अच्छा रहे। यह हिन्दी अनुवाद प्रो. कमलेशदत्त त्रिपाठी के पास कुछ वर्षों से पड़ा था। श्री नम्बियार ने अनुवाद की भाषा के संशोधन और प्रकाशन की व्यवस्था के लिये इस की मूल प्रतिलिपि त्रिपाठीजी के पास छोड़ दी थी। मेरे विशेष अनुरोध पर त्रिपाठीजी ने दो-तीन सप्ताह के भीतर इस की स्वच्छ प्रतिलिपि बनवा कर १२ फरवरी ९५ को मुझे सौंप दी। मैं ने उसे सम्पादित प्रतिलिपि मान कर तत्काल प्रेस को सौंप दिया। पहले प्रूफ़ का कुछ अंश सामने आने पर यह स्पष्ट हुआ कि—

१— सम्पादन का अधिकांश कार्य होना शेष है, जो प्रूफ़ में ही करना होगा।

२— मलयालम अंशों का संशोधन श्री नम्बियार की सहायता बिना असम्भव है। इस का सङ्केत त्रिपाठीजी ने किया भी था।

मार्च के आरम्भ में नम्बियार जी को तार भेजा गया और वे १६ मार्च को वाराणसी पहुँच भी गये। अब तक यह स्पष्ट हो चुका था कि कूटियाट्टम् समारोह के समय इस ग्रन्थ का प्रकाशन असम्भव है। श्री नम्बियार जी के साथ बैठ कर पूरे एक सप्ताह तक यथाशक्य प्रूफ़-संशोधन के साथ-साथ अनुवाद तथा मलयालम-अंशों का संशोधन किया गया। बाद में पूरे मलयालम अंशों का श्री के. शशिकुमार द्वारा पुनः संशोधन कराया गया।

प्रस्तुत ग्रन्थ और ग्रन्थकार

स्व. माणि माधव चाक्यार न केवल कूटियाट्टम् के कुशल प्रयोक्ता एवं समर्थ गुरु थे, अपितु इस के 'ज्ञान' और 'विज्ञान' दोनों से विभूषित होने के कारण 'आचार्य' पद के अधिकारी थे। आप का जीवनवृत्त इसी संस्करण में अन्यत्र दिया गया है। प्रयोग-कौशल के साथ-साथ चिन्तन और लक्षण को निबद्ध करने की क्षमता (इन सब) का एकत्र समावेश अत्यन्त विरल होता है। हमारे ग्रन्थकार इस कोटि के थे, वर्तमान पीढ़ी के समक्ष भी ऐसी समर्थ रचना वे कर गये, यह हम सब का सौभाग्य है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रारम्भ में ही जो मङ्गल-श्लोक दिये गये हैं उन से ग्रन्थकार की रचना-प्रौढि का परिचय होता है। फिर पाणिनि के 'आदर्श' (नमूने) पर रचित संज्ञा और परिभाषा प्रकरण से भी उन का प्रगल्भ पाण्डित्य झलकता है।

संस्कृत के जिन लक्षण-ग्रन्थों में से उन्होंने उद्धरण दिये हैं उन में प्रमुख है हस्तलक्षणदीपिका। रस-सम्बन्धी कुछ उद्धरण तो नाट्यशास्त्र से हैं जिन का संकेत हम ने कर दिया है। किन्तु अन्यों का सन्दर्भ खोजना हमारे लिये सम्भव नहीं हो पाया।

लक्षण-ग्रन्थों की निरूपण-शैली में वाचिक परम्परा का पुट देने की हमारे आचार्य की शैली अनुपम है। विशेष रूप से नेत्राभिनय के प्रसङ्ग में जो श्लोक उन्होंने उद्धृत किये हैं, उन के अनुवाद में प्राणायाम की प्रक्रिया का उल्लेख बार-बार "पुतलियों में हवा भर कर" इस प्रकार के वाक्यांशों द्वारा किया गया है। यह बात मूल श्लोकों में नहीं है। इस प्रकार नेत्राभिनय-सम्बन्धी वाचिक परम्परा को 'निबद्ध' करने का यह प्रयास स्तुत्य है। नेत्राभिनय-सम्बन्धी संस्कृत श्लोकों का मूल स्रोत भी ज्ञात नहीं हो सका। नम्बियारजी भी इस पर कोई प्रकाश नहीं डाल सके।

ग्रन्थकार का संक्षिप्त जीवनवृत्त नम्बियारजी ने अंग्रेजी भाषा में हमें दिया था। उस का हिन्दी अनुवाद नीचे प्रस्तुत है —

पेरिङ्ङोल्लूर ग्राम का प्राचीन थलिप्परम्बा मन्दिर वह स्थल था जहाँ संस्कृत नाटकों का प्रस्तुति-क्रम कूटियाट्टम् की प्राचीन परम्परा के अनुसार बनाया जाता था। पेरिङ्ङोल्लूर ग्राम के चाक्यार परिवार को राजकीय आदेश के अनुसार इन नाटकों की प्रस्तुति, निर्देशन एवं अभिनय का कार्य-भार प्राप्त था। श्री माणि माधव चाक्यार इसी परम्परागत चाक्यार परिवार में १८९९ में श्री विष्णु शर्मा एवं श्रीमती सावित्री इल्लोत्तमा के पुत्र के रूप में उत्पन्न हुए। जिस लम्बे वंशानुक्रम में अनेक सर्जनशील कलाकार हो चुके थे, जिन्होंने कूटियाट्टम् की कला में विशिष्ट योगदान किया था, उस वंश में उत्पन्न होने के कारण श्री माधव चाक्यार को बाल्यकाल से ही इस कला में गहरी रुचि थी। माणि परमेश्वर चाक्यार, नीलकण्ठ चाक्यार और नारायण चाक्यार उन के कुछ पूर्ववर्ती आचार्यों के उज्ज्वल नाम थे, जो कि आप के पारिवारिक गुरुजन थे, और उन्हीं से आप का कूटियाट्टम् में प्रारम्भिक शिक्षण हुआ।

इसी बीच माधव चाक्यार ने दो प्रकाण्ड पण्डितों से संस्कृत का अध्ययन किया— एक श्री पी. एम्. शङ्करन् नम्बूदरीपाद और दूसरे कोचीन के महाराजा श्री राम वर्मा परीक्षित्।

श्री माधव चाक्यार का कठोर तपश्चर्यापूर्ण प्रशिक्षण छह वर्ष की आयु से चौदह वर्ष की आयु तक हुआ। तब उनका प्रथम प्रयोग त्रिक्कैकुन्नु ग्राम के शिवमन्दिर में

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

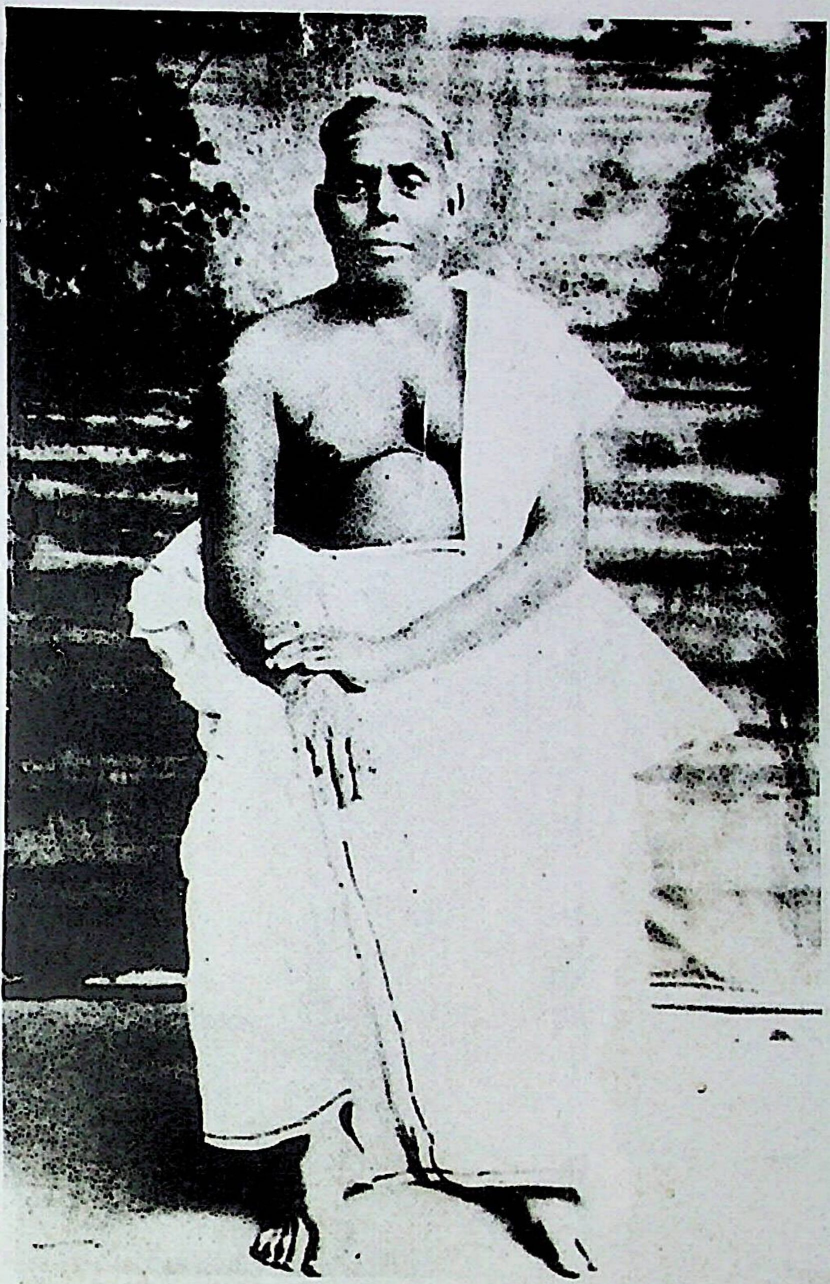

परीक्षित् तम्बूरन् (श्रीराम वर्मा)
(ग्रन्थकार के गुरु)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पेश्नेदथ माणक्कल शङ्करन् नम्बूदरीपाद
(ग्रन्थकार के गुरु)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हुआ। आप ने उस समय अशोकवनिकाङ्क के 'चित्रयोधि' का अभिनय किया था। इस प्रथम रङ्गावतरण के बाद भी आप की साधना दो वर्ष तक अनवरत चलती रही। इसमें नेत्राभ्यास भी सम्मिलित था। सम्भवतः इसी कठोर साधना के कारण ही माधव चाक्यार नेत्राभिनय के अप्रतिम प्रयोक्ता बन सके।

श्री माधव चाक्यार नेत्राभिनय के आचार्य के रूप में केरल कलामण्डलम् में नियुक्त हुए। इस संस्था की स्थापना महाकवि वलाथोल् ने तभी की थी। श्री केलू नायर, श्री कलामण्डलम् माधवन्, श्री अनन्त सीतारामन् और श्री जयशङ्करन्, जो उस समय आप के शिष्य थे, बाद में विख्यात नर्तक बने। श्री माधव चाक्यार ने पद्मश्री कलामण्डलम् कृष्णन् नायर (जो कि कथकली के अद्वितीय प्रयोक्ता बने) को भी प्रारम्भ में नेत्राभिनय सिखाया था।

कलामण्डलम् के बाद श्री माधव चाक्यार ने पी.एस्.वी. नाट्यसङ्गम, कोट्टक्कल, में प्रशिक्षण दिया, फिर 'गांधी-सेवा-सदन' कथकली-संस्थान, पेरूर में शिक्षक रहे, उसके बाद 'कथकली-योग' कडथनाड में शिक्षक रहे।

श्री माधव चाक्यार के अनेक शिष्य थे, जिन में प्रमुख आप के पुत्र हैं, श्री पी.के. नारायणन् नम्बियार, जो कूटियाट्टम् के अवनद्धवाद्य मिष़ाव के विशेषज्ञ हैं और श्री पी.के. गोविन्दन् नम्बियार जो कूटियाट्टम् और कूत्तु में प्रवीण हैं। अम्मानूर कोचुकुट्टन चाक्यार और उनके भतीजे दामोदरन् चाक्यार भी आप के जाने माने शिष्य हैं। पोलेंड के श्री क्रिस्टोफ़र ब्रिस्की प्रथम विदेशी सज्जन थे जिन्होंने आप से कूटियाट्टम् के बारे में ज्ञान प्राप्त किया।

सर्वप्रथम आप ही कूटियाट्टम् को केरल के बाहर ले गये। आकाशवाणी पर सर्वप्रथम कूत्तू का प्रसारण करने का श्रेय आप को ही जाता है। दूरदर्शन पर भी आप ही सर्वप्रथम कूटियाट्टम् को ले गये। दिल्ली, बम्बई और मद्रास के दूरदर्शन-केन्द्रों ने आप के प्रयोगों का प्रसारण किया। प्रारम्भ में कूटियाट्टम् का प्रयोग केवल मन्दिरों की रङ्गशालाओं में ही होता था। यद्यपि श्री माधव चाक्यार का परम्परा के प्रति आग्रह था, और अपनी कला को शुद्ध रूप में रखने में आप का अभिनिवेश था, फिर भी आप ने इस कला को मन्दिरों के बाहर कई स्थलों पर ले जाने का साहस किया। इस प्रकार वे इस कला को लोकप्रिय बनाने का माध्यम बने। आप ने कूटियाट्टम् पर विस्तार से लिखा है, और आप के ग्रन्थ 'नाट्यकल्पद्रुम' में इस कला का गम्भीर अध्ययन प्रस्तुत है।

कई समसामयिक पत्रिकाओं में भी आप के लेख प्रकाशित हुए हैं। आप की कुछ अन्य रचनायें भी अभी अप्रकाशित हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्री चाक्यार ने कई ऐसे नाटकों का पुनरुद्धार किया है जो कूटियाट्टम् की परम्परा में से लुप्त हो गये थे। इन में कालिदास का अभिज्ञानशाकुन्तल और भास का स्वप्नवासवदत्तम् शामिल हैं। कूत्तु में आप ने कई नये प्रबन्ध सम्मिलित किये हैं, जैसे कि कोचीन के महाराजा परीक्षित् का प्रह्लादचरितम्।

बाईस वर्ष की अवस्था में आप को क्रैङ्गन्नोर के भट्टराज की ओर से 'मुद्राङ्गुलीय' (अङ्गूठी) के रूप में प्रथम पुरस्कार मिला। चौबीस वर्ष की अवस्था में थलीप्परम्बमन्दिर से पहली 'वीरशृङ्खला' प्राप्त हुई। केन्द्रिय-सङ्गीतनाटक-अकादमी पुरस्कार १९६४ में प्राप्त हुआ। भारतसरकार की ओर से पद्मश्री १९७४ में, केरल-साहित्य-अकादमी पुरस्कार १९७६ में, केरल-संगीत नाटक अकादमी-रत्नसदस्यता १९७६ में, केन्द्रिय-संगीतनाटक-अकादमी-रत्नसदस्यता १९८२ में, केरल-कलामण्डलम्-रत्नसदस्यता १९८३ में, कालिदास अकादमी उज्जैन से रत्नसदस्यता १९८४ में, भारतसरकार की ओर से एमेरिटस फेलोशिप् १९८३ में, और अन्त में मध्यप्रदेश शासन की ओर से तुलसी-सम्मान—ये सब उन के अनेकानेक सम्मानों की शृङ्खला में आते हैं। 'नाट्याचार्य' और 'विदूषकरत्न' ये आप की दो अन्य उपाधियाँ हैं।

न्यूयार्क के 'पदरव्स्की'-फाउन्डेशन की ओर से आप को एक विशिष्ट योग्यता-प्रमाणपत्र मिला था। आपकी पत्नी श्रीमती कमलमाला नांगियारम्मा भी अभिनय में प्रवीण थीं और रङ्गमञ्च पर आप का साथ देती थीं। वे १९८० में दिवंगत हो गईं। आप का देहावसान सन् १९९१ में हुआ।

प्रस्तुत संस्करण की भूमिकायें

केरल कलामण्डलम् से १९७४ में प्रकाशित नाट्यकल्पद्रुम (मलयालम) में निम्नलिखित भूमिकायें थीं, जिन सब का हिन्दी अनुवाद हम ने इस संस्करण में सम्मिलित किया है। केवल सम्पादकीय भूमिका और अनुवादक-कृत भूमिका "कुछ अपनी" शीर्षक से, इस संस्करण में नई आई हैं। मलयालम संस्करण की भूमिका का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

१. श्री माणि माधव चाक्यार की भूमिका 'प्राक्कथन' शीर्षक से है।

इस में आचार्य ने कूटियाट्टम् के इतिहास पर प्रकाश डाला है, जिससे इस के बौद्ध मूल का सङ्केत मिलता है। बौद्ध धर्म के प्रचार में भी कुछ शताब्दियों तक इस नाट्यशैली का प्रयोग होता था, यह सङ्केत भी मननीय है।

२. प्रो. कुञ्जुन्नी राजा की भूमिका 'अवतरणिका' इस शीर्षक से है।

इस में कूटियाट्टम् के विवेचनात्मक विवरण के साथ-साथ इस प्रश्न को भी उठाया गया है कि कूटियाट्टम नाट्यशास्त्र की धारा के अन्तर्गत है या उस से स्वतन्त्र।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

३. श्री डी. अप्पुकुट्टन् नायर की भूमिका "आमुखोपन्यास" शीर्षक से है। यह अत्यन्त विस्तृत भूमिका है, जिसमें कूटियाट्टम् के सभी पक्षों पर अमूल्य जानकारी है। इसे लघु ग्रन्थ कहा जाय तो भी अत्युक्ति न होगी।

इस भूमिका से मूल ग्रन्थ के कथ्य की श्रीवृद्धि हुई है।

अनुवाद और अनुवादक

श्री, पी.के. गोविन्दन् नम्बियार स्वतन्त्रता आन्दोलन के समय हिन्दी-प्रचार-अभियान के अन्तर्गत हिन्दी का शिक्षण ले कर केरल में ही हिन्दी भाषा के शिक्षक बने और अपने पिता श्री माणि माधव चाक्यार के नाट्य-प्रयोगों में विदूषक की भूमिका में मलयालम के स्थान पर हिन्दी का प्रयोग सर्वप्रथम आपने ही आरम्भ किया। सन् १९८१ अक्टूबर में विश्व-संस्कृत परिषद् के त्रैवार्षिक अधिवेशन के अवसर पर वाराणसी में समस्त सांस्कृतिक आयोजनों का कार्यभार मुझे सौंपा गया था। इस के अन्तर्गत श्री माणि माधव चाक्यार द्वारा कूटियाट्टम् का प्रयोग रखा गया था, जिसमें विदूषक की भूमिका में श्री गोविन्दन् नम्बियार ने अभिनय किया था और उन के 'विदूषण-कर्म' की सभी ने भूरि-भूरि प्रशंसा की थी। आप ने अपने पिता का यह ग्रन्थ हिन्दी अनुवाद के माध्यम से समस्त हिन्दी जगत् को उपलब्ध कराया, इस के लिये आप साधुवाद के पात्र हैं।

अनुवाद में कई मलयालम शब्दों को उन का हिन्दी पर्याय दिये बिना जैसे का तैसा रख दिया गया है। नम्बियारजी ने जब प्रथम बार अनुवाद किया होगा तब ये अंश उन से छूट गये होंगे और मार्च ९५ में प्रूफ़ संशोधन के समय इन सब कमियों को सुधारने का उन के पास अवसर नहीं था। इस लिये इस अनुवाद को सम्पूर्ण नहीं कहा जा सकता। मलयालम तथा मणिप्रवाल (संस्कृत-मलयालम मिश्रित) के कई बड़े-बड़े अंश भी उन्होंने बिना अनुवाद के ही छोड़ दिये हैं। इस पर उनका ध्यान दिलाया गया तो उन्होंने कहा कि उन अंशों का अनुवाद बहुत कठिन है। इसलिये अनुवाद जिस भी स्थिति में है, उसी में उसे स्वीकार किये बिना गति नहीं है।

अनुवाद की भाषा में सुधार हम ने वहीं पर किया है जहाँ कि अर्थ का अनर्थ होने की आशङ्का थी। हिन्दी में से मलयालम् की छटा निकालने का प्रयास नहीं किया गया, क्योंकि हिन्दी का क्षेत्र बहुत विराट् है और उस में सभी भारतीय भाषाओं की छटायें समाहित होने से उस की श्री-वृद्धि ही होती है, हानि नहीं।

अनुवाद में कुछ विशेष प्रयोग आये हैं जो संभवत: मलयालम शैली के सीधे शब्दार्थ के रूप हैं, उन के कुछ दृष्टान्त यहाँ देना पाठकों के लिये उपयोगी हो सकता

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

है। जैसे — "संक्षिप्त किया जाता है" संक्षेप में वर्णन का अभिनय करने के अर्थ में, "आगे के कर्तव्य" सामने उपस्थित या प्राप्त कर्तव्यों के अर्थ में, 'हर्ष' की विशेष व्याख्या औत्सुक्य के अर्थ में, 'सुप्ति' का प्रयोग स्वप्न की जगह सुषुप्ति या बेहोशी के अर्थ में, 'प्रत्येक' शब्द विशिष्ट के अर्थ में; 'मरण' का भी कुछ भिन्न ही अर्थ के अभिनय के लिये प्रयोग है।

कूटियाट्टम् के अभिनय और सङ्गीत की प्रमुख विशेषतायें

देशभर की अन्य सभी पारम्परिक नाट्यविधाओं की तुलना में कूटियाट्टम् के अभिनय की दो विशेषतायें प्रमुख रूप से उभर कर सामने आती हैं, जो इस प्रकार हैं—

१. वाचिक अभिनय की न्यूनतम मात्रा। कभी-कभी तो अभिनेता स्वयं बोलता ही नहीं। अभिनय के एक अंश के पूरे हो जाने पर, नांगियारम्मा ही सम्बन्धित श्लोक का पाठ कर देती है। यह 'सूची' नामक अभिनय का उदाहरण है जिस में भावी वाक्यार्थ सूचित किया जाता है। रूपक से भिन्न प्रबन्ध की जो परम्परा है, जिसे प्रबन्ध-कूत्तू कहते हैं, उस में यह प्रकार विशेष रूप से आता है। वाचिक की मात्रा इतनी न्यून है कि एक घण्टे की प्रस्तुति में पाँच मिनट का वाचिक भी नहीं होता। आङ्गिक और सात्त्विक के द्वारा कला के विस्तार को समझने के लिये दर्शकों की भी पौराणिक परम्परा में अभिज्ञता अपेक्षित होती है।

२. 'मिड़ाव'-नामक अवनद्ध वाद्य के साथ अभिनेता के समस्त अङ्ग-सञ्चालन का अद्भुत ताल-मेल। मिड़ाव वादक अभिनेता के पीछे बैठते हैं अर्थात् उस की पीठ ही देख पाते हैं किन्तु उन के वादन के प्रत्येक प्रहार के साथ अभिनेता की उंगली या नेत्र तक का सञ्चालन कितना समन्वित रहता है यह देख कर आश्चर्य-चकित रह जाना पड़ता है। अभ्यास की यह चरम सिद्धि है।

प्रस्तुति की भाव-स्थिति के अनुरूप मिड़ाव पर कोमल और कठोर वादन हुआ करता है, जिस में कोमलता और कठोरता के अनेक स्तर सामने आते हैं।

'शृङ्गार-चेष्टायें' नाट्यशास्त्र से कुछ भिन्न रूप में वर्णित हैं, इन की संख्या भी यहाँ १८ दी गई है जबकि ना.शा. में २० है। इसी प्रकार 'भाव' की भी यहाँ भिन्न व्याख्या दी गई है।

अवनद्ध वाद्य मिड़ाव की विशेषता के अतिरिक्त संगीत की दृष्टि से दो-तीन अन्य बातें उल्लेखनीय हैं :—

१. स्वर और राग शब्द का पर्याय के रूप में उपयोग और दोनों का ही अर्थ स्वर-सन्निवेश-रूपी राग या धुन न हो कर 'काकु' की ओर अधिक झुकता है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२. मिष़ाव के अतिरिक्त एडका (हुडुक्का) का विशेष उपयोग। सुषिर वाद्यों में से शङ्ख तथा कुष़ल या कुरुंकुळ (छोटी तुरही) का उपयोग होता है।

तिमिला नामक अवनद्ध वाद्य भी कभी-कभी उपयोग में लिया जाता है। मंजीरा या तालम् तो निरन्तर बजता है।

३. आधार-स्वर के लिये कोई वाद्य नहीं रहता।

४. मिष़ाव के जिन बोलों का उल्लेख इस ग्रन्थ में तालों के प्रसङ्ग में हुआ है, उन का संगीतरत्नाकर के वाद्याध्याय में उल्लिखित वाद्यप्रबन्धों के पाटाक्षरों से सादृश्य चौंका देने वाला है। इस विषय पर अधिक अनुसन्धान अपेक्षित है।

रूपक और प्रबन्ध

कूटियाट्टम् की प्रस्तुति चुने हुए रूपकों पर तो होती ही है, रूपक से भिन्न प्रबन्धों पर भी होती है, जिसे प्रबन्धकूत्तू कहते हैं। विशेष पौराणिक प्रसङ्गों को ले कर रचे गये प्रबन्ध संस्कृत-पद्य-मय हैं। कभी-कभी एक पद्य को ले कर ही एक प्रस्तुति बन जाती है। उदाहरण के लिये - कैलासोद्धरणम् (रावण द्वारा कैलास उठाने का प्रसङ्ग) या पार्वतीविरहम् (गङ्गा को देख कर पार्वती की ईर्ष्या और शिव को छोड़ कर जाने की प्रवृत्ति, इतने में कैलास हिल जाने से पुनः शिव के समीप लौट आना)।

सामाजिक दृष्टि से यह तथ्य रोचक है कि कूटियाट्टम् में स्त्रीपात्रों का अभिनय स्त्रियाँ ही करती आई हैं। यह केरल की समाज-रचना की विशेषता है।

केरल की उच्चारणगत विशेषतायें

१. व्यञ्जनों के प्रत्येक वर्ग के प्रथम अक्षर को तृतीय अक्षर की भाँति बोला जाता है — जैसे क को ग, त को द, प को ब इत्यादि।

२. किसी भी शब्द के अन्त में आये हुए हलन्त त् का उच्चारण ल् की भांति होता है।

३. 'ळ' के सदृश किन्तु उस से कुछ भिन्न मलयालम की एक ध्वनि के लिये देवनागरी में 'ष़' संकेत केरल में बनाया गया है।

सम्पादकीय टिप्पणी

प्रस्तुत अनुवाद की निम्नलिखित न्यूनताओं का उल्लेख आवश्यक है।

१. सभी मलयालम अंशों का हिन्दी अनुवाद नहीं दिया जा सका। एक-आध स्थल पर तो श्रीनम्बियार से पूर्ति करा ली गयी, जैसे कि परिभाषा प्रकरण में, किन्तु

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सर्वत्र यह सम्भव नहीं हो सका, क्योंकि जितने दिन वे वाराणसी में रहे उन में संशोधन के अन्यान्य कार्य ही बहुत काल-सापेक्ष रहे।

२. अधिकांश संस्कृत उदाहरण-श्लोकों का भी हिन्दी अनुवाद नहीं है। प्रायः सभी श्लोक प्रसिद्ध हैं, किन्तु फिर भी हिन्दी अनुवाद देना सम्भव होता तो अच्छा होता। इस में नम्बियार की सहायता की आवश्यकता नहीं थी, किन्तु 'प्रूफ़' में इतना अधिक परिवर्तन करना न तो समय की दृष्टि से सम्भव था और न ही प्रेस की सुविधा के अनुकूल था।

३. उदाहरण-श्लोकों के सन्दर्भ कई स्थलों पर तो दे दिये गये हैं किन्तु कुछ स्थलों में यह सम्भव नहीं हो पाया है। एक-दो स्थलों पर तो पाण्डुलिपि में चूडामणि का सङ्केत था किन्तु वे श्लोक प्रकाशित आश्चर्यचूडामणि मे नहीं मिल पाये। उन स्थलों पर प्रश्नचिह्न लगा कर छोड़ दिया गया है।

ऊपर लिखी सभी त्रुटियों का मार्जन आगामी संस्करण में हो सकेगा ऐसी आशा है।

लक्षण-श्लोकों के सन्दर्भ के विषय में सम्पादकीय त्रुटियों का सङ्केत 'ग्रन्थ और ग्रन्थकार' शीर्षक के अन्तर्गत कर दिया गया है।

कृतज्ञता-प्रकाश

निम्नलिखित व्यक्ति हमारी हार्दिक कृतज्ञता के पात्र हैं:—

१. प्रो. कमलेशदत्त त्रिपाठी, जिन्होंने बड़ी तत्परता से मूल पाण्डुलिपि की स्वच्छ प्रतिलिपि बनवा कर दी।

२. डॉ. ऊर्मिला शर्मा, जिन्होंने प्रूफ़-संशोधन की जटिल प्रक्रिया में पूरी सहायता दी। इन की सहायता के लिये हम इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय कला-केन्द्र के प्रति आभारी हैं।

३. श्री के. शशिकुमार एवं उन की धर्मपत्नी सौ. प्रिया, जिन्होंने सम्पूर्ण मलयालम अंशों का पुनः निरीक्षण किया।

४. केरल कलामण्डलम्, जिन्होंने इस हिन्दी अनुवाद के प्रकाशन की अनुमति प्रदान की।

५. 'मार्गी', तिरुअनन्तपुरम्, जिन्होंने अपेक्षित चित्र तत्काल उपलब्ध कराए।

६. तारा प्रिंटिंग वर्क्स, कमच्छा, वाराणसी के अधिष्ठाता श्री रमाशङ्कर पण्ड्या तथा श्री रविप्रकाश पण्ड्या, जिन्होंने प्रूफ़ संशोधन की असामान्य स्थितियों को तथा विलम्ब को सहर्ष झेला और मुद्रण की सुचारु व्यवस्था की।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उपसंहार

केरल की परम्परागत नाट्य शैली कूटियाट्टम् के प्रति केरल के बाहर जानकारी, कुतूहल और आकर्षण का इतिहास तीस वर्ष से अधिक लम्बा नहीं है। संगीत नाटक अकादमी द्वारा मार्च, ९५ में दिल्ली में आयोजित विराट् कूटियाट्टम् महोत्सव ने इस प्रक्रिया को विशेष गति प्रदान की और स्वयं केरल के प्रयोक्ताओं में भी नवजीवन का सञ्चार किया। ठीक उस अवसर पर न सही, कूटियाट्टम् सम्बन्धी यह हिन्दी ग्रन्थ, उस के कुछ मास बाद प्रकाशित हो कर समग्र उत्तर-भारत में कूटियाट्टम् के प्रति जागृति लाने का उज्ज्वल साधन बनेगा, ऐसा विश्वास है। कूटियाट्टम् में नवजीवन का सञ्चार करने के संगीत-नाटक-अकादमी के प्रयासों की शृंखला में यह प्रकाशन एक सबल कड़ी बनेगा। एतदर्थ मैं संगीत-नाटक-अकादमी को बधाई देती हूँ। अकादमी की सचिव श्रीमती उषा मलिक और प्रकाशन के सहायक सचिव श्री अभिजित् चटर्जी के सहयोग का इस अवसर पर मैं साभार स्मरण करती हूँ। श्री जयन्त कस्तुआर, सहायक सचिव नृत्य, संगीत नाटक अकादमी भी धन्यवाद के पात्र हैं, जिन्होंने केरल कलामण्डलम् संस्करण में प्रकाशित चित्रों के समतुल्य चित्रों का चयन अकादमी के अपने चित्र-भण्डार में से तथा 'मार्गी', तिरुअनन्तपुरम् से प्राप्त किये गए चित्रों में से कर के दिया। मूल संस्करण में प्रकाशित चित्र बहुत धूमिल थे और उनका पुनर्मुद्रण सम्भव नहीं था।

वट-सावित्री पूर्णिमा,
ज्येष्ठ, २०५२
(१३ जून १९९५)
आम्नाय, करौंदी, वाराणसी

प्रेमलता शर्मा
उपाध्यक्षा, सं.ना.अ.
नई दिल्ली

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अनुक्रमणिका

विषय		पृष्ठ संख्या
सम्पादकीय भूमिका		i - ix
कुछ अपनी	अनुवादक	१-४
प्राक्कथन	माणि माधव चाक्यार	५-९
अवतरणिका	कुञ्जुन्नी राजा	१०-१७
आमुखोपन्यास	डी. अप्पुकुट्टन् नायर	१८-५०
मङ्गलम्		५१-५४
१. संज्ञा-प्रकरण		५५
(क) वस्तुवाचक संज्ञाएँ		५५
(ख) परम्परा से निश्चित विधान व क्रियाएँ		६३
२. परिभाषा-प्रकरण		७५
कूत्तुपुरप्पाट्		७५
आट्टम्		७५
परिभाषा		७५
पीठिका		७७
क्रमदीपिका		७८
आट्टप्रकारम्		७८
पात्रभेद सूचित करने वाले कुछ सङ्केत		७८
कथापात्र आदि की चालें		८१
विदूषक-निर्वहणम्		८२
मुख्य अभिनय के बीच आने वाले कुछ विशेष अभिनय		८३
रजनी-वर्णन, पर्वत-वर्णन		८३
उद्यान-वर्णन, वृक्ष-वर्णन		८३
आश्रम-वर्णन, वर्षा-वर्णन		८४
स्वर्ग-वर्णन, विरह-वर्णन		८४
कैलासोद्धरण		८५
पार्वती-विरह		८५
केशादिपाद-वर्णन		८६

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कामशर-लगना ८६
उपश्लोक-वर्णन ८६
तलमुटिक्क (केशपाशादि वर्णन) ८६
समुद्रवर्णन ८७
कोप्पणियिक्कुक (नायिका-प्रसाधन) ८७
क्रीडा, द्यूतक्रीडा ८८
पटपुरप्पाट् ८८
काषचवेक्कुक (उपहार लाना) ८८
लङ्कादहन ८८
वेषविधान ८९
धीरोदात्त नायक ८९
नायिकावेष ८९
कत्तिवेच्च ९०
सूत्रधार ९०
चेरिय-सूत्रधार ९०
अनुक्रममाटुक ९१
संक्षेपमाटुक ९१
निर्वहणमाटुक ९१
केट्टाटुक (क) ९१
केट्टाटुक (ख) ९२
चोल्लियाटुक (क), (ख) ९२
अन्वयिच्चाटुक ९२
इळकियाट्टम् ९२
आट्टम् ९३
प्रमेयमाटुक ९३
भरतवाक्यमाटुक ९३
३. मुद्रा-ताल-प्रकरण ९४
मुद्राएँ : हस्त ९४
पताका, मुद्रा, कटक, मुष्टि ९४
कर्तरीमुख, शुकतुण्ड, कपित्थ, हंसपक्ष ९५
शिखर, हंसास्य, अञ्जलि, अर्धचन्द्र, मुकुर ९६

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भ्रमर, सूचीमुख, पल्लव, त्रिपताक, मृगशीर्ष	९७
सर्पशिर, वर्द्धमानक, अराल	९८
ऊर्णनाभ, मुकुल	९८
कटकामुख	९९
समान मुद्रायें	९९
मिश्र मुद्रायें	१००
ताल	१०३
ध्रुव, एकताल	१०३
त्रिपुटा, अटन्त, झम्पा, चेम्पट, लक्ष्मीताल	१०४
४. स्वरप्रकरण	१०६
स्वरों (रागों) की संज्ञायें एवं प्रयोग	१०६
आर्तन्	१०६
इन्दलम्	१०७
मुरलीन्दलम्	१०७
मुड्डन्	१०७
श्रीकामरम्	१०८
पौराळी	१०८
भिन्नपञ्चमम् (।)	१०८
कैशिकी	१०९
दुःखगान्धारम्	१०९
तर्कन्	११०
वीरतर्कन्	११०
दाणम्	१११
तोण्ट्	१११
इन्दळम्	११२
कोरक्कुरुञ्जि	११३
पुरनीरु	११३
श्रीकण्ठी	११४
वेळाधूळि	११६
चेटीपञ्चमम्	११७

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भिन्नपञ्चमम् (२) ११८

घट्टन्तरि ११८

अन्तरि ११९

५. रसप्रकरण १२०

नाट्यम् (भूमिका) १२०

रसोत्पत्ति १२१

सभी नाट्यविषयों में रस प्राण-स्थानीय १२१

रस तथा भाव १२१

शृङ्गार १२२

हास्य, करुण, रौद्र, वीर १२३

भयानक, बीभत्स, अद्भुत, शान्त १२४

विभाव १२५

अनुभाव १२६

व्यभिचारिभाव १२७

शृङ्गार-चेष्टाएँ १२८

मदनावस्थाएँ १२९

रस-दृष्टियाँ १३०

भाव-दृष्टियाँ १३२

रसाभिनय की रीतियाँ १३४

स्थायी भाव १३६

रसों का पारस्परिक विरोध १३६

सञ्चारिणी दृष्टियाँ १३७

व्यभिचारिणी दृष्टियाँ १४१

रसों का जन्य-जनक-भाव १४४

रसों में सात्त्विक तथा व्यभिचारि-भावों का अनुप्रवेश १४४

नागानन्दम् : कूटियाट्टम् में जीमूतवाहन और मलयवती का शृङ्गार १४५

नलचरितम् : कथकलि में नल का दमयन्ती के प्रति शृङ्गार १४७

६. अभ्यास-प्रकरण १४८

चाक्यार एवं नंगियारम्मा का प्रशिक्षण-क्रम १४८

नंबियार का अभ्यास-क्रम १५१

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नंबियार के विशेष दायित्व	१५३
नंगियारम्मा के दायित्व और विशेष प्रशिक्षण	१५३
चोल्लियाट्टम् सिखाने की रीति	१५४
७. दृष्टान्त-प्रकरण	१५७
आट्टप्रकारम् : 'नागानन्द' का दूसरा अङ्क	१५७
नायक का पुरप्पाट्	१५७
अनुक्रम	१५८
संक्षेप	१५९
चोल्लियाट्टम्	१५९
विदूषक का पुरप्पाट् और निर्वहण	१७१
'मत्तविलास' का तमिळ्	१७२
कूटिच्चोल्लुन्न-सम्प्रदायम्	१७३
(सीता-हनुमान्-संवाद तथा नंबियार द्वारा अनुवदन)	
क्रमदीपिका	१८२
अभिषेक नाटक के तोरण-युद्धाङ्क में शङ्कुकर्ण का पुरप्पाट्	१८२
शङ्कुकर्ण का निर्वहण	१८३
तीन दिन के कूटियाट्टम्	१८४
प्रतिज्ञायौगन्धरायण का मन्त्राङ्क	१८८
आश्चर्य-चूडामणि का सातवां अङ्क	१८९
सुभद्रा-धनञ्जय का पहला अङ्क	१९०
संस्कृत में लिखित क्रमदीपिका	१९१
"नाटकं चोल्लिप्परय्युक"	१९२
कुछ विशेष अभिनय के सङ्केत	१९४
कुण्टनाट्टम्	१९५
मयिलाट्टम्	१९६
उद्घट्टन के भेद	१९६
'चेटीसहस्रनामम्'	१९६
८. वैशेषिक-प्रकरण	१९७
'अक्कित्ता' के श्लोक	१९७
नित्यक्रिया के श्लोक	१९८

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'तट्ट'-क्रिया के श्लोक	१९९
रङ्ग-प्रसादन के श्लोक	२०१
'आळाम'-श्लोक	२०३
'पुरप्पाट्'- श्लोक	२०४
नेपथ्य- चोल्लक्	२०५
निर्वहण-श्लोक	२०५
'आट्टम्' के श्लोक	२२२
विदूषक के पुरप्पाट् के श्लोक	२२६
मणिप्रवाल शैली के भाषा-श्लोक	२२६
विवाद के श्लोक	२२६
विनोद के श्लोक	२२८
वञ्चन के श्लोक	२३०
अशन के श्लोक	२३०
राजसेवा के श्लोक	२४१
विदूषक के प्रतिश्लोक	२४३
'पेक्कथा' (दन्तकथाएँ)	२४६
किषुककान्तला की घण्टी (शुक्रनीति - 'परज्यानि')	२४६
विड्डि का तोता (बार्हस्पत्यनीति)	२४८
उपकथा (उभयप्राप्ति से हानि)	२५३
कूत्तु और कूटियाट्टम् के लिये निर्दिष्ट विशेष रङ्ग-विधान	२५६
कुछ सिद्धान्त व नियम	२५७
विशिष्ट-पद-सूची	२६१

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कुछ अपनी

प्राचीनतम भारतीय नृत्य-परम्परा की केरलीय नाटकाभिनय-शैली कूटियाट्टम् पर लिखा गया आधिकारिक ग्रन्थ है— नाट्याचार्य विदूषक-रत्नम् पद्मश्री माणि माधव चाक्यार विरचित नाट्यकल्पद्रुमम्। अपने लम्बे जीवन के प्रयोग एवं अनुभव से उस परिणतप्रज्ञ अभिनयाचार्य ने निजी मातृभाषा मलयालम में ही अपना ग्रन्थ लिखा, जिसका 'हिन्दी अनुवाद' मैं उनका पुत्र प्रस्तुत कर रहा हूँ।

मैंने जान-बूझकर ही यह भारी भार स्वयं अपने ऊपर ले लिया है। इतना तो मुझे आश्वासन है कि यह प्रयास मैं खुद पिताजी के आग्रह से ही कर रहा हूँ। भारतीय नृत्य-परम्परा की यह श्रृंखला केवल केरल तक सीमित न रहे, अपितु समूचे भारत में पहुँच जाय, इस दृष्टि से ही उन्होंने भारत-भारती हिन्दी में उसका अनुवाद प्रस्तुत करने का आग्रह प्रकट किया। खैर, मैंने उस महान् नाट्यकल्पद्रुम की जड़-जड़ से, तने से, शाखा-प्रशाखा से और फूलों-फलों से आपको परिचित कराने का शक्ति-भर प्रयास किया है। चूँकि प्रस्तुत ग्रन्थ में परम्परा से स्वीकृत केवल मलयालम की शैली में प्रचलित कुछ संकेतों का सही या ठोस अनूदित हिन्दी शब्द-चयन करने में, मुझे बड़ी मुश्किल महसूस हुई, इसलिए कहीं-कहीं अगर ज़रा दुरूहता या अव्यक्तता आ गयी हो, तो पाठक-गण मुझे क्षमा कर दें। जहाँ आवश्यकता हुई, वहाँ छोटी टिप्पणियाँ भी दी गयी हैं।

महामुनि भरत के नाट्यशास्त्र की आधारशिला पर बहुत कुछ स्वतन्त्र शैली में तैयार किया गया नाट्यक्रम है— 'कूटियाट्टम्'। इस कला के प्रयोग में कूटियाट्टम् के आचार्यों ने लोकधर्मी की अपेक्षा नाट्यधर्मी पर अधिक जोर दिया है और अभिनय में नये संकेतों, नयी चारिकाओं तथा नयी विधाओं को भी अपनाया है। कूटियाट्टम् मुख्यतः चतुर्विधाभिनय—सात्त्विक, आङ्गिक, वाचिक और आहार्य—पर अवलम्बित है। अभिनय के इन चारों अङ्गों को यद्यपि समान-रूप से इसमें स्थान दिया गया है, तो भी सात्त्विकाभिनय मुख्यतम माना गया है। कूटियाट्टम् के नटों को सात्त्विकाभिनय सफल बनाने का विशेष प्रशिक्षण भी दिया जाता है।

कूटियाट्टम् की अभिनय शैली की दूसरी विशेषता यह है कि कहीं-कहीं उसमें 'नालावृत्ति'— चार बार दुहराने की प्रवृत्ति— यानि एक ही श्लोक का चार बार अभिनय करने की व्यवस्था है। पहले अभिनय किये जाने वाले श्लोक की सूचना के रूप में अभिनय होता है, फिर जब श्लोक पढ़ा जाता है, तो यथाश्रुत शब्दों के अर्थ का श्लोक में प्रयुक्त पदों के क्रमं के अनुसार अभिनय होता है। तीसरी बार शब्दों के अन्वयक्रम

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

के अनुसार और चौथी बार अर्थ या भाव का विस्तार के साथ अभिनय होता है। चौथे प्रकार का अभिनय करते समय कहीं किसी शब्द-विशेष, विशेषण शब्द या वाक्यांश के अर्थ की साधुता साबित करनी या उसका समर्थन करना है, तो उसके लिए विशेष श्लोक का अभिनय भी किया जाता है, जिसे 'उपश्लोकाट्टम्' कहते हैं। ऐसे प्रसंगों में नट के मनोधर्म के प्रदर्शन का काफ़ी अवसर मिलता है। इस प्रकार अभिनय को गहरा, सूक्ष्म, मार्मिक तथा प्रभावोत्पादक बनाने की विधाएँ कूटियाट्टम् की अभिनय-शैली की अपनी विशेषता है। इस प्रकार अभिनय की चारों विधाओं के सम्मेलन से सम्पूर्ण इस कला का नामकरण भी इसी आधार पर किया गया है— कूटिय + आट्टम् = यानी चारों अङ्गों से युक्त आट्टम् = अभिनय ही कूटियाट्टम् है। इसमें काल्पनिकता के द्वारा यथार्थ की ओर प्रेक्षकों को आकृष्ट करने की प्रवृत्ति है। आहार्य की विचित्रता एवं सूक्ष्मता इसका प्रमाण है। कोई यह कल्पना नहीं कर पाता कि श्रीराम, दुष्यन्त, नल, अर्जुन आदि नायक हमेशा कूटियाट्टम् में स्वीकृत वेशभूषा की सी वेशभूषा से सुसज्जित रहते रहे होंगे। लेकिन समझना चाहिए कि कूंटियाट्टम् के आचार्यों ने ऐसे पौराणिक नायकों के स्वभाव के अनुकूल वेश-विधान का एक काल्पनिक रूप निश्चित कर तैयार किया है और इस प्रकार आहार्य अभिनय को अधिक प्रभावशाली बना दिया है।

कूटियाट्टम् में अभिनय मुख्य और रङ्ग-सज्जीकरण आदि गौण हैं। रंग-वातावरण की सृष्टि के लिए यथार्थ वस्तुओं का बहुत कम उपयोग कूटियाट्टम् में किया जाता है। वातावरण की सृष्टि अभिनय के माध्यम से ही की जाती है। परन्तु कुछ विशेष रंगस्थितियों के सज्जीकरण में यथार्थ वस्तुओं (मूर्त पदार्थों) का उपयोग भी स्वीकार किया गया है। उपवन, लता-कुंज, जंगल, भवन, रथ आदि मूर्त वस्तुओं का प्रदर्शन रंगमञ्च पर साधारणतया नहीं होता। ये सब अभिनय द्वारा प्रस्तुत किये जाते हैं। हाँ, बहुत कम प्रसंगों में ऐसे नकली मूर्त रंग-सज्जीकरण भी स्वीकृत हैं। परक्कुंकूत्तु, तपती संवरणम्, नागानन्द, जटायुवध, अशोकवनिकाङ्क, मायासीताङ्क, शूर्पणखाङ्क, स्वप्नवासवदत्तम् आदि नाटकों के कूटियाट्टम् के प्रस्तुतीकरण में कुछ विशेष रंगसज्जीकरण अवश्य होते हैं। रंगसज्जीकरण को कम करने का उद्देश्य यही प्रतीत होता है कि प्रेक्षकों का ध्यान नट के अभिनय की ओर से कहीं और हट न जाय और नट की अभिनय-सिद्धि अन्यून रहे। कूटियाट्टम् के आहार्याभिनय में भी आवश्यकता से अधिक भड़कीलापन कहीं आने नहीं देते। चेहरे का रंग (वर्ण) सूक्ष्म मार्मिक, परिमार्जित, किंतु परिमित रखा गया है। इसलिए प्रेक्षकों का ध्यान चेहरे की ओर अधिक रहता है। अन्य किसी-किसी नृत्य-विशेष के नटी-नटों के आहार्य (वेश-विधान) पर ध्यान दें, तो यह स्पष्ट मालूम होगा। कथकलि, यक्षगान, भरतनाट्यम्, मणिपुरी आदि उदाहरण के रूप में ले सकते हैं। कथकलि को लीजिए— कथकलि के वेश-विधान

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

में चेहरे की आकर्षकता की ओर जितना ध्यान दिया गया है, उसके समकक्ष या कहीं उससे भी अधिक ध्यान किरीट, कुण्डल आदि आभूषणों तथा पहनावे की ओर दिया गया है। कथकलि में नृत्त को भी बहुत अधिक प्रधानता दी गयी है, जब कि कूटियाट्टम् में नट की आकर्षकता मुख्यतः चेहरे के रंग पर आधारित है। उनका कञ्चुक, उष्णीष, किरीट, पहनावा, सभी में कम भड़कीलापन, पर शालीनता दिखाई देगी। मन्दिरों की प्राचीन शिल्पकला की कलाकृतियों के आहार्य का आभास कूटियाट्टम् के नटों के वेश-विधान में पाया जा सकता है। वेश-विधान की सामग्रियाँ भी प्राकृतिक, कम खर्चीली, किन्तु अधिक प्रभावोत्पादक हैं। कपास तथा 'तेच्चिप्पूव' (चार छोटे दलों वाला लाल पुष्प) का बना केशभार आदि कितना सुन्दर, आकर्षक एवं कम खर्चीला है। चावल का आटा, काजल, हल्दी और चूना मिला कर बना चूरा, मनश्शिला, 'चायिलय', नील, अभ्रक, मोरपंख, हल्के रंगीन चटकीले कागज़ (तकिट्) शंख, कुमिष की लकड़ी, ताड़ के पत्ते, 'ञोड्ङण्णम् पुल्ल' (एक तरह के घास वर्ग का छोटा पौधा) आदि का उपयोग कर वेश-विधान की सामग्रियाँ तैयार होती हैं। कूटियाट्टम् के आचार्यों ने जहाँ भाव-भूमि की ओर, सात्त्विकाभिनय की ओर अधिक ध्यान दिया, वहाँ अन्य नृत्त-नृत्यों में आहार्य, अङ्गचलन आदि की ओर अधिक ध्यान दिया गया है। इसीलिए रसाविष्कार में कूटियाट्टम् अद्वितीय कला बनी रही।

कूटियाट्टम् में बहुत कम कथापात्रों का रङ्गमञ्च पर प्रवेश कराया जाता है, जो अत्यन्त मुख्य या अनिवार्य माने जाते हैं, वे ही रङ्गमञ्च पर अभिनय करते हैं। अन्य अप्रधान कथापात्रों का रङ्ग में प्रवेश न कराके उनके ग्रन्थों (टेक्स्ट) का अभिनय 'केट्टाटल', 'मूटिच्चोल्लल्' आदि माध्यम से मुख्य कथा पात्रों— जो रङ्ग में अभिनय करते हैं— द्वारा कराया जाता है। सदस्यों का ध्यान केन्द्रित करके अभिनय को अधिक मार्मिक बनाने की दूसरी प्रवृत्ति इस शैली के द्वारा आचार्यों ने प्रस्तुत की है। चूँकि कूटियाट्टम् में नटों की संख्या परिमित रखी, इसीलिए रंगमञ्च पर प्रवेश करने वाले नटों का दायित्व अधिक बढ़ गया। अन्य कथापात्रों के ग्रन्थ से सदस्यों को परिचित कराना इन नटों का काम है। जब अन्य कथापात्रों के ग्रन्थ का परिचय कराते हैं, तब ये नट अपना स्थायी छोड़ कर उन निर्दिष्ट कथापात्रों के स्थायी में उसका अभिनय करते हैं। इस प्रकार विभिन्न पात्रों का भाव अपनाते समय नट कुछ संकेतों द्वारा निर्दिष्ट कथा-पात्र बन जाने की सूचना दर्शकों को देता है। इसके लिए कुछ संकेत निश्चित किये गये हैं, इन संकेतों के द्वारा एक ही नट विभिन्न कथापात्रों का अभिनय उन कथापात्रों के स्थायी में प्रस्तुत करता है, जो असल में एकाभिनय (मोनो ऐक्टिंग) है। कूटियाट्टम् के प्रेक्षकों को इन संकेतों से परिचित कराना आवश्यक है, तभी अभिनय का आस्वादन करने में वे समर्थ हो पायेंगे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कूटियाट्टम् के अभिनय के लिए शास्त्रविधि के अनुसार आकार (लम्बाई-चौड़ाई) में निर्मित नाट्यप्रासाद हैं, जो 'कूत्तम्पलम्' के नाम से विख्यात हैं और शिल्प तथा 'स्टेज तकनीक' में अपना सानी नहीं रखते।

इस प्रकार सम्पूर्ण नाट्य-परम्परा की माता-मही नृत्यकला है— कूटियाट्टम्। उसका संक्षिप्त परिचय ही अपने इन चन्द शब्दों में मैं देश के हिन्दी जाननेवाले कला-प्रेमियों को दे सका, जिसके लिए उनसे क्षमाप्रार्थी हूँ और अपना यह हिन्दी अनुवाद आप सहृदय कलाप्रेमियों के सम्मुख सविनय प्रस्तुत करता हूँ।

'कूटि्याट्टम्' पर रचित इस आधिकारिक ग्रन्थ 'नाट्यकल्पद्रुमम्' के हिन्दी अनुवाद के प्रकाशन-कार्य में प्रोफ़ेसर कमलेशदत्त त्रिपाठी के सहयोग के लिये मैं अतीव कृतज्ञ हूँ, जिन्होंने इस की स्वच्छ प्रतिलिपि बनवाई।

इस के अलावा केन्द्रिय-संगीत-नाटक-अकादमी की उपाध्यक्षा प्रो. प्रेमलता शर्मा, एमेरिटस प्रोफ़ेसर, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय तथा डॉ. ऊर्मिला शर्मा 'रिसर्च ऑफ़िसर' कलातत्त्वकोश-विभाग, इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय कला केन्द्र, से मैं कभी उऋण नहीं हो सकता, जिन्होंने अपने अमूल्य समय का सिंहभाग व्यय करके इस ग्रन्थ का संशोधन, सम्पादन एवं मुद्रण-सम्बन्धी कार्य सम्पन्न किया। विशेषकर प्रो. प्रेमलता शर्मा ने अपने गहरे ज्ञान की गङ्गा की लहरों के मन्थन से अनमोल मोतियों की माला-सदृश सम्पादकीय भी प्रस्तुत किया।

केन्द्रिय-संगीतनाटक अकादमी तथा उस की सचिव श्रीमती उषा मलिक महोदया के प्रति भी अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करने में मुझे आनन्द है, जिन्होंने इस के प्रकाशन में स्नेहपूर्ण तत्परता प्रकट की। इस में सन्देह नहीं कि इन सब महान् व्यक्तियों का सहयोग मुझे इसलिये प्राप्त हुआ कि 'नाट्यकल्पद्रुम' के रचयिता मेरे वन्दनीय पिता स्वर्गीय श्री माणि माधव चाक्यार के कलाजीवन की ऋषितुल्य तपस्या का वरदान ही इन के कार्य रूप में साकार हुआ है। मेरे पूज्य पिताजी ने ही पहले-पहल इस (कुटियाट्टम् की) नाट्यगङ्गा को उत्तर में बहाया था।

मुझे इस बात में बड़ी चरितार्थता का अनुभव होता है कि इस ग्रन्थ के हिन्दी अनुवाद के प्रकाशन के लिये पिताजी की चिरन्तन कामना को उन की ९५ वीं वर्षगाँठ के दिन (८/३/९५) ही सही, साकार कहने का सुयोग प्राप्त हुआ। इन शब्दों के साथ अपना यह हिन्दी अनुवाद स्वर्गीय पिताजी के चरण-कमलों में समर्पित करते हुए हिन्दी-प्रेमियों तथा हिन्दी-भाषाभाषी सहृदयों के सम्मुख सादर प्रस्तुत करता हूँ।

ज्योति-विहार
ओट्टप्पालम् - १
जि. पालक्काड, केरल

पी.के. गोविन्दन् नंबियार
८-३-१९९५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्राक्कथन

भारतीय दृश्य कलाओं में प्राचीनता एवं प्रगल्भता से उत्तम कला है कूत्तु अथवा कुटियाट्टम्।

उत्पत्ति की कहानी

प्रपञ्च के सिरजनहार विरिञ्च देव द्वारा देव आदि के अनध्याय में भी स्वाध्याय के लिए तथा स्त्री, शूद्र आदि के आस्वादन के लिए चारों वेदों में से शब्द, स्वर, रस, अभिनयों (ऋग्वेद से शब्द, सामवेद से स्वर, यजुर्वेद से अभिनय, अथर्व वेद से रस) का संग्रह कर निर्मित नाट्यवेद को भरतमुनि ने अभिनय करने योग्य विधि-नियमों से प्रचारित किया और अपने पुत्रों, शिष्यों आदि के उपकार के लिए शास्त्र रूप में लिख कर तैयार किया, जो 'भरतशास्त्रम्' के नाम से विख्यात हो गया। इस शास्त्र की विधि के अनुसार अभिनय-रीति में कई विविधताएँ भी आ गयीं। प्रभुसम्मितता, सुहृत्सम्मितता, कान्तासम्मितता— इन तीन प्रणालियों में सुख-बोधन के लिए कान्तासम्मितता की अधिक उपादेयता या उपयुक्तता समझ कर आचार्यों ने पण्डितों और पामरों को समानरूप से ज्यादा रसास्वादन का अवसर देते हुए असली बातें समझाने के लिए उपयुक्त एक नाट्य-शैली अपनायी, जिसको भरतमुनि की शिष्य-परम्परा ने स्वीकार भी किया। कालान्तर में उस परम्परा के भरतगण की संख्या कम होती गयी और साथ-साथ उस रीति की नाट्यकला भी क्षीण होती गयी। उन दिनों पौराणिक सूतों के अभाव के कारण 'सूत' के स्थान पर प्रतिष्ठित 'श्लाघ्यगीः' नाम से विज्ञापित एक समाज प्रस्तुत नाट्यकला का अधिकारी बन गया। धीरे-धीरे उन व्यक्तियों के साथ उनकी कला भी जरा क्षीण हो गयी। उन दिनों विख्यात कलोपासक शाक्यमुनि आगे आकर नाट्यकला के अभिनय के अधिकारी रहे और उन्होंने उन्हीं 'श्लाघ्यगीः' समाज के अङ्गों को अभिनय-सम्बन्धी आवश्यक उपदेश और निर्देश भी दिये।

शाक्यमुनि के द्वारा किये गये परिष्कार (नवीकरण) यों हैं—

१. पुराण-कथा प्रभाषण की सुहृत्-सम्मितता को हटाकर कान्तासम्मितता को स्वीकार करना।

२. अभिनय तथा कथा-कथन के लिए काव्य-ग्रन्थों का उपयोग करना, अर्थात् पौराणिक कथाओं के प्रभाषण के लिए चम्पू काव्यों और अन्य काव्यों का प्रयोग तथा अभिनय के लिए नाटकों का प्रयोग करना। उन्होंने दोनों नृत्यों के लिए 'कूत्तु' एक संज्ञा भी दी।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

३. कान्तासम्मितता से उपदेशात्मक काव्यों को (दृश्य काव्यों को) और भी ललित और सरस बनाकर जनता के लिए अधिक आस्वाद्य बनाने लायक रीति अपना कर प्रचार में लाये।

इन परिष्कृतियों के कारण उस दिन से 'कूत्तु नृत्य' 'शाक्यरू कूत्तु' नाम से और उस कला के अधिकारी लोग 'शाक्यर' और कथा-प्रभाषण को 'प्रबन्धं कूत्तु' तथा नाटकाभिनय को 'कूटियाट्टम् कूत्तु' भी कहा जाने लगा। इस प्रकार सालों के बाद राष्ट्रीय धार्मिक आदि कारणों से भारत के अन्य भागों से लुप्त होकर प्रस्तुत कला ने अन्त में आपेक्षिकता से अधिक प्रशान्त केरल की शरण ली थी। उस समय केरल के कुछ कला-कुतुकी पण्डितों ने मिलकर केरल के अनुयोज्य एक आधुनिक परिष्कृत रीति कूत्तुनृत्य के लिए निश्चित की और उसकी चिर-प्रतिष्ठा के लिए भक्ति तथा विज्ञान के केन्द्र केरलीय मन्दिरों में अनुष्ठान-कला के रूप में इसे प्रतिष्ठित भी किया।

'प्रबन्धं कूत्तु' में की गयी परिष्कृतियाँ यों हैं—

विदूषक- भूमिकाधारी नट मूलग्रन्थ-चम्पूकाव्य का पाठ कर उसका अर्थ (भाव) मलयालम भाषा में कहकर सभी कथा-पात्रों के प्रकरण, रस तथा भावों का प्रकाशन करें, हास्यरस को प्रधानता देकर पुराणों के कथापात्रों को सामाजिक कल्पित कर उनका इशारा कर समासोक्ति में कहकर प्रेयोलङ्कार में परिणत कर दें। इसके लिए मलयालम और संस्कृत में लिखे गये चम्पूग्रन्थ मूलग्रन्थों के रूप में स्वीकार किये जायँ। नाटकाभिनय स्वरूपी इस चाक्षुष यज्ञ में सभी कथा-पात्रों का प्रवेश है। कूटियाट्टम् में सभी कथापात्रों का रङ्गमञ्च पर प्रवेश नहीं कराया जाता लेकिन अगर किसी-किसी कथापात्र का प्रवेश करना ज़रूरी नहीं निश्चित किया गया तो, उनके ग्रन्थ नटी-स्थान का निर्वाह करने वाली नंगियारम्मा से पढ़वावें। नेपथ्य में से पढ़वावें या 'मूटिच्चोलूक' (अवगुण्ठित होकर) की रीति से पढ़वावें। प्रवेश करने वाले सभी कथापात्र अपने-अपने ग्रन्थ (वाक्य और श्लोक) स्वयं पढ़कर अभिनय करें। उस के बाद आङ्गिक और सात्त्विक अभिनयों के साथ उस का अर्थाभिनय करें, और फिर वाचिकाभिनय के साथ मूल ग्रन्थ का पाठ करें। इनके अलावा, अन्वयक्रम से किया जाने वाला अभिनय आदि अन्य विधाएँ भी स्वीकार करें। ऊपर बताई गई बातों का निर्दिष्ट प्रकरणों में स्पष्टीकरण दिया गया है।

'निर्वहण' में वाचिकाभिनय नहीं होता। मूलग्रन्थ का पाठ नटी से कराया जाता है। निर्वहण में अर्थाभिनय के बाद मूल श्लोक पढ़वाया जाता है। इसका उद्देश्य अभिनय को ज्यादा प्रभावशाली बनाना है। दृश्यकाव्य की सार्थकता को सम्पूर्ण रूप से प्रकट करना ही इसका उद्देश्य है। सिद्धान्त तो यही है कि पहले ग्रन्थ सुन लें, तो श्रव्यता से अर्थ का अवबोध होगा और दृश्यकाव्य की महिमा का भङ्ग हो जाएगा।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'विदूषक निर्वहण' में भिन्न-भिन्न कथा-पात्रों के ग्रन्थ उन-उन के स्वर और भाव में खुद विदूषक द्वारा पढ़वा कर उनके अर्थ कहने की रीति स्वीकार की गयी। वेश-विधान-रीतियाँ, स्वर, रस, तालों का क्रमीकरण, बाजों के बजने का विधान, विदूषक के प्रभाषण की शैलियाँ— यह सब ख़ास तौर पर निश्चित किया गया है।

विदूषक के प्रभाषण की शैली यही है कि पहले प्राकृत पढ़े, दूसरी बार उसकी छाया (संस्कृत की) पढ़े और फिर मलयालम भाषा में उसकी व्याख्या भी करे। जिन-जिन नाटकों में विदूषक होते हैं, उन सब में सुनाई और दिखाई देते रहने वाले अपने सभी कथा पात्रों के ग्रन्थों का अर्थ विदूषक को मलयालम भाषा में हास्य रस को प्रधानता देकर कहना चाहिए। जिन नाटकों में विदूषक नहीं होते उनमें सूत्रधार के 'तमिष़ चोल्लुक' की रीति है। ('तमिष़ कुत्तू' व्याख्या या टीका का पर्याय मात्र है) मूल ग्रन्थ का अर्थ प्रत्येक रीति में आख्यान करना ही 'तमिष़ चोल्लुक' है।

इस प्रकार कई नियमों और क्रमीकरणों के अनुसार नवीन रूप में सुसज्जित रीति के अनुसार कूत्तुनृत्य को केरल के मन्दिरों की कला बनाकर, मन्दिरों के 'पञ्च प्रासादों' के अन्तर्गत 'नाट्य प्रासादों' में चलाये जाने का निश्चय किया गया। इस रीति पर चलती आयी इस कला का नवीकरण ग्यारहवीं सदी में श्री कुलशेखर पेरुमाळ ने किया, जिनका प्रिय मित्र था महाकवि तोलन्। उनके द्वारा किये गये नवीकरण निम्नलिखित हैं—

१. संस्कृत नाटकादि दशरूपकों का अभिनय कर सकते हैं।

२. मन्दिरों के कूत्तम्पलों में इसका अभिनय किया जाय और जहाँ कूत्तम्पलम् नहीं है, वहाँ मन्दिरों के दाँयें 'वयिलम्पल' (मन्दिर के गर्भ गृह के बाहर चारों ओर बनाई गयी शालाओं में सामने के दाईं ओर की शाला) में, वहाँ असुविधा है तो भोजनशाला के अन्दर, आँगन में तात्कालिक उपयोग के लिए बनाए गये कूत्तम्पल में भी कूत्तु चलाया जाय। मन्दिर की चहारदीवारी के बाहर 'परक्कुं कूत्तु' और चूटल कूत्तु (श्मशान में चलाए जानेवाले कूत्तु) के अलावा और किसी प्रकार का कूत्तु नृत्य चलाया नहीं जाना चाहिए।

३. अभिनय-विस्तार की प्रणालियाँ—

'आट्टप्रकारम्' 'उपश्लोकम्' 'प्रतिश्लोकम्' विशेष वर्णन, निर्वहण आदि नायक के लिए तथा भाषा श्लोक, छाया श्लोक, उपकथायें, 'पेक्कथाएँ', पुरुषार्थ आदि विदूषक के लिए भी प्रयोग में लाया जा सकता है।

४. नटों का स्थान चाक्यार, नटी जैसे स्त्री कथा-पात्रों का स्थान नंग्यारम्मा लोग और नान्दी सूत्रधार का स्थान नंबियार भी स्वीकार करें।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

५. 'मिष़ाव' 'ताळकूट्टम्' 'इटक्का', 'कुष़लं', शंख आदि बाजों का प्रयोग किया जाय। मिष़ाव बजाने का अधिकार केवल नंब्यार को तथा ताळक्कूट्टम् बजाने का अधिकार नंगियारम्मा को दिया गया है। दूसरे बाजे मन्दिर के बाजे बजाने वाले भी बजा सकते हैं।

६. रङ्गपूजा का निर्वाह 'तन्त्री' या मन्दिर के प्रधान पुजारी ही करें।

कूत्तुनृत्य की याज्ञिकता : *चाक्षुष यज्ञ—'कूत्तु नृत्य'*

देवादिगणों की प्रीति-जनक सभी विधाएँ, क्रमीकरण आदि, चाक्षुष यज्ञ कूत्तुनृत्य में संयोजित हैं। इस चाक्षुष यज्ञ की शाला है कूत्तम्पलम्। यज्ञ के लिए 'अरणि' मथकर बनाई जाने वाली आग है, तो उसके बदले कूत्तु के लिए देव-सन्निधि से जलाकर लायी जाने वाली आग होती है। गार्हपत्य, अन्वाहार्य, आहवनीय की तीन अग्नियों के स्थान पर कूत्तु में रङ्ग पर रखे दीप में तीन बत्तियाँ डालकर जलायी जाती हैं। यज्ञ के ब्रह्मन् के स्थान में कूत्तु में किसी ब्राह्मण को साक्षी बनाकर बिठाया जाता है। यज्ञशाला में प्रवेश करने पर जिस प्रकार यजमान को 'अशौच' आदि नहीं होते, वैसे ही कूत्तु के लिए 'तलयिल कोट्टकु' करने पर नट को भी अशौच बाधा नहीं। यज्ञ में प्रत्येक देवता के नाम पर किये जाने वाले मन्त्र-पूर्वक आहुति आदि के बदले इस चाक्षुष यज्ञ में मुद्राभिनय, स्तवन, नृत्त आदि अनुष्ठान किये जाते हैं। जैसे यज्ञ में ब्रह्मन् को सर्वाधिकार दिया गया है, वैसे कूत्तु में सूत्रधार सर्वाधिकारी समझा जाता है। यज्ञ के अवभृथ-स्नान के बदले कूत्तु के अन्त में नट के द्वारा कमण्डलु में तीर्थ बनाकर रङ्ग में आकर उसका प्रोक्षण करने का रिवाज है। शाला-दाह के स्थान में तीन स्थानों में जलती हुई दीपशिखाओं से एक-एक बत्ती निकाल कर एक साथ पकड़कर गुरूपदेश के अनुसार ज्वाला लगाकर नीचे रख दी जाती हैं।

इस प्रकार कूत्तु नृत्य को ऐहिक, आमुष्मिक श्रेय का साधक बनाकर नवीकृत किया गया। इस रीति में विशेष परिवर्तन नहीं आया है। आज भी इसी रीति के अनुसार ही कूत्तु चलाते आ रहे हैं।

आज चार-पाँच चाक्यार वंश के इने-गिने व्यक्तियों पर अवलम्बित होकर प्रस्तुत कला जीवित है। उसकी वृद्धि के नये रास्ते खोज निकालने का समय बीत गया है। आज की परिस्थिति में मेरी पहुँच के कार्यों में एक तो यही है कि अपना अनुभव लिखित रूप में प्रस्तुत करूँ। इसी विचार ने मुझे प्रस्तुत ग्रन्थ-रचना के लिए प्रेरित किया है। अपने बचपन से अबतक जिस कलादेवी की उपासना मैं करता आया, उस देवी के अनुग्रह एवं आशीर्वाद से मैंने जिन-जिन विषयों का अवबोध किया उन सबको स्वीकार करने योग्य एक शिष्य के अभाव से उद्भूत पछतावा और मेरी षष्ट्यब्दपूर्ति के समय

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'इसकी स्मृति के रूप में एक ग्रन्थ का निर्माण जरूर करना है' इस प्रकार के मेरे अभिवन्द्य आचार्यपाद श्रीरामवर्मा परिक्षित्तु राजा के उपदेश और प्रेरणा ही पहले पहल प्रस्तुत ग्रन्थ के निर्माण में मेरी प्रेरक शक्तियाँ रही हैं।

कूटियाट्टम् की अभिनय रीति, संकेतों, उसके वाङ्मय-विवरणों, सांकेतिक संज्ञाओं से संकीर्ण और इसीलिए दुर्ग्रह भी है। मेरा विश्वास है कि इस दुर्ग्रहता को कम करने के लिए प्रस्तुत ग्रन्थ सहायक रहेगा, इस गहन विषय पर कम लिखे अन्य प्रौढ़ ग्रन्थों के अवगाहन करने में सहृदयों के लिए कम से कम एक सोपान (सीढ़ी) बन जायगा तथा इस कला की ओर कलाकुतुकियों का ध्यान अधिक आकृष्ट करने में यह सहायक भी बनेगा और कूटियाट्टम् पर लिखे गये ग्रन्थों के अभाव को एक हद तक दूर कर पढ़ने और पढ़ाने की इच्छा रखने वालों के लिए यह उपकारी भी सिद्ध होगा। इन विश्वासों के साथ, सम्पूर्ण न होने पर भी, करीब-करीब सभी विषयों का स्पर्श करके लिखा गया प्रस्तुत ग्रन्थ सहृदयों के सामने, उनके अभिप्राय के अनुसार ज्यादा विकसित करने की तैयारी प्रकट करते हुए, समर्पण कर रहा हूँ।

मुझे सबसे बड़ी चरितार्थता यह है कि अपने इस काफी लम्बे कला-जीवन में ऐसा एक ग्रन्थ ही सही, कम से कम मैं प्रस्तुत कर सका। इसके लिए मेरी मदद करने वाले श्री कल्हन् आदि मित्रों, खासकर इस ग्रन्थ के मुद्रण-प्रकाशन आदि में उत्साह से आगे आये केरल कलामण्डलम्, केन्द्रीय संगीत नाटक अकादमी तथा इसके लिए अवतारिका लिखकर सहायक बने डॉ. कुञ्जुण्णि राजा, सबके प्रति मेरा ऋण अनिर्वचनीय है। इन शब्दों के साथ कलादेवी के चरण-कमलों में यह 'नाट्यकल्पद्रुम' श्रद्धाभक्ति के साथ मैं समर्पित करता हूँ।

किल्लिकुरिंश्शि मङ्गलम् १५.१०.७४

माणि माधव चाक्यार

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अवतरणिका

भारतीय संस्कृति की सर्वतोमुखी वृद्धि तथा सुरक्षा की दिशा में केरल की देन अत्यन्त महत्त्वपूर्ण एवं गौरवपूर्ण है। विदेशी हमलों तथा जनता की उपेक्षा के शिकार बनकर नाशोन्मुख एवं नामावशेष विविध सांस्कृतिक हीरक-गण आज केरल में ही सुरक्षित हैं, जिसका उत्तम उदाहरण है— कूटियाट्टम्।

भारतीय नाट्य-कलाओं में प्रमुख स्थान की ख्याति प्राप्त करने वाली शैली कथकलि तो कूटियाट्टम् का ही एक नवीन परिष्कृत रूप है। संस्कृत नाटक, जो कि एक ज़माने में भारत भर में अभिनीत किये जाते थे, आज कई नवीकरणों के साथ ही सही, शास्त्र-रीति के अनुसार कूटियाट्टम् में ही अभिनीत होते आ रहे हैं। इससे कूटियाट्टम् का स्थान एवं महत्त्व स्पष्ट होता है। भारतीय नाट्य-परम्परा की प्राचीनता का अवबोध करने के लिए भरत के नाट्यशास्त्र की तरह प्रधान है— कूटियाट्टम्। केरल में हज़ारों सालों से अनुस्यूत रूप में प्रवाहित होने वाले संस्कृत नाटकाभिनय की ओर ध्यान देने पर श्री अभिनवगुप्त की टीका-टिप्पणी के सहारे भी अव्यक्त कई नाट्यशास्त्र की पंक्तियाँ इससे सुव्यक्त हो जाएँगी। पण्डितों का ध्यान इसके कहीं पहले ही इस बात की ओर आकृष्ट होना चाहिए था, क्योंकि आज कूटियाट्टम् केवल तीन चार व्यक्तियों के हाथों में परिमित कला-सी रह गयी है। ज्ञानवृद्ध और परिणत-प्रज्ञ नाट्याचार्य माणि माधव-चाक्यार का 'कूटियाट्टम्' पर लिखा गया प्रस्तुत आधिकारिक ग्रन्थ सर्वथा समादरणीय है।

प्राचीन भारतीय नाट्य शैली के मुख्य अङ्गों पर महाकवि कालिदास ने ही प्रकाश डाला है।

देवानामिदमामनन्ति मुनयः कान्तं क्रतुं चाक्षुषं
रुद्रेणेदमुमाकृतव्यतिकरे स्वाङ्गे विभक्तं द्विधा।
त्रैगुण्योद्भवमत्र लोकचरितं नानारसं दृश्यते
नाट्यं भिन्नरुचेर्जनस्य बहुधाप्येकं समाराधनम्।।

नाट्य देवों को प्रसन्न करने के लिए किया जाने वाला एक सुन्दर चाक्षुष यज्ञ है। न केवल देवों के लिए, अपितु विभिन्न रुचि रखने वाली साधारण जनता के लिए भी आनन्ददायक है। भिन्न-भिन्न रुचि के लोगों को सन्तुष्ट करने के लिए भिन्न रसों का सम्मिश्रण भी आवश्यक है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

केरल में केवल मन्दिरों के प्राङ्गणों में (अगर कूत्तम्पलं है, तो वहाँ या चहारदीवारी के अन्दर) कूटियाट्टम् अभिनय करने की अनुमति थी, और वह भी केवल एक विभाग के लोगों को। पुरुषों का वेश पहनने का अधिकार केवल चाक्यार को और स्त्री वेश धारण करने का अधिकार 'नंगियारम्मा' लोगों (नंबियार औरतों) के लिये निश्चित था। मिष़ाव बजाने वाले नंबियार होते थे। अभिनीत किये जाने वा़ले नाटक के कथा-कथन का अधिकार, नान्दी सूत्रधार के रूप में रङ्गमञ्च पर आकर 'अरङ्ङु तेकियिक्कुक' रंग प्रसादन करने का अधिकार भी नंबियार का है। रंगमंच पर बैठकर मजीरा बजा कर ताल लगाना, गौण कथापात्रों की पक्तियाँ .पढ़ना आदि 'नंगियारम्मा' करती हैं। हिन्दू धर्म से सम्बन्ध जोड़कर 'मन्दिर की कला' के रूप में कूटियाट्टम को सुरक्षित रखने का प्रयास निराधार नहीं कहा जा सकता। कालिदास-वचन 'चाक्षुष यज्ञ' शब्द ही नाट्य का, धर्म के साथ सम्बन्ध स्पष्ट करता है। नाट्य की उत्पत्ति के बारे में भरत के नाट्यशास्त्र में प्रतिपादित बातें भी इसकी उपोद्बलक हैं। कहा जाता है कि चारों वेदों से क्रमशः 'पाठ्य', 'गान', 'अभिनय', 'रस'— को स्वीकार कर दृश्य एवं श्रव्यात्मक क्रीडनीयक के रूप में स्वयं ब्रह्मा के द्वारा निर्मित पाँचवाँ वेद है— नाट्यवेद।

प्राचीनकाल से ही नृत्त, गीत, वाद्य—ये तीनों नाट्य से जुड़ कर प्रचार में थे। सिन्धु नदी के तट की संस्कृति के खण्डहर (नर्तकी की पीतल की प्रतिमाएँ आदि) यह स्पष्ट करते हैं कि अत्यन्त प्राचीन काल से भारत में नृत्त का स्थान महत्त्वपूर्ण था। ऋग्वेद में उषा की तुलना एक नर्तकी से की गयी दिखाई देती है। वैदिक क़ाल में कई प्रकार के गान वाद्य आदि का प्रचार था। कौषीतकि ब्राह्मण (२९.५. ३-७) में नृत्त-गीत-वाद्यों से युक्त शिल्प का वर्णन है "त्रिवृद् वै शिल्पम्- नृत्तं गीतं, वादित्रमिति"। प्राचीन बौद्ध कृतियों में नृत्त, गीत, वाद्य (वादित्र), प्रेक्षागृह, शोभनिक नटी-नटों की यत्र-तत्र सूचनाएँ हैं "नच्चन्ति पि गायन्ति पि वादन्ति पि लसेन्ति पि" (विनय २-१०)। दीर्घनिकाय के अन्तर्गत ब्रह्मजाल सुत्तन्त में सूचना है कि कई ब्राह्मण तथा संन्यासी लोग प्रेक्षागृहों में जाकर नृत्त, गीत, वादित्रों का आस्वादन करते थे, किन्तु गौतम बुद्ध उन लोगों में नहीं आते थे।

"यता वा पन् एके भोन्तो समण बह्मण— सद्धादेय्यानि भोजनानि भुंजित्वा ते एवं रूपं विसूकदस्सनं अनुयुत्ता विहरन्ति, सेय्यथीदं नच्चं, गीतं, वादितं पेक्खं अक्खानं, पाणिस्सरं वेताळं कुंभथूनं शोभनं गरकं पटिविरतो समणो गोतमो ति"।

संयुत्तनिकाय के अन्तर्गत गामणिसंयुत्त में ऐसा प्रस्ताव दिखाई पड़ता है कि नटग्रामणी ताळपुट बुद्ध के पास जाकर कई सन्देह दूर करते थे।

"एकमन्तं निसिण्णो खो तालपुटो नटग्रामणि भगवन्तं एतदोवाच-सुतं मेतं भन्ते पुब्बकान आचरिय वाचरियानं नटानं भास। मानानं यो सो नटो रंगमंझे समझमझे

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सज्जलिंकेन जनं हिसेति मेति सो कायस्स भेदापरं रणापहासिनं देवानं सहव्यतं उपज्जतीति— इध्द भगवा किं आहिति।''

नट ग्रामणी तालपुट ने बुद्ध भगवान् के पास जाकर यों कहा— "सुना है कि पूर्व आचार्यों ने यों कहा है— जो भी नट रंगमंच के बीच समाज के बीच 'सच्चे झूठ' से लोगों को हँसा देता है और आनन्दित करता है, वह मृत्यु के बाद आनन्दपूर्ण देवों के साथ रहता है— इसके बारे में भगवान् क्या कहते हैं"।

पाणिनि की अष्टाध्यायी में 'नटसूत्र' का उल्लेख है। पतञ्जलि के महाभाष्य में कंस और कृष्ण का वेष धारण कर रङ्गमञ्च पर नटों के कंसवध अभिनय करने का उल्लेख है। इतना ही नहीं ऐसी राय प्रकट की गयी है कि नटों में भी रसानुभूति होती है (रसिको नटः ५.२.९५)। महाभारत में यत्र-तत्र नर्तकों और गायकों के बारे में वर्णन मिलता है। 'पश्यन्तो नटनर्तकानाम्' 'अकालज्ञासि सैरन्ध्रि शैलूषीव विरोदिषि' (४.१६.४३)। 'ननृतुर्नर्तकाश्चैव जगुर्गेयानि गायकाः' (१.२१९.४)

नाटकाभिनय-संबन्धी विचार पहले-पहल 'हरिवंश' में ही दिखायी पड़ता है। कहते हैं कि वरदन्त नामक नट ने कई नटों को एकत्रित कर रामायण-कथा के एक अंश का अभिनय किया था।

"ततः स ननृते तत्र वरदत्तो नटस्तथा।
स्वपुरे पुरवासीनां परं हर्षं समादधत्।।
रामायणं महाकाव्यमुद्देश्यं नाटकीकृतम्।
जन्म विष्णोरमेयस्य राक्षसेन्द्रवधेप्सया।।
लोमपादो दशरथः ऋष्यश्रृङ्गं महामुनिम्।
शान्तामप्यानयामास गणिकाभिः सहानघ।।
रामलक्ष्मणशत्रुघ्ना भरतश्चैव भारत!
ऋष्यश्रृङ्गश्च शान्ता च तत्तद्रूपैर्नटैः कृताः।।"

'रम्भाभिसार' कहानी के अभिनय के संबन्ध में भी हरिवंश में उल्लेख है। महिलाओं के भाग का अभिनय महिलाएँ ही करती थीं। नाटक में विदूषक का भी स्थान था।

"रम्भाभिसारं कौबेरं नाटकं ननृतुस्ततः।
शूरो रावणरूपेण रम्भारूपं मनोवती।।
नलकूबरस्तु प्रद्युम्नः साम्बस्तस्य विदूषकः।
कैलासो रूपितश्चापि मायया यदुनन्दनैः।।
शापश्च दत्तः क्रुद्धेन रावणस्य दुरात्मनः।
नलकूबरेण च यथा रम्भा चाप्यथ सान्त्विता।।
एतत् प्रकरणं वीरा ननृतुर्यदुनन्दनाः।"

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सब कहीं नाटकाभिनय नृत्त के रूप में ही वर्णित है— (नाटकं ननृतुः)। बौद्ध धर्मावलम्बियों ने धर्म-प्रचार के उपाय के रूप में नाट्यकला को पुष्ट किया। चीन के यात्री जब मथुरा का बयान करते हैं, तो कहते हैं कि वर्षा में बुद्ध-विहारों में नटों को बुलाकर उनसे सारिपुत्र और मौद्गल्यायन के धर्म-परिवर्तन की कथाएँ अभिनीत कराते थे। लूडर्स नामक पण्डित ने मध्य एशिया से मिले अश्वघोष के सारिपुत्र-प्रकरण नामक नाटक के अपूर्व ग्रन्थ का प्रकाशन किया है। अश्वघोष द्वारा प्रकाशित 'राष्ट्रपाल' नाटक के बारे में धर्मकीर्त्ति ने बताया है। वादिराज कहते हैं कि इसमें 'नान्द्यन्ते ततः प्रविशति सूत्रधारः' से लेकर पाठ्य, नृत्त और गान भी (न्यायविनिश्चय टीका, द्वि., पृ. २३४) था। चीनी यात्री इत् सिंग् हर्षवर्द्धन के समकालीन थे। वे कहते हैं— जीमूतवाहन नामक बोधिसत्त्व की नागकुमार को बचाने के लिए आत्मसमर्पण की कथा की शीलादित्यराज ने कविता बनायी थी और वह गान और नृत्त की सहायता से देश भर के रङ्गमञ्च पर प्रदर्शित की जाती थी (तककसु, ए रिकार्ड ऑफ बुद्धिस्ट रेलिजिन, पृ. १६३)।

यह विचार करने की बात है कि केरल में नाट्य को अपनी कुलवृत्ति बनाए हुए चाक्यार समाज ही नाट्यकला के एक ज़माने में बौद्धों के बीच में प्रचारित होने का प्रमाण हैं। केरल में नाट्यकला के परिष्कार के लिये शाक्यमुनि के सम्बन्ध में अनेक दन्त कथाएँ हैं। क्या बौद्धों ने नट के अर्थ में 'चाक्य' नाम रूढ़ होने योग्य प्रचार नाट्य को दिया था? प्राचीन तमिळ ग्रन्थ 'चिलप्पतिकारम्' में 'परयूर' (कूतैचाक्कय्यम् कूतच्चाक्कियार) के बारे में प्रतिपादन करने से स्पष्ट है कि नाट्यकला और चाक्यार का सम्बन्ध अति प्राचीन है।

नौवीं शताब्दी ईसवीय में काश्मीर के कवि दामोदर गुप्त द्वारा रचित 'कुट्टिनीमतम्' काव्य में विस्तार से बताया है कि हर्षवर्द्धन राजा की रत्नावली नाटिका की प्रस्तावना और पहले अङ्क को वाराणसी से आये हुए नटी संघ ने विस्तार से अभिनीत किया था। केरल के कूटियाट्टम् की तरह विस्तार से अभिनय करने की रीति उसमें भी थी। कई प्रकार के ध्रुवागान और ललित नृत्त आदि "पुरप्पाट" में थे।

रचिते सकलातोद्ये नियोजयामास सूत्रधरम्।
वांशिकदत्तस्थानक उद्ग्राहितभिन्नपञ्चमे सम्यक्।।
प्रावेशिक्या ध्रुवया द्विपदे ग्रहणान्तरेऽविशत्सूत्री।
उत्साहभावयुक्तः सामाजिकहृदयरञ्जनं कुर्वन्।।
कविनैपुणवत्सेश्वरचारितस्वविधये दाक्ष्यसामग्र्या।
अष्टकलापरिमाणां ध्रुवां परिकल्प्य ताललययुक्ताम्।।
आहूय नटीं कृत्वा तया समं स्वगृहकार्यसंल्लापम्।
सूचितपात्रागमनः किञ्चिद् गत्वा पदानि ललितानि।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निश्चक्राम गृहिण्या सार्धं निस्सरणेन गीतेन।
आश्रित्य कथोद्घातं प्रविवेश ततः सविस्मयोऽमात्यः।।
दुर्घटन-संघटनेन क्षितिनाथस्योदयेन मुदितश्च।
प्रासादमारुहन्तं कुसुमायुधवर्षचर्चरीं द्रष्टुम्।।
निर्दिश्य वत्सराजं समनन्तरकार्यसिद्धये निरगात्।

चेटियों के नृत्त का वर्णन करने पर—

''व्यस्तः कम्पानुबन्धादनवरतमुरो हन्ति हारोऽयमस्याः।''

इस पंक्ति के अभिनय के लिए—

करपीडनोपमर्दनव्यतिकर-समये कदर्थ्यमानोऽपि।
स्तनमण्डले स्थितोऽहं त्वं पुनराकृष्य कुत्राधिक्षिप्तः।।
अधुनान्तरयसि मामिति कोपादिव वरवारणमभिरामम्।
बहुचित्रपदन्यासैः वल्गन्त्याहन्ति हार उच्चलितः।।

और,

''स्रस्तः स्रग्दामशोभां त्यजति विरचितामाकुलः केशपाशः''—

प्रस्तुत पंक्ति के लिए—

''चूतलताधम्मिल्लस्थानच्युतशेखरं दधौ श्लाघ्यम्।
अधृत पतन्-निर्व्यूहां न त्वेषा मदनिका वेणीम्।।''

इस श्लोक का अभिनय विस्तार से किया गया है। नाट्यशास्त्र में पूर्वरङ्ग का अनेक अङ्गों के साथ विस्तार से वर्णन किया गया है। प्रत्याहार, अवतरण आदि अनेक अंगों में सबसे मुख्य नान्दी है। दशरूपक में दशरूपककार कहते हैं कि पूर्वरङ्ग के यद्यपि अनेक अङ्क होते हैं तथापि नान्दी अनुपेक्षणीय है।

''यद्यप्यङ्गानि भूयांसि पूर्वरङ्गस्य नाटके।
तथाप्यवश्यं कर्तव्या नान्दी विघ्नोपशान्तये।।''

साहित्यदर्पणकार आचार्य विश्वनाथ भी कहते हैं कि 'पूर्वरङ्ग' का विस्तार नहीं होता— ''इदानीं पूर्वरङ्गस्य सम्यक् प्रयोगाभावात् एक एव सूत्रधारः सर्वं प्रयोजयतीति व्यवहारः''। नाट्यशास्त्र की तरह कूटियाट्टम् में भी नान्दी-सूत्रधार और स्थापना-सूत्रधार अलग हैं। यहाँ के 'पुरप्पाट्' की विधाओं का सम्यक् निरीक्षण करने पर नाट्यशास्त्र-विहित पूर्वरङ्ग का स्वभाव बहुत कुछ समझ सकेंगे। इसके सूक्ष्म अध्ययन के बगैर कइयों ने इस पर बुरे आरोप लगाये हैं। शाकुन्तलचर्चा के प्रसङ्ग का आरोप देखिए—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

"भारतीवृत्तिं समाश्रयणात् वाचिकं प्रधानं, नाङ्गिकम्। तथा मंगलश्लोकेऽपि। यत् पुनरत्र क्वचित् सूत्रधारेण प्रविश्य मंगलश्लोकमवष्टभ्य नृत्तं कथानटनं च बहळकल- बहळं क्रियते, यच्च नटी-प्रभृति-प्रसङ्गाभावः, तत्र कियती साधुतेति नाट्यविदः प्रमाणम्"

(पृ. 18. TSS. ed)

नटाकुंश में भी आरोप है "कांचित् कथां समारभ्य पुनस्तां विसृज्य मध्ये देवतार्था क्रिया क्रियत इति कोऽयं विधिः? क्रियेयं देवताप्रीतिविधये जायते यदि, नाट्यात् प्रागेव नान्दीयं प्रयोक्तव्या भवेद् ध्रुवम्।" बहुधा प्रधान कथापात्र आदि का वेष-विधान करके ही स्थापना-सूत्रधार का प्रवेश होता है। मालती-माधव में "अहमस्मि कार्यवशात् प्रयोगवशाच्च उज्जयिनीकः संवृत्तः"—

सूत्रधार का यह कहना ज़रा देखिए। प्रस्तावना और कथातन्तु के बीच का यह खेल रत्नावली और मृच्छकटिक में भी देखा जा सकता है।

केरल में कूटियाट्टम् के लिए चाक्यार लोगों द्वारा स्वीकृत नाटकों में भास-प्रणीत रूप में प्रशस्त नाटक 'स्वप्नवासवदत्तम्' 'प्रतिज्ञायौगन्धरायणम्', 'प्रतिमानाटकम्', 'दूतवाक्यम्', 'बालचरितम्' आदि तथा हर्षवर्द्धन का 'नागानन्द', शक्तिभद्र का 'आश्चर्य चूडामणि' नाटक, कुलेश्वर वर्मा का 'सुभद्राधनञ्जयम्' एवं 'तपती-संवरणम्' पल्लवराज महेन्द्रविक्रम का 'मत्तविलास-प्रहसन' बोधायन का 'भगवदज्जुकीय-प्रहसन' और नीलकण्ठ का 'कल्याण-सौगन्धिक' भी शामिल है। यद्यपि कहा जाता है कि शाकुन्तल का अभिनय रंगमंच पर होता था, तो भी इसका कोई सही प्रमाण नहीं है। ऐसा अनुमान लगाना चाहिए कि उपाय के रूप में जैसे बौद्धों ने संस्कृत नाटकों का प्रयोग किया था, वैसे पल्लव-राजाओं के ज़माने में दक्षिण भारत में हिन्दू धर्म और संस्कृत भाषा के प्रचार के लिए नाटकों का उपयोग किया गया था। 'मत्तविलासप्रहसन' तो खुद महेन्द्र वर्मा का लिखा हुआ है। बोधायन का 'भगवदज्जुकीय' भी 'मत्तविलास' के साथ-साथ 'मामन्तूर शासन' (सातवीं शताब्दी) में स्मृत है। केरलीय नाटकवेदी के परिष्कर्ता कुलेश्वर वर्मा दसवीं शताब्दी ईसवीय में ही महोदयपुर पर शासन करते थे। लोकोक्ति तो यही है कि उनके पहले से ही संस्कृत नाटकाभिनय यहाँ पर चलता था, किन्तु कई नयी परिष्कृतियों के साथ अधिकाधिक प्रचार कुलेश्वर वर्मा ने किया है। संवरण आदि की व्यंग्य-व्याख्या, प्रस्ताव आदि भी यही व्यक्त कर देते हैं। पल्लव राजाओं के ज़माने से दक्षिण भारत में प्रचलित नाटकाभिनय-रीति केरल में भी प्रचार में आयी होगी।

'तोलन' नामक नर्मसचिव की सहायता से यहाँ कुलेश्वर वर्मा ने जो परिष्कृतियाँ बनायीं उनमें विदूषक के अंश का विस्तार, देशी भाषा में प्रतिश्लोक व्याख्याएँ, हँसी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मजाक आदि से मिश्रित चार पुरुषार्थों के प्रतिपादन को अन्तर्गत किया गया है, जो बिल्कुल निर्मूल नहीं कहा जा सकता— "परिहासाः प्रयोक्तव्याः देशभाषाभिरन्विताः"— यों 'भावप्रकाश' में इसका विधान है। साधारण लोगों के आस्वादन के लिए प्राकृत भाषाओं को संस्कृत नाटकों में गणनीय स्थान दिया गया था। प्रत्येक देशी भाषा के प्रयोग करने के सम्बन्ध में नाट्यशास्त्र में भी विस्तार से प्रतिपादित किया है। उसमें मिश्र-संस्कृत पर प्रकाश डालते हुए अभिनवगुप्त ने उल्लेख किया है कि दक्षिण भारत में मिश्र संस्कृत 'मणिप्रवाल' नाम से प्रसिद्ध है। अध्याय ३२ के ४०९ वें श्लोक की व्याख्या में उन्होंने कहा है—"पदमध्ये संस्कृतमध्ये देशभाषादियुक्तं तदेव कार्यम्। दक्षिणापथे मणिप्रवालमिति प्रसिद्धं, कश्मीरे षाट्कुलमिति"।

ऐसा मानना भी उचित नहीं होगा कि कुछ श्लोक मूलकाव्य में इधर-उधर जोड़ कर अभिनय को सम्पुष्ट करने की रीति नाट्यशास्त्रकार को अभीष्ट नहीं थी। नाट्यशास्त्र में कई प्रकार के ध्रुवागान के बारे में कहा गया है। 'अरंगुतेलियिक्कान' (रंगप्रसादन) के लिए नान्दीसूत्रधार द्वारा पढ़े जाने वाले श्लोक, वन्दना के श्लोक, प्रधान कथापात्र के वर्णनात्मक 'आलामश्लोक', ध्रुवागान आदि अभिनय के लिए विशेष रूप से बनाये गये हैं। निर्वहण में कथा-कथन के लिए प्रयुक्त होने वाले श्लोक, कई ग्रन्थों से चुने गये या खास तौर पर रचे गये होते हैं। पण्डितों का मत है कि कालिदास के विक्रमोर्वशीयम् के चौथे अङ्क के प्राकृत पद्य अभिनय के लिए बाद में और किसी के द्वारा विरचित हैं।

कूटियाट्टम् मन्दिर के कूत्तम्पलों में ही अभिनीत होता है। भरत के नाट्यशास्त्र में विकृष्ट, चतुरस्र, त्र्यस्र के नाम से तीन प्रकार के नाट्यमण्डप और उनमें हरेक के ज्येष्ठ, मध्यम, कनिष्ठ परिमाण के अनुसार भेदों का भी प्रस्ताव है। केरल के कूत्तम्पलों का स्वरूप और स्वभाव 'तन्त्रसमुच्चयम्', 'शिल्परत्नम्' आदि ग्रन्थों में प्रतिपादित विधान के अनुसार है। केवल 'तृप्रयार' मन्दिर तथा 'माटायिककावु' मन्दिर में ही मुखमण्डप में कूत्तुनृत्य चलाया जाता है। दोनों मन्दिरों में कूत्तुनृत्य के अधिकारी माणि चाक्यार के वंशज हैं। 'नागानन्दम्' का 'परक्कुंकूत्तु', मन्दिर के बाहर मैदान में चलाया जाता है। सुनने में नहीं आया कि निकट भूतकाल में 'परक्कुंकूत्तु' कहीं चलाया भी गया है।

केरल के कूटियाट्टम् के बारे में साहित्य में कहीं-कहीं उल्लेख हैं। चौदहवीं सदी में विरचित "उण्णुनीलि-सन्देश" में 'तपतीसंवरणम्' के अभिनय के सम्बन्ध में सूचना है।

"कण्टोल्लो तलियिलिरुवं कूत्तु नामन्नॅरिक्कल,
दैवं केट्टोलॅरु तपतियार नंङ्ङयारेन्ने तोक्कि।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अन्यासंगात् किमपि कलुषां प्राकृतं कोण्टवादीत्
पिन्नेककण्टीलणय विवशं वीर्तुमण्डिण्टे निन्ने।।''

नंब्यार के तमिळ् के बारे में (मार्दंगिक तमिळ्) 'लीलातिलक' में तथा 'तृप्रयार' मन्दिर के मुखमण्डप के कूत्तु के बारे में कोकसन्देश में भी प्रस्ताव हैं। माङ्ङानत्तु दामोदर चाक्यार (भरतगोत्रीयन्) है। 'शिवविलास' नामक महाकाव्य के रचयिता 'उण्णियाटी चरित' नामक मलयाली कृति में उस चाक्यार के बारे में यों वर्णित किया गया है—

''तलभुवि नट्टुविलिरुन्नोरु करमेल् नाल्विरल्-
नीण्डु नितान्त मिरुण्ट कचप्रचयत्तिन् कान्ति
विलासैरषकोटु विरचित चाट्टणि पीलिककषतन्
कीषपाटिव लसमानः''

मेलपत्तूर नारायण भट्टपाद के मित्र कुट्टञ्चेटि इरविच्चाक्यार हैं। मुद्राराक्षस-कथासार के रचयिता भट्टपाद ने इसी चाक्यार के लिए ही अनेक प्रबन्धों की रचनाएँ की थीं।

इसमें सन्देह नहीं कि कूटियाट्टम् की विधाओं तथा परम्परागत नियमों का अतीव कुशलता एवं वैदग्ध्य के साथ वर्णित करने वाला ग्रन्थ नाट्यकल्पद्रुम कलाकारों-कलाकुतुकियों तथा सहृदयों के लिए सबसे अधिक समादरणीय रहेगा। शास्त्रीय अभ्यास, आधी शताब्दी के अभिनय से प्राप्त परिपक्वता— दोनों ही नाट्याचार्य माणि-माधव चाक्यार के इस ग्रन्थ की पृष्ठभूमि में हैं। सर्वंकष एवं सुविस्तृत रूप में इस कृति में वर्णित विषयों के बारे में मुझे यहाँ कोई विशेष उल्लेख करने की ज़रूरत महसूस नहीं होती। उस महासौध में चढ़ जाने का सोपान-मात्र समझ कर इस अवतरणिका का सहृदयगण स्वागत करें।

के. कुञ्चुण्णि राजा
मद्रास यूनिवर्सिटी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आमुखोपन्यास

भारत में प्राचीन काल से अस्तित्व में रही रूपकावतरण शैली के आज बचे खुचे शायद एकमात्र रूप कूटियाट्टम् पर आधारित एक आधिकारिक महाग्रन्थ को नाट्याचार्य विदूषकरत्नम् माणि माधव चाक्यार ने प्रस्तुत किया है। विद्वत्ता, प्रगल्भता, परम्पराप्राप्त सिद्धि-अभिनय तथा लंबे अनुभव के क्षेत्र में आज सर्वोच्च स्थान पर विराजने योग्य श्री माणि माधव चाक्यार ऐसे एक महाग्रन्थ की रचना के सर्वथा योग्य हैं। कूटियाट्टम् के त्रिमूर्ति नाम से विभूषित करने योग्य सर्वश्री माणिमाधव चाक्यार, पैङ्कुलम् राम चाक्यार, इरिंजालकुटा माधव चाक्यार इन तीनों में वयोवृद्धता से भी श्रीमाणि माधव चाक्यार प्रामाणिक है।

कला के क्षेत्र में आज भी यह सन्देह रह गया है कि क्या संस्कृत रूपक दृश्यवेदियों में प्रस्तुत करने के उद्देश्य से लिखे गये थे या केवल पढ़ कर आस्वादन करने के उद्देश्य से। इसका जवाब यही है कि अगर रंगमंच पर इन्हें अभिनीत करने का उद्देश्य न होता, तो "नाट्यशास्त्र", "नटसूत्र" आदि का आविर्भाव तक हुआ न होता। इसके अलावा कई संस्कृत रूपकों में वेद-प्रयोग-सम्बन्धी सूचनाएं भी न पायी जातीं। प्रमाण मिलता है कि "जीमूतवाहनचरित्र" सातवीं शताब्दी ईस्वी में गीत-नृत्ताभिनय के साथ प्रदर्शित किया गया था। दामोदरगुप्त के "कुट्टिनीमतम्" में नौवीं सदी ईस्वी में 'रत्नावली' नामक रूपक के अवतरण का विस्तृत प्रतिपादन है। यह भी ज्ञात है कि कालिदास के तीनों रूपकों का तथा शूद्रक के 'मृच्छकटिकम्' आदि का अभिनय होता रहा। प्रियदर्शिका में एक गर्भाङ्क पाया जाता है।

भवभूति के "महावीरचरित", "मालतीमाधव" एवम् "उत्तररामचरित" के अवतरण के बारे में उन रूपकों में सूत्रधार का प्रस्ताव है। "अनर्घराघव" में नट स्वयं कहता है कि वह प्रतिद्वन्द्वी को पराजित कर आम जनता की सम्मति पाने के लिए ही आया है। गुजरात के चालुक्य राज़ा त्रिभुवनपालक की आज्ञा से १२४३ ईस्वी में "भूताङ्गदम्" पहले-पहल छायानाटक के रूप में प्रस्तुत किया गया। दक्षिण भारत में तो प्रस्तुत किये जाने वाले सभी रूपकों को चाक्यार लोग कूटियाट्टम् की शैली में अभिनय करते रहे हैं।

कूटियाट्टम् के लिए स्वीकृत संस्कृत रूपक

कहा गया है कि संस्कृत रूपकाभिनय ही कूटियाट्टम् है। रूपकों के विभेद नाटक — अभिषेक, प्रतिमा आदि, व्यायोग— मध्यम व्यायोग, कल्याण-सौगन्धिक आदि, प्रहसन — मत्त-विलास, भगवदज्जुकीय आदि; डिम — दूतघटोत्कच, ऊरुभङ्ग आदि,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तथा उपरूपक विभाग की नाटिकाएँ — स्वप्नवासवदत्त, अविमारक आदि कुटियाट्टम् के लिए प्रयोग में लाए गए।

विस्मय की बात है कि कूटियाट्टम् के लिए चुने गये सभी रूपक तभी प्रकाश में आये जब कि महामहोपाध्याय टी. गणपति शास्त्री ने उन्हें 'तिरुवनन्तपुरम् संस्कृत ग्रन्थमाला' में प्रकाशित किया। उस ग्रन्थमाला में कोल के नीलकण्ठ कवि का 'कल्याण-सौगन्धिक', शक्तिभद्र का 'आश्चर्यचूडामणि' तथा कालिदास का 'शाकुन्तलम्' भी शामिल नहीं था।

कहा जाता है कि प्रस्तुतीकरण में कालिदास-भवभूति आदि के नाटक भास के नाटकों के समकक्ष नहीं आ सकते। डाक्टर विन्टरनिट्स् कहते हैं कि चाहे कालिदास और भवभूति भास से भी अधिक महान् कवि और पण्डित हों, परन्तु समूचे संस्कृत साहित्य में एक भी रूपक भास-रूपकों के समकक्ष नहीं आता। शायद इसी कारण चाक्यार लोगों ने कूटियाट्टम् के अभिनय के लिए भास-नाटकों को अधिक प्रधानता देकर स्वीकार किया।

यद्यपि कूटियाट्टम् के अभिनय के लिए संस्कृत रूपक काम में लाये गये, तो भी किसी भी रूपक के पूरे - पूरे अंश को कूटियाट्टम् में अभिनीत करने का रिवाज नहीं। एक ही अङ्क का अभिनय एक बार किया जाता है, किन्तु कहानी की पूर्णता के लिए आरम्भ तक का कथाभाग "निर्वहण" द्वारा सम्पादित किया जाता है। हर एक अङ्क की स्थायी को कई दिनों के अभिनय द्वारा सम्पुष्ट कर रसस्फूर्ति की ओर ले जाना ही कूटियाट्टम् की रीति है।

कूटियाट्टम् में वैसे अङ्कों की ही प्रस्तुति प्रचलित है, न कि पूरे रूपकों की। इसलिए अङ्कों के विशेष नामों से ही कूटियाट्टम् की प्रस्तुतियों के नाम पड़े हैं।

(क) भासकृतियां:— प्रतिमा नाटक के विच्छिन्नाभिषेकाङ्क, विलापाङ्क, प्रतिमाङ्क, आटव्याङ्क, रावणाङ्क, भरतांङ्क, अभिषेकाङ्क — ये सात अङ्क ही लिये गये हैं।

(ख) प्रतिज्ञायौगन्धरायण के मन्त्राङ्क, महासेनाङ्क, भट्टाराङ्क — ये तीन।

(ग) स्वप्नवासवदत्तम् के ब्रह्मचर्याङ्क, पन्ताट्टाङ्क, पूत्तुटाङ्क, शेफालिकाङ्क, स्वप्नाङ्क, चित्रफलकाङ्क — ये सात।

(घ) अभिषेक नाटक के बालिवधाङ्क, तोरण युद्धाङ्क, मायाशीर्षाङ्क — ये तीन।

(ङ) बालचरित का पल्लाङ्क।

(च) अविमारक का आनोट्टाङ्क, दूताङ्क, अभिसारिकाङ्क, पवाङ्क, माटमेट्टाङ्क — ये पाँच।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(छ) चारुदत्तम् का वसन्तसेनाङ्क।

(ज) दूतवाक्यम्, कर्णभारम्, दूतघटोत्कचम्, ऊरुभङ्गम्, मध्यमव्यायोग — ये एकांकी होने के कारण कूटियाट्टम् में इन्हीं नामों से प्रचलित रहे हैं।

(झ) श्रीहर्ष की रचना नागान्द का दूसरा अंक तथा परकुकूत्तु

(न) शक्तिभद्र की रचना आश्चर्यचूडामणि के पर्णशालांङ्क, शूर्पणखाङ्क, मायासीताङ्क, जटायुवधाङ्क, अशोकवनिकाङ्क और अङ्गुलीयकाङ्क — ये छह अङ्क।

(ट) कुलशेखर वर्मा के सुभद्रा-धनञ्जयम् एवं तपतीसंवरणम् के सभी अंङ्क।

(ठ) नीलकण्ठ का कल्याण-सौगन्धिक।

(ड) पल्लवनरेश महेन्द्र-विक्रम का मत्तविलासम्।

(ढ) बोधायन का भगवदज्जुकीयम्।

इतिहास

करीब १८०० (एक हजार आठ सौ) वर्ष प्राचीन माने जाने वाले "चिलप्पतिकारम्" में परयूर कूत्तच्चाक्केयन् (परवूर चाक्यार) के अभिनय के आधार पर कूत्तुनृत्य दो हज़ार से अधिक वर्ष प्राचीन माना जाता है। जो भी हो, आज रंगमंच पर कूटियाट्टम् का जो अभिनय हम देख रहे हैं उसका प्रचार "सुभद्राधनञ्जयम्" तथा 'तपतीसंवरणम्' नाटकों के रचयिता कुलशेखर के समय में ही हुआ था (ईसा के बाद ९७८ से १०३६ तक का समय)। कहा जाता है कि अपने नर्म-सचिव, नर्मवचन के सम्राट्, अभिनयशास्त्रकुशल तथा प्रसिद्ध भाषाकवि तोलन की सहायता से ही कुलशेखर वर्मा ने इस अवतरण शैली को रूप दिया था। 'आट्टप्रकारम्' 'क्रमदीपिका', प्राकृतों का संस्कृत-विवर्तन देशी भाषा (मलयालम्) में व्याख्या, नायक के श्लोकों के लिए प्रतिश्लोक एवं छाया श्लोकों का निर्माण, 'निर्वहण' के नियम आदि का इसी समय आरम्भ किया गया।

"कुट्टनीमतम्" में प्राप्त 'रत्नावली' नाटिका के अभिनय के वर्णन से यह जानना आसान है कि उन दिनों उत्तर भारत में प्रचार में रही नाटकावतरण शैली से कूटियाट्टम् बहुत-कुछ मिलता-जुलता है। रत्नावली के प्रस्तुतीकरण में भी कूटियाट्टम् के जैसे श्लोकार्थ के अलावा ध्वनियों और उपकथाओं को शामिल करके विस्तृत आंगिक अभिनय है, वैसे ही ग्रन्थपाठ के आशय से मिलाकर छायाश्लोक, संस्कृत, प्राकृत, देशी-भाषा आदि का प्रयोग तथा कूटियाट्टम् के "कमल-परिवर्तन" के समकक्ष 'सरोजवर्तन' आदि का उल्लेख भी कुट्टनीमत में है। उसका विनोदपुरुषार्थ-प्रतिपादन, विट के कान में पहनाये गये पान के बीडे के उल्लेख से इस बात का प्रमाण मिलता है कि उन दिनों के 'रत्नावली' नाटिका के प्रस्तुतीकरण से कूटियाट्टम् की रीति की बड़ी समानता है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अभिनय के अधिकारी

परम्परा से आये विशिष्ट विभाग (चाक्यार-नंबियार) परिवार मात्र के लिए निश्चित एवं उन्हीं के द्वारा प्रदर्शित की जाने वाली एक मन्दिर की कला है कूटियाट्टम्। प्रत्येक मन्दिर में इसका अधिकार चाक्यार-नंबियार के परिवारों को दिया गया है। अभिनय के लिए चाक्यार, मिष़ाव बजाने एवं वेशविधान कराने आदि का अधिकार नंबियार को, ताल वाद्य बजाना, "अक्कित्त", 'निर्वहण' के श्लोक पढ़ना, स्त्री कथापात्रों को प्रस्तुत करना आदि नंगियार को सौंपा गया। इस प्रकार एक (क्षेत्र) मन्दिर-कला-संघ ही प्रस्तुति करता चला आया। ब्राह्मण-क्षत्रिय समाज के तथा नायर (शूद्र) लोगों के बीच की श्रेणी के ये लोग अपनी राजनैतिक तथा सामाजिक प्रतिष्ठा की कमी कला की उपासना से दूर करते आये। ये तत्कालीन शासकों के विशेष प्रोत्साहन के पात्र भी बने रहे।

नैमिषारण्य के निवासी शौनक आदि ऋषियों को सूत के उपदेश के रूप में ही भागवत की कथा का श्रीगणेश हुआ था। वैसे ही चाक्यार भी ब्राह्मणों के सम्मुख ही कथा-कथन करते हैं। सूत की तरह चाक्यार भी ब्राह्मणों की सभा में आसन पर बैठ सकता है। इस प्रकार मन्दिर की इस कला में चाक्यार का स्थान पौराणिक सूत के समकक्ष है। किसी "पेरुमाल' के साथ आये एक सूत कुटुम्ब की संतान-विहीनता के साथ इस कला के अस्त हो जाने की स्थिति आयी, तो ब्राह्मण परिवार की भ्रष्ट ब्राह्मण-स्त्रियों की सन्तानों को गोद लेने की अनुमति दी गयी। गोद में लिया गया व्यक्ति अगर उपनयन कर चुका हो तो चाक्यार, अन्यथा नंबियार के रूप में स्वीकृत किया गया। लड़कियों को बिना भेद-भाव के लिया गया।

पुराने समय में भी नाट्य को परंपरागत कुलवृत्ति के रूप में निश्चित किया जाता था। नाट्यशास्त्र के निर्माता भरत के उत्तराधिकारी भरत लोग नाट्यवृत्ति को अपनी कुलवृत्ति के रूप में स्वीकार करने वाले वंशज थे। नट, नतैक, गायक, वादक, वाग्-जीवक (विदूषक), कुशीलव आदि का उल्लेख अर्थशास्त्र में है। अंबष्ठ जाति की स्त्री (यानी ब्राह्मण से वैश्य स्त्री में पैदा हुई) से वैश्य द्वारा प्रतिलोम रीति से पैदा हुए लोग ही कुशीलव कहे जाते हैं। विष्णु-स्मृति में नटों को "अयोगवन" यानी शूद्र और वैश्य स्त्रियों के प्रतिलोम बन्ध से उत्पन्न सन्तान-परम्परा के रूप में चित्रित किया गया है।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि भारत में नाट्यवृत्ति परंपरागत कुलवृत्ति के रूप में अंगीकृत थी और ये वंशज प्रतिलोम बन्ध से उत्पन्न सन्तान-परम्परा के थे। चाक्यार लोग भी प्राचीन काल से चली आई इसी परंपरा के माने जाते हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'चाक्यार' शब्द श्लाघ्य शब्द से निष्पन्न माना जाता है। पौराणिक पाण्डित्य, ज्ञान, धिषणा-शक्ति आदि से ये श्लाघ्य हैं। ब्राह्मण-वंशज होने से "श्लाघ्य-वाक्" भी हैं। वैसे सभी दृष्टि से वे "श्लाघ्य" नाम के सर्वथा योग्य हैं। "चाक्कैयन्" यानी मन्दिर में नृत्त, नाट्य आदि चलाने वाला व्यक्ति इस पद से ही चाक्यार शब्द निष्पन्न हुआ है, यों मानना भी अनुचित नहीं मालूम होता।

प्राचीन काल में अठारह नाट्य-संघों के लिए उतने ही "चाक्यार-नंबियार परिवार" भी विद्यमान थे। इनमें केवल चौदह चाक्यार परिवार और सात नंबियार परिवार के सम्बन्ध में ही जानकारी अब प्राप्त है। उनमें पोतियिल, 'चेरुपरिवा', 'अम्मन्नूर', 'कुट्टन्जोरि', 'कोय्प', 'माणि' - आदि सात चाक्यार परिवार तथा कवियूर, तृक्कारियूर, विल्ववट्टम', एटनाट, चात्तक्कुटम, कलवकत्त, कोच्चांपिल्लि, आदि सात नंबियार परिवार ही अब शेष रह गये हैं।

पुराने ज़माने में कई प्रशस्त चाक्यार लोग थे। एवूर दामोदर चाक्यार वेष और वाक्-चातुरी में प्रगल्भ थे। इसके अलावा वे कवि भी थे। यह परिवार अब नहीं है। अम्पलप्पुऴा नारायणन् चाक्यार 'वेष' में विख्यात थे। खासकर 'अऴकिय रावण' के 'वेष' में अम्मन्नूर इट्टियम्मन चाक्यार का नागानन्दम् के 'परक्कुंकूत्तु' में गरुड 'वेष' प्रसिद्ध था। कहा जाता है कि इनके इस वेश के लिए महाकवि कुचन् नंबियार के ......बड़े परमेश्वर चाक्यार तथा छोटे परमेश्वर चाक्यार दोनों ही विख्यात थे। चेरिय परमेश्वर चाक्यार ने ईश्वरपिल्लै विचारिप्पुकार को रसाभिनय सिखाया था। कुट्टच्चेटि मूत्त चाक्यार, कुट्टन्चेटि चेरिय नारायण चाक्यार, माणि परमेश्वरन् चाक्यार, किटगूर परमेश्वरन् चाक्यार — ये सभी वाक्चातुरी में सुविख्यात थे। कुट्टन्चरि मूत्तचाक्यार पन्त्रण्टूट्ट चलाकर वेदों के कुशल अध्येता बने। ये कट वललूर परिवार के अंग थे। समाज से भ्रष्ट होकर नपूम्बिरि (केरल ब्राह्मण) पद से हटाये जाने पर वेद भूल जाने के लिए दुबारा 'पन्त्रण्टूट्ट' चलाकर ये 'ओत्तम्पलप' (वेद की वेदी) से 'कूत्तम्पलम्' (कुत्तु की वेदी) की जैत्र यात्रा कर विख्यात बने महात्मा हैं।

रामायण-प्रबन्ध-प्रभाषण में अद्वितीय थे मेक्काट्टू रामन् चाक्यार। कोयप्पा रामचाक्यार यद्यपि ३२ वर्ष की उम्र में कन्याकुमारी से स्वर्ग सिधारे, तो भी इस बीच में ही वे वेश और भाषण में विख्यात हो चुके थे। कुट्टञ्चेरि नारायणन् चाक्यार की वाणी का हास्य बहुत प्रसिद्ध था। वेश में अद्वितीय किटंगूर माधव चाक्यार वीरशृंखलाप्राप्त नट और कथकलिनट केशवकुरूप के गुरु भी थे। पोतियिल नप्दकण्ठचाक्यार वाणी और वेश में प्रगल्भ थे। किन्तु कथकलिनट तोट्टम् शंकरन् नंपूतिरि को अभिनय सिखाने वाले कोच्चु नारायणन् चाक्यार का वेश ही उन दिनों सर्व-सम्मत था। किटंगूर रामन् चाक्यार का वेश भी वैसे ही प्रशस्त था। अम्मन्नूर माधवन्

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(कोच्चुकुट्टन) चाक्यार के तोरणयुद्धांक का हनुमान् और शूर्पणखांक का श्रीराम 'वेष' श्रेष्ठ था। अम्मन्नूर चच्चु चाक्यार वाणी में कुशल थे। हाल ही में परलोक सिधारे, पैंकुलम् नारायण चाक्यार का बाली और शूर्पणखा का 'वेष' प्रसिद्ध था।

अभिनय-वेदी

नैमिषारण्य में देव सभा में देवों, ऋषि-मुनियों तथा भूदेवों के लिए ही सूत भागवत की कथा सुनाते थे। वैसे ही मन्दिर के नाट्यप्रासाद में ब्राह्मणों के लिए चाक्यार लोग कथा-कथन करते हैं। मुख्य मन्दिरों में मन्दिर की प्रधान प्रतिष्ठामूर्ति के दाएं ओर ही नाट्यप्रासाद (कूत्तम्पलम्) होता है। केरल के प्रधान मन्दिर तृश्शूर, इरिंजालक्कुटा, किटंगूर, हरिप्पाड्, गुरुवायूर, पेरुवनम्, मूष़िक्कुलम्, तिरुनक्करा, चेंगन्नूर (यहां अब केवल वेदी है) इत्यादि स्थानों में कूत्तम्पलम् हैं।

नाट्य-प्रासाद कई परिमाण के हैं; वे बहुत कुछ दीर्घ चतुरस्राकार होते हैं। नाट्यगृह का आधा ही हिस्सा प्रेक्षकों के लिए छोड़ा गया होता है। दूसरा हिस्सा दो भागों में विभक्त होता है, जिसमें सामने का हिस्सा रंगपीठ और पीछे का हिस्सा नेपथ्य है। रंगपीठ के पीछे का भाग मिष़ाव का स्थान है। नेपथ्य से रंगपीठ की ओर दो वीथियाँ होती हैं। रंगपीठ के चारों ओर खंभों पर चन्दोवा होता है। इन खंभों और चन्दोवे पर कारीगरी होती है।

विष्णु-धर्मोत्तर पुराण के अनुसार 'विकृष्ट' (दीर्घचतुरस्र) 'चतुरस्र' नाम के दो नाट्यगृह है। चतुरस्र का परिणाम ३२-३२ हाथ है। नाट्यशास्त्र के अनुसार तीन प्रकार के प्रेक्षागृह या कूत्तम्पलम् हैं— 'विकृष्ट', 'चतुरश्र' और 'त्र्यश्र'। ये तीनों परिमाण के आधार पर है और तीन विभागों में विभक्त है— ज्येष्ठ, मध्य तथा अवर। सबसे बड़ा ज्येष्ठ देवों के लिए, मध्य राजाओं के लिए तथा अवर साधारण लोगों के लिए है।

केरल के कूत्तम्पलों का माप और आकार नाट्यशास्त्र और विष्णु-धर्मोत्तर-पुराण में उल्लिखित नाट्यगृहों से मेल नहीं खाते। नाट्यशास्त्र का रङ्गशीर्ष या मत्तवारणी केरल के कूत्तम्पलों में दिखायी नहीं देता। प्रतीत होता है कि केरल के कूत्तम्पलों का निर्माण 'तन्त्रसमुच्चय' तथा 'शिल्परत्न' - इन दो केरलीय ग्रन्थों के आधार पर हुआ है। उनका वास्तुशिल्प-संविधान एकदम 'नागर' रीति में तैयार किये गये केरलीय मन्दिरों के अनुरूप है। शब्द-विकृति किये बिना चाक्यार के उच्चारण की स्फुटता तथा मिष़ाव की ध्वनि-गंभीरता सदस्यों तक पहुँचाने योग्य रूप में, कूत्तम्पलों का निर्माण किया गया है।

कूत्तम्पलों को छोड़ अन्य खुले स्थानों में भी कभी-कभी 'कूत्तु' चला करता है। नागानन्दम् के चौथे अंक का परंक्कु कूत्तु गरुड को उड़ आने लायक कूत्तुपरम्पु नाम से पुकारे जाने वाले स्थान पर चलाया जाता है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आधार-ग्रन्थ

कूटियाट्टम् का आधारभूत ग्रन्थ संस्कृत रूपकों की मूल कृति है। अक्कित्ता-गीत, रंग-प्रसादन श्लोक, नंबियार का तमिल्-छायाश्लोक, प्रवेशश्लोक, प्राकृत की छाया, मलयालम् परिभाषा, प्रतिश्लोक एवं निर्वहण श्लोक आदि को मूल कृति के साथ जोड़ना होता है। किंतु अभिनय के सभी निर्देशों से तैयार किये गये 'आट्टप्रकारम्' एवं 'क्रमदीपिका' ही सबसे अधिक मुख्य और गणनीय हैं।

'आट्टप्रकारम्' में रसाभिनय की विधायें, क्रिया, स्वर, ताल़, वर्णन-परम्परा से स्वीकृत अन्य विधान आदि नट के विस्तृत अभिनय के लिए आवश्यक सभी कार्य संगृहीत होते हैं। 'क्रमदीपिका' में तो वेषविधान सम्बन्धी नियम, पात्र बदल कर अभिनय करने के नियम, मूल कथा से सम्बन्ध स्थापित करने के नियम एवं क्रियाएं संगृहीत होती हैं।

'आट्टप्रकारम्' और 'क्रमदीपिका' को प्रत्येक चाक्यार परिवार ने अमूल्य निधि के रूप में सुरक्षित रखा है। 'आश्चर्य-चूडामणि' की क्रमदीपिका तथा छठे अंक का आट्टप्रकारम श्री के.पी. नारायणपिषारटी ने प्रकाशित किया है। 'अंगुलीयकाङ्क' के लिए 'क्रमदीपिका' नहीं है, परन्तु उसका आट्टप्रकारम् बहुत प्रधान है। अकेले हनुमान् नामक कथापात्र— किष्किन्धाकाण्ड, समुद्रलंघन, रावण का देवलोकविजय, वामनावतार, हनुमद्भव आदि तथा चूडामणि के प्रथम पाँच अङ्कों का, सीता को अङ्गुलीयक (मुंदरी) देने के पश्चात् के सभी कार्यों का निर्वहण' के रूप में अभिनय करता है। सीता केवल नाट्यवेदी के संकल्प का कथापात्र है। सीता के ग्रन्थ (सम्भाषण, श्लोक आदि) नंगियार पढ़ती है। अङ्गुलीयकांकम् को बारह दिनों में पूरा करते है।

प्रतिज्ञायौगन्धरायण के तीसरे अङ्क का आट्टप्रकारम् एवं क्रमदीपिका बहुत प्रधान है। इसके लिए अनेक आट्ट प्रकार हैं। चाक्यार के वाचिकाभिनय की विदग्धता की कसौटी है मन्त्राङ्क। व्यासोत्पत्ति, वामनावतार, त्रिपुरदहन, रामायण, पाञ्चाली-स्वयंवर, सुभद्राहरणम्, खाण्डवदाह, किरातम् इत्यादि कथाओं के अलावा आधुनिकों को अश्लील अटपटा लगने वाले किन्तु लौकिक कई विषयों से गुम्फित इस अङ्क के अभिनय में इकतालीस दिन लगते हैं।

भगवदज्जुकीयम् का आट्टप्रकारम् एवं क्रमदीपिका भी बहुत प्रधान है। बहुत विशाल यह आट्टप्रकारम् आधा संस्कृत में और आधा मलयालम् में है। चार्वाक से वेदान्त तक के दर्शन, गर्भाधान से लेकर मृत्युपर्यन्त की वैदिक संस्कार क्रियाएं और उनकी विधाएं तथा बौद्धों के दैनिक अनुष्ठान भी इसमें प्रतिपादित हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नृत्तप्रधान मत्तविलास की क्रमदीपिका एवम् आट्टप्रकारम् भी इसी तरह प्रधान है। प्रतिमा नाटक तथा अभिषेक नाटक की क्रमदीपिकाएं श्री के. पी. नारायण पिषारटी के हाथ में है।

कूटियाट्टम् के लिए प्रयुक्त सभी अङ्कों के लिए सामान्यतः आट्टप्रकारम् एवं क्रमदीपिकाएं हैं। इस ग्रन्थ के दृष्टान्त-प्रकरण में नागानन्दम् के दूसरे अङ्क का आट्टप्रकार, तोरण-युद्धाङ्क की क्रमदीपिका, मन्त्राङ्क, आश्चर्य-चूडामणि के एक अङ्क (सातवां अङ्क), सुभद्रा-धनञ्जय के पहले अङ्क के आट्टप्रकारम् के कुछ अंश दृष्टान्त रूप में दिये गये हैं।

अभिनय की रीति

चाक्यार समाज के लोग माधुर्य, अक्षरव्यक्ति, पदव्यक्ति, स्वरगुण, हास्य नर्म आदि के समञ्जस सम्मेलन से युक्त वाणी से जन्म से ही अनुगृहीत होते हैं।

वैसे तो—

शृङ्गारादि रसं गलेट्टभिनयं नालोन्ट्रुषिन्नोम्पतां
भावा, वृत्तिककुं प्रवृत्तियुमिवं नन्नालु सप्तस्वरम्।
रण्टे धर्मि, यिरण्टु सिद्धिकल् तथा गानंगल् पस्चैव ना-
लातोद्यंगुल रंण्टु मुष्टितिने नां कूत्तेन्नु कैकोण्टितु।

(सा.पा. त्रैमासिक, पुस्तक ३ - अंक ३)

शृंगार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, बीभत्स तथा अद्भुत — ये आठ रस; सात्त्विक, आंगिक, आहार्य और वाचिक में चार अभिनय; रति, हास, शोक, क्रोध, उत्साह, भय, जुगुप्सा एवं विस्मय — ये आठ भाव; भारती, सात्त्वती, आरभटी एवं कैशिकी — ये चार वृत्तियां, वैण और शारीर ये दो सप्तस्वर; आवन्ती, दाक्षिणात्या, पाञ्चाली, पुण्ट (औड्र) मागधी - ये चार प्रवृत्तियां; लोकधर्मी एवं नाट्यधर्मी — ये दो इतिकर्तव्यतायें; दैवी, पौरुषी — ये दो सिद्धियां; प्रासादिकी, अक्ष्वेलिका, प्रावेशिकी, उत्तरा, नैष्क्रामिकी — ये पांच प्रकार के गान (ध्रुवायें), घन, सुषिर, अवनद्ध और तत — ये चार प्रकार के वाद्य; विकृष्ट, चतुरश्र, त्र्यश्र — ये तीन प्रकार की वेदियां (प्रेक्षागृह) — इनसे समन्वित है कूत्तू अथवा कूटियाट्टम्।

इस श्लोक में कूटियाट्टम् का निर्वचन नाट्यशास्त्र के आधार पर करने का प्रयास किया गया है। बाद में देखा जाएगा कि वह कहां तक संगत है।

यह बेशक बता सकते हैं कि चतुर्विधाभिनय में प्रत्येक को उसके परम उत्कर्ष में प्रस्तुत करने वाली दृश्यकला कूटियाट्टम् के अलावा दूसरी नहीं है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नाट्यशास्त्र के अनुसार रति, हास, शोक, क्रोध, उत्साह, भय, विस्मय — ये आठ स्थायी भाव, तैंतीस व्यभिचारी भाव तथा आठ सात्त्विक भाव हैं। विभिन्न भावों से युक्त स्थायी भाव ही रस बनते हैं। दूसरी दृष्टि में यह कि विभावों से उत्पन्न स्थायी भाव व्यभिचारी भावों से संपुष्ट होकर, अनुभाव तथा सात्त्विक भावों से प्रकट होकर आस्वादक तक पहुंचने पर रसाभिनय बनता है। नाट्यशास्त्र के अनुसार ऐसे रस शृंगार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, बीभत्स के नाम से आठ हैं।

सात्त्विकाभिनय—

नाट्यशास्त्र कहता है - **सत्त्वं नाम मन : प्रभवं, तच्च समाहितमनस्त्वादुत्पद्यते। मनसः समाधौ सत्त्व-निष्पत्तिर्भवति। तस्य च योऽसौ स्वभावो रोमाञ्चा-श्रुवैवर्ण्यादिलक्षणो यथाभावोपगतः स न शक्योऽन्यमनसा कर्तुमिति लोकस्वभावानुकरणाच्च नाट्यस्य सत्त्वमीप्सितम्— इह हि नाट्यधर्मप्रवृत्ताः सुखदुःखकृता भावास्तथा सत्त्वविशुद्धाः कार्या यथा स्वरूपा भवन्ति; दुःखं नाम रोदनात्मकं तत् कथम् अदुःखितेन, सुखं च प्रहर्षात्मकमसुखितेनाभिनीयते? एतदेवास्य सात्त्विकत्वम्।**

सत्त्व की उत्पत्ति मन से है। मन लगाने पर ही उसका आविर्भाव होगा। मन की एकाग्रता में ही सत्त्व निष्पन्न होता है। प्रत्येक भाव में प्रत्येक के अनुसार उत्पन्न रोमाञ्च, अश्रु, वैवर्ण्य होता है। सात्त्विक के स्वभाव का दूसरी किसी चिन्ता के बीच आविर्भाव होना असंभव है। लौकिक स्वभाव का सत्त्व ही नाट्य के लिए उपयुक्त है। अभिनय में आविष्कृत किये जाने वाले सुख-दुःख-जन्य भाव संपूर्ण मनोयोग से ही सिद्ध होंगे।

दुःख में रोदन तो चाहिए ही। जिसे दुःख का अनुभव कभी नहीं हुआ तो वह कैसे दुःख का अभिनय करेगा? वैसे ही सुख में प्रहर्ष तो चाहिए ही। जिसे सुख का अनुभव नहीं हुआ तो वह कैसे सुख का भी अभिनय करेगा? यही तो उसका सात्त्विकत्व है।

मुनिगण भरत से एक प्रश्न करते हैं- "कोई नट राम जैसे किसी कथापात्र के सुखदुःखों का स्वयं भोग किये बिना स्वाभाविक रूप से अभिनय कर सकता है"। भरत ने कहा कि वह सत्त्व से कर सकता है। सात्त्विकाभिनय में वह स्वयं सुख-दुःख स्वीकार करने में समर्थ हो। नट को अपनी मानसिक स्थिति भूलकर कथापात्र की मानसिक अवस्था तक पहुंचना है। सामान्याभिनय नामक प्रकरण में भरत ने कहा है कि जिस रूपक के प्रस्तुतीकरण में सात्त्विकाभिनय को अधिक प्रधानता दी जाती है वही श्रेष्ठ माना जाता है। कूटियाट्टम् सात्त्विकाभिनय के विषय में दुनिया के किसी भी रूपकावतरण से अधिक उन्नत स्तर में विराजमान है।

कूटियाट्टम् के नट द्वारा स्वयं को भूलकर कथापात्र के स्वरूप को स्वीकार करने की प्रक्रिया का विवरण दिया जाएगा।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चाक्यार द्वारा मन्दिर के तालाब में स्नान कर शरीर-शुद्धि करने के साथ-साथ यह प्रक्रिया आरम्भ होती है। उसके बाद ही नेपथ्य में आकर गुरु तथा देवों की वन्दना करता है। नया वस्त्र या रजक द्वारा साफ किया गया वस्त्र ही चाक्यार पहन सकता है। वेश-विधान के प्रारंभ के रूप में भाल पर 'चुवप्पुतुणि' (लाल रिब्बन) बांधने के साथ-साथ चाक्यार दिव्यत्व प्राप्त कर लेता है। चाक्यार निर्दिष्ट कथापात्र के ध्यान मे डूब जाते हैं। उस ध्यान से कोई भी उन्हें निवृत्त नहीं कर सकता। वे कुछ बोलेंगे भी नहीं, उस समय किसी भी सवाल का जबाब भी न देंगे। अपने किसी रिश्तेदार की मृत्यु का अशौच तक चुवप्पुतुणि बांधने पर उसे उतारने तक चाक्यार के लिए बाधक नहीं होता। कूटियाट्टम् में पहले प्रधान पुजारी (कूरा) कपड़ा एवं पवित्र जल देकर अनुगृहीत करता है। गर्भगृह में जलने वाली बत्ती से अपने हाथ का दीप जला कर उससे रङ्गवेदी पर रखे कूत्तु के दीप को प्रज्ज्वलित करते हैं। चाक्यार गणेश, सरस्वती आदि को नैवेद्य समर्पित करते हैं। नंगियार गणेश, सरस्वती तथा दिगधिपतियों की स्तुति करती है।

रङ्गमञ्च की तीन शिखाएं त्रिमूर्तियों के सान्निध्य की सूचक-स्वरूप हैं। कूत्तु के सामाजिक (दर्शक) दैवलोक में देव, नैमिषारण्य में ऋषि और भूमि में भूदेव (ब्राह्मण) भी होते हैं।

कूटियाट्टम् के अधिकांश नट दीपशिखाओं में ध्यान लगाकर टक-टकी बांधे देर तक खड़े हुए देखते हैं। इस स्थायी में खड़े होने पर चारों तरफ़ के दृश्य आंखों से ओझल हो जाते हैं।

"सोऽस्मीति मनसा स्मरन्" वाली स्थिति है यह। स्वयं जिस कथापात्र का प्रतिनिधित्व करने जा रहा है उसके साथ तादात्म्य प्राप्त कर उस कथा-पात्र के स्थायी भाव को आत्मसात् करने की प्रक्रिया का यही सभारम्भ है। अगर विदूषक का प्रवेश है तो वह अपना चेहरा छिपा कर प्रार्थना-श्लोक पढ़ता है या "पुरुषार्थचतुष्टय की सिद्धि के लिए"—— इत्यादि पीठिका का पाठ कर विदूषक स्तोभ दिखाकर उसी कथापात्र के स्थायी भाव को आत्मसात् करता है।

अगर मनुष्य नहीं, वानर सुग्रीव है तो पहले "वानर-स्तोभ" दिखाकर वानर की, सुग्रीव की स्थायी में प्रवेश करने के बाद ही विभिन्न व्यभिचारी भावों से युक्त अभिनय प्रारंभ करता है। अगर जटायु का प्रवेश हो तो पहले "पक्षिस्तोभ" दिखाकर फिर जटायु की स्थायी में प्रवेश करता है।

नाटक द्वारा कथापात्र का स्थायी भाव आत्मसात् करने की यह प्रक्रिया कथकलि में "तिरनाट्टम" करने वाले (यवनिका को पकड़े धीरे-धीरे हटाकर सभा-निरीक्षण करना) कथापात्रों को छोड़कर और किसी में नहीं। कूटियाट्टम् के सात्त्विकाभिनय के कुछ सुमेरु दृष्टान्तः—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(१) सुभद्रा-धनञ्जय के प्रथम अङ्क में विचारमग्न अर्जुन का प्रवेश।

(२) अशोकवनिकाङ्क में कामातुर रावण का प्रवेश।

(३) तोरणयुद्धाङ्क में क्रोधविवश रावण का प्रवेश।

(४) रामबाण से आहत बालि की मृत्यु।

(५) तोरण-युद्धाङ्क में भयभीत शंकुकर्ण का प्रवेश।

१. सुभद्रा-धनञ्जय में धनञ्जय-प्रवेश

यवनिका पकड़ी जाती है तो उसके पीछे धनञ्जय का आकर खड़े हो जाना, मिष़ाव की गंभीर ध्वनि, इटक्का (बाजा) का मृदु शब्द, मंजीरे का शब्द, घुंघरू-निनाद, कुरुकुष़ल (छोटी तुरुही) का मधुर कूजन, और शंख नाद के साथ मिल कर प्रेक्षकों के मन को सचमुच किसी दूसरी दुनिया में ले जाते हैं और साथ-साथ यवनिका हट जाती है।

"ततः प्रविशति धनुर्बाणपाणिर्धनञ्जयः"।

धनञ्जय-(अर्जुन)-भूमिकाधारी नट, बायें हाथ में कमान, दायें में बाण, किरीट, केशभार, रत्नपट्ट, पीलिप्पट्ट, चेविप्पूव, कुण्डल, कुर्ता (कुप्पायं) छन्नवुरं, वोष़ुप, छाती की माला (मारमाला), कटक, तोलवला, पोयनख, कटिसूत्र, इत्यादि राजोचित अलङ्कार, चेहरा श्याम, चुट्टी, चुण्टप्पू डालकर लाल किये होंठ, काजल-लगायी लंबे कोर वाली आखें, भौंहें आदि से सज कर दीपशिखा में आंखें लगाये खड़े हैं। थोड़े ही समय में "सोऽस्मीति मनसा स्मरन्" वाली स्मृतिक्रिया से नट से धनञ्जय ही बन जाते हैं। उसके बाद धनञ्जय अपनी महिमा का स्मरण करते हैं। पूर्व काल की अपनी वीरोचित चेष्टाएं, पाञ्चाली-स्वयंवर तथा उसके पूर्व तथा पश्चात् की स्वयम् अर्जित विजय, इनकी स्मृति से उत्साह नामक स्थायी भाव जग जाता है। इसे स्पष्ट करने के लिए उसकी उत्पत्ति के निदान, वीर रस के प्रतीक तीर-कमानं धीरे से देखने लगते हैं। इसी के साथ धनञ्जय की स्थायी पूर्ण रूप से उपलब्ध होती है। इसके बाद (सचिन्तं निःश्वस्य) के अभिनय में प्रवेश करते है। उसकी पहली सीढ़ी "स्मृति" नामक व्यभिचारी भाव है। धनञ्जय, अपने तीर्थ-स्नान के लिए निकलने के बाद के सभी सुख-दुःखों का स्मरण कर, अपनी प्रतीक्षा करने वाले माता, गुरुभूत भ्रातृगण, प्रियतमा द्रौपदी, अनुज आदि के दर्शन करने का अपना कर्तव्य याद करते हैं। एक ओर कर्तव्य उन्हें गुरुजनों की ओर खींचता है, तो दूसरी ओर प्रभास तीर्थ में 'गद' के मुख से सुनी सर्वाङ्ग-सुन्दरी, समस्त गुणों से युक्त श्रीकृष्ण की सहजा सुभद्रा के गुण-गण, उसके साक्षात् न देखने पर भी उसे अपनी ओर खींच रहे हैं। इन्द्रप्रस्थ वापस जाना है या द्वारका में

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्रीकृष्ण की भगिनी के पास जाना है— इस मानसिक संघर्ष से चिन्ताविष्ट हो धनञ्जय दीर्घनिःश्वास लेते हैं, इस व्यभिचारी भाव का स्पष्ट अभिनय कर दिखाना आसान नहीं; सब भाव एक लंबी सांस से ही स्पष्ट कर देते हैं- (सचिन्तं निःश्वस्य)।

अब तक की चिन्ताएं बीते दिनों की थीं, किन्तु अब की चिन्ता आगे के अपने कर्तव्य की रह गयी - "क्या इन्द्रप्रस्थ वापस जाऊं? द्रौपदी क्या सोचेगी? जब तीर्थ-यात्रा पर निकला था तो उसके दिए कटाक्ष-रूपी पाथेय (रास्ते का भोजन) को स्मरण में रखते विप्रलम्भ शृंङ्गार में पहुंचते हैं। तब तक सुभद्रा के गुण-गण उस स्मृति पर हावी हो जाते हैं। गाण्डीवधारी धनञ्जय को कुसुमायुध द्वारा पराजित किये जाने पर अद्भुत प्रकट करते हैं। फिर स्वयं न देखी हुई सुमुखी सुभद्रा का 'केशादिपाद' मन में गुन कर, उसके अङ्ग-प्रत्यङ्ग का वर्णन करते हैं। अन्त में कुसुमबाणों से आहत हो बेसुध होकर फिर जाग पड़ते हैं। करीब पैंतालीस मिनटों में इतना अभिनय पूरा किया जाता है। ऊपर की विकार परंपरा को स्पष्ट करने वाला "अम्बास्तन्यमहाभिषेकमुपरि प्रेमाश्रुपातं गुरोः" श्लोक का अभिनय शुरू कर देते हैं—

"अम्बास्तन्यमहाभिषेकमुपरि प्रेमाश्रुपातं गुरो-
रार्यस्यापि वृकोदरस्य चरणाश्लेषं यमाश्लेषणम्।
कृष्णायाश्च कटाक्षवीक्षणसुखं नासादयं प्रापितः
पुष्पेषोर्विशिखैर्मुकुन्दसहजासन्मार्गपुष्पस्पृहाम्।।"

इस श्लोक का अभिनय पूरा कर, (पुनर्विचिन्त्य) पुनः विचार-मग्न होकर आनन्द के साथ (सानन्द) अथवा 'अवञ्चित एवाहममुना कुसुमधन्वना।'— इस कामदेव ने मुझे धोखा नहीं दिया - इस भाव का अभिनय होता है।

२. अशोक-वनिकाङ्क में काममोहित रावण का प्रवेश

सुभद्रा-धनञ्जय के धनञ्जय का (सचिन्तं निःश्वस्य) अभिनय भी हम देख चुके। उद्यान-प्रवेश के रावण का (सचिन्तं निःश्वस्य) निःश्वास सीता की सभी स्थितियों का विचार कर बढ़ते आये काम का परिणाम है।

कामातुर रावण, वेशविधान कर, समस्त गहनों से विभूषित होकर, छत्र, चामर, आलवट्ट (मोरपंखे का तालवृन्त) दीप (कुत्तुसवलक्क्) आदि से अन्वित होकर 'वर्षवर' के सिर पर हाथ धरे निर्दिष्ट स्थायी में मिश्राव के पास खड़े होकर थोड़ी दूर की दीपशिखा पर दृष्टि गड़ाए चिन्तित होकर सीता के दर्शन की अभिलाषा से उद्यान में देखकर सीता की जो विमुखता है, उस पर विचार करता है। फिर सीता का ध्यान कर उसके केशादि-पाद का अभिनय करता है। केशादिपाद तथा साङ्गोपाङ्ग वर्णन के उपश्लोक आदि के अभिनय के लिए करीब ढाई (२$^{1}/_{2}$) घण्टे लगेंगे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इसके साथ-साथ प्रेक्षकों के अनजाने ही रावण रङ्गमञ्च के दीप के पास पहुँच चुका होगा। इस अभिनय के अन्त में कामशर लगने से मोहित हो (बेसुध हो कर) आंखे मूंद लेता है, फिर बेसुधी से धीरे-धीरे जाग कर, सीता के प्रति अनुराग की चरम सीमा तक पहुंचने के सूचक 'सचिन्तं निःश्वस्य' का अभिनय करता है, इस प्रकार का एक ही निःश्वास नट के लिए संभव है, दूसरा असंभव है।

३. बालिवधाङ्क में बाली की मृत्यु (करुण)—

शर छाती में लगता है; शोक स्थायी भाव; व्याधि नामक व्यभिचारी भाव; बाली सुग्रीव के कंधे के सहारे गिरते-से डगमगाते रङ्ग में आकर दीप के पास पीठ के बल लेटे-से दोनों पैर पसारकर बैठता है (शर लगने की व्यथा आदि है उस समय का भाव), थकावट बढ़ जाती है, ऐसा दूसरों को प्रतीत होने देकर वाक्य पढ़ते हैं, पहले साधारण रीति में, फिर शोक में, फिर आवाज़ की स्पष्टता कम होते-होते धीमी स्थायी में अक्षर लुप्त होते मृत्यु के क्रम से छाती पर बीच-बीच में हाथ जोर से रखकर ऊर्ध्व न देखते हुए उसमें क्षुद्रक, तमक, छिन्न, महान्, इस क्रम से सांस खींचते हुए (बीच में छिन्न होना बाधा डालता है तो फिर शुरू से दोहरा कर) मामूली सांस को लंबी कर मृत्यु के समय की सी गिनतियाँ पूरी कर खिंचती आंखों की पुतलियों को मृतक की स्थायी में खड़ा कर दक्षिण की ओर घूम कर गिर जाने का अभिनय करता है।

४. तोरण युद्ध में रावण का प्रवेश (रौद्र रस) —

यवनिका पकड़ी जाती है, बाजों की गूँज घन-घोर होने लगती है, दोनों ओर मशालें जलने लगती हैं। चमका देने वाले चूर्ण (तेल्लि) से मशालें भभक-भभक कर जगमगाने लगती हैं। अचानक वहाँ महाराज प्रतापलंकेश्वर प्रकट होते हैं। औद्धत्य की प्रतिमूर्ति, क्रोध से प्रज्ज्वलित चेहरा, लाल-लाल आंखें, सिकुड़ी पलकें, चञ्चल कपोल, कांपते अधर, बाहर निकले दाँत, नाक और भाल पर फूल, राजोचित किरीट, हार, कटक, अंगद आदि आभूषण, दाये हाथ में चन्द्रहास, बायें बँधी हुई मुट्ठी, थोड़ा सा पीछे की ओर सिर। छाती ताने हुए, स्थिर पैर, अतिरूक्ष अक्षि-विक्षेप (दृष्टि), प्रलय के सूर्य के समान जाज्ज्वल्यमान रूप (सरोषो युगपरिणामसमुद्यतो यथार्कः)।

दीपशिखा, तलवार तथा रङ्गमञ्च पर उत्कट दृष्टि-विक्षेप कर रौद्र भाव दिखाकर अट्टहास कर धीरे-धीरे दाएं मुड़कर नेपथ्य की ओर आगे, बायीं ओर से तेजी से प्रवेश करता है। फिर क्रोध दिखाकर वापस भाग कर पुनः तेजी से प्रवेश करते हुए तलवार रखकर मशालें पकड़कर गरजते हुए पूरे के पूरे रङ्गमञ्च पर से क्रोध भाव में डूबे हुए निकल जाता है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

५. तोरण युद्धांक में शंकुकर्ण का प्रवेश (भयानक) —

(आट्टप्रकारम् से) रंग-प्रसादन कर, यवनिका पकड़ कर वादन कर (वायिकुक) मरियल् वट्टत्तिल् नटत्वान् कोट्टियाल् - (बाजा बजने पर) यवनिका के अन्दर मण्डलाकार चलने के लिए बाजा बजने पर, नेपथ्य से अभिवाद्य करके दोनों हाथों से कुड़ल (सिर पर का गोलाकार किरीट) पकड़ कर दो-तीन बार घूम कर, आचमन कर (कलियुं वेच्च तिरिन्ज) एक प्रकार की क्रिया कर, कुड़ल पकड़ कर बहुत अधिक डरता-सा अभिनय कर, शरीर कंपा कर 'जें, वें' यों रो कर, फिर डर कर एक हाथ 'माट्ट' पर थामे, नेपथ्य के दोनों ओर के दरवाजों की ओर देखकर "पीछे बानर आ तो नहीं रहा" यों मुद्राभिनय कर, सुनता है— हनुमान् का पेड़ उखाड़कर गरजना! डरते हुए भाग कर 'काञ्चन-तोरण-द्वार' पर पहुंचा, यों दिखा कर विलक्कि (बाजा रोकते) दाएं ओर "क इह भोः काञ्चनतोरणद्वारमशून्यं कुरुते" यों अस्पष्ट रूप में पढ़कर हाथ पर हाथ थामे, खूब रो कर (विलक्कि) 'चेटीपञ्चम राग' में साफ़ पढ़कर - "अये, यहाँ काञ्चन तोरण द्वार को कौन अशून्य करता है" अर्थाभिनय कर 'विलक्कि', दूसरी बार पढ़ कर, रोकर 'विजया' का ग्रन्थ ('केट्टाटुक') सुनता हुआ - सा दिखा कर अभिनय करता है। इस प्रकार नाटिकाभिनय शुरू हो जाता है।

आङ्गिकाभिनयः—

सात्त्विकाभिनय की तरह आङ्गिकाभिनय मानसिक विकारों को प्रतिबिम्बित नहीं करता। इसलिए प्रकट किये जाने वाले सुख-दुःख-जन्य भावों के लिए दूसरे विकारों को हटाकर, आवश्यक विकारों में मन को एकतान बना कर सत्त्व निष्पन्न करने की प्रक्रिया आङ्गिक के लिए आवश्यक नहीं। वैसे ही सात्त्विकाभिनय के लिए आवश्यक जन्मजात शक्ति, भाव-रसाभिनय के योग्य मुख-सौभाग्य आदि अनुकूल गुण आङ्गिक के लिए आवश्यक नहीं। आङ्गिकाभिनय की प्रगल्भता अभ्यास के बल पर कोई भी नट हासिल कर सकता है।

मुखाभिनय को कुछ लोग भ्रम से आङ्गिकाभिनय समझते हैं, यह ठीक नहीं हैं; मन से उद्भूत सत्त्व के बहिःस्फुरण से ही सात्त्विकाभिनय सफल होता है। सुभद्रा-धनञ्जयम् का प्रसिद्ध श्लोक-

शिखिनि शलभो ज्वालाचक्रैर्न विक्रियते पतन्
पिबति बहुशः शार्दूलीनां स्तनं मृगशावकः।
स्पृशति कलभः सैंहीं दंष्ट्रां मृणालधिया मुहुः
नयति नकुलं निद्रातन्द्रीं लिहन्नहिपोतकः।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इसका अभिनय पहले केवल चेहरे के भावों से करते हैं। हाथ बांधे स्थिर पाद में खड़े होकर पहले सिर के उपांग का आंखों से अभिनय करते हैं। उसके बाद भौहें, आंखें, नाक, होंठ, गाल, चिबुक आदि उपांगों से अभिनय करते है। अन्त में मुद्रा के साथ भी अभिनय करते है। आङ्गिकाभिनय का शीर्षस्थ उदाहरण प्रस्तुत श्लोकाभिनय में मिलता है।

आङ्गिकाभिनय मुख्यतया (१) आख्यान निर्वहण (घटनाओं का विवरण आदि) के लिए (२) वर्णनों के लिए, जैसे पर्वतवर्णन, समुद्रवर्णन, उद्यानवर्णन (३) उपश्लोकों के लिए - जैसे "अस्याः कचानां" (४) कैलासोद्धरण, भटप्पुरप्पाट् (सैनिकों की कूच) इत्यादि अभिनय के लिए (५) केट्टाटुक आदि संकेतों के लिए प्रयोग में लाते हैं। विदूषक को छोड़ बाकी अधिकांश कथा-पात्रों का अभिनय आंगिक-प्रधान कहा जा सकता है। शूर्पणखा आदि नीच कथापात्रों के अभिनय में स्वाभाविकता के लिए या नीचत्व उभारने के लिए आङ्गिक को विकृत रूप में प्रस्तुत करते हैं। वाचिक भी इसी रूप में करते हैं। नाट्यशास्त्र-विधि के अनुसार आङ्गिकाभिनय पर आगे विचार किया जायेगा।

नाट्यशास्त्र के भावव्यञ्जन और रसविकल्प अध्याय पढ़ने वालों को पता चलेगा कि उसके रचयिता कुशल मनोवैज्ञानिक हैं। विविध मानसिक विकारों का—भावरसों का — वैज्ञानिक ढंग से कार्य-कारण-युक्त विश्लेषण कर उन भाव-रसों को लौकिक स्तर से कला के स्तर तक ऊपर उठा लाना कुशल से कुशल मनोवैज्ञानिक के लिए भी आसान नहीं।

वैसे आङ्गिकाभिनय का अध्याय पढ़ने पर विदित होगा कि नाट्यशास्त्र के निर्माता ऊँचे दर्जे के शरीरशास्त्रज्ञ भी थे। शरीर के विविध भागों को अंगों तथा उपांगों में विभक्त कर उनकी स्वाभाविक चाल का सूक्ष्म निरीक्षण कर, उन चलनों का दैनिक जीवन के व्यापार में काम में आने वाली वस्तुओं तथा वास्तविकताओं से साधर्म्य कल्पित कर अङ्गोपाङ्गों के चलाने से कलात्मक ढङ्ग से जीवन को प्रकट करने लायक आङ्गिकाभिनय को सुव्यवस्थित बनाया है।

नाट्यशास्त्र में, नाट्य के लिए शरीर को सिर, हाथ, वक्ष, पहलू, कटिप्रदेश, पैर — ऐसे छह अङ्ग में और सिर को-भौहें, आंखें, नाक, होंठ, गाल, चिबुक — ऐसे छह उपाङ्ग के रूप में विभक्त किया गया है।

शरीराभिनय के लिए दस अंगों का कर्म विस्तार से बताया गया है। सिर के तेरह कर्म, गले के कर्म (ग्रीवाक़) नौ, हस्ताभिनय छयासठ (२४ असंयुत, १३ संयुत और २१ मिश्र) उरः के पाँच, पार्श्व के पाँच, उदर के पाँच, कटि के पाँच, जाँघ के पाँच, पैरों के छह, उपाङ्गों में भौंहों के सात, आँख के छह, नाक के छह, हाथों के छह,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गालों के छह, चिबुक के सात, चेहरे के छह कर्म और चार राग हैं। इसके अलावा जहाँ तक आंख का सम्बन्ध है आठ दृष्टिपात, नौ पुटकर्म, नौ ताराकर्म, सात भृकुटी-कर्म (भौंहों का काम), आठ स्थायी दृष्टियां, आठ रस-दृष्टियां और बीस सञ्चारी दृष्टियों का भी उल्लेख है।

श्री चाक्यार ने इस ग्रन्थ में रसदृष्टियों और भावदृष्टियों के अलावा चौबीस सञ्चारिणी दृष्टियों, बाईस व्यभिचारिणी दृष्टियों का विश्लेषण कर प्रतिपादन प्रस्तुत किया है। नाट्यशास्त्र में तैंतीस व्यभिचारी भावों से भिन्न किसी और सञ्चारी भाव का उल्लेख नहीं है।

कूटियाट्टम् में हंस्तमुद्राएँ "हस्तलक्षणदीपिका" से रखी गयी हैं। नाभि के नीचे, नाभि के सम्मुख, छाती के सम्मुख, भाल के सम्मुख व भाल के ऊपर, इस प्रकार पांच स्तरों पर मुद्राएं दिखायी जाती हैं। किन्तु कूटियाट्टम् में पसारी हुई कोहुनियों के आगे मुद्राएं ले जाने का अधिकार नहीं। चेहरा सीधा रख कर आर-पार घूमे बिना दोनों पार्श्वों में जहां तक आँखें ले जा सकते हैं उसके आगे मुद्राएं दिखाने का नियम नहीं।

'इरुन्नाट्टम्', 'पतिञ्ञाट्टम्', 'इळकियाट्टम्' के नाम से आंगिकाभिनय के तीन भेद हैं। इरुन्नाट्टम् - आसन पर बैठकर और पतिञ्ञाट्टम् - समपाद में खड़े होकर किया जाता है। 'इळकियाट्टम्' में नट को सभी प्रकार के अङ्ग-विक्षेप की स्वतन्त्रता है, घूमना-कूदना इत्यादि कर सकते हैं। वीर, अद्भुत, भयानक - इत्यादि रसों के लिए अक्सर इळकियाट्टम् का विधान है।

यह हमें "चारी" नामक पदविन्यास की ओर ले जाता है। पैर, घुटने तक टाँग, ऊरु, कमर — ये अंग मिलाकर किया जाने वाला पदविन्यास है 'चारी'। नाट्यशास्त्र में समपाद आदि सोलह भूमिचारियों, अतिक्रान्ता आदि सोलह आकाशचारियों का उल्लेख है। कूटियाट्टम् में ये दोनों प्रकार की चारियां है। ज़मीन का स्पर्श करते हुए 'कलकलवाद्यम्' 'चारी', कोणात्तुचारि, केट्टित्तिरियुक, माटमेटुक्कुक आदि भूमिचारियां,, वट्टत्तिल चाटुक, अंबरायणम्, 'जति', 'मेय्य', 'परिक्रमम्', 'नत्तम्' 'रण्टांनट', 'कोणोट्टम क्रिया', हास्यक्रिया आदि आकाश-चारियां हैं।

अवस्थाभेद, रसभेद व पात्रभेद के अनुसार गतिभेद भी होते हैं। कूटियाट्टम् में प्रत्येक विभाग के कथापात्र के लिए विशिष्ट चारियां (गति) निश्चित की गयी हैं। उन्हें प्रस्तुत ग्रन्थ में चाक्यार ने अंकित किया है। वानरों के लिए 'वट्टत्तिल चटि नटक्कल' है। असुरों के लिए पैर अधिक ऊंचा उठाए बिना "वट्टत्तिल चाटि नटकल" है। ब्राह्मणों को कपड़ा हिलाते हुए चलना है। अगर स्त्री और पुरुष कथापात्र एक साथ प्रवेश करते हैं तो पुरुष कथापात्र को स्त्री की चाल का अनुकरण करना है। इस प्रकार और भी गति भेद हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हस्ताभिनय में लौकिक मुद्राएं जितनी नाट्यशास्त्र में हैं, कूटियाट्टम् में उनसे कम है। परन्तु तान्त्रिक मुद्राएं अधिक है। वैसे कूटियाट्टम् की चारियां - गतियां - सब नाट्यशास्त्र में विहित से यानी सच्चाई से बहुत दूर हैं। वैसे आङ्गिकाभिनय में नाट्यशास्त्र जब लोकधर्मी-प्रधान रहता है तब कूटियाट्टम् नाट्यधर्मों पर अधिक आधारित है।

वाचिकाभिनयः —

कूटियाट्टम् का वाचिक गद्य हो या पद्य, प्रत्येक राग में पढ़ा जाता है। केरलीय ब्राह्मणों के यजुर्वेदोच्चारण तथा चाक्यार लोगों के स्वरों में समानता है। आधुनिक संगीत के यथार्थ से चाक्यार की शब्द शैली मेल नहीं खाती, और उसका उद्देश्य भी नहीं। कूटियाट्टम् का शब्दविधान ध्वन्यात्मक ढंग से कथापात्रों का मनोभाव स्पष्ट करता है, न कि साधारण जीवन के वार्तालाप का अनुकरण। फिर भी कहना पड़ता है कि वैज्ञानिक ढंग से तैयार की गयी एक विशिष्ट रीति से 'उदात्त', 'अनुदात्त', 'स्वरित' व 'कम्पित' स्वरों के आधार पर गद्य पदों को लंबे स्वर में पढ़ने की रीति, कूटियाट्टम् में रसाविष्कार के लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुई है।

कूटियाट्टम् में नायक आदि नट, प्रत्येक श्लोक के लिए निश्चित स्वर में ही उन-उन श्लोकों का पाठ करते हैं। स्त्री-पात्र तथा विदूषक की भाषा प्राकृत है। देशी भाषा के श्लोक पढ़ना, और स्त्री-कथापात्रों की प्राकृत की संस्कृत छाया पढ़ना आदि का दायित्व विदूषक पर निर्भर है। शूर्पणखा जैसे नीच पात्रों का वार्तालाप नीच भाषा में है। कुछ विशेष प्रसंगों में सम्बोधन भी विशिष्ट रीति का होता है। उदाहरण के लिए 'अशोकवनिकाङ्क' में रावण 'हिमकर' यों चन्द्रमा को तीन बार पुकारता है, पहले षड्ज में, फिर पञ्चम में और फिर तार स्वर में। चांद का ध्यान आकृष्ट करने के लिए इन तीन स्वरों में सम्बोधन कूटियाट्टम् की विशेषता है। इस प्रकार कूटियाट्टम् में नाट्यशास्त्र के विधान से भी अधिक श्रेष्ठ रीति से ध्वन्यात्मक वाचिकाभिनय है। नाट्यशास्त्र के 'कृष्याक्षर' को कूटियाट्टम् में व्यञ्जनों के अन्त में स्वर को लम्बा कर स्वीकृत किया गया है।

नाट्यशास्त्र की परिभाषा व नियम यहां ज़रा देख लेंगे—

(१) स्वरः— षड्ज, ऋषम, गान्धार, मध्यम, पञ्चम, धैवत व निषाद यों सात स्वर हैं। इनमें श्रृङ्गार और हास्य के लिए मध्यम और पञ्चम, वीर-रौद्र व अद्भुत के लिए षड्ज व ऋषभ, करुण के लिए गान्धार व निषाद, बीभत्स-भयानक के लिए धैवत अनुयोज्य माना गया है।

(२) स्थायियां :— उरः (छाती) से उत्पन्न स्वर मन्द्रस्थायी के, कण्ठ से उत्पन्न मध्यस्थायी के और सिर से उत्पन्न तार स्थायी के होते हैं। गद्यपाठ मन्द्रस्थायी में शुरू होकर तारस्थायी तक जाकर मध्यस्थायी में समाप्त करना है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(३) वर्ण :— उदात्त, अनुदात्त, स्वरित व कंपित के चार वर्ण होते हैं। इनमें शृंगार-हास्य के लिए उदात्त, स्वरित, वीर, रौद्र और अद्भुत के लिए अनुदात्त, स्वरित तथा कम्पित निश्चित हैं।

(४) काकु :— वाक्य के उच्चारण में पूरा अर्थ प्रकट करने वाले, प्रकट न करने वाले के आधार पर 'साकांक्ष' व 'निराकांक्ष', - दो प्रकार के काकु हैं। तारस्थायी में शुरू कर मन्द्रस्थायी में समाप्त कर वर्ण और अलङ्कार 'साकांक्ष' में पूरा करते हैं। मन्द्रस्थायी में शुरू कर तारस्थायी में खतम कर 'निराकांक्ष' वर्ण और अलङ्कार से पूरा करते हैं।

(५) अलङ्कार :— उच्च, दीप्त, मन्द्र, नीच, द्रुत और विलम्बित - ये छः अलंकार हैं।

(क) उच्च :— तारस्थायी, दूरभाषण, विस्मय, उत्तरोत्तर जल्पन, दूराह्वान आदि के लिए है उच्च।

(ख) दीप्त :— तारस्थायी, कलह, विवाद, अमर्ष, क्रोध आदि के लिए है।

(ग) मन्द्र :— मध्यस्थायी, निर्वेद, ग्लानि, शङ्का, चिन्ता, औत्सुक्य, दैन्य, आवेग, आधि-व्याधि, मूर्च्छा, मद आदि के लिए है।

(घ) नीच :— मन्द्रतरस्थायी, स्वाभाविक भाषण, व्याधि, पथ में श्रान्त, त्रस्त, पतित, मूर्च्छा इत्यादि के लिए है।

(ङ) द्रुत :— मध्यस्थायी, प्यार-दुलार मन्मन (प्रियतमा द्वारा तिरस्कार किया जाना), कामावेश, भय, रति, ज्वर, त्रस्त, रहस्य इत्यादि के लिए द्रुत उपयोगी है।

(च) विलम्बित :— मध्यस्थायी, यह शृङ्गार, वितर्कित, विचार, अमर्ष, असूया, अस्पष्ट भाषण, लज्जा, चिन्ता, तर्जन, विस्मय, दोष-कथन इत्यादि के लिए है।

(६) अङ्ग :— अङ्ग छह प्रकार के हैं :—

(ए) विषम से उद्भूत <u>विच्छेद</u>

(बी) लीलावर्णन से पूरा किये जाने वाले <u>अर्पण</u>

(सी) वाक्य पूरा करना - <u>विसर्ग</u>

(डी) पद के बाद अविच्छिन्न रूप से बिना साँस लिए कहना - <u>अनुबन्ध</u>

(ई) इन तीनों स्थायियों से वर्द्धमान रूप से उत्पन्न होने वाला <u>दीपन</u>

(एफ)तारस्थायी से धीरे-धीरे नीचे की ओर ले आने वाला <u>प्रशमन</u>

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शृङ्गार, हास्य रसों के लिए अर्पण, विच्छेदन, दीपन एवं प्रशमन (मध्यकाल में);

वीर, रौद्र, अद्भुत रसों के लिए विच्छेद, प्रशमन, दीपन व अनुबन्ध द्रुत ताल में;

करुण रस के लिए दीपन-प्रशमन विलम्बित लय में; बीभत्स-भयानक इन रसों के लिए विसर्ग, विच्छेदन द्रुत ताल में अनुयोज्य है। यही नाट्यशास्त्र का मत है।

यह स्पष्ट करने के लिए विराम देकर प्रधानता देना है। एक वाक्य या अर्थ पूरा होने पर विराम दे सकते हैं। श्लोक में अर्थपूर्ति के बाद या सांस लेने के लिए विराम दे सकते हैं। किन्तु विरामस्थान के प्रयोग से अपश्रुति या छन्दोभङ्ग होने न पावे।

कृष्याक्षर :—

किसी व्यञ्जन के अन्त में आये आ, इ, ऐ, औ आदि दीर्घ स्वरों को लम्बा कर उच्चारण करने को नाट्यशास्त्र में 'कृष्याक्षर' कहते हैं। शोक, विवाद, विद्वेष इत्यादि में इनके दीर्घोच्चारण के लिए कलाएँ (मात्राएँ) निश्चित हैं। कृष्याक्षर छोड़ अन्य वर्णों के लिए एक, दो, तीन, चार, पाँच या छह कलाओं का अवकाश आवश्यक है। परन्तु छह कलाओं से अधिक होना नहीं चाहिए। रसों के विराम के अनुरूप विरामों की लम्बाई निश्चित की जा सकती है। वैसे वाचिक में भी कला (अवधि या समय) ताल, लय — ये तीनों जरूरी हैं।

प्रभाषण :—

नाट्यशास्त्र में आलाप, प्रलाप, विलाप, अनुलाप, संलाप, अपलाप, सन्देश, अतिदेश, निदेश, व्यपदेश, उपदेश व अपदेश यों प्रभाषण को विभक्त किया है। इसके अलावा प्रत्यक्ष, परोक्ष, भूतकालिक, वर्तमानकालिक, भाविकालिक (भविष्यत्कालिक), आत्मस्थ, परस्थ इस प्रकार सात और विभेद भी पाये जाते हैं।

वाचिकाभिनय का दूसरा विभाजन आकाशवचन, आत्मगत, अपवारित, जनान्तिक, कर्णोक्त, पुनरुक्ति, स्वप्नायित, मरण आदि आठ रूप में किया गया हैं।

यह शोध करने योग्य है कि नाट्यशास्त्र के ये नियम कूटियाट्टम् में गद्य-पद्यों के उच्चारण में कहां तक स्वीकृत हैं।

एक बात और, नाट्यशास्त्र का वाचिकाभिनय लोकधर्मी है, चाहे प्रभाषण, संभाषण या गीत हो, वे यथार्थ का अनुकरण करने का श्रम तो अवश्य करते हैं। कूटियाट्टम् का गद्योच्चारण तो मामूली वार्तालाप की उच्चारण रीति या प्रस्तुतीकरण शैली के अनुकरण करने का प्रयास तक नहीं करता। श्लोकालाप के राग वेदपाठ के

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आधार पर उदात्त, अनुदात्त, स्वरित व कम्पित स्वरों को अवलम्ब बनाकर केरलीय ब्राह्मणों के यजुर्वेद पाठ के समान सप्तस्वर, गमक, आलापन व ताल के बिना केवल पात्र के स्वभाव, प्रसंग, रस के आधार पर निर्मित एवं निश्चित हैं। श्रवण सुख या यथातथ के अनुकरण करने का विदूरश्रम तक यहाँ नहीं हुआ है, यही तो है नाट्यधर्मी।

आहार्याभिनय :—

आहार्याभिनय से रंगसज्जीकरण और वेष-भूषादि अभिप्रेत है।

कुत्तम्पलम् (नाट्यप्रासाद) का रंगविधान बिलकुल ललित है। केले के पौधे, नारियल के गुच्छे, नारियल के नूतन पत्ते (कुरुत्तोला) इत्यादि से अलंकृत हो जाने पर पीतल के बड़े प्रदीप, निरपरा - (चावल का भरा मापक) तथा पीठ ('स्टूल' यानी ऊँचा पीढ़ा) के साथ रंग-सज्जीकरण पूरा हुआ। फिर चाक्यार अपने वाग्विलास और अभिनय-पटुता से किसी भी दृश्य या प्रसङ्ग को एकदम स्पष्ट रूप से हमारी भावदृष्टि के सम्मुख प्रस्तुत करेगा।

परन्तु हमारी बाह्यदृष्टि की संतृप्ति के लिए रंग-मंच पर कुछ विस्मयजनक दृश्य तैयार करने की रीति कूटियाट्टम् में है। उड़ना, पानी में बहना, रस्सी बाँधकर आत्महत्या करने का रूप, आसमान से गिरना, निणमणियुक (रक्तरूषित शरीर का रूप धारण करना) इत्यादि कूटियाट्टम् की विस्मयजनक करामातों को उद्घोषित करता है। जटायुवधाङ्क में 'स्प्लिट स्टेज' (split stage) के समान एक दूसरा स्टेज (रंग) तैयार करते हैं। वैसे मायासीतांक में माया-श्रीराम व माया-लक्ष्मण के सिर प्रदर्शित किये जाते हैं। अशोक-वनिकाङ्क में सीता के स्थान पर केवल एक दीप जलाकर रखा जाता है। स्वप्नांक में समुद्रगृह में शयन की सभी सामग्रियां—भद्रदीप, कपूर, सुगन्धित धुआं, जलधारा यन्त्र, शीतोपचार की सामग्रियां कूटियाट्टम् में काम में लायी जाती हैं।

परक्कुंकूत्तु में मन्दिर के पास का कूत्तु चलाने के लिए निश्चित मैदान (कूत्तुपरम्पु) को पवित्र बनाकर उसमें एक शामियाना (वन्तल) तैयार कर उससे मिलाकर करीब बयालीस 'कोल' (तीन फीट लम्बा मापदण्ड) ऊंचाई पर बीच में केन्द्र से तख्ते के अन्त तक गोलाकार छेद बनाकर एक छंत तैयार की जाती है। गरुडवेशधारी चाक्यार के शरीर में चोंच, पूंछ, पंख आदि निर्दिष्ट स्थानों में बंधे होते हैं। १००१ (एक हज़ार एक) रस्सियां मिलाकर छत के ऊपर खड़ा रहने वाला नंबियार स्वयं नियन्त्रित कर खींचता है, ढीला भी करता है। इसके अनुसार गरुड उड़ता-उड़ता सा और नीचे की ओर आता - सा दिखायी देगा। नीचे आकर चोंच खोलकर (वह भी नंबियार के नियन्त्रण के अनुसार) जीमूतवाहन को - (एक लाल़ कपड़े को) उठाकर ऊपर की ओर वैसे ही उड़ता जाता है। इस अभिनय में असल में चाक्यार की जान नंबियार की मुट्ठी में ही रहती है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इसी प्रकार तपती-संवरण में नायिका का नंदी में कूदकर बह जाना भी विस्मयजनक दृश्य है। सफेद सूत से लम्बा ताना-बाना डालकर (पाव् इट्ट) नदी की सी प्रतीति पैदा करते हैं। उस पर कूदकर जब नंगियार नीचे की ओर आने लगती है तो बह आना ही लगेगा। इन सुदुष्कर कर्मों के अभिनेता - उड़े हुए चाक्यार और बही हुई नंगियार के दर्शन मात्र से हाथ जोड़कर उन्हें प्रणाम करने की प्रथा भी जारी है। इसे लेकर कहावत भी बन गयी है।

वेश-विधान में इतनी अधिक विविधता रखने वाली कलाएँ बहुत कम हैं। वेश-विधान का औचित्य भी अन्यत्र इतना देख नहीं पा सकते। प्रत्येक कथापात्र के स्वभाव, स्थान, कुल इत्यादि के अनुरूप वेश ही निश्चित किये गये हैं और वे भी स्वच्छ एवम् शालीन। उनके निर्माण में 'तेच्चिप्पूव' (चार छोटे दलों वाला और लंबी डण्डी वाला लाल पुष्प) आदि का महत्त्व है। वेश-विधान के लिए आवश्यक विभिन्न सामग्रियों का विवरण इस ग्रन्थ के संज्ञाप्रकरण में वर्णित है। वेश के बारे में मोटे तौर पर परिभाषा प्रकरण के वेशविधान विभाग में बताया गया है। उनके अलावा और कुछ बातें आगे बतायी जा रही हैं।

नायक का वेश श्याम (तोते का सा, कम गाढ़ा हरा) और लाल है।

'अर्जुन' के मुख का राग श्याम है। पर जीमूतवाहन, संवरणन आदि का कम गाढ़ा लाल है। केशभार-सहित किरीट केवल राजाओं को है। वैसे बलभद्र को किरीट है, कृष्ण को नहीं। धर्मपुत्र, बाली, रावण इत्यादि को किरीट है, भीम, सुग्रीव, विभीषण आदि को नहीं। अर्जुन इसका एकमात्र अपवाद है, क्योंकि वह 'किरीटी' है। दूसरों के लिए 'वासुकीय' है। श्रीराम के लिए भी अभिषेक तक 'वासुकीय' ही है। तेच्चिप्पू की बनायी दाढ़ी भी है। बाली के चेहरे के रंगों में श्याम रंग भी है। रावण, घटोत्कच आदि कत्तिवेषधारी हैं। नागराज शंखचूड, जटायु, कपाली, सूत इत्यादियों के वेष में विशेषताएं हैं। विदूषक चेहरे पर चावल का आटा, हल्दी व काजल लगाकर, एक कान में तेच्चिप्पू, दूसरे में पान का बीड़ा, हाथों में कटक (कड़े), कमर में कटिसूत्र, सिर पर कुडुमा (एक तरह की टोपी) चुवप्पुतुणि, वासुकीय आदि पहनता है।

स्त्रियों के चेहरों पर कम गाढ़ी ललाई है। शूर्पनखा "करि" (काजल) से मुख काला करती है। जिन 'अणिजालों' का इस ग्रन्थ में उल्लेख नहीं, उन्हें पूरक के रूप में यहां दिया जा रहा है।

पशुक्क :—

जीमूतवाहन, संवरण आदि मनशिशला व चायिलय मिलाकर पकी सुपारी का - सा रंग तैयार कर चेहरे पर लगाता है। चुट्टी के बदले मुख पर काजल की लकीर

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

से मुख-राग की सीमा खींचते हैं। भाल पर अलक है, चुट्टित्तुणि नहीं, हल्दी और चूनामिश्रित चूर्ण से होठों पर रंग चढ़ाते हैं। गालों पर " ത " का रूप काजल से अंकित करते हैं।

ताटि :—

बालिवघांक का बाली लाल-दाढ़ी-वाला है। चेहरे के मुख्य रंग श्याम, लाल, काला आदि हैं। श्याम रंग बाली के मुख पर थोड़ा-सा सौम्य भाव भी देता है। केशभार के चारों ओर रस्सियों से विशालता बढ़ानी है। इसके अलावा रत्नपट्ट, धूसर, चुट्टित्तुणी, पीलिप्पट्टम् आदि तथा लटकने वाले लाल रंग के बाल भी होते हैं। कानों में कुण्डल व चेविप्पूव् भी चाहिए। पूँछ नारियल के पत्तों से तैयार की जाती है। हल्दी व चावल का आटा घोलकर पैरों पर लगाया जाता है।

करुत्तताहि :— (काली दाढ़ी)

'सुग्रीव' की काली दाढ़ी है, किरीट नहीं है। राजा न होने से एक विशिष्ट 'मुटि' शीर्षालंकार लगाते हैं जो काला होता है। चेहरे पर काला और लाल रंग होता है, बाल भी काला है, दंष्ट्र है, कुर्ता बाली जैसा है।

विदूषक :—

हास्य के रंग सफेदी के लिए चावल का आटा पानी मिलाकर घोल बनाकर, चेहरे, शरीर में छाती तक तथा हाथों और पैरों पर लगाते हैं। आंखों में पूरा काजल लगाते हैं। भाल, नासाग्र, दोनों गाल, चिबुक, छाती तथा हाथों पर कुंकुम की बिन्दियां, चुवप्पुतुणि, वासुकीय, पीलिप्पट्टम, चेविप्पूवु आदि पहनते हैं। कुण्डल के बदले एक कान में तेच्चिप्पूवु का गुच्छा और दूसरे में पानबीड़ा भी पहनेंगे। काजल से मूंछे इस तरह लगायी जाती हैं कि उसका एक छोर नीचे की ओर और दूसरा ऊपर की ओर टेढ़ा रहेगा। माट्ट (कपड़ों का तैयार किया) पृष्ठ पर लगाकर, कटिसूत्र बांधकर, मणिबन्ध में कटक, यज्ञोपवीत (जनेऊ) उत्तरीय आदि से सजकर, वासुकीय के ऊपर से टोपी के बाल नीचे की ओर लटकाकर वेष-विधान पूरा होता है।

मन्त्राङ्क का विदूषक :—

यह एक घुमक्कड़ है। साधारण विदूषक से भिन्न है। चेहरे पर थोड़ी सी काजल मिश्रित चायिलय लगाते हैं। कानों में काजल, सिर पर मुटि (टोपी विदूषक की सी) पिरिशंखिनमाला - (शंख की आकृति में लकड़ी की टुकड़ियों से बनी माला) पीलिप्पटम् चेविप्पूवु, कुण्डल रहते हैं। गले के नीचे शरीर-भर चावल का घोल लगाया जाता है। उस पर हल्दी और चूना मिला चूरा पानी में भिगोकर उससे भस्म लगाने के जैसे भाल, छाती, हाथों तथा पैरों पर लकीरें खींचते हैं। कमर के चारों ओर माट्ट (कपड़े) लटकाकर,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पहनकर, उसके ऊपर रेशम का एक लाल कपड़ा बांधते हैं। कंधे में एक 'भाण्ड' - (भोक्कण्डम) हाथ में छः फुट लम्बा चावल का घोल लगाया हुआ एक मूसल जैसा दण्ड भी लिये होंगे।

मन्त्राङ्क का प्रच्छन्न यौगन्धरायण :—

चेहरे पर श्याम, नाक और गालों पर चायिलय के टीके, नाक के चारों ओर चावल के घोल का परिवेश (लकीर), नीचे के होंठ के नीचे चुट्टी - चावल की बनी नोकदार चुट्टी - सिर पर ताड़ के पत्तों का बना मुकुट, इसके अलावा वासुकीय, पीलिप्पट्टम, चुवप्पुतुणि व चुट्टित्तुणि, नाक और चुट्टी के अन्त में सफेद कपड़े के फूल, लाल और काले रेशे के बाल, कानों में कुटिल - (कंकण जैसा वलय) व चेविप्पूव भी होंगे। शरीर-भर चावल का घोल लगाकर उस पर चूना-हल्दी से छाती के पांच स्थानों में स्वस्तिक चिन्ह, पेट पर एक स्थान व दोनों हाथों में तीन-तीन स्थानों पर, गले में दो स्थान पर, पीठ पर पांच स्थानों में, दोनों पैरों पर तीन-तीन स्थानों में टीके लगाये जाएंगे। ताड़ के पत्तों पर बने अंगद, हाथों में मामूली चूड़ियां, छाती के नीचे पत्तों का बना उदरबंध भी बांधना है। जाँघों और पैरों पर भी पत्ते के आभूषण, हाथों में पत्ते के दो 'मोदक' भी रहेंगे। प्रवेश 'कंकपत्र' में याने "∞" इन आकार में टेढ़ा होकर चलते हुए करना है।

मत्तविलास में कपाली :—

शिव के भाल पर की तीसरी आंख ही कपाली की विशेषता है। तेच्चिप्पूव का कुण्डल, नया कपड़ा लेकर, उसके चार मोड़ बनाकर, उस पर हल्दी और चूने के मिश्रित घोल से गंगा, चन्द्रकला, नाग, तिलक, शिव की जटाएं आदि आँक कर टोपी के रूप में सिर पर बांधा जाएगा। चुवप्पुतुणि, पीलिप्पट्टम्, तेच्चिप्पूव का बनाया रत्नपट्टम् भी पहना जाता है। गले के नीचे चावल का घोल लगाया जाता है। ज्ञिन स्थानों पर भस्म लगायी जाती है वहां हल्दी की बिन्दियां होगी। गले में तेच्चिप्पूवु की माला, आम के पेड़ के छिलकों की बनी अस्थिमाला, तेच्चिप्पूव के अंगद, कमर में और हाथों-पैरों पर तेच्चिप्पूवु के बने आभूषण, उदरबन्ध, पैजनियां, कौपीन की तरह माट्ट (कपड़े बांधकर) कमर के चारों ओर लटकाकर पहने जाते हैं। बाएं कन्धे पर भोक्कण्ट, दाएं हाथ में त्रिशूल, बाएं हाथ में कुण्डिका, कमर में माट्ट के चारों ओर लाल कपड़े का कमरबंद, दाढ़ी के स्थान पर भी तेच्चिप्पूव की माला पहन लेते हैं।

राक्षसी शूर्पणखा :—

घी और काजल मिलाकर शरीर भर मलते हैं। चावल के गाढ़े घोल से भाल, नाक, चिबुक व गालों पर शूल का रूप खींचा जाएगा। सिर पर एक खास प्रकार के

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

घास (ञोड्ड्डुणम् पुल्ल्) का बना मुकुट पहना जाएगा। वासुकीय और अस्थिमाला भी है। सुपारी के पत्ते का निचला डंठल लेकर कंगन का आकार बनाकर कानों में तथा चमड़े के बने नुकीले स्तन, या कपड़े के बने नुकीले स्तन, कपड़े के बने छोटे-छोटे टुकड़ों का घघरा, दोनों पैरों पर चांदी की पैजनियाँ (चिलङ्क) आदि पहनना है। अब नाट्यशास्त्र के नियमों को देख लें :—

नाट्यशास्त्र के अनुसार नेपथ्य यों है - पुष्ट (model work) यह भी रंग-सज्जीकरण का भाग है। पहाड़ियां, रथ, राजाओं के महल, जानवर, हथियार, ध्वज के खंभे आदि इनके अन्तर्गत हैं। इनमें कपड़े, चमड़े आदि से तैयार किये गये प्रतिरूपों को 'सन्धिम', यन्त्र आदि से चलने वालों को 'व्याजिम' और चेष्टा में रहने वालों को 'चेष्टिम' भी कहते हैं।

अलंकरण दो विभागों में विभक्त किये गये हैं- (१) फूलों की मालाएं (२) आभूषण। फूलों की मालाएं पांच प्रकार की हैं—

आवेष्टित (लिपटा हुआ), वितत (बिछाया गया), संघत्य (दलों में विभक्त), ग्रन्थिम (गूंथा हुआ), प्रलंबित (लटकाया हुआ)।

आभूषण चार प्रकार के हैं - आवेध्य (शरीर में छेद बनाकर पहनने वाला, उदाः - कुण्डल, बन्धनीय (बांधने वाला), उदा :- मेखला (कटिसूत्र) आदि। प्रक्षेप्य (पहना जाने वाला), उदा :- वस्त्र, नूपुर आदि। आरोप्य - उदा :- चूड़ियां, हार, मालाएं आदि।

पुरुषों के लिए सिर पर चूडामणि और मुकुट, कानों में कुण्डल और मोचक (ear pendant) कील, (ear top) गले में मुक्तावली (pearl necklace), हर्षक (नागफणत्तालि), सूत्रक (सोने की माला), उंगलियों में कटक, अंगुलीयक, मुद्रा आदि, हाथों में हस्तपि तथा वलय मणिबन्ध में रुचिक (bracelet) चूलिका आदि, भुजाओं में केयूर, अंगद आदि, ऊपरी भागों में त्रिसरा (तीन लड़ियों वाली माला), छाती में हार, कमर में तलक और सुवर्ण-सूत्र निश्चित किया गया है। इनके अलावा शरीर भर को ढकने लायक रत्नमालाएं और फूलमालाएं भी चाहिएँ।

स्त्री-कथापात्रों के लिए सिर पर केशालंकार के लिए फूलों की मालाएं भाल पर लटकती रहती हैं। शिखापाश, शिखाव्याल, पिण्डीपत्र, चूडामणि, मकरिका, मुक्ताजाल (pearl-net) शीर्षजाल (hair-net) गवाक्षक आदि सिर के अलङ्कार, भाल पर फूल जैसा तिलक, कानों में वलयाकार पहनने वाली आवेष्टिकाकर्णिका, कर्णवलय, कर्णमुद्रा इत्यादि। कानों के ऊपरी भाग में रत्नजटित शिखिपत्र और कर्णोत्कीलक, पत्र-कर्णिका कुण्डल आदि दूसरे कर्णाभूषण भी पहले जाते हैं। गालों पर पत्र (पतिकिट्ट) खींचना है। आँखों में काजल लगाना है। होठों पर लाल रंग चढ़ाना

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

है। दाँत कई रंग के हो सकते हैं, किन्तु चार दांत सफेद रखना अनिवार्य है। हल्दी लगाने पर वे अच्छे रहेंगे। मोती के समान दांत असल में सुन्दरता में चार चांद लगा देंगे। कमलदल के समान रंग वाले दांत अधिक सुन्दर हैं। रत्नों के रंग वाले दांत फूलों के समान सुन्दर और अधिक कामोद्दीपक लगते हैं। हाथ के ऊपरी भाग (upper arm) में अंगद व चूड़ियां तथा निचले भाग (forearm) में खर्जूर और स्वेच्छतीक, मणिबन्ध में शंखकलापि, कटक, पत्रपूरक आदि भी पहनना है। उंगलियों में अंगूठियां, छाती में आठ, सोलह, बत्तीस, चौसठ, सौ लड़ियों वाली मालाएं, जो विविध नगीनों से जड़ित हों, तथा मुक्तावलि (pearl necklace), व्यालपंक्ति (नागपटत्तालि), रत्नमालिका (jewel string), रत्नावलि (jewel necklace), सूत्रक (neck chain) इत्यादि तथा विविध आभूषण भी पहनना है। मोती जड़ी कमरबंद (काञ्ची) मेखला, रशना और कलापा (काञ्ची के लिए एक, मेखला के लिए आठ, रशना के लिए सोलह और कलापा के लिए पच्चीस धागे या लड़ियां) ये कमर में रहेंगे; नूपुर किंकिणी, रत्नजाल और घुटनों पर अशोक पुष्प की आकृति के चित्र, पैरों और घुटनों के नीचे के भाग में पादपत्र, पैर की अंगुलियों में तिलक (बिछुए) भी नाट्यशास्त्र-प्रोक्त विधि के अनुसार स्त्रियों के लिए निश्चित आभूषण हैं। अधिक (अमित) आभूषण नहीं चाहिए। ताकि थकान न हो। 'कथकलि' इससे भिन्न है। कूटियाट्टम् में आभूषण कम हैं। सोने के आभूषण भी नहीं चाहिए। आभूषणों से ही विद्याधरियों, यक्षियों, नागिनों, अप्सराओं, सिद्ध, गन्धर्व, राक्षस, बानर आदि को पहचानना है।

नाट्यशास्त्र के अनुसार मौलिक रंग चार हैं : सफेद (गोरा), नीला, पीला, तथा लाल। इन वर्णों को आपस में मिलाकर दूसरे रंग (वर्ण) तैयार कर सकते हैं। कारण्डव वर्ण (रंग) के लिए सफेद और नील; पाण्डु वर्ण के लिए सफेद और पीला; पद्म वर्ण के लिए सफेद और लाल; हरित वर्ण के लिए पीला और नील; काषाय वर्ण के लिए नील व लाल और गौर वर्ण के लिए लाल व पीला मिलाना है।

देव, यक्ष व अप्सराओं के लिए गौर वर्ण; रुद्र, सूर्य, स्कन्द के लिए सोने का रंग; सोम, बृहस्पति, इन्द्र, वरुण, गंगा, समुद्र, हिमवान् आदि के लिए सफेद वर्ण; अंगारक (मंगल), बुध, अग्नि, नर-नारायण, वासुकि के लिए श्याम वर्ण; दैत्य, दानव, राक्षस, पिशाच व यम के लिए गाढ़ा नील वर्ण; प्रमथ (भूत) वानर, को विविध वर्ण; मनुष्यों को प्रान्त-भेद के अनुसार विविध वर्ण नाट्यशास्त्र के आधार पर निश्चित हैं।

शृङ्गार के लिए श्याम, हास्य के लिए सित (गौर), करुण के लिए कपोत रंग, रौद्र के लिए लाल, वीर के लिए गौर, भयानक के लिए काला, अद्भुत के लिए पीत (पीला), बीभत्स के लिए नीलवर्ण नाट्यशास्त्र में निश्चित हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नाट्यशास्त्र में चार प्रकार की दाढ़ियों का उल्लेख है — शुद्ध (clean shave) श्याम (dark blue) विचित्र (carefully trimmed), रोमश (bushy)।

किरीट तीन प्रकार के हैं- ये प्रतिशिर के अलावा हैं।

१- किरीट - ऊँचा सोने व नगीनों से जड़ा हुआ जिसका ऊपरी भाग कम व्यास का होता है जो देवों के लिए निश्चित है।

२- मस्तकि - कम ऊंचा केवल सिर को ढंक देने वाला यह राजाओं के लिए है।

३- पार्श्वमौलि - भाल तक ऊंचा। (अर्ध-मुकुट) यह पूरा सिर नहीं ढक देता, जो सेनाधिपतियों तथा युवराजों के लिए है।

कूटियाट्टम् का रंग-सज्जीकरण व वेष नाट्यशास्त्र से अधिक सम्बन्ध रखने वाले नहीं। नाट्यशास्त्र का रंग-विधान लोकधर्मी पर अवलम्बित है। जानवरों के रूप, पहाड़, महल, रथ इत्यादि रंग-सज्जीकरण पूर्णतया लोकधर्मी पर अवलम्बित है। कूटियाट्टम् में तो चाक्यार ये रंग-दृश्य अपनी अभिनय-पटुता से प्रस्तुत करते हैं। नाट्यशास्त्र के अनुसार रंगदृश्य दर्शकों की बाहरी दृष्टि का विषय है; कूटियाट्टम् के अनुसार वह कल्पना-दृष्टि के लिए ही गोचर हैं। परक्कुंकूत्तु जैसे अपूर्व (बहुत बिरले) दृश्य ही इसके अपवाद होते हैं वैसे कूटियाट्टम् के रंगदृश्य नाट्यधर्मी प्रधान हैं।

वेश-भूषाएं नाट्यशास्त्र के अनुसार प्रत्येक कथापात्र के शरीर और मुख (चेहरा) का रंग, प्रत्येक देश के कथापात्र का विभिन्न रहता है। वैसे शिरोलंकार, बाल, दाढ़ी-मूछें, पहनावा आदि प्रादेशिकता के अनुसार कथापात्र के बाहरी रूप के अनुकूल रहता है याने लोकधर्मी। पर कूटियाट्टम् के वेष-भूषादि कथापात्र के स्वभाव के आधार पर है। इसीलिए भाई होकर भी भीम और अर्जुन के वेष में भिन्नता दिखायी पड़ती है। चूंकि भीम वीर रस प्रधान और कम श्रृंगार का कथापात्र है इसलिए उनके मुख का रंग पछुक्का (सुपारी रंग) का रहा। तेच्चिप्पूव की दाढ़ी, माला भी है। अर्जुन वीर होने पर भी श्रृङ्गारी है, इसलिए चेहरे पर का रंग कपोत (श्याम) है। वैसे ही भाई बाली व सुग्रीव के वेषों में भी भिन्नता आयी। बाली के मुख पर के रंग में श्याम रंग भी है, सुग्रीव के लिए नहीं। बाली के तारा के साथ के श्रृङ्गार को यह न्यायसंगत करता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि पात्रों के (स्वभाव) चरित्र को प्रतिबिम्बित करने वाले कूटियाट्टम् के वेश-विधान नाट्य-धर्मी-प्रधान हैं और नाट्यशास्त्र में निबन्धित वेश-विधान लोकधर्मी-प्रधान हैं।

वाद्य

कूटियाट्टम् का मुख्य वाद्य मिष़ाव है; ताल के लिए मंजीरे (कुष़ितालम्) भी, कथापात्रों के प्रवेश के समय छोटी तुरही (कुरुंकुल) 'इटक्का' शंख आदि होते हैं। लेकिन ये अनुबद्ध बाजे हैं। नाट्यशास्त्र में निर्दिष्ट ततवाद्य, सुषिरवाद्य व अवनद्धवाद्य

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

में भाण्डवाद्य के अन्तर्गत मिझ़ाव का मुख चमड़े से ढका रहता है। मिझ़ाव किसी बड़े घड़े के आकार का सा है। इसके एक पार्श्व में एक छोटा सा सुषिर (छेद) भी दिखायी देगा।

मिझ़ाव के आकार या परिमाण के बारे में जो शास्त्र-विधान है, उस सम्बन्ध में कोई पता नहीं। पहले मिझ़ाव मिट्टी का बना भी होता था। आज मज़बूती की दृष्टि से तांबे का बनाया जाता है।

कूटियाट्टम् में आम तौर पर दो मिझ़ाव का उपयोग किया जाता है। संकल्पना यही है कि नाट्यगृह में रंगपीठ के पीछे कुतप स्थान पर उपनयन तक की क्रियाएं, तथा शुद्धि कलश आदि पूरा कर हमेशा प्रणव जाप कर, नादब्रह्म की स्तुति करते हुए ब्रह्मचर्य में रहने वाला है मिझ़ाव। "अरंगु क्यट्टम" के बाद के चाक्यार या नंबियार के अलावा और किसी को मिझ़ाव छूने तक का अधिकार नहीं, यही नियम है। टूटे हुए मिझ़ाव का क्रियाकर्म तक करने का विधान है।

कूटियाट्टम् में प्रयुक्त होने वाले 'ताल' तथा उनके प्रयोग के प्रसंग आदि का विवरण भी चाक्यार ने इस ग्रन्थ में दिया है।

नाट्यशास्त्र के अनुसार 'ततवाद्य' तथा सुषिर वाद्यों के रूपकावतरण में बड़ी प्रधानता है। किन्तु कूटियाट्टम् में केवल मिझ़ाव ही मुख्य है। मँजीरा केवल ताल के लिए ही इस्तेमाल किया जाता है।

पूर्वरंग-क्रियाएं :—

अब कूटियाट्टम की विधाएं रस्म-रिवाज आदि पर विचार करेंगे। चाक्यार मन्दिर के तालाब में स्नान कर नेपथ्य में आकर हाथ-पैर धोकर आचमन कर सिर पर चुवप्पुतुणि बाँधते हैं। फिर चेहरे पर घी लगाकर (उपस्तरण मलकर) कथापात्र के अनुकूल वेष-धारण कर लेते हैं। वेश-धारण करने पर नेपथ्य में ही कुछ देवताओं तथा आचार्यों की व़न्दना करते हैं। इसमें अगर कोई दोष हुआ तो देवताओं के प्रकोप का पात्र होना पड़ेगा - ऐसा विश्वास भी है और फिर उसके लिए प्रायश्चित्त भी करना है। यद्यपि इसका विधान रंगमंच पर करने का है तो भी बाजे आदि की आवश्यकता न होने के कारण नेपथ्य में से ही सुविधानुसार करने का विधान भी है।

इस बीच रंगमंच का दीप तीन बत्तियां डालकर (दो बत्तियां नट की ओर और एक दर्शकों की ओर) जलाया जाता है। तत्पश्चात् नम्बियार मिझ़ाव का अभिवादन कर मिझ़ावणा पर चढ़ कर "मिझ़ावोच्चप्पेटुत्तल" मिझ़ाव बजाना शुरू करता है। इसके लिए करीब पांच मिनट समय ल़गेगा। उसके बाद नंगियार गणेश, सरस्वती और शिव की स्तुति 'अकित्ता' का आलाप करने लगती है और नम्बियार 'गोष्ठि' बजाना शुरू करता है। फिर नम्बियार एक विशिष्ट ढंग से कपड़ा पहन कर (तट्टुतुच्) रंगपीठ में आकर

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मंगल श्लोक का पाठ करते हुए रंग-प्रसादन करता है। तब पढ़ा जाने वाला श्लोक रंगमंच पर प्रस्तुत होने वाले अंक की कथा का सूचनात्मक तथा नायक के प्रणाम का सूचक भी रहता है। किन्तु अभिनय करने वाले अंक का नायक रावण आदि हो तो श्लोक श्रीराम आदि का वर्णनात्मक होगा।

उसके बाद यवनिका पकड़ी जाएगी और कथापात्र के प्रवेश की सूचना में नम्बियार मिष़ाव बजाने लगते हैं। इसके साथ मंजीरा, इटक्का, शंख, छोटी तुरही, कुरुंकुष़ल इत्यादि बाजे भी बजाकर वाद्यमेल को अधिक आस्वाद्य बनाते हैं। फिर सूत्रधार प्रवेश कर मिष़ाव का अभिवादन कर, यवनिका के अन्दर प्रवेश कर प्रणामात्मक कुछ चारिकाएं करते हैं। उसके बाद यवनिका हटायी जाती है और फिर पञ्चपदविन्यास है। उसके बाद पीठ (आसन) पर बैठकर सूत्रधार रंग-प्रणाम करते हैं।

बाल-चरित का सूत्रधार हो तो नीचे बताई गयी रीति से अभिनय कर मंगल श्लोक पर पहुँचते हैं। "अहा! मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई, क्यों? कैसे? प्रभात में जागकर स्नान, देवकार्य, भोजन आदि दैनिककार्य पूरा कर जब मैं रङ्ग-पीठ पर आया तो रंगमण्डल पर अनेक ब्राह्मण देवता आये हुए थे। ऊँचे कुल में जनमें, शास्त्र-विशारद, पूजा आदि कर्म लगातार करते आने वाले उन ब्राह्मणों को फूल डालकर आराधना कर कहता हूँ— हे ब्राह्मण देवता, त्रिलोकनाथ नारायण तुम्हें अनुगृहीत करें! श्री नारायण कौन हैं? वे कैसे हैं? उनका रूप कैसा है?........."

इसके बाद नित्यक्रिया है। नित्यक्रिया में विविध चारियां व अभिनय है। पहले ध्रुवा, फिर चेरियपक्कम् और वलियपक्कम् है और फिर "क्षीर सागर" आदि शिवस्तुतिवाले चार श्लोक नंगियार पढ़ने लगती है; तदनुसार चाक्यार 'भ्रमरी' नामक चारिका करते हैं। उसके बाद "अम्बिके गिरिजे शिवे" शीर्षक देवी स्तव भी नंगियार पढ़ती है तथा चाक्यार नृत्त भी करते हैं, फिर गीत के बिना चाक्यार शिवजी और पार्वती जी के केशादिवपादम् का अभिनय करते हैं। फिर "मारशरीरविनाशकरम्" आदि शिवस्तुति और फिर "विश्वजनाधिप" आदि दिक्पालक-स्तव है। उसके बाद नीचे के वाक्यों का अभिनय दिखाने लगते हैं—

"मैं त्रैलोक्य के समस्त चराचर की वन्दना करता हूं और फूलों से उनकी अर्चना करता हूँ। सृष्टिकर्ता ब्रह्मा से लेकर घास-फूस तक, देवलोक के इन्द्र आदि देव, नारदादि ऋषीश्वर, यक्ष, किन्नर, गन्धर्व, विद्याधर, सिद्ध, चारण आदि की तथा पाताल के असुर, सर्पगण, भूमि के ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, गाय आदि समस्त जानवरों, पक्षिगणों सबों की बन्दना करता हूँ।"

उसके बाद "पञ्च-पद विन्यास", फिर प्रणाम कर सूत्रधार विराम करता है। इसके साथ सूत्रधार का 'पुरप्पाट्' (प्रथम रंग-प्रवेश) पूरा हो जाता है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नाट्यशास्त्र के अनुसार पूर्वरंग के जो उन्नीस भाग हैं उनमें से नौ यवनिका के भीतर (मरयिल क्रिया) बाकी यवनिका हटाकर किये जाते हैं। यवनिका के अन्दर की क्रियाएं 'प्रत्याहार' (बाजा बजाने वालों को यथास्थान बिठाना), अवतरण, आरम्भ (गायकों का आलाप), "आश्रावणट' (अवनद्ध वाद्य बजाना), वक्त्रपाणी (वाद्य वृत्तियां विभक्त करने के लिए तुरही बजाना), परिघट्टन (वीणा की तन्त्रियां श्रुति के अनुसार कसकर बांधना), संघोटन' (समपाणि, उपरिपाणि, अवपाणि इत्यादि पाणि-विभाग के लिए अवनद्ध वाद्य बजाना), 'मार्गासारित' (अवनद्ध वाद्य और तत वाद्य एक साथ बजाना), 'आसारित' (ताल की मात्रा और आपात को विभाजित करने के लिए) इत्यादि है। वे बिना गीत के यवनिका के अन्दर वीणा, वाद्य आदि के साथ प्रयुक्त होते हैं। फिर यवनिका हटाकर देवतास्तुतिगीत, उत्थापन (नान्दी पढ़ने वालों की पहली क्रिया), वर्द्धमानक (नृत्त के साथ का गीत), परिवर्तन (चारों दिशाओं में घूमकर लोकपालकों की वन्दना), नान्दी (आशीर्वाद), शुष्कांपकृष्ट (जति इत्यादियों के साथ किया जाने वाला ध्रुवागीत), रङ्गद्वार (वाचिक और आङ्गिक का पहला अवतरण) चारि (श्रृङ्गार का प्रसार करने वाला), महाचारि (रौद्र को प्रसारित करने वाला), त्रिगत (विदूषक सूत्रधार, पारिपार्श्विक आदि का वार्तालाप), प्ररोचन (काव्यप्रयोग सिद्धि से सम्बन्धित नाट्योपदेश) इत्यादि हैं।

यवनिका के अन्दर की पूर्वरंग-क्रियाओं के साथ गीत नहीं होता। सूत्रधार संशुद्ध हो अपने दो संशुद्ध पारिपार्श्विकों—जिनमें से एक के साथ में भृंगार (कुण्डिका), दूसरे के हाथ में जर्जर रहता है— के साथ प्रवेश करते हैं। फिर सूत्रधार कूटियाट्टम् के पञ्चपद-विन्यास के समान पदविन्यास करते हैं। यह ब्रह्मा की पूजा है।

प्रथम परिवर्तन में विलम्बित लय, दूसरे में मध्यम लय, और तीसरे में सूत्रधार का प्रवेश। पांच कदम रखकर ब्रह्मा की पूजा कर प्रदक्षिणा (परिक्रमा) कर द्रुत लय में पारिपार्श्विक के हाथ से पानी लेकर आचमन कर पानी छिटकाकर चौथे परिवर्तन में, दूसरे पारिपार्श्विक के हाथ से जर्जर लेकर, जाप कर 'अत्र विध्नविनाशार्थम्' इत्यादि चार श्लोक पढ़कर, फिर पांच कदम रखकर बाजे की ओर निकलते हैं। उसके बाद दिक्पतियों और त्रिमूर्तियों को प्रणाम कर खड़े होने तक नट प्रवेश कर जंर्जर, बाजे, आचार्य और सूत्रधार की पूजा कर बाजे के अनुसार कदम रखकर रंग-पथ से नेपथ्य में जाते हैं।

उसके बाद चतुरश्र ताल में विलम्बित में 'अकृष्ट' पढ़ने पर सूत्रधार, ब्राह्मण और देवताओं की स्तुति करते हैं और पारिपार्श्विक 'एवमस्तु' कहते हैं। कथावतरण प्रसंग के हेतु-भूत देव या राजा की स्तुति कर "अत्र विघ्न-विनाशार्थम्" जर्जर श्लोक पढ़ते हैं; इसके साथ पारिपार्श्विक निकल जाते हैं। फिर सूत्रधार 'चारि' और 'महाचारि' 'अङ्कित'

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नामक ध्रुवा में (जो कूटियाट्टम् के 'अक्कित्ता' के समान होगा) पदविन्यास कर शिव-पार्वती-नृत्तम् का अभिनय कर (कूत्तु के केशादिपादम् के समान) और फिर श्रृङ्गार रस का श्लोक पढ़कर पारिपार्श्विकों को बुलाकर 'त्रिगतम्' का प्रयोग कर तीनों रंगमंच से निष्क्रमण करते हैं।

इस प्रकार के बहुत विस्तृत पूर्वरंग का वर्णन यद्यपि नाट्यशास्त्र में किया गया है तो भी कालान्तर में रूपकों के निर्माताओं ने पूर्वरंग को रूपक का अंग बनाकर औचित्यपूर्वक उसे संक्षिप्त बनाया। कूटियाट्टम् में भी क्रियाओं की लम्बाई विरस होने से उनको कम करने की आवश्यकता 'नटाङ्कुश' में खास उल्लिखित है।

विदूषकः—

नाट्यधर्मी के अनुसार विस्तृत और लम्बी होती जाने वाली श्लोकाभिनय रीति की विरसता को दूर करने, पामर सदस्यों को कथा-कथन, नर्म, थोड़ी-सी ग्राम्यता, छायाश्लोक आदि से अतिहास पैदा करने लायक एक कथापात्र है कूटियाट्टम् का विदूषक। अधिकांश रूपकों में नायक के लिए ऐसा एक 'वयस्य' अवश्य मिलेगा। सत्कर्मों व दुष्कर्मों में परछाईं की तरह वे नायक कें राथ रहते हैं। परन्तु किसी में स्वयं भाग नहीं लेंगे, उपहास अवश्य करेंगे, आनन्द लेंगे, कभी-कभी आज्ञाएं देंगे, खुद अपनी तारीफ आप करेंगे, हमेशा अपनी विवशताओं की राम-दुहाई देंगे; बड़े भोजन-प्रिय होंगे। नायक जब सुन्दर राजकुमारियों के साथ प्रणय-व्यापार करेंगे, तो विदूषक के लिए भी उसके समान एक घरेलू धन्धा है। उस कोठरी में जहां धान कूटा जाता है (उरत्पुरा) वहां धान कूटने वाली चक्की नामक उसका प्रेम-भाजन है। नायक की "चन्द्रकान्त-शिला" का प्रतिरूप विदूषक है उस धान कूटने की कोठरी में देख लेता है जहां चक्की बैठा करती है। विदूषक के पुरप्पाट के लिए केवल मिझ़ाव का ही विधान है। लेकिन अब इटक्का, कुझ़ल आदि का भी प्रयोग करते देखा जाता है। विदूषक जब रंगमंच पर आता है तो 'विदूषकस्तोभ' का नाट्य कर आसन पर बैठकर उत्तरीय से चेहरा छिपाकर ध्यानावस्थित हो जाता है। विदूषक-स्तोभ-गाल फुलाना और फुलाते फुलाते कुछ चबाता सा दिखाना, जनेऊ साफ करना, कमर में बंधा उत्तरीय (दुपट्टा) निकालकर उसे मोड़कर निचोड़ना, फिर शरीर पर पंखा सा झलना, बाल संवारना आदि का अभिनय।

विदूषक का मुख्य कर्त्तव्य (काम) अपने के अलावा नायक, नायिका के 'ग्रन्थ' अपनी एक विशेष रीति और शैली में बयान करना, संस्कृत श्लोकों का प्रादेशिक भाषा का रूप, प्राकृत श्लोकों का संस्कृत रूप तथा प्रादेशिक भाषा रूप प्रस्तुत करना, प्रतिश्लोक तथा छायाश्लोक पढ़ना आदि है। जब नायक कुछ करते हैं तो उससे समता रखने वाली कोई घटना या अपने अनुभव कह सुनाने को विदूषक के पास अवश्य

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रहेगा। ऐसा वार्तालाप अक्सर मित्रों के मिलनं में सुनने में आएगा। इनके दृष्टान्त श्री चाक्यार ने इसमें दिये हैं।

विदूषक का दूसरा प्रधान काम 'कर्मफल' और 'विवाद' के बारे में तथा पुरुषार्थ के आक्षेप नाम से कहे जाने वाले 'विनोद, वञ्चन, अशन, राजसेवा' पर किया जाने वाला प्रभाषण है।

"ब्रह्मा येन कुलालवन्नियमित:....." श्लोक के विस्तार में मत्स्यावतार की कहानी में हयग्रीव द्वारा वेदों के अपहरण करने पर 'ओतिवकन' (पुरोहित) द्वारा वेद-पाठ भूल जाने पर शिष्यों का सन्देह दूर करने का निष्फल प्रयास तथा अपनी असमर्थता छिपाने के लिए किया जाने वाला हास्यास्पद श्रम, उनकी निर्लज्जता आदि का नर्मपूर्ण प्रतिपादन कर "तस्मै नमः कर्मणे' इत्यादि आरम्भ करते हैं।

कर्मफल की शक्ति दिखाने के लिए पहले -पहल "ओठविकषायनभूस्स" की कहानी कहते हैं। एक सन्तान के आग्रह से बार-बार शादियाँ कर, अनेक व्रतों का अनुष्ठान कर जीने वाले मूस्सू को जब सन्तान होने लगी तो घर-भर के उपकरणों का नाम तक पर्याप्त न होने लायक सन्तानों का जन्म होता रहा और सबकी सब लड़कियां। अन्त में जब एक लड़का पैदा हुआ तो वह आनन्द से फूला न समाया। पर उसका एकमात्र पुत्र कूँए में गिरकर मर गया। यह उसके कर्म का फल है, त्रिमूर्ति भी कर्मफल के अधीन रहते हैं। इत्यादि।

श्रीपार्वती और गंगा के बीच का तर्क-वितर्क ही 'विवाद' के मंगलाचरण श्लोक का विषय है। "मेक्कान्तला" और "कीष़क्कान्तला" नामक मन्दिर के दो न्यासधारियों (ट्रस्टियों) के बीच के वाद-विवाद का आरम्भ, उसका नतीजा, आदि का वर्णन इसका विषय है। श्लोक बनाना, बुरे कवियों का उपहास, अच्छी कविता के लक्षण इत्यादि के बारे में नर्मपूर्ण पर विज्ञानदायक प्रतिपादन कर एक ही श्लोक में श्लेष से शैव तथा वैष्णव दोनों अर्थ बताकर उन शैव-वैष्णव सिद्धान्तियों का वाद-विवाद हल कर देते हैं।

विवाद के बाद, विवाद की परिसमाप्ति से सन्तुष्ट होकर मन्दिर की बातों पर विचार करने के लिए सम्मिलित होने वाले विभिन्न समाज के अंगों की वेश-भूषा, आचार-विचार, जातीय दुर्बलताएं आदि की हास्यास्पद रीति से आलोचना की जाती है। मन्दिर के कार्यों में लग जाने से पहले पुरुषार्थ सिद्ध कर लेने के उद्देश्य से विनोद, वञ्चन, अशन, राजसेवा इत्यादि पुरुषार्थों की खोज में निकलते हैं। 'विनोद' नामक कामपुरुषार्थ के लिए सबसे अधिक उपयुक्त वेश्या (रेंटी) - (इस प्रसंग में विभिन्न प्रकार की रेंटियों का लक्षण तथा उनमें स्वीकार्य और अस्वीकार्य रेंटियों का विभाजन कर वर्णन किया जाएगा) मीश कोटिप्पुरत्तु के इट्टुण्णुली के पास जाने

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

और उसे धोखा देकर उसके घर से एक सोने का पानदान (अटप्पन्) चुरा ले आना आदि का वर्णन बड़ी चटुलता से किया जाता है। वैसे विनोद और वञ्चन साधकर 'अशन पुरुषार्थ' का बयान करते हैं (यह पूरा करने के लिए कुछ लोग दो दिन तक लेते हैं)। गणेश का कलेवा (गणपतिप्रातन्) का अनुसरण कर गणेश-वन्दना का श्लोक पढ़कर अशन-पुरुषार्थ का आरम्भ करते हैं। 'अशनम्' के लिए जाने का उचित स्थान निश्चित करते समय 'सरस-विरस', 'विरस-सरस', 'विरस-विरस', 'सरस-सरस' आदि चार प्रकार के गृहस्थों (आतिथेयों) का प्रतिपादन करते हैं। इनमें अन्तिम विभाग के अन्तर्गत "इण्टी ण्टीं ण्णाम नायकन्" के भवन में सम्पन्न होने वाले चरम दिन (मृत्यु) की प्रथम वर्षगाँठ (पन्त्रण्टां मासम्) (बरसी) में होने वाले बड़े भोज में भाग लेकर पेटभर खाकर "अगले वर्ष भी इसी दिन, इसी पन्तल (शामियाना) में पन्त्रण्टां मास का भोज हो" ऐसा आशीर्वाद देकर लौट जाते हैं। आगे 'राजसेवा' है। विभिन्न प्रकार के राजाओं तथा राजाओं की शरण में रहने (राजसेवा) की कठिनाइयों का वर्णन कर कथानायक महाराज के पास पहुँच जाने के कारण आदि बताते हुए मूल कथा से सम्बन्ध स्थापित करते हैं।

पुरुषार्थ का सदुपदेश समाज को परिमार्जित करने लायक है। मेक्कान्तला, कीऴक्कान्तला लोगों का वाद-विवाद आधुनिक समय के रोज़गार के जीवन में होने वाले मामूली झगड़ों को भी दूर करने की सूचना देता है, जो साधारण लोगों को जो चाहे झगड़ों से दूर भी रहें, परेशान कर डालते हैं। और ये झगड़े अपने काम-धन्धे और प्रगति के भी बाधक रहते हैं। विनोदम् और वञ्चनम् दोनों आधुनिक युग में भी सर्व-साधारण तो हैं ही। राजसेवा के बदले आज राज्य (देश) सेवा के नाम पर चलने वाली राष्ट्रीय (राजनीतिक) सेवा मात्र हो गया है।

कूटियाट्टम् की परिष्कृति—

आवश्यकता से अधिक विस्तृत या लम्बा कर देने से तथा उनकी विशेषताओं को आवश्यकता से अधिक बढ़ा-चढ़ा कर दिखाने की चेष्टा करने तथा उन्हें बार-बार दोहराने से कोई भी कला विरस हो जाएगी। जब कूटियाट्टम् को अमितत्व का दोष ग्रसने लगा तो कड़ी से कड़ी आलोचना 'नटाङ्कुश' की भांति प्रकट होने लगी। नटाङ्कुश-कर्ता ने खास तौर पर अंगुलीयकाङ्क नामक आङ्गिक-अभिनय-प्रधान तथा वाचिकाभिनय प्रधान इन दो कूटियाट्टम् को अपनी आलोचना का विषय बनाया। यह कह नहीं सकते कि उनकी आलोचनाएं एकदम स्वीकार्य हैं। उनमें अधिकांश पक्षपातपूर्ण हैं। फिर भी उनकी मुख्य आलोचनाएँ जानना भी आवश्यक है। (१) चाक्यार लोग अत्यधिक स्वतन्त्रता लेकर बाहर के अनेक विषयों को मिलाकर स्थायी रस का भंग कर डालते हैं। (२) 'क्रिया' नामक पूर्वरङ्ग-विधान विरस और अधिक

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanaṣi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लम्बा है। (३) नाटककार ने जिनको जान बूझकर छोड़ दिया है उनका आवश्यकता से अधिक विस्तार किया जाता है। (४) विदूषक का हास्य, मलयालम्-प्रभाषण तथा पुरुषार्थ अस्वीकार्य है।

उपसंहार—

मैंने एक बहुत अधिक लम्बा निबन्ध तैयार किया है। उसके लिए पाठकों से क्षमा मांगने के लिए इस प्रसंग का उपयोग करूं? परन्तु इसे इतना अधिक लम्बा कर देना उद्देश्यपूर्ण है। श्री चाक्यार के पाण्डित्य ने उन्हें मामूली आस्वादकों से बहुत ऊंचे स्थान पर प्रतिष्ठित किया है। उस स्तर से उनका लिखा यह महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ बड़े विज्ञ ही नहीं, इस मण्डल में बहुत कुछ अज्ञ कहे जाने योग्य हजारों के लिए अगर उपयोगी होना है तो पाठकों को भी चाक्यार के स्तर तक उठा ले आना है। चूंकि मुझे यह महसूस हुआ कि वह श्रम-साध्य काम इतने लम्बे आस्थान से ही सम्भव है, मैंने पाठकों को इतना कुछ देने का साहस किया।

कूटियाट्टम् की अभिनय-रीतियों और नियमों के तुलनात्मक अध्ययन के लिए सहायता पहुंचाने लायक मैंने इसे तैयार किया है। इसके कुछ कारण हैं। भारत के अनेकों दृश्य-कला रूप स्वयं को भरत के नाट्यशास्त्र का हू-ब-हू प्रतिनिधित्व करने के हकदार मानते हैं। कुछ पण्डित 'भरतनाट्यम्' नामक दृश्यकला का पितृत्व नाट्यशास्त्र को पूर्णरूप से देने के पक्ष में हैं। सुसम्पन्न नाट्यशास्त्र का 'पुत्रीभाव' सहृदयों की अदालत से भी अगर मिल गया तो "पुत्री के खर्चे" का विधि-विधान भी मिल जाएगा; इसी उद्देश्य से ही उसका पितृत्व नाट्यशास्त्र पर आरोपित किया होगा। परन्तु मेरा प्रयास तो यही रहा कि कूटियाट्टम् इसका हकदार नहीं। चाहे आहार्य में हो, वाचिक में हो, वाद्यों में हो या रागों में हो, कूटियाट्टम् को नाट्यशास्त्र के अनुवर्ती रहने का हक नहीं। जब नाट्यशास्त्र लोकधर्मी-प्रधान अवतरण को मुख्यता देता है तब कूटियाट्टम्-नाट्यधर्मी को मुख्यता देता है। यह भी एक मत है कि कूटियाट्टम् के लिए मुख्यतया लिये गये भास के रूपक नाट्यशास्त्र के पहले रचे गये थे।

तिरुवनन्तपुरम्
५.१२.१९७४

(डी. अप्पुकुट्टन नायर)
सदस्य, जैनरल कौन्सिल
केरल-कला-मण्डलम्

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मङ्गलम्

भक्तानुकम्पा तरलान्तरङ्गा
रक्तेश्वरी नः कुलदेवता ताम्।
विघ्नेश्वरं विघ्नविनाशहेतुम्
दिनाधिनाथं च नमामि नित्यम्।।१।।

इष्टार्थदानोत्सुककल्पवृक्षं
दुष्टारिसम्मर्दनकालरुद्रम्।
शिष्टामराराधित-पादपद्मं
तुष्ट्या शिवं नौमि शुकालयेशम्।।२।।

वाणी शारदचन्द्रसुन्दरमुखी धन्यारविन्दासना
प्राणाधीशमुखारविन्दसुखवासानन्दपूर्णाशया।
वीणावादनसक्तबाहुलतिकालोलाङ्गुलीस्पर्शन-
क्वाणस्पर्द्धिमनोज्ञगानरसिका मां पातु वागीश्वरी।।३।।

श्रीविद्याधर्मदातारमुपनेतारमीश्वरम्।
नौमि सर्वार्थसंसिध्यै मातुलं परमेश्वरम्।।४।।

मुद्राभावरसादीनामादेशिकमहर्निशम्।
सदाचारं नीलकण्ठं प्रणमामि परं गुरुम्।।५।।

दोषाभिभूष्णुममरारिनिराकरिष्णुम्
वक्षोनिषण्णकमलाहृदयं विभूष्णुम्।
शेषादिभक्तजनदुःखभयासहिष्णुम्
विष्णुं नमामि भवसागरतारयिष्णुम्।।६।।

प्रत्नागाराभिधाने द्विजवरभवने योऽवतीर्णो महात्मा
विद्यादानैकलोलः समुदमुपदिदेशाशु विद्याः सुशिष्यान्।
संस्थाप्योद्योतविद्याभवनमिह चिरात् स्वर्गसंस्थस्सुराणाम्
एवं तत्त्वोपदेष्टा जयति गुरुवरः शङ्करस्तं नमामि।।७।।

विबुधाराधितो राजा सुवृत्तस्स कलानिधिः।
गेम्श्रीनाथः परीक्षिन्मामनुगृह्णातु सद्गुरुः।।८।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ब्रह्मा सामादिवेदादभिनयरसभावादिसारं प्रगृहणन्
निर्मायाग्र्यं महेन्द्राद्यमरनरमुदापादकं नाट्यवेदम्।
सामोदं लोकभूत्यै भरतमुनिवरायादिदेशाथ नाट्यम्
शास्त्रं भूमौ वितन्वंन् जगति जयति यस्तं मुनीन्द्रं नमामि।।९।।

जूके लग्ने समान्दौ सुरवरसचिवे वाचि रौद्रेऽर्कवारे
चापे शुक्रे सराहौ मृगमटति बुधे चूतवृक्षे निशायाम्।
कुंभे भातौ च मीने शशि-निधनपतौ भूमिजे भाग्यभावे
कोलम्बे स्वस्थनाट्ये प्रथमदिनजनिर् नौमि खेटन्-
नटोऽहम्।।१०।।

नाटकाभिनये प्रत्ना कृता नीतिरितीयती।
मया तया स भरतो मुनिरत्र प्रसीदतु।।११।।

संज्ञाभावरसाभिनीतिविलसच्छाखा-शतालंकृतम्
मुद्रातालमनोज्ञपल्लवलसन्नृत्यादिपत्रावृतम् ।
पूर्वाचार्यमतप्रफुल्लकुसुमं मोक्षादिविद्याफलम्
कुर्वे सर्वजनोपकारविधये श्रीनाट्यकल्पद्रुमम्।।१२।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मङ्गलश्लोकों का प्रो. कमलेशदत्त त्रिपाठी-कृत हिन्दी अनुवाद

भक्तों के प्रति अनुकम्पा के भाव के कारण द्रवित-चित्त-वाली अपनी कुलदेवी रक्तेश्वरी के प्रति नमन करता हूँ और विघ्नों के विनाश के लिये विघ्नेश्वर श्री गणेश तथा दिन के अधिपति सूर्य भगवान् को नमस्कार करता हूँ।।१।।

अभीष्ट प्रदान करने के लिये उत्सुक कल्पवृक्ष-रूप, दुष्टों के दमन के लिये कालरुद्र-स्वरूप तथा शिष्ट जनों एवं देवों के द्वारा समाराधित-चरणकमल-वाले शुकालयेश्वर शिव के प्रति सन्तुष्टि-सहित नमन करता हूँ।।२।।

शरत्काल के चन्द्र की भाँति सुन्दर आनन वाली, सौभाग्यशालिनी, कमल पर विराजमान, प्राणाधीश्वर ब्रह्मा के मुखकमल में सुखपूर्वक निवास के आनन्द से भरी तथा वीणावादन में निरत बाहुलता की चंचल अंगुलियों के स्पर्श से उठ रहे (मधुर) क्वणन से स्पर्धा कर रहे मनोहर गान की रसिक वागीश्वरी सरस्वती मेरी रक्षा करें।।३।।

लक्ष्मी, विद्या एवं धर्म को प्रदान करने वाले, ईश्वर के निकट ले जाने वाले, मातुल परमेश्वर को सभी अभीष्ट की प्राप्ति के लिए नमन करता हूँ।।४।।

अहर्निश मुद्रा, भाव तथा रस आदि के उपदेशक तथा सदाचार में स्थित परम गुरु नीलकण्ठ को प्रणाम करता हूँ।।५।।

दोषों का शमन करने वाले, देवों के शत्रुओं के निराकरण में निरत, वक्षःस्थल पर विराजमान लक्ष्मी के हृदय (ही) बन रहे, शेष आदि भक्तजनों के दुःख और भय को न सह सकने वाले तथा भवसागर से सन्तरण करा देने वाले विष्णु को प्रणाम करता हूँ।।६।।

जो महात्मा प्रत्नागार नामक द्विज-भवन में जन्में, विद्या के दान के लिए उत्कण्ठित जिन्होंने अच्छे शिष्यों को शीघ्र विद्याएं दीं, यहाँ उद्योत (प्रकाशित) विद्याभवन की स्थापना कर बहुत पहले स्वर्ग गये, (और वहाँ भी) देवताओं को तत्त्व का उपदेश करने वाले उन गुरु की जय हो। उन शंकर को मैं प्रणाम करता हूँ।।७।।

विद्वानों द्वारा समर्चित, सुन्दर आचरण वाले, कलाओं की समृद्धि से युक्त, सद्गुरु गेम्श्रीनाथ परीक्षित मुझ पर अनुग्रह करें।।८।।

ब्रह्मा ने साम आदि वेदों से अभिनय, रस, भाव आदि के रूप में सार ग्रहण कर आदिग्रन्थरूप एवं महेन्द्र आदि देवों को हर्ष देने वाले नाट्यवेद का निर्माण किया। फिर हर्षपूर्वक संसार के कल्याण के लिये भरत मुनि को उसका उपदेश किया। तदनन्तर उस नाट्यशास्त्र को जिन्होंने इस भूतल पर प्रचारित किया, उन मुनि भरत को प्रणाम करता हूँ।।९।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जन्मनक्षत्रों आदि पर आधारित अर्थ है, स्पष्ट नहीं हो सका।।१०।।

—*सम्पा.*

नाटक के अभिनय के क्षेत्र में मैंने वही इतनी प्राचीन नीति (निर्देश, मार्ग) रची है, इससे मुनि भरत प्रसन्न हों।।११।।

संज्ञा, भाव, रस और अभिनय से शोभित, शतशाखाओं से अलंकृत, मुद्रा और तालरूप मनोहर पल्लवों से सुन्दर, नृत्य आदि पत्रों से आवृत, पूर्व आचार्यों के मतरूपी विकसित पुष्पों से युक्त तथा मोक्ष आदि विद्यारूपी फल से युक्त श्री नाट्यकल्पद्रुम नामक ग्रन्थ की रचना सभी लोगों के उपकार के लिये मैं कर रहा हूँ।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

संज्ञाप्रकरण

(क) वस्तुवाचक संज्ञाएँ

कूत्तु नृत्य के विविध भूमिकाधारी नटों के वेषविधान के लिए पूर्वाचार्यों से निश्चित तथा तैयार किये गये आभूषणों आदि के लिए व्यवहृत संज्ञाओं तथा उनसे सम्बन्धित अन्य पहलुओं पर सर्वप्रथम प्रकाश डाला जाता है।

अणियलम् (अणिजालम्)— नट अपने शरीर को अलंकृत करने के लिए जिन वेषभूषाओं का उपयोग करता है, उन सब आभूषणों के लिए उपयुक्त नाम है अणियलम् अथवा अणिजालम् (अणियुक-याने-वेषविधान करना)।

चोप्पुतुणि (चुवप्पुतुणि) (लाल कपड़ा)— एक अंगुली-भर चौड़ा, दो गज लंबा लाल रेशमी कपड़े का टुकड़ा लेकर उसे उतने ही लंबे-चौड़े किसी दूसरे कपड़े के टुकड़े से सीकर दोनों किनारों पर काले कपड़े की महीन किनारियाँ लगाकर तथा बीच में एक लाल रिब्बन भी सिलकर यह तैयार किया जाता है। भाल के अलंकरण में प्रयुक्त होने वाली एक सुप्रधान वस्तु है— चोप्पुतुणि।

कोऴल— यह सिर पर धारण करने की एक तरह की टोपी है। करीब बारह इंच व्यास वाला एक वलय तैयार कर उसे काले कपड़े से ढँक कर उस गोलाकार के बीच में सिर पर बाँधने योग्य दूसरे कपड़े से जोड़ देते हैं।

कुण्डल— कानों में पहनने वाला कर्णाभूषण कुण्डल है। यह पात्र-भेद के अनुसार विभिन्न प्रकार का बनाया जाता है।

नायक जैसे पात्रों के उपयोग के लिये कुण्डल काठ का बना करीब नारियल की गरी के ठीक आधे टुकड़े की तरह का होता है। इसके बीच में अन्दर करीब चार इंच लंबा छड़ी का टुकड़ा लगाया जाता है और कुण्डल के बाहर अभ्रक और पीले रंग के चटकीले कागज (तकिढ) चिपका कर तथा डोर बाँधकर कानों में पहनने योग्य बना देते हैं।

'मन्त्राङ्कम्' कूटियाट्टम् के 'वसन्तक' के कुण्डल सप्तच्छद वृक्ष के काठ के बने करीब मुर्गी के अण्डे के रूप के समान होते हैं। उसमें डोरी डाल कर कानों में पहनने योग्य बना देते हैं। इनके ऊपर चावल के आटे में पानी मिलाकर लगाया जाता है। हनुमान् का कुण्डल कपास के दो गोले से बनाकर तैयार किया जाता है। 'मत्तविलास'

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

में 'कपाली' का कुण्डल 'तेच्चिपूव्' लाल रंग के चार छोटे दल वाले लम्बे पाद वाले केरल के एक फूल से गोलाकार गेंद के समान बनाया जाता है। 'मन्त्राङ्क' के 'भ्रान्तन्' (पागल) का कुण्डल ताड़ के पत्ते का कंकण जैसा गोला बनाकर उसमें लाल और काले कपड़े के टुकड़े बारी-बारी से बाँध कर तैयार किया जाता है।

शूर्पणखा का कुण्डल भी करीब-करीब 'भ्रान्तक' का सा होता है, लेकिन ताड़-पत्ते के बदले, सुपारी के पत्ते के डंठल या नारियल के पत्ते के बीच के डंठल के वलय पर काले व लाल कपड़ों के टुकड़े लपेट कर किये जाते हैं।

चुट्टित्तुणि— यह भी भाल पर बाँधने का 'चोप्पुतुणि' के जैसा बनाया जाने वाला 'रिब्बन' है। लेकिन इसका आकार ' ന ' रूप में होता है। इसके किनारों से आँख और भौहों के आधा इंच ऊपर उक्त रूप में काट कर अलग कर दिया जाता है और ' നന ' यह रूप इसके ऊपर महीन चुट्टि की दो या तीन पंक्तियाँ बनायी जाती हैं। "पच्च" वेषों के लिए दो लाइन वाली और "कत्ति" वेषों के लिए तीन लाइन वाली चुट्टि बनायी जाती है। और तीन लाइन वाली चुट्टित्तुणि के बीच में एक फूल (गोलबाला) भी होता है।

पीलिप्पट्टम्— मोटी सी रस्सी को काले कपड़े से लपेट लिया जाता है फिर उस पर मोर पंखे के दंडक निकाल कर ठीक ' ' इस प्रकार ऊपर नीचे को तानकर तीन पंक्तियाँ बाँध दी जाती हैं।

वासिकम्— यह लकड़ी का अर्धचन्द्राकार व्याल-मुख-युक्त अभ्रक और "तकिढ" (सुनहरी पन्नी) से चिपका कर दोनों छोर डालकर पीलिप्पट्टम् के ऊपर भाल पर बाँधने का दो इंच चौड़ा एक तरह का किरीट होता है।

पणक्केट्टु (फणक्कूटु)— अधकटे छोटे आलवट्टम् (हाथी पर जुलूस के समय चामर के साथ पकड़ा जाने वाला मोरपंखों से मढ़ा पंखा) डुलाने के लिये सुपारी के पत्ते के डंठल या मोटा कागज (कार्डबोर्ड) काट कर उस पर काला कपड़ा पहले लपेट लिया जाता है। फिर उस पर मोरपंख के दण्ड काट कर घुमा-फिरा कर बाँध दिया जाता है। सामने किनारे पर मोरपंखों की आँखें अर्धवृत्ताकार लगा देते हैं। यह भी दोनों ओर रस्सी से बाँधने लायक तैयार किया जाता है। यह भी वासिकम् के ऊपर बाँधने का है।

चेविप्पूवु (कनफूल)— करीब-करीब गुलाब के फूल के समान लकड़ी का बना होता है। यह चार इंच लम्बी छड़ी के टुकड़े पर रखा जाता है। अभ्रक तथा तकिढ का उपयोग कर तैयार किया जाने वाला यह, कुण्डल के ऊपर पीलिप्पट्टम के नीचे से दोनों कानों के ऊपर, रखा जाता है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रत्नपट्टम्— नारियल के पत्ते के ठूँठ छील कर उसके बीच 'तेच्चिप्पूण' दोनों ओर मुँह करके (पाकिवेच्च) रस्सी से बाँधकर बनाया जाता है।

धूसरम्— दो हाथ लंबा तीन इंच चौड़ा एक कपड़े का टुकड़ा लपेट कर यह बनाया जाता है।

किरीट— कुमिष जैसे पेड़ की लकड़ी के दो कुंभ औरं एक नाराच की आकृति में यह बनाया जाता है। इस पर भी अभ्रक, तकिढ और चमकीले नग आदि लगाकर यह तैयार किया जाता है— इस पर "वण्टोट्" (खेत में पाया जाने वाला एक छोटा प्राणी) कील के बने पत्थर जैसे चमकीले चीजों का प्रयोग किया जाता है।

केशभारम्— एक फुट (बारह इंच, बारह अंगुल नाप वाला) चौड़ा गोलाकार छोटी-छोटी शलाकाओं से बना, मध्य भाग में जरा सा गहरा एक वृत्त तैयार किया जाता है। उसे काले कपड़े से लपेट कर उस पर कपास और तेच्चिप्पूव की बनी मालाएँ गोलाकार बाँधी जाती हैं। किरीट के पीछे रखकर दोनों को परस्पर जोड़ कर बाँध दिया जाता है।

पेटरि— पटसन की रस्सियों को काली स्याही (हरैं की स्याही) बनाकर उसमें भिगोकर केशभार के नीचे पीठ पर लंबा लटकाया जाने वाला केश है।

पोषुम्पु— यह गले में बँधनेवाला लकड़ी का आभूषण है। यह करीब वासुकीयम् की आकृति में बनाया जाता है, लेकिन उससे छोटा होता है। इस पर व्यालमुख नहीं होता है।

कुटुम— यह विदूषक के सिर पर धारण करने वाली टोपी होती है। यह त्रिकोण के रूप में बनायी जाने वाली टोपी होती है। इसके ऊपर एक एक इंच चौड़े काले और लाल कपड़े के टुकड़े सीकर बाँधे जाते है। फिर बारी-बारी से काले और लाल कपड़े के टुकड़ों से कपास भरी एक छड़ी -सी तैयार कर उसे टोपी के अन्दर से ऊपरी हिस्से से बाहर निकालकर उस छड़ी के दो-तीन मोड़ बना देते हैं। फिर रस्सी की उस छड़ी के छोर में छः लम्बे ऊन के रंग विरंगे रेशे डाल दिये जाते हैं। सिर पर बाँधने का गोलका भी इसके नीचे सिल दिया जाता है।

उष्णीष— कपड़े की बनी छः इंच लम्बी एक तरह की पगड़ी है उष्णीष।

कुषायम् (कुर्ता)— नायक आदि के लिए उपयुक्त कुर्तों पर काले और लाल रिबन बारी-बारी से सीकर बाँध देते हैं। इसके हाथ आधे होते हैं। पीछे की ओर यह खुला रहता है और रस्सियों से बाँधा जाता है।

हनुमान् का कुरता भी ऐसा ही होता है, लेकिन अन्तर यही है कि वह सफेद कपड़े का बना और ऊपर कपास चिपकाया हुआ होता है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मंकुट, (मुकुट)— एक तरह का शिरोभूषण है। यह कई प्रकार का है। गद्दी के ऊपर, शलाकाओं और रस्सियों से मुकुट तैयार कर कपास से सारा भाग ढका हुआ मुकुट हनुमान् का होता है।

मन्त्राङ्क— मन्त्राङ्क में 'भ्रान्तम्' का मुकुट भी इसी प्रकार का होता है। अन्तर केवल इतना है कि कपास (रुई) के बदले ताड़ के पत्तों के रेशों से वह ढका रहता है।

शूर्पनखा का मुकुट भी इसी प्रकार का होता है। अन्तर यही है कि मुकुट ओङणम् पुल्लू (ओङणम् घास) से ढका इने-गिने कुछ फूलों से सजा होता है।

सुग्रीव का मुकुट पटसन की रस्सियों से ढका होता है।

मयिलू मुटि (मोर मुकुट)— यह जाम्बवान् के लिए निर्दिष्ट शिरोलंकार है। पटसन की रस्सियाँ मुकुट के रूप में सिर पर बाँध कर उसका अग्र भाग केश-जाल के रूप में पीठ पर लटका दिया जाता है।

पोटिप्पु वेच्च केशभारम्— यह केश-भार ऊन के बने कलियों के आकार के परिवेष से युक्त है। 'बालि' के लिए बनाये गये किरीट के साथ इस केशभार का उपयोग किया जाता है।

'कूटु'— स्त्री-कथापात्रों के लिए उपयोग किया जाने वाला शिरोलंकार है— मुटि। इस मुकुट का नाम है 'कूटु'।

सुपारी के पत्ते के नीचे के सफेद छिलके की या कार्ड बोर्ड की एक कोणाकार टोपी बनाकर उसे रेशम के कपड़े से लपेट देते हैं। उस पर चाँदी का बना नागफण तथा उसके नीचे चाँदी के बने फूल, हार, चाँदी के बने महीन 'तकिटू' 'तेच्चिप्पू' की मालाएँ एक के बाद एक क्रम से टोपी के ऊपर से नीचे तक लगा दी जाती है।

छन्नउरम्— छोटे-बड़े टेढ़े गोल-गोल तीस चालीस लकड़ी के टुकड़ों को रस्सी में पिरोकर बीच के बड़े और छोटे गोलाकार टुकड़ों से बाँधा जाता है। इसे दोनों कंधों पर से पीछे की ओर डाल कर बाँधा जाता है। इस पर सुनहला चटकीला कागज और अभ्रक चिपका दिया जाता है। यह छाती का आभूषण है।

तोलवल— (कंधे के नीचे भुजा पर पहनने वाला कंकण)— हाथों के ऊपरी भाग पर कंधे के नीचे पहनने का आभूषण है तोलवल। इसके अन्दर का हिस्सा इस तरह टेढ़ा रहता है कि हाथों में चिपका सा रहे। ये लकड़ी के बने होते हैं, जिनको सुनहरे कागज और अभ्रक से सजा दिया जाता है।

कटक— यह मणिबन्ध में पहनने योग्य कंकण जैसा आभूषण है। इसके ऊपर का भाग गोलाकार फूल जैसा लकड़ी का बना होता है। यह भी सुनहरे कागज़ और अभ्रक से सुन्दर बना दिया जाता है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मारमाला— (छाती पर पहनने वाली माला)— तेच्चि के फूलों से गोलाकार माला बनाकर उसके दोनों छोर कमर तक लटका दिये जाते हैं। यह छाती पर पहना जाता है।

तूङ्गुमाला— लाल, सफेद आदि फूलों की बनी गले में पहनने वाली मालाएँ इस नाम से कही जाती हैं।

उत्तरीय— लंबे किनारीवाले कपड़े के दोनों छोरों को कमल के समान बनाकर उपवीत के जैसे शरीर में पहनने वाला दुपट्टा है— उत्तरीयम्।

माट्ट— करीब २४ फुट सफेद कपड़ा लेकर उसको सिमटा कर फेन जैसा बनाकर बीच में से रस्सी पिरोकर कमर के पीछे बाँधा जाता है। कभी-कभी बीच में लाल कपड़े भी रखे जाते हैं। इसका नाम माट्ट मटक्कियत् होता है।

कटिसूत्रम्— कमर के सामने पहननेवाला आभूषण है कटिसूत्रम्। लकड़ी के बने व्यालमुख से लकड़ी के छोटे चौकोर टुकड़े तथा लकड़ी की गोलियों को डोर से लटका कर व्यालमुख दोनों भागों में मोटी रस्सी डालकर माट्ट के बीच से कमर में लटका दिया जाता है।

पोयनखम् अथवा पोयतकम्— सामने कमर में नीचे पैर तक लंबा लटकाये जाने वाले दो कपड़े पोयनखम् कहलाते हैं।

पिञ्चोरा— करीब दो हाथ लंबे आधा इंच चौड़े काले और लाल कपड़ों के टुकड़ों को एक छोर से मिलाकर बाँधने के बाद उस रस्सी को पात्रों के कमर के पहनावे के ऊपर बाँध दिया जाता है।

मुलक्कचा— छाती को ढँकने लायक लाल कपड़े के छोरों को काले रिब्बन से सीकर चारों छोरों में पीछे की ओर बाँधने लायक डोर डालकर और गले में बाँधने लायक कपड़े के टुकड़े को लगा कर स्त्री पात्रों के वक्षः स्थल को इससे ढँक दिया जाता है।

कौपीन— कमर से घुटनों तक लंबे कपड़े को लपेट कर उनको कमर के चारों और बाँध दिया जाता है। यह पुरुष पात्रों का पहनावा है, इसे कौपीन कहते हैं।

अस्थिमाला— शिव या शैवों की भूमिका वाले नटों की छाती पर पहनने के लिए, आम या सप्तच्छद पेड़ के तने के छिलकों को महीन निकाल कर उनके टुकड़ों और तेच्चि के फूलों को बारी-बारी से मिलाकर तैयार की जाने वाली माला है।

नख— चाँदी की अंगूठियों के साथ बनाकर उँगलियों में पहनने योग्य लंबे नोकदार नख हैं।

दंष्ट्र— शंख को दो लंबे दाँतों की आकृति में रगड़-रगड़ कर नारियल के पत्तों और सूतों से बाँध कर मुँह में ऊपरी ओठों के नीचे रखनेवाला दाँत है— दंष्ट्र।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चिलम्पू (झाँझन)— पिछला हिस्सा गोलाकार और आगे वाला लंबा चाँदी का बना पैरों में पहनने वाला आभूषण है चिलम्प्। इसके अन्दर ऐसे महीन गोल-गोल कण भरे जाते हैं, जिससे उसमें से आवाज भी निकलने लगती है।

कंकण (वळा)— सप्तच्छद के छड़ को वृत्ताकार कंकण की आकृति में काट कर उस पर सुनहले कागज चिपका कर यह तैयार किया जाता है। सोने के कड़े भी इस्तेमाल किये जा सकते हैं।

गदा— सप्तच्छद के तने या डाल से बना गदा की आकृति का-सा आयुध जिस पर चावल का आटा लगाया जाता है।

वाळ (तलवार)— यह भी सप्तच्छद की लकड़ी का बना होता है। इस पर भी चावल का आटा लगाया जाता है। लोहे की बनी तलवार भी इस्तेमाल की जाती है।

दण्ड— सप्तच्छद के तने का बना मुसलाकार ५९ (इंच का बना) अंगुली लंबा होता है। जिसमें शंख का रूप खुदा होता है और त्रिपुण्ड्र अंकित किया जाता है।

पिरिशंखिन माला— तीन अंगुली परिमित सप्तच्छद की शाखा के छोटे-छोटे ग्यारह टुकड़ों को शंख के अंदर के घुमाव के जैसे घुमा कर माला-सी तैयार की जाती है, जिसपर चावल का आटा लगा कर भाल पर पहना जाता है।

भोक्कण्डम्— कपड़े में भस्म लपेटकर कंधे में डालने योग्य दोनों छोर बाँधकर भोकण्ड तैयार होता है। इस पर हल्दी और चूना मिलाकर मांड सा बना कर उसमें शंख या चक्र का रूप लिखा जाता है और जिसके चारों ओर सात बिंदिया भी लगायी जाती हैं।

कपाल— शिवजी के हाथ के शिरकपाल (खप्पर) के बदले शिवजी के समान स्वरूप में सजे सत्यसोम के हाथ में पकड़ा जानेवाला चाँदी का कटोरा ही कपाल कहलाता है।

शूल— सप्तच्छद की एक हाथ (१२ इंच) लंबी अष्टकोणाकार छड़ी जिसके अग्र में त्रिकोणाकार तीन नोकदार शिखर, मध्य में परशु की आकृति का एक लकड़ी का टुकड़ा भी लगाया जाता है।

पूव्— कत्ति जैसे वेषों की नाक तथा भाल पर चुट्टि के मांड से बने तीन गोलाकार, नोकदार अलंकार को 'पूव्' कहा जाता है।

मिष़ाव— ताँबे या मिट्टी का शास्त्र-विधि के अनुसार ठीक नाप पर बनाया जाने वाला बाजा है मिष़ाव। यह ताँबे के मोटे घड़े की आकृति का होता है। तान्त्रिक विधि से जातकर्म से लेकर उपनयन तक की सभी क्रियाएँ करा के चाक्यार को सौंप दिया जाता है, तो उसका मुँह चमड़े से ढंक कर रंग प्रवेश करा के (अरङ्ङु कयट्टम्) ब्रह्मचारी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

की तरह मन्दिर में सुरक्षित रखा जाता है। इस को बजाने का अधिकार केवल नांबियार लोगों का है।

तालक्कूट्टम् (तालक्कोट्टम्)— कटोरीनुमा मध्य भागवाला पंचलोह से निर्मित मंजीरा है तालक्कूट्टम्। इसके बीच में जो छेद होता है, उसमें रस्सी डालकर इसका उपयोग किया जाता है।

रङ्गम्— कुटियाट्टम् की प्रस्तुति के लिये निश्चित रङ्गभूमि है 'रङ्ग'। इस पर सामने त्रेताग्नि का संकल्प कर तीन बत्तियाँ डालकर जला कर रखा गया दीप (निलविलक्कु) होता है। पीछे मिषाव एवं नंबियार होते हैं। दाहिनी ओर नंग्यारम्मा और तालक्कूट्टम् तथा बाएँ ओर बैठने के लिए पीठ होता है। इस प्रकार चार सीमाओं से युक्त होता है रङ्ग।

यह केला, नारियल, पान-सुपारी, नारियल के नये पत्तों के बन्दनवार, मालाएँ और "निरपरा"— (एक विशेष माप और आकार का लकड़ी का बना बर्तन) से सज्जित होता है। इसमें धान व नारियल के फूलों का गुच्छा भी रखा गया होता है; अष्टमंगल्य, नारियल, केले, गुड़, अगरबत्ती, पान, सुपारी आदि से 'रंग' अलंकृत होता है।

तोल— मिषाव के मुँह पर बाँधने के लिए तैयार किया गया काले बंदर, बछड़े या बकरे का चमड़ा।

वार— मिषाव के मुँह को ढकने वाले चमड़े को बाँधने की रस्सी 'वार' कहलाती है।

माट्टुकच्चा— वेषों के कमर में बाँधने के लिए फेनाकार बनाये जाने वाले "माट्ट" को बाँधने के लिए उपयुक्त रस्सी।

मोदक— 'मन्त्राङ्कम्' के भ्रान्तन् (पागल) को अपने दोनों हाथों में धारण करने के लिए ताड़ के पत्तों के डंठलों से बाँधकर बनाया जानेवाला उपकरण-विशेष मोदक कहलाता है।

निणम् (नणम्)— कटे नाक और कानवाली शूर्पनखा के शरीर पर लगाने के लिए पिसा चावल और हल्दी, चूना और पानी मिला कर उपदेशानुसार आग में गरम कर, केला, लावा आदि डाल कर तैयार किया जानेवाला मांड है (कुरुक्कुगुरुति) निणम्।

पन्तम्— छड़ी पर कपड़ा लपेट कर तेल में डालकर जलाई जाने वाली मशाल। कुछ पात्र उंसे अपने हाथ में लेकर प्रवेश भी करते हैं।

वाल् : (पूँछ)— (क) नारियल के पत्तों के डंठलों में कपास रखकर रस्सी से बाँधकर बाकी भाग कपड़े से लिपटा कर बना वाल् हनुमान् के लिए उपयोगी है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(ख) दो इंच मोटा सन की रस्सियों को बाँध कर बना १८ इंच लंबे महीन घेरवाला वाल् (पूँछ) जांबवान् के लिए होता है।

१. **ताटि**— (दाढ़ी)— 'ताटि' कई प्रकार की हैं।

बाली और सत्यसोम (कपाली) की ताटि तेच्चि के फूलों की बनी गोलाकार माला है।

२. सुग्रीव की ताटि सन् की रस्सियों की बनी काली होती है।

३. हनुमान् के लिए कपास की बनी होती है।

४. सन की रस्सियाँ पिरो-पिरोकर नीचे की ओर लटका देने वाली ऊपर मूछों वाली दाढ़ी जांबवान् की होती है।

पालिका— चाँदी की गोलाकार बनी थाली है पालिका। यह बृहन्नला को हाथ में धारण करने के लिए है।

भिक्षापात्र— केले के पत्ते को दोने के रूप में मोड़ कर यह तैयार होता है। सुभद्राधनञ्जयम् के प्रथम अंक में विदूषक को हाथ में धारण करने के लिए यह है।

तात्तियुटुक्कुक— ९६ इंच का कपड़ा लेकर उसे तिरछा चुन कर पैर तक नीचे डालते हुए कमर के चारों ओर गोल चुन्नट वाला पहनावा ही तात्तियुटुक्कल है।

यवनिका— नाटक के कथापात्रों के प्रवेश के पहले लाल और सफेद कपड़े मिलाकर दीप को बाहर कर अन्दर रंगमंच पर पकड़ कर लाये जाने वाली यवनिका ही यवनिका के नाम से व्यवहृत होती है!

मिश़ावणा— कुत्तु नृत्य के रंगमंच में पीछे मिश़ाव रखने तथा नंब्यार को बैठने के लिए बनाया गया स्थान मिश़ावणा कहलाता है।

मरयिल— (आड़ में)— यवनिका को हटाये बिना उसके अन्दर का रंगमंच ही मरयिल शब्द से व्यवहृत होता है।

मेलपुटवा— उत्तरीय के बदले विदूषक की कमर में बाँधने आदि के लिए उपयोग किया जाने वाला दुपट्टा ही मेलपुटवा कहलाता है।

उड्डुक्कु— मामूली डंके जैसा सप्तच्छद का बना उपकरण ही उड्डुक्कु है। यह कपाली के लिए है।

ग्रन्थम्— पढ़े जाने वाले वाक्यों और श्लोकों के लिए कूटियाट्टम् में व्यवहृत संज्ञा है— ग्रन्थम्।

चुण्टप्पोटि (चुण्टिल पोटि)— पिसी हल्दी के साथ चूना लगा कर लाल किया गया चूर्ण होठों को लाल बनाने के लिए उपयुक्त है; यही चुण्टप्पोटि है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विदूषक का मुकुट

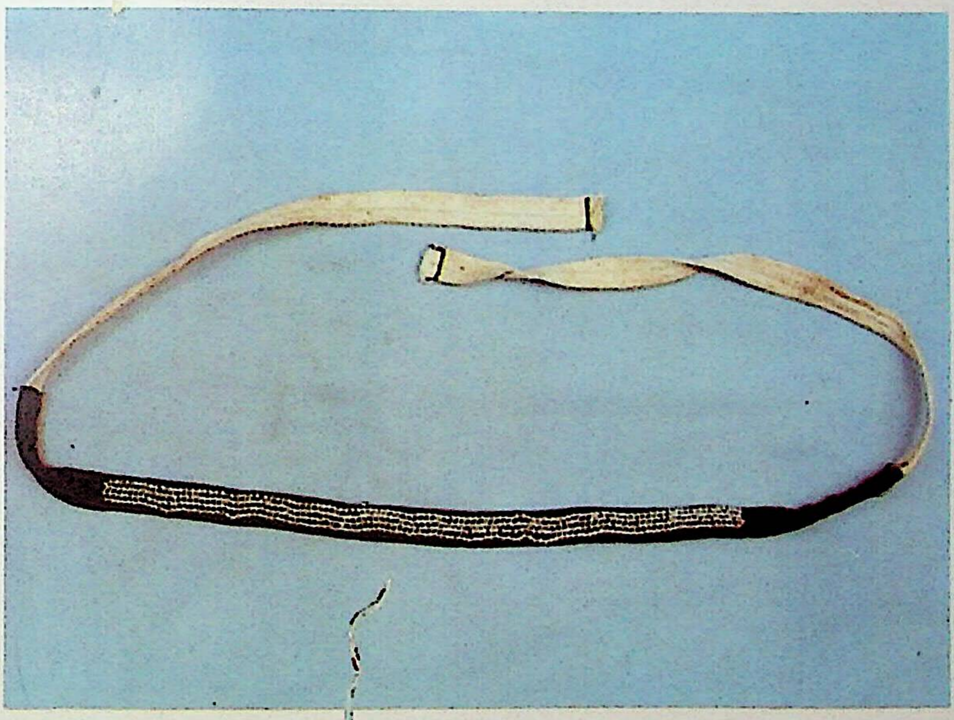

पीलीप्पटम्

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

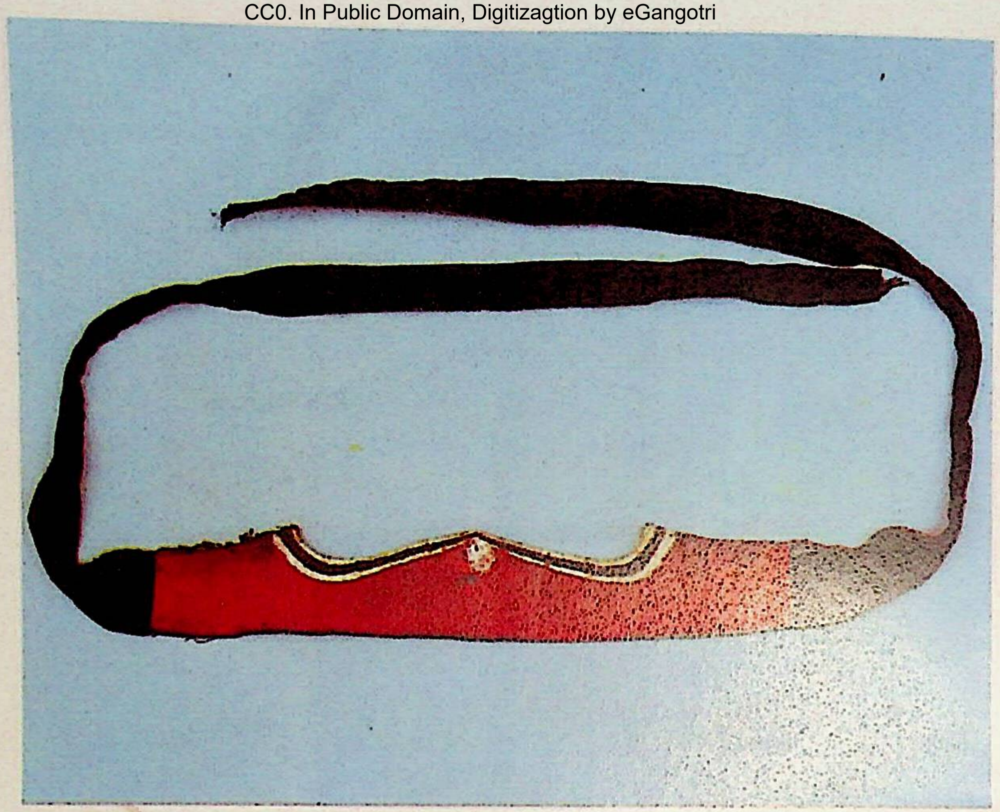

चुट्टितुणि

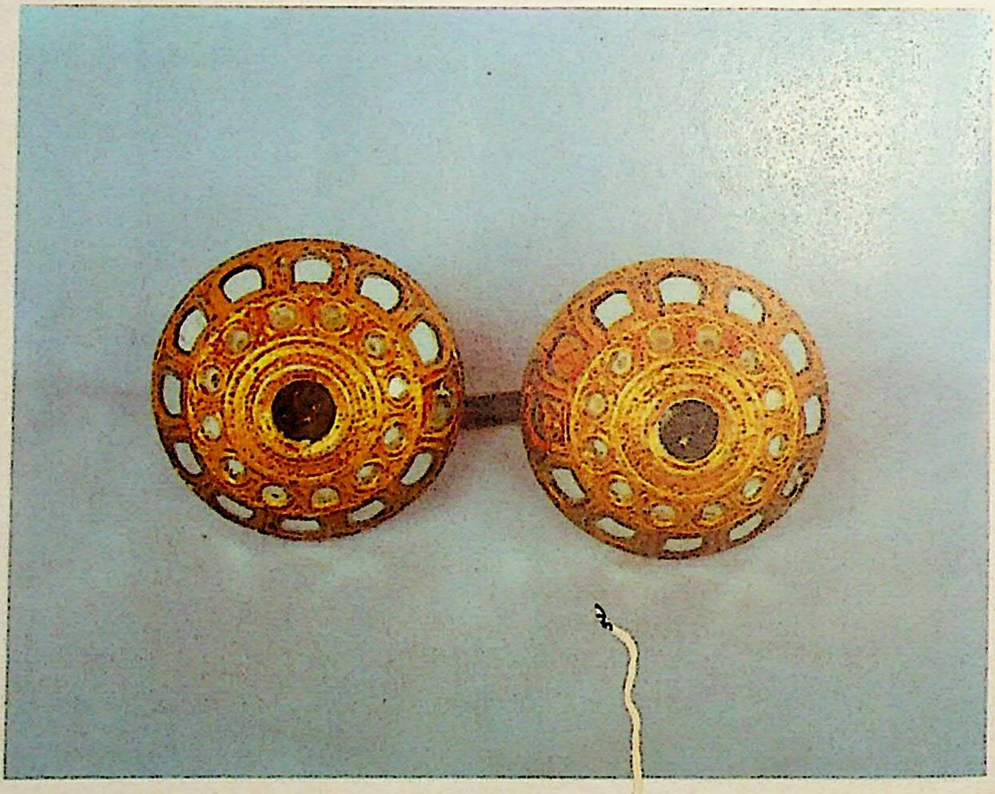

कुण्डल

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चेविपूवु

पोख़म्पु

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चन्नवुरम्

तोळवळा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तोळवळा

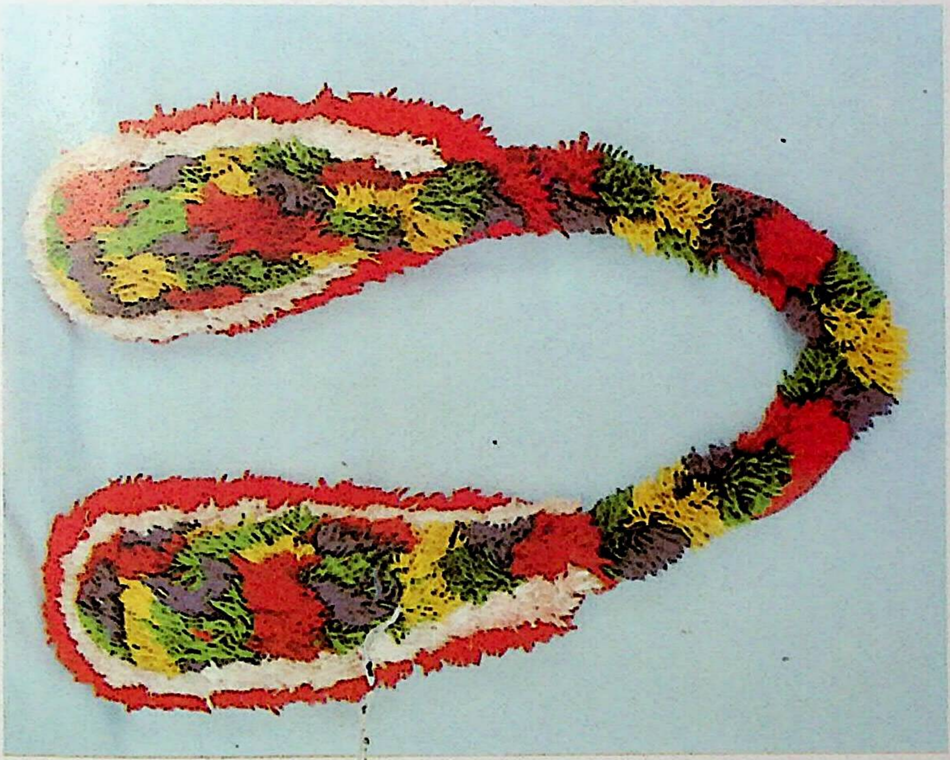

मारमाला

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उत्तरीय

वला (चूड़ी)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कटक (कड़ा)

कटिसूत्र

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

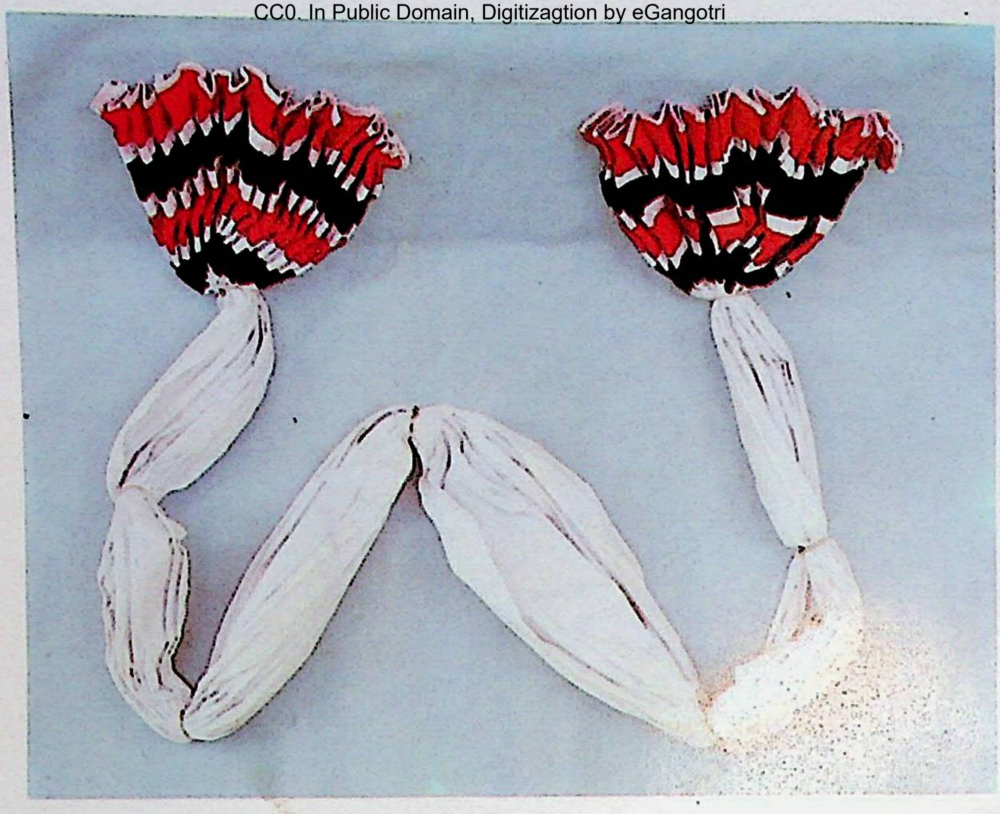

पोयतक

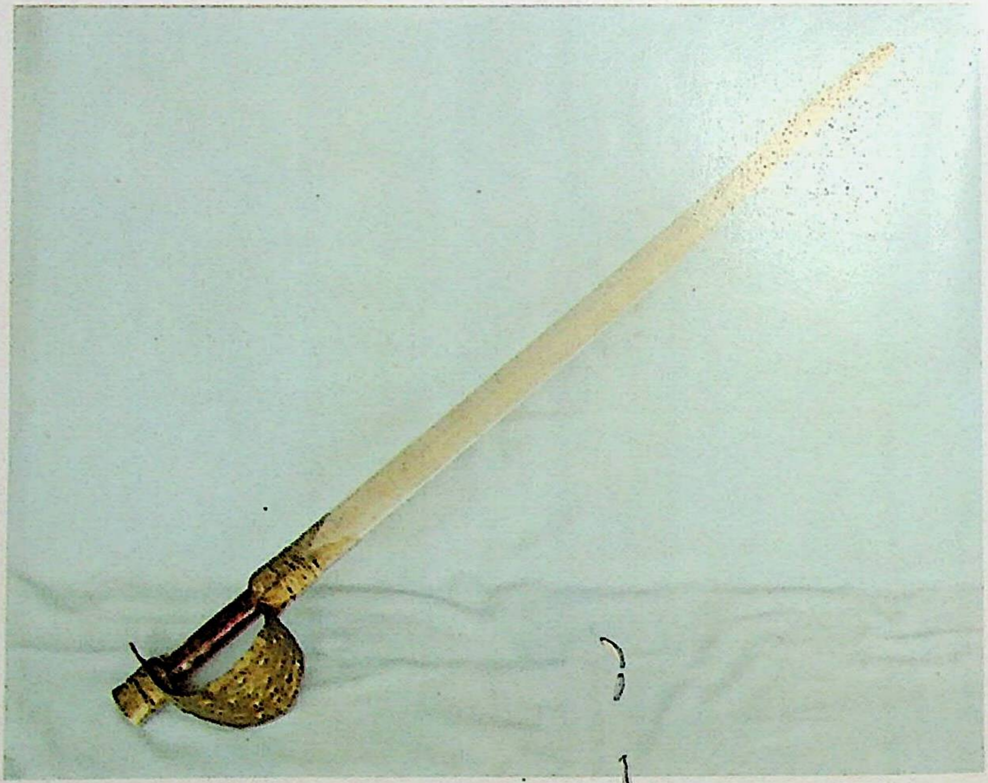

वाल

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जटायु की चोंच (कोक्कु)

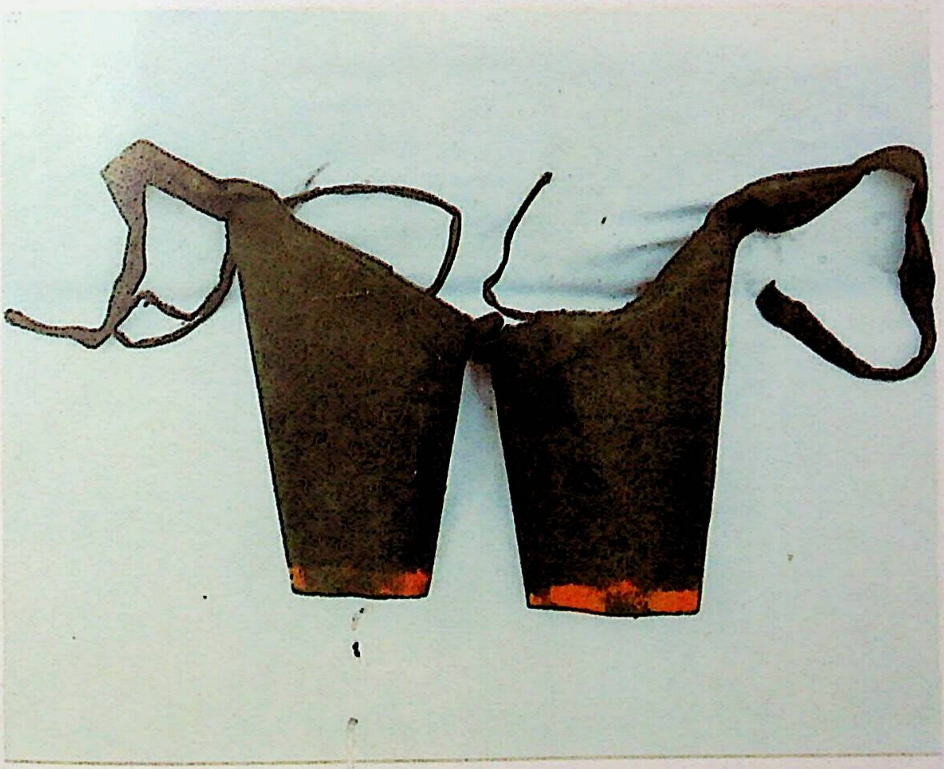

शूर्पणखा के स्तन

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

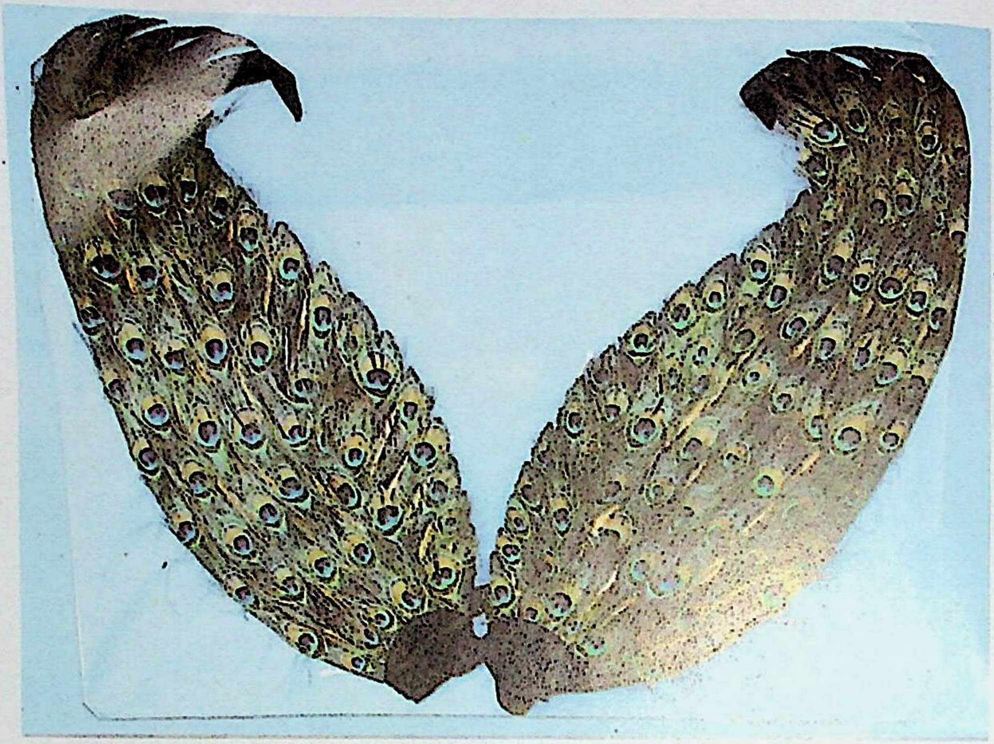

जटायु के पंख

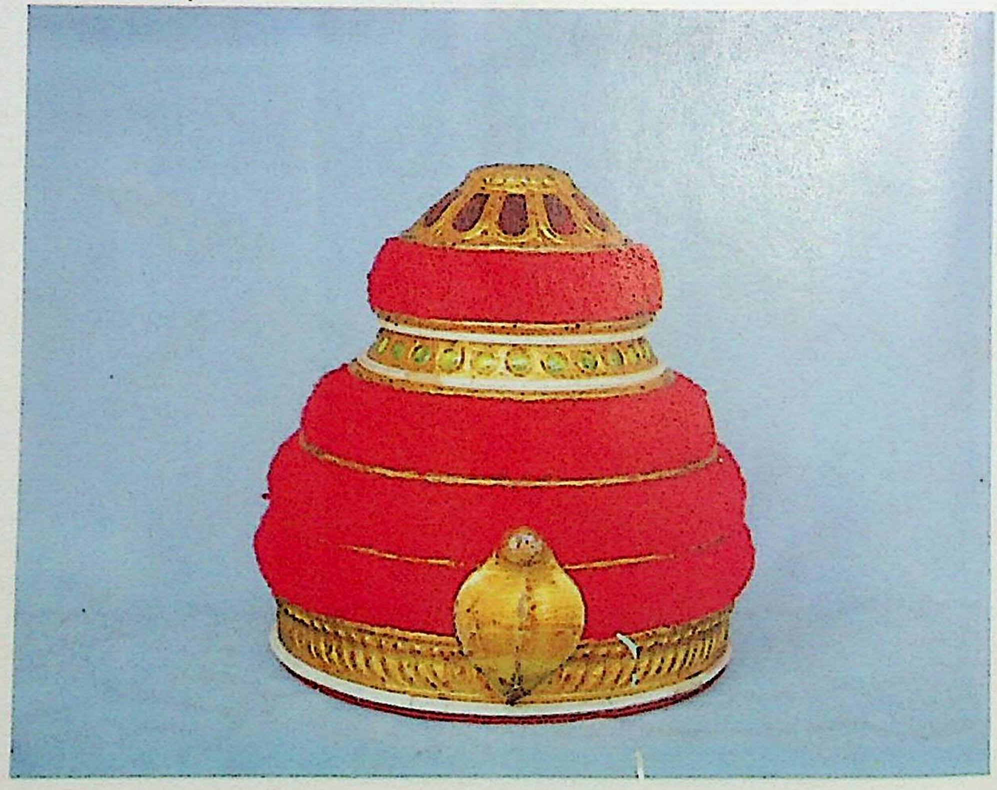

स्त्री का किरीट

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

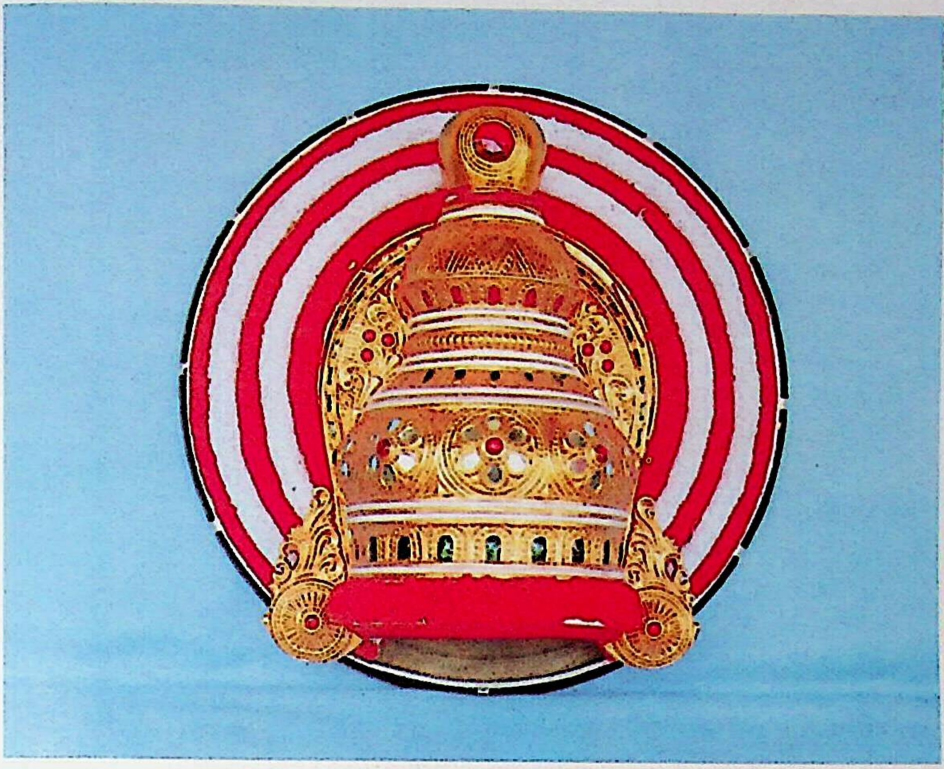

केशाभरण— किरीट

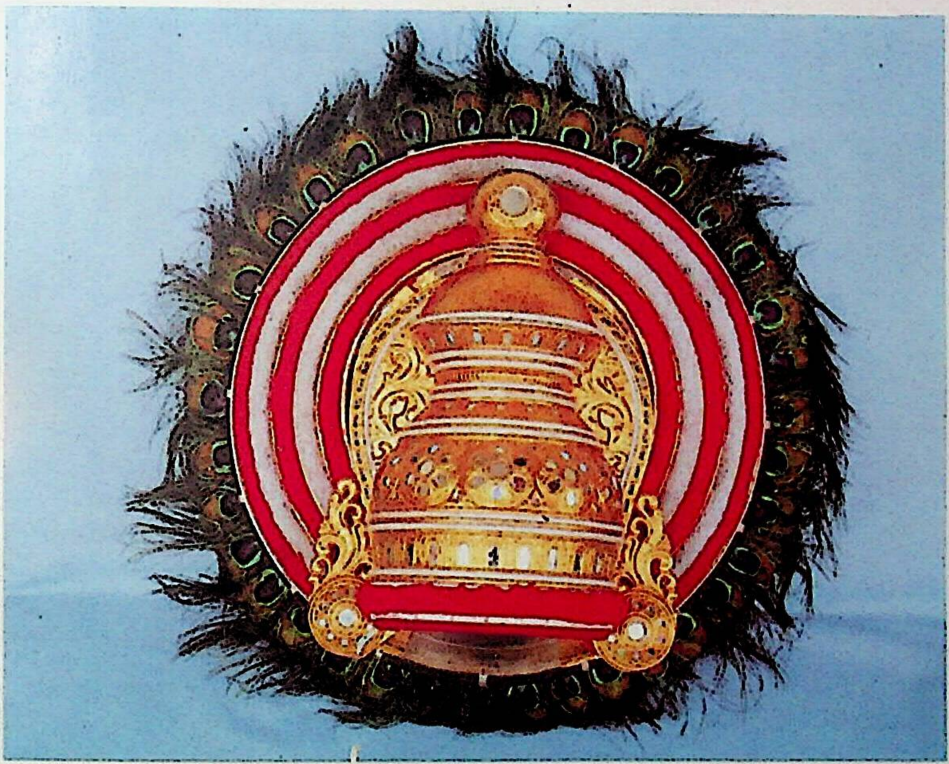

जटायु का किरीट

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हनुमान् का मुकुट

सुग्रीव का मुकुट

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वासिकम्

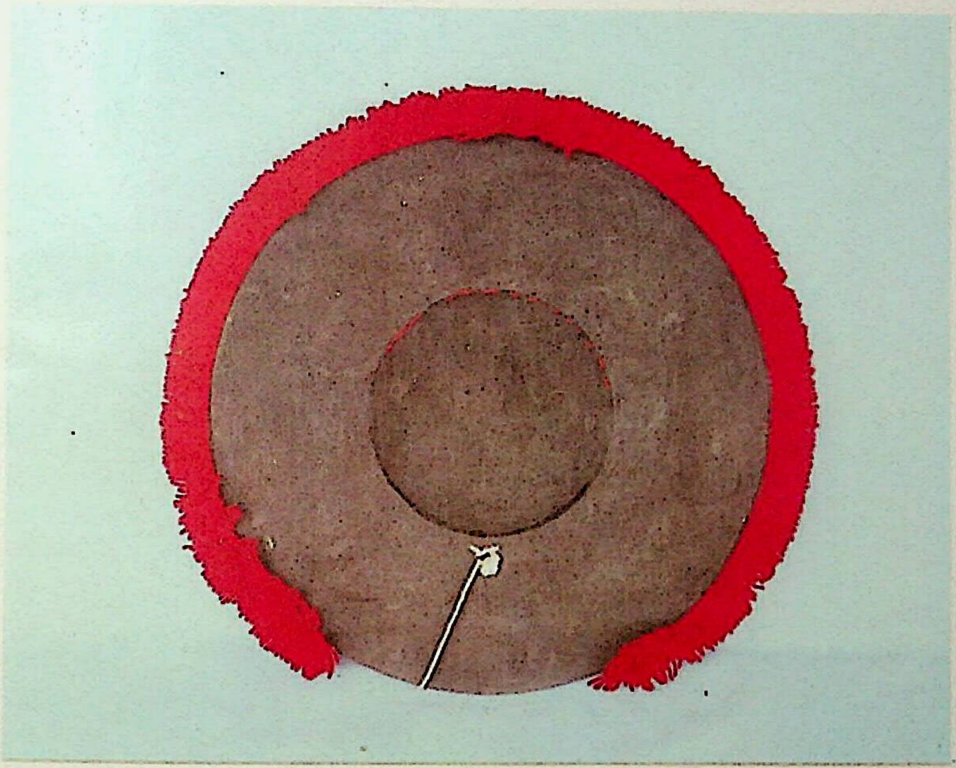

कुषल

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पणक्केट्टु

शूर्पणखा का मुकुट

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चुण्टप्पूव्— "चुण्टा" नामक एक पौधे के फूल के अन्दर का बीज निकालकर उसे पानी में डाल कर मुलायम बनाया जाता है और नटों की आँखों में डालकर आँखों को लाल किया जाता है। यह पौधा बैंगन (भटकटैया) जाति का है। उसके फल गोल-गोल काँटेदार होते हैं।

गोलका— किरीट, कोषल, कुटुमा (विदूषक का उष्णीष) कूट् (स्त्री कथापात्र की टोपी) आदि को सिर पर बाँधने के लिए उन के नीचे सिया जाने वाला कपड़े का टुकड़ा गोलका कहलाता है।

कोक्कुम्, चिरकुम् (चोंच और पंख)— जटायु, गरुड आदि पक्षियों के वेष के लिए उपयोग में आने वाली चोंच और पंख।

(ख) चटंगुकलुम्-क्रियकलुम्—

परंपरा से निश्चित विधान व क्रियाएँ

तलयिल् केट्टुक (सिर पर बाँधना)— किसी भी नाटक का आरम्भ (पुरप्पाट) हो (चाहे सुबह या शाम), वेषधारण करनेवाला नट स्नान आदि से शुद्ध हो कर कूत्तम्पलम् में आकर मन्दिर के अधिकारी से कूरा (कपड़ा) स्वीकार कर अपने सम्बन्धियों को भी दिलवाकर श्रीकोविल के पास जाकर पुजारी या तन्त्री से कुत्तुविलक्क् (ऊँचे लम्बे डण्डे जैसे आधार पर बना दीप) जलवाकर सज्जीकृत रंगमंच पर रखे दीप की दो बत्तियाँ जला कर कुत्तुविलक्कु को अणियर-नेपथ्य में लाकर रखता है। फिर अपने सम्बन्धियों की अनुमति लेकर गणेश की पूजा कर, चुवप्पुतुणि लेकर रंग में जाकर उस मन्दिर की देवता तथा कूत्तु की रक्षा करने वाले देवों को लक्ष्य कर तीन बार प्रणाम कर के प्रयोग की निर्विघ्न परिसमाप्ति की प्रार्थना कर, नेपथ्य में आकर, गणपति आदि इष्ट देवताओं की वन्दना कर, दिन में पूरब की ओर तथा रात में पश्चिम की ओर मुँह ... बैठकर हाथ की चुवप्पुतुणि को अंक में रख कर गणपति, सरस्वती, गुरु, व्यास, भरतमुनि, दक्षिणामूर्ति नटराज शिव इत्यादि देवों का अभिवादन कर चुवप्पुतुणि का स्पर्श कर सिर पर रखकर उसको भाल के ऊपर बाँधता है। फिर घी लेकर चेहरे के पाँच स्थान पर लगाकर मलता है। इस प्रकार तीन बार करता है। बाद को चायिल्य या मनःशिला (निर्दिष्ट भूमिका धारी नट के मुख पर लगाने की वस्तु) मोतिर-विरल (अनामिका) से लेकर भाल, नाक, चिबुक दोनों गाल इन पाँचों स्थानों में स्पर्श कर देता है। इस आचार को चाक्यार की बोली में 'तलयिलकेट्टल' कहा जाता है। एक बार अगर किसी ने 'तलयिलकेट्टल' किया, तो कूत्तु, नृत्य पूरा किये बिना उसे उतारना

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नहीं चाहिए। ऐसा नियम है। अगर कोई बाधा हुई तो उसके दूर होने तक रुक कर कूत्तु पूरा करने के बाद ही 'तलयिलकेट्टल' निकालना चाहिए। इस बीच में अगर सन्ध्यावन्दन का समय बीत गया तो संध्या की आवृत्ति नट के लिए आवश्यक नहीं। जब तक तलयिल केट्टल है तब तक अशौच आदि नहीं। सिर पर बँधी चुवप्पुतुणि को निकाल सकता है, लेकिन शरीर के स्पर्श से अलग नहीं रखना चाहिए— ऐसा भी नियम है।

अणिञ्ञुकूट्टुक— तलयिल् केट्टल के बाद प्रस्तुत वेष के लिए निर्दिष्ट मुख पर चायिलय आदि का लगाना, चुट्टि, पोशाक, किरीट, कुर्ता आदि सभी वेष-विधान-सामग्रियों से सज-धज कर रंग में प्रवेश करने योग्य हो जाने की संज्ञा है अणिञ्ञुकूटल्, (अणिञ्ञ्—सज-धज कर, कूटल्— तैयार होना) जैसे नट पहले चुवप्पुतुणि सिर पर बाँधता है वैसे चेविप्पूव् अन्त में ही पहनता है।

अरङ्ङवितानम्— रंग-सज्जीकरण।

कूत्तम्पल के नाट्यमण्डप के चारों खंभों पर केले के पेड़, नारियल के गुच्छे, सुपारी के गुच्छे बाँध कर, नारियल के पत्ते मालाएँ आदि से चारों ओर अलंकृत कर, ऊपर नये सफेद और लाल कपड़े के चंदोवे लगा कर, चारों खंभों के केलों के पेड़ों पर नये कपड़े वेष्टित कर सामने बीच के दीप के निचले आधार-दण्ड को भी कपड़े से वेष्टित कर ऊपर दो लटकने वाले दीप भी लगाकर पीछे मिऴावणा में मिऴाव तथा बाएँ ओर पीठ (स्टूल) डाल कर, मिऴाव, पीठ, दीप तीनों को नये कपड़े से वेष्टित कर, दाएँ ओर एक वस्त्र बिछा कर उसके सामने दूसरा मुड़ा हुआ वस्त्र भी डाल कर उसमें तालक्कूट्टम रखा जाता है। पीछे बिछा वस्त्र नंग्यारम्मा के तथा पीठ नट के बैठने के लिए है। दीप के दाएँ ओर "परनिरप्पू"— धान से भरा बर्तन— अष्ट मांगल्य तथा रंग के दीप के सामने गणपति के नैवेद्य की वस्तुएँ भी केले के पत्ते पर रखी जाती हैं। नेपथ्य में भी अष्टमांगल्य तैयार कर रखने के साथ अरंङ्ङ वितानम् (रंग सज्जीकरण) पूरा हो जाता है।

मिऴावोच्चप्पेटुत्तुक— (मिऴाव की आवाज़ सुनाना)।

अभिनय किये जाने वाले नाटक के नान्दी सूत्रधार के कृत्य का निर्वहण करने वाला नंबियार अपने सम्बन्धियों से अनुमति लेकर तट्टुडुत्— विहित रीति से कपड़ा कमर में बाँध कर (पहन कर) नान्दी सूत्रधार बन कर चाक्यार के तलयिल् केट्टल् के बाद तालक्कूट्टम भी लेकर, बाँयी ओर से रंग में प्रवेश कर, तालक्कूट्टम् रंग में बिछे कपड़े पर रख कर, दीप की तीनों बत्तियाँ जला कर (सामने की ओर एक तथा रंगमंच की ओर दो के रूप में) दाँई ओर से मिऴावणा पर बैठता है। फिर इष्ट देवताओं का ध्यान-संकल्प कर मिऴाव का स्पर्श कर अभिवादन करता है, विशेष कर नन्दिकेश्वर का ध्यान कर मिऴाव को बजाना शुरु कर देता है। एकताल में कुछ विधाएँ आदेशानुसार बढ़ा-घटा कर बजाने के बाद उसकी परिसमाप्ति करता है। इसको मिऴावोच्चप्पेटुत्तुक कहते हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गणपति-नैवेद्यम्— रंगपूजा।

मन्दिर का पुजारी या तन्त्री या और कोई ब्राह्मण पुजारी मिषावोच्चप्पेटुत्तक के बाद रंग पर आकर मध्य में बैठ कर रंग में रखे दीप को ही गणपति का नैवेद्य अर्पित कर कूत्तुनृत्य की निर्विघ्न परिसमाप्ति की प्रार्थना कर पूजा कर्म पूरा कर देते हैं। इसका नाम है गणपति-पूजा या जर्जर-पूजा।

गोष्ठिकोट्टुक— गणपति नैवेद्य के बाद नान्दीसूत्रधार नंबियार और नटी नंगियार दोनों के द्वारा मिलकर नाटक की निर्विघ्न परिसमाप्ति के लिए किया जाने वाला पूर्वरङ्ग कर्म ही गोष्ठिकोट्टल कहलाता है।

नंगियारम्मा रंग में आ बैठ कर अभिवादन कर तालक्कूट्टम् उठा कर नंबियार के मिषाव के वादन के ताल से ताल मिलाकर मजीरा बजाती है और वादन के बीच में गणेश, महेश और सरस्वती इत्यादि देवता-स्तुति के गीत गाती है। गीत के बाद नंबियार का मिषाव बजाना, फिर गीत, फिर वादन आदि क्रम से यह चलता है। इस कला-प्रकटन को "गोष्ठिकोट्टल" संज्ञा दी गयी है। सभी गोष्ठियों (सभाओं) में वह अत्यन्त हृद्य रहता है।

अरंङ्ङुतलिक्कुकः— मिष़ावोच्चप्पेटुत्तल्, गणपति नैवेद्य, गोष्ठिकोट्टल आदि शान्तिक-पौष्टिक कर्मों से दुर्देवताओं का निष्कासन तथा सद्देवताओं का आह्वान करने के बाद नान्दी सूत्रधार नंबियार रंग-प्रवेश करके दीप के सामने खड़े होकर नान्दी श्लोक का पाठ करके जल-गन्ध-पुष्प से आराधना कर, नान्दी-पूजा-समर्पण का संकल्प कर, ब्रह्मदेव का अभिवादन कर, रंग का स्पर्श कर, सिर पर रख कर समापन कर के (मुंटिच्च्) नेपथ्य में आता है। यह रंग-प्रसाधनरूपी अरंङ्ङु तेलियिक्कल कहलाता है। इसके साथ पूर्वरंग की परिसमाप्ति होती है।

वायिक्कुक— (वादन करना)— रंग में दीप के सामने यवनिका पकड़ने पर नंबियार एकताल में मिष़ाव का वादन शुरु करते हैं। तालक्कूट्टम् उपवाद्य-इटक्का (हुडुक्का), शंख, कुष़ल (तुरही) आदि बाजे भी मिष़ाव के साथ-साथ बजने लगते हैं। कथापात्र के प्रवेश को सूचित करने वाले इस मेल (बाजों का बजना) को वायिक्कुक (वादन करना) कहते है।

मरयिल क्रिया (मरविल क्रिया) (आड़ में करनेवाली क्रिया)— वादन के बाद जब बाजा बजना रुक जाता है तो वेष के द्वारा रंग में आकर मिष़ाव की ओर मुड़ कर यवनिका के अन्दर की जाने वाली सभी क्रियाओं की संज्ञा है— मरयिल क्रिया। यह मरयिल क्रिया बाजे के साथ ही की जाती है।

मरयिल मुतल्लटा— वेष रंग में आकर यवनिका के अन्दर मिष़ावणा की ओर निम्न पाद में खड़े होकर नीचे लिखे वाय्ताल (मुँह से उच्चरित होने वाले पाटाक्षर)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

के अनुसार पैरों के विक्षेप के साथ हाथों से मुद्राओं का प्रदर्शन भी करते हैं। नंबियार का मिषाव का वादन इसके अनुकूल रहेगा।

हर्यांक्कि धकुक्कुक्कुं— इस प्रकार तीन बार; त. तह्र्य तर्हिंय किर्तिक्किर्तिन्त त तह्र्य तरर्हिंय, तरह्र्याक्किति क्किति किति, तत्ताक्किति किति किति त तह्र्य तर्हिंय— इस प्रकार दो बार। त्थें तक्किति तक्कितिकि तक्कित्ति तक्कितिकि किति किति तत्त किति किति तत्त, त्थें तरह्र्य क्किति किति तत्तक्किति किति किति त तरह्र्य तर्हिंय— इस प्रकार चार बार। हर्या क्की त्थें, हर्या क्किं ध क्कु क्कु क्कुं धकु कु क्कु क्कु क्कुं, ता, तण तरह्या, तण तरह्या कि ति त्थें— चार बार; हर्याक्कि त्थें— चार बार; तह्र्या क्किति क्किंति किति तत्ता क्किति किति किति त तह्र्य तर्हिंय त्थें किति कित्ति तर्हिंय— चार बार; त्थें कुटुक तरहिं किति त्थें तरह्र्य तरन्तुं तह्र्य क्कित्तिक्कि त तरह्र्य तर्हिंय।

इसके बाद रंग का स्पर्श कर सिर पर धारण कर नेपथ्य में आते हैं। इन सब विधाओं के लिए निर्दिष्ट संज्ञा है ''मुतल्प्टा''। मुतल्प्टा की सभी क्रियाएँ मुरुकिय त्रिपुटा ताल में ही चलायी जाती हैं। (द्रुतमात्रिक त्रिपुटा) तित्तित्त, तित्तित्त यही ताल है। नंबियार इस ताल के आधार पर प्रत्येक के अनुसार बाजा बजाता है। मरयिल् क्रिया की चारिकाओं में कुछ भेद भी प्रचलन में है।

मरयिल आतोद्यम्— हाथों से भेरी (बड़ा ड्रम) बजाने का आंगिकाभिनय कर पैर उठा कर कूदते हुए गोलाई में एक दो बार घूम कर 'मुटिच्चु पोरल्' समाप्त कर के नेपथ्य में जाने को मरयिल आतोद्यम् कहते हैं। ताल तो द्रुतमात्रिक त्रिपुटा ही है, पर बजाने में अन्तर है। नट भी हाथों से उत्तरीय के दोनों छोर पकड़े होंगे।

मरयिल् उद्धत यात्रा— पैरों को बदल-बदल कर ऊपर उठा कर गोलाकार उछल-उछल कर चलना। इसका प्रदर्शन एवं बजाना दोनों ध्रुवताल में होंगे। द्रुतमात्रिक त्रिपुटा में भी कर सकते हैं।

कलप्पुरत्तु नटक्कुक— तीनों कोणों की ओर कूद कर पैरों को दूर तक उछाल कर एक साथ घूमना। इसकी संज्ञा है कलप्पुरत्तु नटक्कुक। यह एकताल में है।

चोल्लुन्ति नटक्कुक— दोनों हाथों से उत्तरीय के दोनों छोर मिलाकर नाभि के पास पकड़ कर स्त्रीभाव में निम्न पद में खड़े होकर त्रिपुटा ताल में तरह्र्या की त्थें किति त्थें ति त्ति धकु कुक्कु क्कुं धक्कु क्कु क्कुं त्थें इस प्रकार ताल में पैर रखकर, पैरों को पीछे की ओर रखकर चारों दिशाओं में दिखाकर अन्त में एक बार और मुड़ कर पैर रखना।

तेरु पेरुमाट्टम्— चारों कोनों में आगे की ओर और फिर पीछे की ओर घोड़े की गति से कूदते रहना। इसका ताल त्रिपुटा है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अंबरायणम् (अंबरयानम्)— कथापात्रों का विशिष्ट स्थायी में खड़े होकर पैरों को इधर-उधर चार-पाँच बार घुमाकर कूदना। ज्यादातर इसका प्रयोग आकाशगमन के लिए किया जाता है। पीठ के ऊपर तथा जमीन पर खड़े होकर दोनों प्रकार यह किया जाता है। द्रुतमात्रिक त्रिपुटा ताल है।

नेपथ्यम् चोल्लुक— नेपथ्य में से पढ़े जाने वाले ग्रंथ को नेपथ्यम् चोल्लल या चोल्लुक कहते हैं।

नेपथ्यम् कोट्टुक— नेपथ्यम् चोल्लल के पहले तथा वेष के रंग प्रवेश के पहले एकताल में वायत्ताल के अनुसार मिषाव के वादन को नेपथ्यम् कोट्टल कहते हैं।

चुवडुचवुट्टुक— विलम्बित त्रिपुट ताल में (पतिञ्ञ त्रिपुट तालत्तिल्) धक्कु क्कु क्कुं धक्कु क्कु क्कुं त्थें त्थें ति त्ति इस वायताल में पैर रखने और कूदने को 'चुवडुचवुट्टल' कहते हैं। इसके साथ मिषाव का वादन भी होता है।

नूपुरु पादत्तिल् इडिक्कुक— बायें पैर के घुटने के बल पर बैठने को नूपुरपादत्तिल् इरिक्कुक कहते हैं।

चुनिकक्कूट्टिल् निल्कुक— दोनों पैरों के सामने के पाद मिलाकर शरीर थोड़ा सा सामने की ओर झुकाकर निम्नपाद में खड़े हो जाने को यह संज्ञा दी गयी है। बायाँ पैर सामने तथा दायाँ पीछे रख कर खड़े हो जाने को भी चुनिकक्कुटिल् निल्कुक कहते है।

योगोवट्टम् केट्टक— पीठ के ऊपर उकड़ूँ बैठकर उत्तरीय से शरीर और पैरों को एक साथ चारों ओर बाँधने को योगवट्टम् केट्टल् कहते हैं।

भावत्रयम्— दीनता, दुःख, क्रोध इन भावों को मुद्राभिनयों से प्रकट करने को भावत्रयम् कहते हैं। ये तीनों भाव मन्त्राङ्कम् कूटियाट्टम् के वसन्तक के लिए हैं। पात्र भेद के अनुसार अन्य किन्हीं भी तीनों भावों के लिए यह संज्ञा उपयुक्त है।

प्रावेशिकम्— कथापात्रों के प्रवेश के समय का भाव (स्तोभ) दीप के सामने तथा चारों भागों में दिखाने को प्रावेशिकम् कहते हैं।

रौद्र रस के आविष्कार के समय हाथों से ऊरु पर मार कर, मुठ्टी बाँधकर (अलरियु) विशिष्ट ढंग से गर्जन की आवाज निकाल कर, उत्तरीय के दोनों अग्र भाग दोनों हाथों से मिलाकर पकड़ कर फिर एक छोर कान तक ऊँचा कर तथा दूसरा नीचा करके हिला-हिला कर क्रोध की चरम सीमा सूचित करने को भी प्रावेशिकम् संज्ञा दी गयी है।

उद्घट्टनम्— झम्पा ताल या त्रिपुटा ताल में मिषाव बजने के अनुसार हाथों से ताल लगाकर कूदना और पढ़ना उद्घट्टन कहलाता है। हाथों से कुछ एक अवयवों में ताल लगाकर पढ़ने को भी "उद्घट्टनम्" कहते हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उत्तरीयं वीशुक (उत्तरीय झलना)— उत्तरीय के दोनों छोरों को दोनों हाथों से पकड़ कर एक हाथ से झल कर दूसरे हाथ में और दूसरे से झल कर पहले हाथ में, दोनों हाथों से पंखे झलने की तरह झलकर सामने की ओर डालने को उत्तरीयं वीशुक कहते हैं।

मून्नां तालत्ति पुरप्पेटुक— उत्तरीय के दोनों छोर दोनों हाथों से औंधे मुँह करके पकड़ कर, बायाँ हाथ खोल कर और दायाँ हाथ मुख के सामने पकड़ कर, मिष़ावणा में निम्न पाद में खड़े होकर प्रेक्षकों को जानने दिये बिना ध्रुवा ताल में घुमा कर मुड़कर धीरे-धीरे पैर सरका-सरका कर दीप के पास पहुँचने तथा इस प्रकार निकलने की संज्ञा है— मून्नांतालत्तिल पुरप्पेटुक।

कलङ्कपत्र में निकलना— झंपा ताल में बाएँ और दाएँ ओर से होकर मण्डलाकार दो तीन-बार कूद कर चलते हुए पैरों को मिलाकर खड़े हो कर, बाएँ दाएँ ओर झट से तीन-तीन बार घूमना। यही कलङ्कपत्र में निकलना है।

केट्टित्तिरियुक— त्थें कुटुक तर्हि कितित्थें तर्ह्य तटन्तुं तर्ह्यिं कित्तिक्कि त तर्ह्य तर्ह्यिं— इस प्रकार पढ़न्त में बायाँ पैर आगे रखकर दायाँ पैर ज़मीन पर से सरका कर पूरा फैला कर रख कर पैरों को बदल-बदल कर पीछे रख-रख कर सामने की ओर खड़े हो कर घूमना। इसका नाम है केट्टित्तिरियुक। यही सप्तपद-विन्यास भी है।

कलियुं वेच्चु तिरियुक— तर्ह्य थें त तर्ह्यक्कि त्ति ह्याक्कित्तिक्कि ह्यक्किं— इस पढ़न्त के अनुसार मिष़ावणा से दायाँ और बायाँ पैर आगे की ओर रख कर घूमकर दायाँ पैर दाँई ओर तथा बायाँ पैर बाँई ओर आगे रखकर दायाँ पैर दीप के सामने पहुँचने लायक फैलाकर पदविन्यास करना। इसे कलियुं वेच्चु तिरियुक कहते हैं। यह पञ्च-पद-विन्यास है।

कमलपरिवर्तनत्तिल् तोषुक— कमल के फूल की मुद्रा दिखा कर दोनों हाथों से घुमा-घुमा कर ऊपर की ओर हाथ जोड़ने की कमल-परिवर्तन-त्तिल्-तोषुक संज्ञा है।

सभानिरीक्षणम्— त्रिपुटा ताल के मिष़ाव वादन के अनुसार आँखों के कटाक्ष विक्षेप के साथ सभा का अवलोकन करना ही सभानिरीक्षणम् कहलाता है।

अभिवाद्यम् चेय्युक— त्रिपुटा ताल के वादन के साथ सामने दाएँ और बाएँ तथा आगे तीनों भागों में दोनों कानों का स्पर्श कर अभिवादन करने के रूप में वन्दना करने को अभिवाद्यम् चेय्युक कहते हैं।

कुण्डलमिट्टु मुटिक्कुक— पैर से 'कितिन्ता' इस प्रकार पदविक्षेप कर कटक मुद्रा पकड़कर हाथों से कुण्डल का स्पर्श कर आत्माराधना करने के रूप में अभिवादन करने को कुण्डलमिट्टु मुटिक्कुक नाम दिया गया है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अरंङ्डु पेरुमाट्टम्— रंग में चतुरस्राकृति में पैर रखकर द्रुतमात्रिक त्रिपुट में पदविक्षेप कर कूदते हुए दिखानेवाली क्रिया है— अरङ्डुपेरुमाट्टम्।

विक्षेपम् वीशुक— बाएँ और दाएँ पैरों से मण्डलाकार आगे की ओर विक्षेप करने को विक्षेपम् वीशल या वीशुक कहते हैं।

अक्किक्ता— मिषाव के बजने से ताल मेल खाने वाले कथापात्रों की चेष्टाओं (क्रियाओं) के अनुकूल नंगियारम्मा द्वारा गाये जाने वाले वाक्यों व श्लोकों को "अक्किक्ता" की संज्ञा दी गयी है।

मूलक, पाटुक— अनुनासिक रागालाप को "मूलुका" तथा निरनुनासिक रागालाप को 'पाटुका' कहते हैं। शास्त्राङ्ग में नालुपादम् (चतुष्पदी) है लेकिन इसमें 'रण्डुपादम्' (द्विपदी) है।

आळामश्लोकम्— रंग में प्रवेश करने जाने वाले कथापात्र के छायाश्लोक (शब्द चित्र अंकित करने वाले श्लोक) को ही आळामश्लोकम् कहते हैं। इसके राग को ही रागालाप सूचित करते हैं। इसका पाठ रंग में बैठी नंगियारम्मा ही करती है।

विलक्कुक— हाथ से, या हथेली के पिछले भाग को दिखाकर, बाजे का बजना बंद करने की सूचना देने वाला "आंग्य" (हस्तमुद्रा) और कोहनी से "आंग्य' दिखाकर बंद करने की सूचना देने को "ओरंकोण्डु विलक्कुक" कहते हैं।

कोट्टोटुकूटि चोल्लुक— 'कुण्डलमिट्टु मुटिच्चेय' के बाद उत्तरीय और हाथ से मुँह ढक कर निकट अभिनय किये गये मूल ग्रंथ को धीमे से बिना मुद्रा के पढ़ने को 'कोट्टोटुकूटि चोल्लुक' कहते हैं। अब नंबियार का बाजा बजना जरूरी है।

मूटिचोल्लुक— कुछ कथापात्र ऐसे होते हैं, जो बिना वेषविधान के केवल लाल कपड़ा ओढ़कर प्रस्तुत कथापात्र की चूर्णिकाएँ (गद्यात्मक संवाद) आदि पढ़ते हैं। इसका नाम है मूटिच्चोल्लुक।

कूटिचोल्लुक— सूत्रधार एवं कथापात्र बने चाक्यार, नंबियार और रंग में बैठी नंगियारम्मा तीनों द्वारा मिलकर रंग में ग्रंथों का पाठ करना, उनका अर्थ कहना आदि करने का नाम है— कूटिच्चोल्लत्। इस समय में कोई अभिनय या वादन नहीं होता।

तमिळ् (तमिळकुत्तु)— मूल ग्रंथों के अर्थ-प्रतिपादन करने वाली टीका का नाम है— तमिळकूत्तु। जिन नाटकों में विदूषक नहीं होता, उनमें मूलग्रंथों के अर्थ प्रतिपादन का अधिकारी सूत्रधार (नंबियार) प्रत्येक कथापात्र के वाक्यों के अर्थ को देशी भाषा में प्रस्तुत करता है इसे 'तमिळ्-चोल्लल' कहते हैं।

दण्डनमस्कार— 'प्रतिज्ञा यौगन्धरायण' नाटक का डिण्डिकवेषधारी वसन्तक द्वारा प्रस्तुत अङ्क की परिसमाप्ति में किया जाने वाला एक मंगल कर्म है— दण्ड

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नमस्कार। अपने हाथ का डण्डा (दण्ड) जमीन पर टेक कर उसके ऊपर हाथ जोड़ कर क्रिया- लोप की प्रतिविधि (प्रायश्चित) की प्रार्थना के रूप में एक-एक करके सात मंगल श्लोक पढ़कर दण्ड के साथ नमस्कार कर, सदस्यों (ब्राह्मणों) का ताली बजाना आशीर्वाद के रूप में सिर पर स्वीकार कर लेता है। श्लोक पाठ के समय को छोड़ बाकी समयों में मिषाव बजता रहेगा। इन सबका नाम है— दण्ड-नमस्कार।

मुटियक्कित— नाटक के निर्दिष्ट अङ्क का अभिनय पूरा कर नट के नेपथ्य में जाने पर नंबियार द्वारा अंक की परिसमाप्ति के अवभृथ के लिए मिषाव की ध्वनि से आह्वान करने पर चाक्यार (नट) सिर से किरीट उतार कर, चुवप्पुतुणि सिर पर बाँध कर, स्थापना-सूत्रधार बन कर, एक कमण्डलु में तीर्थ जल भर कर, रंग में आकर हाथ-पैर मुँह आदि धो कर, आचमन कर, अवभृथ स्नान का संकल्प कर, जप करता है और जल छिड़क कर वही तीर्थ-जल सभी सामाजिकों पर छिड़क देता है। फिर रंग में त्रेताग्नि के रूप में जलने वाले दीप से तीनों बत्तियों से एक-एक बत्ती लेकर उन्हें मिलाकर ऊपर की ओर आवाहन कर ज़मीन पर डालता है। सर्व प्रायश्चित्त के रूप में अभिवादन कर रंग का स्पर्श कर हाथ सिर पर रखता है और अपना कृत्य पूरा कर (मुटिच्च्) निष्क्रमण करने की संज्ञा है— मुटियक्कित्त।

मयिलाट्टम— मोर के 'स्तोभ' (स्वभावगत चेष्टा) में मोरपंखे फैलाकर घूमकर अर्धचन्द्राकार विशेष ताल में पैर रख कर झूमने को मयिलाट्टम कहते हैं।

वसन्तक का मयिलाट्टम्— दण्ड (डंडा) गर्दन के पीछे रख कर दोनों हाथों से उसके दोनों छोरों पर ताल लगाकर उद्घट्टन के रूप में "मायिलों कुयिलो" इत्यादि बोली के साथ द्रुतमात्रिक त्रिपुट ताल में पैर पीछे-पीछे रख कर मुड़कर चारों दिशाओं में दिखाना यह वसन्तक का मयिलाट्टम् है।

कुण्टनाट्टम्— दण्ड (डंडा) को पैरों के बीच में रख कर दोनों हाथों से उसके आगे का भाग पकड़ कर ताल के अनुसार "कुण्टा कुण्टा कुण्टायो" इत्यादि बोलते बोलते तीन दिशाओं में तीन तीन बार आगे और पीछे की ओर कूदना। इस प्रकार रंग के चारों ओर करने को कुण्टनाट्टम् कहते हैं। यह भी वसन्तक के लिए है।

कळि— मयिलाट्टम की रीति से वसन्तक के चारों दिशाओं की ओर बोलने के साथ खेलने का नाम है कळि (खेल)।

मुखवर्णना— प्रवेश कें समय निर्दिष्ट कथा-पात्र की स्थायी को प्रकाशित करने वाला एक प्रकार का अभिनय है मुखवर्णना। यह चारों दिशाओं में दिखाया जाता है।

चारी (चलने का खास ढंग) दाएँ पैर से बाएँ कोने में पैर रखकर दायें कोने की ओर मुड़ने लायक ढंग से पैर खींच कर रख कर, बाएँ पैर के पीछे की ओर बदलकर

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रख कर और फिर दूसरा पैर कोने में रख कर, पहले जैसे रख कर, चारों भागों में मुड़ कर आना। फिर पैरों को आगे और पीछे चारों दिशाओं में रख कर, फिर पैर पीछे रखकर सीधे चारों भागों में कूदना भी। इसके लिए उपयुक्त ताल है त्रिपुट। पात्र भेद के अनुसार चारि विभिन्न है।

कलकलवाद्यम्— द्रुतमात्रिक झंपा ताल में सामने शूल की आकृति में तीनों कोणों में पैरों को पास-पास रख कर दौड़कर बढ़ने को कलकलवाद्यम् कहते हैं।

जाति— एक पैर उठा कर रख कर दूसरा उसके पीछे रखकर दोनों पैर उठाकर फैला कर कूदना। इस प्रकार दो बार कूदने के बाद इसका दुगुना कर कूदना। इस प्रकार दो बार दिखाने को जाति संज्ञा दी गयी है। ताल त्रिपुट है ''तिंत्तिता त तर्ह्या तर्ह्यत्थें; तित्तित त्त तर्ह्या तर्ह्य थें तित्तित त्त तर्ह्य तरर्ह्यत्त त तर्ह्य ता त्त तर्ह्य तर्ह्यत्थें— इस प्रकार दो बार।

तप्पियिरंगुक— दुतमात्रिक झंपाताल ''तित्तित्त त्तत्तित्त''इस पढ़न्त (वाय्त्ताल) में दोनों पैरों से बदल-बदल कर धीरे से (तप्पितप्पि) जमीन छू-छू कर मण्डलाकार पैर रखना। इस प्रकार चार बारं दिखाने का नाम है तप्पियिरङ्गुक।

वट्टत्तिल् चुषट्टुक— (मण्डलाकार घुमाना) दायाँ पैर ऊपर उठाकर बायें पैर से बाई और दायीं ओर कूदना। इस प्रकार एक पैर से एक ताल में मण्डलाकार कूद-कूद कर चलने की संज्ञा है वट्टत्तिल् चुषट्टुक। ''तर्ह्य, तर्ह्य, तर्ह्य'' इस प्रकार इसका वाय्ताल (पढ़न्त) है।

मेय्यु— एक पैर उठाकर अन्दर की ओर विक्षेप कर दोनों पैर मिलाकर आगे की ओर कूदता है और एक पैर पीछे की ओर खींचता भी है। इस प्रकार दोनों भागों में चार बार दिखाकर पैरों को उठाकर रख कर मुड़ते हुए कूदकर दोनों पैर दो-दो बार उठाकर रखने की क्रिया का नाम है— मेय्यु। इस प्रकार चार बार दिखाना है इसका ताल झंपा है। वाय् ताल नीचे दिया गया है। ''ति, तरहिं तण्णां किंतिं तरह्य त्थें'' यह चार बार फिर ''त्थें तक्किति तरहिं, तक्किति तरहिं तण्टं त्थें, तण्टं तरहिं तरहिं तरहिं तरहिं तण्णां कि ति तरह्य त्थें''— इस प्रकार चार बार।

पैरों से ज़मीन पर जोर से विक्षेप कर पीछे पीछे रखते हुए कूदना आदि दिखाने वाली एक आंगिक क्रिया है— तट्ट। पात्र-भेद के अनुसार, दिखाने की रीति और ताल में भी अन्तर होता है।

निर्गीत— द्रुतमात्रिक त्रिपुटा में ''तितित्त, तितित्त, तित्तित्त त तर्ह्य-तर्ह्य तक्कि तिक्किं तरहिं''— इस प्रकार चारों कोणों में पैर रख कर कुछ आंग्य भी करते हुए चलने को निर्गीत कहते हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बन्धना निर्गीत— ठीक आगे की ओर बायाँ पैर रखकर दाई और भी वैसा ही दायाँ पैर आगे रख कर बाई ओर चतुरस्राकृति में दो दो बार पैर सरका कर रखते हुए चलने का नाम है— 'बन्धनानिर्गीत'। इसका 'बोल' "ता क्किति क्किति क्किति किति त तर्ह्य तरहिं"। इस प्रकार चार बार।

परिक्रमम्— दायाँ पैर फैला कर रख कर, बायाँ उसके पीछे तथा बायाँ फैला कर रख कर दायाँ उसके पीछे रखते हुए उठाकर विक्षेप के साथ जमीन पर रख कर दूसरी ओर कूदना इस प्रकार चारों दिशाओं में दिखाते हुए चलने का नाम है— परिक्रमम्। यह द्रुत-मात्रिक त्रिपुट में है। "ति, त्ति, त्त तर्ह्यत्ता तर्ह्यत्ता, तर्ह्यत्ता, ती ति तर्ह्यत्ता, तर्ह्यत्ता, तर्ह्य तर्ह्यत्ता, तर्ह्य तर्ह्य थ्रें, तित्ताक्किर्ति तर्ह्यथ्रें" इस बोल में चारों दिशाओं में दिखाना है। इसके दिखाने में प्रादेशिक भेद भी हैं।

नृत्तम्— एकताल में पैरों को आगे उठा, उठा कर "धक्किट्ट धिक्किट्ट" इस 'बोल' के साथ (जाति) धीरे धीरे द्रुत-अंतिद्रुत हो कर मण्डलाकार चारों दिशाओं में कूदते-कूदते रहना। यही नृत्त है।

जातिकोण्टु मुखवर्णना— जाति संज्ञक क्रिया तथा कल-कल-वाद्य क्रिया दोनों मिलाकर चारों दिशाओं में दिखानेवाली क्रिया 'जातिकोण्टु मुखवर्णना' कहलाती है। इस क्रिया के कुछ कथापात्रों के लिए नंगियारम्मा का श्लोक-पाठ भी होगा उसके लिए 'प्रावेशिक श्लोक' की संज्ञा दी गयी है।

रण्टांनट— "तित्तिता तित्तित्ता तित्तित्थें त तर्ह्य तर्ह्य तक्कि ति किंक तरहिं"। इस जति ('बोल') के अनुसार दोनों पैर उठाकर रख कर कोनों में विक्षेप कर मुड़ना। ठीक इसी प्रकार दूसरे कोने की ओर दूसरा पैर विक्षेप कर मुड़ना। इस प्रकार दोनों कोनों में दो दो बार दिखाने को "रण्टांनट" कहते हैं।

कोणत्तुचारि— त्रिकोणाकार पैर सरका कर रख कर बाएँ और दायें चार बार दिखा कर, चारों कोनों की ओर "चेरिञ्" (पीछे की ओर झुक कर) एक पैर ज्यादा उठाकर चेरिञ्ञ् तीन-तीन बार कूदना। यह द्रुतमात्रिक त्रिपुटा में है कोणत्तु चारि। जति नीचे है। "ता क्किति क्किति क्किति क्किति त तर्ह्य तरहिं"— यह चार बार "तरहिं तरहिं तरहिं, तत्त तरहिं तरहिं तरहिं, तत्त तरहिं तरहिं।"

श्लोकं मुरिच्चुपाटिक्कुक— पहले पूरा श्लोक नंगियारम्मा से खण्डशः पढ़ा कर कल-कल-वाद्यं और 'जाति' दिखाना है। चारों ओर यह दिखाने के बाद श्लोक का एक-एक पाद पढ़ा जाता है। हर पाद पढ़ने पर 'कळियुं वेच्चुतिरियुक' दिखाना है। इस प्रकार चारों दिशाओं में तीन-तीन बार करना है। इसका नाम है श्लोकं मुरिच्चु पाटिक्कुक। पात्र-भेद के अनुसार अन्तर भी है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आशियाशि पुल्लरिक्कुक— दोनों कोनों की ओर हाथ से आंग्य दिखाकर एक-एक पैर आगे रख कर द्रुतमात्रिक त्रिपुट में दिखाने वाली एक तरह की क्रिया का नाम है यह। तित्ति त्थें तित्तित्थें तित्तिथें त तह्यं तह्यंया तक्कित्तिक्किं तरहिं— इस 'बोल' के साथ चार बार दिखाना।

माटमेट्टुक्कुक— हर पैर की एडी से बदल-बदल कर पहले तीन-तीन बार फिर एक बार अन्त में दोनों पैर मिलाकर जमीन पर जोर से रखता है। इसके साथ-साथ हाथों से कुछ आंग्य भी करता है। इसका ताल द्रुतमात्रिक त्रिपुटा है। इसके बोल नीचे हैं—

"कितित्थें कितित्थें कितित्थें कित्ति, किति त्थें, कितित्थें, कितित्थें तह्यं कितित्थें, तह्यं क्कितित्थें, तह्यं कितिक्कि तह्यं त्थें।"

आस्यक्रिया— द्रुतमात्रिक त्रिपुटा में दोनों कोणों में कूद कर दोनों पैर दोनों ओर हटाकर बीच में एक साथ मिलाकर कूदना।

"कि त्ति त्ति कि ति त कि ति त्थें कि ति त्थें तह्यं क्कि त्ति क्कि तह्यं त्थें।" इस बोल के अनुसार दोनों कोनों की ओर दिखाने वाली एक प्रकार की चाल है— आस्यक्रिया।

चेरियक्क्— द्रुतमात्रिक त्रिपुटा में "कितिन्त किति किति किति, त तह्यं तरहिं, त तह्यं तरहिं, ह्यंक्किं ह्यंक्किं ह्यंक्की त्थें, तह्यं किति त्थें, तत्ता किति त्थें, तत्ता किति त्थें"— इस प्रकार तीन बार दिखा कर फिर 'ह्यंक्किं ह्यंक्किं ह्यंक्की त्थें' दिखा कर फिर "केट्टित्तिरियुकं" आदि, इस प्रकार दो बार दिखाने का नाम है— चेरियक्क्। इस बोल के अनुसार हाथों और पैरों से भी कुछ कर दिखाना है। इसके साथ "अक्किता" भी रहेगा।

वलियक्क्— द्रुतमात्रिक त्रिपुटा में "कितिन्त किति किति किति त तह्यं तरहिं, त तह्यं तरहिं, ह्यंक्किं ह्यंक्किं ह्यंक्की त्थें, ती ति त———र———ह तह्यं तह्यं त———र———ह तह्यं तह्यं त———र———ह तह्यं तह्यं त्थें" यह तीन बार फिर 'किति किति कित्थें किति किति तह्यं' यह दो बार "ह्यंक्कि त्थें त्थें तह्यं त्थें धक्कु क्कुं धक्कु क्कुं"— यह चार बार फिर एक बार में सब दिखाना है। इसका नाम है— 'वलियक्क्'। इसमें ताल के अनुसार हाथों से दिखाने, पैर जमीन पर जोर से रखने और कूदने का विधान भी है। साथ 'अक्किता' भी होगा।

ध्रुवा— 'मिष़ावणा' से एक बार एक हाथ सीधा और दूसरा उलटा सुचारु रूप से बदल-बदल कर धारण कर पैर आगे और पीछे रखकर एक बार मण्डल बना कर घूम कर मिष़ावणा के पास पहुँचने पर पूरा करना। इसकी जति (बोल)— "तह्यंक्की

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तर्ह्लक्की तरर्ह्याक्किक्तिक्कि'' यह चार बार, फिर ''तर्ह्याक्किक्ति तर्ह्याक्किक्ति त्थें'' इसक साथ खत्म होता है। इसका नाम 'ध्रुवा' है।

भ्रमरी— ''त्थें क्किक्ति क्किक्ति क्किक्ति, त्थें किति.कित्ति कित्ति क्कि, त्थें कि त्ति त्थें कि त्ति त्थें ताक्की त्थें तर्ह्ल तहिं''— इस प्रकार की जति के अनुसार एक बार घूम कर आने का नाम है भ्रमरी।

कुङ्कुणम्— ''हिं, र्ह्लक्किन्धां कु क्कु क्कुं, र्ह्लक्किकतिघा क्कु क्कु क्कुं''— इस जति के अनुसार चारों दिशाओं में चार-चार बार कूदना और 'अक्किता', मिषाव का बजना तीनों से मिलाकर दिखाते हुए 'भ्रमरी' के साथ पूरा होता है। इस प्रकार के क्रम से चारों दिशाओं में करने वाली क्रिया है— कुङ्कुणम्।

कोणोट्टम क्रिया— एक पैर ऊपर उठाकर केवल दूसरे पैर से 'कुतिच्च्' उछल कर तीन तीन के हिसाब से दाएँ और बाएँ कूदना। इस प्रकार चारों दिशाओं में दिखाने का नाम है— कोणोट्टम क्रिया।

क्रिया— बोल, बाजा, पैर रखना आदि से क्रमीकृत कुछ चारी- भेद के साथ दिखाये जाने वाले आंग्य की सांकेतिक संज्ञा है— क्रिया।

नित्यक्रिया— सूत्रधार के 'पुरप्पाट्' के दिन की जाने वाली सभी क्रियाओं की संज्ञा है नित्यक्रिया।

कूत्तुमुटिक्कुक— ''तर्ह्या किति क्किति किति त्थें, तर्ह्ल किति क्किति किति त्थें, ऋतुं त्थें, ऋतुं त्थें तरहिं तरहिं ऋतुं तिन्थें तति त्थें'', यही इसकी जति है। हाथ जोड़ कर विदा लेआने की मुद्रा में घूमकर रंग में अभिवादन कर रंग का स्पर्श कर सिर चढ़ा कर नेपथ्य में जाना है। इसे कूत्तु मुटिक्कुक कहते हैं।

रंग में प्रवेश करना मिश़ावणा के बाँईं ओर से और निष्क्रमण दाईं ओर से ही करें, यह नियम है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

परिभाषा प्रकरण

कूत्तुपुरप्पाद्

रंगसज्जीकरण पूरा कर दीप जलाकर चाक्यार के "तलयिल केट्टुक" के बाद नांबियार मिषावोच्चप्पेट्टुतुल करते हैं। फिर 'गणपति नैवेद्य' कराकर 'गोष्ठि कोट्टि' 'अरंगु तेलियिक्कुल' के बाद यवनिका पकड़ी जाती है। तदनन्तर स्थापना-सूत्रधार विधि के अनुसार (अपनी रिवाज के अनुसार) 'अणिञ्ञुकूटि' (वेष-विधान) कर मिषाव 'वायिक्कुक' पूरा करने पर रंग में आकर मरयिल क्रिया पूरा कर 'मुटिच्चू' मुख पर पानी डालकर (आचमन कर) 'कळियुं वेच्चु-तिरिञ्ज्' यवनिका हटाने पर देवकार्य दिखा कर (तेवारं काहि) कथा सूचन कर 'चेरियक्कू वलियक्कू' आदि नित्यक्रियाएँ पूरा कर, श्री परमेश्वर शिव और श्री पार्वती के केशादि-पाद-पर्यन्त का अभिनय कर दिक्पालों की भी वन्दना कर, "नृत्त" में कूत्तु 'मुट्टिक्कल' पर मन्दिर के देवता के दर्शन कर, रंग में आकर, अभिवादन कर के नेपथ्य में जाता है। यही सूत्रधार का 'पुरप्पाट्' है।

नाटकों में प्रत्येक अंक के कथानायक के 'पुरप्पाट्' में थोड़ा-थोड़ा जो अन्तर है वह दृष्टान्त प्रकरण में स्पष्ट किया जाएगा।

आट्टम्

'आट्टम्' शब्द से साधारणतः अभिनय का अवबोध होता है, तो भी कूटियाट्टम् में सांकेतिक दूसरा एक अर्थ ही लगाया जाता है। इसलिये उस विशेष अर्थ का सोदाहरण विवरण नीचे दिया जा रहा है।

"कष्टम्! दुष्ट महासेन ने मेरे स्वामी वत्सराज को पकड़कर बाँधकर कारागृह में डाल दिया है"— यहाँ से शुरु कर "तलवार निकाल कर सिर काट लूँगा"— तक वसन्तक के अभिनय को ही मन्त्राङ्क में 'आट्टम्' संज्ञा से व्यवहृत किया जाता है।

परिभाषा

'परिभाषा' एक तरह का कृत्रिम प्राकृत मलयालम है। यहाँ मन्त्राङ्क से एक उदाहरण दिया जा रहा है।

"तिरु नमज्झिवायमोण्णुमेकसी। एसाणु मस् एल्लाखु मुछिरे साणुमस्। इट्ठपुट्ठरायि तंपठुरायी पौढ़रयि पौढियुं भाविष्यं कोण्ट् आन्धोलवुमेरिकुणुंङावणुं कुणुङ्ङि वेल्ळ वेश्शिशरायुं पश्टक्कायुं नूरुं कफूरवुं कूट्टि कुरुम्मामेण्णुं कुरुम्मूसं चेत् ओलेक्काशरीट्टु कणाक्किने पत्तु विरलुक्कुं निरये मोरसङ्गलिट्टु कोल्लुवूसं चेत्त मुम्पिलुं पिम्पिलुं पत्तुं मुम्पतुं मुप्पतिनायिरवुं शिनवुमायि चिल मुक्कर कैयरे कोण्टु शुमाप्पिइशु

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

क्रोल्लूसं चेयित् भाः भीःल्लू एन्न् करयिश्शु कोभूःसं चेयित् इङ्ङनेयिल्ले शिल शिनं पोरुन्नूः। अवक्कुं मुट्टियेत्तुम्पोल् तिरुनमज्झिवाय मोण्णुमेगसि। इङ्ङ्ने पोरुन्नोरु कुषुकुट्टुण्णिश्शरुमनाकुम्पोषो ओट्टुं शंशायिक्कयुं वेण्टालो एन्न्, ओरु कुषुकुट्टुण्णिश्शरम्मन् ओरगसि ओररवलाति ओरुतेयान्तरि ओरु कोविणक्कुण्टन् ओरु कुण्डनाटि ओरु कूर्पि ओरो विल्खा ओन्नुमें इत्थ इत्थ पोन्नो त्थरिल्ल माणि क्ख्यमे आर कुलकें नोक्कुमो आरु पेरिसमायिप्परयुमो एन्निते नण्णि नण्णि प्पोरुन्नोरु कुषुकुट्टुण्णि श्शरम्मन् आरामाकिल् उरु मनुछरुटेयोत्थरेन्निये वन्नूतेय्यप्पेष्ठ्या, एन्तटा कुषुकुट्टुर्ण्ण, निय्युण्टो कुरिइट्ठा एन्नु केफोत्थरिल्ला। एन्नटा कुषुकुट्टुण्णी, तेमारिस्ता एन्नु केफोत्थरितल। एन्नटा कुषुकुट्टुनी, निय्युष्टो कुरियिठा एन्नुकेकोस्थरितल्ल। एन्नटा कुषुकुटुष्णी निय्युण्टो तेमारिझा एन्नु कोफोत्थरिल्ल। एन्नटा कुषुकुट्टुर्ष्ण निय्युडो एतानं उशयिच्चतायो एन्नु केफोत्थरिल्ल। एन्नटा कुषुकुट्टुर्ष्ण निय्युण्टो उरङ्ङेन्नयो वेश्शिल तिन्ना एन्नु कोफोत्थारिल्ल। एन्नटा कुषुकुट्टुष्णी निय्युण्टो तोफं विनोसिझा केफोत्थरिल्ल, उच्चोत्थरिल्ल, उटयोत्थरिल्ल, एरिसवेयुं उच्चक्कुमान्तिक्कुमस्सरानिक्कु मिटयाम नेरत्तुं उण्णुम्पोषुं उरङ्ङपोषुं किटक्कुम्पोषु, नटक्कुम्पोषुमेन्नु वेण्ट, राप्पकल, कुषुकुट्टुण्णिशरमन्टे कुषुकुट्ट एन्तु शेय्युन्नुवेङ्लिो एन्तु शेय्यप्पेटुन्नुवेङ्किलो एन्निते नण्णि नण्णि यिरिक्कुन्नतु कणक्क वरुमल्लो। अन्नन्नुनल्लोरु कुषुकूट्टायिरुन्नु— "असो चिलतुट्ठपाणिकलुटे मदमाच्चर्य हेतुवायिट्टु परवाकप्पेट्टुपोयतायल्लो, असो एन्नालिनि असुकूट्टि परयावेण्ठा एण्णुपोकस"

इस परिभाषा की हिन्दी छाया

'तिरुनमः शिवाय' के अलावा दूसरी शरण नहीं, वह जो कुछ है, सब के लिये बराबर उसी का अस्तित्व है। हृष्ट-पुष्ट होकर, स्वयं सम्पुष्ट व प्रौढ़ हो कर, अपनी धाक जमाये हुए, पालकी में चढ़ कर, ठाठ-बाट से, सफ़ेद पान, हरी सुपारी व चूना मिला कर, कपूर के साथ 'आँ' करके पान चबा कर, मूसल के छल्ले की तरह दसों उँगलियों में अँगूठियाँ डाल कर आगे और पीछे दस-बीस-तीस हजार परिजनों के साथ, जनपदों के कुछ जवानों से पालकी उठवा कर, उन जवानों के मुँह से निकलने वाली 'भाः भौः भूः' जैसी आवाज़ के साथ यात्रा-सवारी करने वाले कुछ रईस लोग होते हैं न! उनलोगों के लिये भी ज़रूरत पड़ने पर 'तिरु नमः शिवाय' के सिवा और कोई शरण नहीं। इस तरह का आदमी अगर कोई 'सेवक शर्मा' हो तो फिर सन्देह की गुंजाइश ही क्या? कोई कुषुकुठ्ठण्णिश्शेरुमन (सेवक शर्मा), एक बेचारा, एक कंगाल, एक घुमक्कड़, एक कौपीन धारी, एक बहुत कम दिखाई देने वाला अपूर्व मानव कोई भी इस कदर सुयोग्य नहीं। बावरे! 'क्या कोई प्रेमशीतल दृष्टि डालेगा? 'क्या कोई मीठी-मीठी बातें करेगा?' यही सोचते-सोचते जीने वाले हो? वह देवगति से निकला मानवों के प्रतिनिधि

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

योद्धा के रूप में। 'क्यों रे यार! तुम नहावो!' यह कहने वाला कोई नहीं। 'अरे यार! तुम ज़रा देवताओं की आराधना कर लो!' यह कहने वाला भी कोई नहीं। 'क्योंरे यार! क्या तुमने कहीं जलपान किया?.... तुम पान खाओगे?' यह पूछने वाला कोई नहीं। 'क्यों रे यार! क्या तुम ज़रा सोना चाहते हो?' यों पूछने वाला कोई नहीं। 'क्यों रे यार! क्या तुम खेल-कूद या विनोद के लिये आना चाहते हो?' यह पूछने वाला भी कोई नहीं। यहाँ सवालों का ज़वाब देने वाला कोई महीं। यहाँ कोई मालिक नहीं। विरोध में, दोपहर को, शाम को, आधी रात को, अवकाश के समय, खाते-सोते-लेटते-चलते कभी समय ही नहीं, दिन रात 'क्या कार्य करना है? क्या किया जाता है?' यों सोचते रहना अच्छा ही होगा। वह करते तो अच्छा कार्य ही होता। वह तो कुछ दुष्ट-जीवियों की स्पर्धा एवं अहङ्कार से पतित हो कर रह गया। अबतो उस के बारे में कुछ बोलना तक नहीं चाहिए।

मन्त्राङ्क की पीठिका

अवतारिका रूप— "मातुकमुण्टायि कुषुकुट्टुष्णिइशरमन्" से आरंभ कर पढ़ कर सुनाने के श्लोक तक के कथाभाग का नाम है— पीठिका।

शूर्पणखा की परिभाषा

एने तुकमे ताने तुकमेन्नु चोल्लियालुं पोराये, वुकं तुक मेन्नु पलवट्टवुं चोल्लिये मतियावे अतु एन्तन्नल्ली, एटलाटवुं नटाप्पेन् ज्ञन्. ओरो तेयङ्गलिलुं ओरो शच्यंङ्गलिलुं ओरो नकरङलिलुं मट्टुं पल तेयङ्ङलिलुं एटलाटवुं नटप्पेन्। पिन्नेयुं इविटतन्ने पोन्नुवरुमत्रे। अतु एन्तेन्नल्ली, इविटेयुण्ट् चिल चेनकलिरिप्पू। अबराकट्टे कम्डालोट्टुं तुकमिल्लात्त परिष कलत्रे। तटियुं तलयुं कक्कवुं पक्कवुं नीट्टि इङ्ङनेयेल्लामिरिक्कुन्ने इवरे ञात् करुकरा, मुरुमुरा, चटुचटा, कुटुकुटा कुटुकुटा कटिच्चुतिन्न् वैराक्यं वरुतुन्नुण्ट्। एटो अरिमूतमाणियाने अरि इकयमाणियाने, इवरु कण्टाल् नल्ल तुकमुक्क परिषक-कळत्रे। तोळुं, तुट्युं, वाक्कुं, नोक्कुं, निख्वुं, अषकुं एतळ्ला-मुळ्ळ परिषकळ्त्रे। यिअतिल् मुत्त माणियानेप्पषुं चीतचिच्ये येटुत्त् मटियिल् वेप्पूतं चेटतु चीते, चीते, रान्नु चरतमायि तिलिच्चुकोळ्ळुं। एन्नोटु परयुंतानुं— "पत्तिरे चुन्दरी, अङ्टुचेल्ल्ंडुचेटलं" (उद्घट्टनम्) अतुकेट्ट आन् एळयमाणियान्टे अणयत्तु चेल्लुं, अवनुं कण्टाल् नल्ल चुन्तरन् तन्नेयाण्। वाक्कांक्क नीट्टिपिडीच्चेत्तिकोळ्ळुं। "इङोट्टो वरुन्नत्, चेट्टन्टे अणयत्तु पो" एन्नु परयुं तानुं अतुकेट्टु ञान् मूत्तमाणियान्टे अणयत्तुचेल्लुं। एन्टे तीनपिण्टिळाणिवर; इङ्ङने ञान् ई कळळक्काट्टिल् अङ्ङोटिङ्ङोट् कळिप्पारायि चमञ्ञेन्। अङ्ङिनेयेतलामिरिक्कुनेन्। इवरे ञात् वेतुवेता, नणुनिणा, कुळकुळा, चळुपळा कटिच्चुतिन्नावू। अरि चीतचची अवल् एन्टे तोटुकुरि कण्टो, कण्ठायुत्तु कम्टो, नीयेन्टे कुत्तुमुल कण्टु कोतिच्चुकळयरुते। इङ्ङिनेयेल्ला मिरिक्कुन्न

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

यीइवळे तलवलियतम्पि रावणाच्चन्त्र् का्चयायी कोण्टु क्कोटुप्पू। का्च येण्णुम्पोल् ओरुतक्कारं, तक्कारमेण्णुम्पोल् ओरु चे प्रावृतमेण्णुम्पोषोओरु पुलिक्काणम्, पुलिक्काणमेण्णुम्पोलो ओरु लकयं। इङ्ङने चय्यू ञात्।

शूर्पणखा की पीठिका

"ञानाराण्', एन्ने अरियुमो! लङ्कयित् राक्कइात राजाव् शवणन्टे कोटिय ओप्पन्नोळ्, एन्त्रयुं वलिय चुन्दरि, वेच कण्टालरिञ्कूटे? तोदुकुरियुं कनिमिष़्यिुंन नटुतुटियुं कष़ालिणयुं कण्टालष़केरेयुक्क चुन्दरि वेच"— इस प्रकार आरंभ कर के कही जानेवाली— पीठिका।

क्रमदीपिका

वेषविधान सम्बन्धी नियम, पात्रान्तर बन जाने की रीतियाँ एवं विधान, कथावस्तु से अनुबन्धित करने के लिए नट को सहायता पहुँचाने वाली उपायान्तरभूत क्रियाओं तथा परम्परागत विधियों आदि का प्रतिपादन करने वाला ग्रंथ है— 'क्रमदीपिका'।

आट्टप्रकारम्

मूलग्रन्थ के विस्तृत अभिनय के लिए सहायक 'टीका' रूपी विस्तार, वाक्यों से युक्त, रस-भावों की अभिनय रीतियों से युक्त, क्रिया-राग-ताल-प्रधान वर्णन, परम्परा से किये जाने वाले कर्म आदि नट के कृत्यों तथा अन्य विधाओं का विस्तार से प्रतिपादन करने वाला ग्रंथ है— 'आट्टप्रकारम्'।

पात्रभेद सूचित करनेवाले कुछ संकेत

किसी भी भूमिकाधारी नट को दूसरे कथापात्र बन कर अभिनय करने की स्थिति आ जाने पर उसे स्पष्ट करने के लिये कुछ सांकेतिक भावों का प्रयोग किया जाता है, वे अधोलिखित हैं—

धीरोदात्त नायक— नायक की स्थायी में पीठ पर बैठ कर बाएँ टखने पर दाएँ पैर का तल रख कर वीर रस में आगे देखते हुए बैठना। यही धीरोदात्त नायक की स्थायी है।

धीरोद्धत नायक— उत्तरीय बाँह पर डाल कर पीठ में बैठ कर दाएँ टखने पर बाएँ पैर का तल उठा कर रख कर, उत्तरीय का छोर दोनों हाथों से पकड़ कर, दाएँ हाथ का अग्र बाएँ हाथ की कोहनी पर रखकर, बाएँ हाथ का संपुट बाएँ पैर की टाँग पर रखकर क्रोधभाव प्रकट करते हुए धीर दृष्टि से देखते रहना। यही धीरोद्धत नायक की स्थायी है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

धीरललित— साधारण नायक की तरह पीठ पर बैठ कर निश्चिन्त होकर विभिन्न विनोद की सामग्रियों में उत्सुकता प्रकट करते हुए सन्तोष प्रकट कर, कामी होकर, विस्मय दृष्टि से बैठना। यही धीरललित की स्थायी है।

धीरशान्त— पीठ में जमकर बैठ कर मुक्ति की आकांक्षा से आँखो की पुतलियों को बलहीन बना कर सामने थोड़ा ऊपर की ओर देख कर उत्तरीय बाईं बॉह पर डालकर ध्यान मुद्रा पकड़ कर विचार-स्थायी में बैठना। यह धीरशान्त नायक की स्थायी है।

नायिका भाव— पोय्नख का दायाँ छोर (अग्र) उठा कर कमर में खोंस कर दोनों हाथों से नाभि के पास उत्तरीय मिलाकर पकड़ कर, दोनों पैर मिलाकर खड़े रहना या ऊपर-ऊपर रखे पैर आगे की ओर बढ़ा कर बैठना। लज्जा भाव में सिर थोड़ा बायी ओर झुकाना भी चाहिए।

सखी भाव— पोयनख के दोनों अग्र उठाकर, कमर में खोंस कर, हाथों के दोनों तल फैला कर, एक पर एक रखकर, सामने से मण्डलाकार घूमकर आकर, कमर की बाई ओर रख कर, सिर थोड़ा नीचा करके खड़े रहना और दायीं ओर हट कर, कमर की दाई ओर पैर मिलाकर रखकर खड़े होकर नायिका की ओर देखते रहना।

विदूषक भाव— दाएँ 'मेलपुटवा' (दुपट्टे) का छोर बायीं बाँह पर डालकर थोड़ा बाई ओर हटकर, बाई ओर मुड़कर थोड़ा निम्नपद में खड़े होकर गालों से विदूषक का स्तोभ (भाव) दिखाकर वयस्य के हाथ का अग्रभाग बाएँ हाथ में रखकर दाएँ हाथ को थपथपाने से हास्यात्मक ढंग से दिखाना।

असुर भाव— उत्तरीय के दोनों छोर दोनों हाथों से पकड़ कर उन हाथों को छाती से बाँधते हुए पकड़ कर बायाँ पैर आगे की ओर उठाकर वीरभाव में खड़े रहना।

ब्राह्मण भाव— उत्तरीय के दोनों छोर, बायीं बाँह पर डालना; बिना उत्तरीय के कथापात्र हो तो बाएँ पोय्नख का छोर बायीं बाँह पर डालना है। ब्रह्मा के लिए भी ऐसा ही करना है; पर ध्यान-मुद्रा भी दिखानी चाहिए।

राक्षस भाव— उत्तरीय के दोनों छोर कंधे से लटका रुक्ष भाव में खड़े रहना या बैठना।

राक्षसी भाव— पोय्नख के दोनों छोर ऊपर कमर में फैला कर दोनों हाथ उलटे पिरोकर पकड़ कर आगे और पीछे की ओर दो तीन बार उलटा कर देना।

रण्टां पात्र भावम् (दूसरे स्थान पर के कथापात्र का भाव)— उत्तरीय कमर में बाँध कर पीठ के बाएँ और दाएँ थोड़ा सा घूमकर विनीत भाव में 'पंच पुच्छ' समेट कर खड़े रहना। उत्तरीय-विहीन कथापात्र हो, तो पोय्नख के दोनों छोर जोड़ कर बाँधना चाहिए।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सूत भाव— रण्टांपात्र में खड़े होकर दोनों हाथ मुट्ठी बाँध कर सूतमुद्रा दिखाते हुए स्वस्तिक रीति से अंदर की ओर मोड़ कर विनीत भाव में खड़े रहना।

भद्रकाली भाव— उत्तरीय को कमर में बाँध कर पोय्नख के दोनों छोर उठा कर कमर में खोंस कर पैरों को हटा कर मुँह खोलने की सी चेष्टा हाथों से दिखा कर, आँखों से घूर-घूर कर देखते हुए खड़े रहना। उत्तरीय रहित पात्र हो तो पोय्नख के दोनों छोर मिलाकर बाँधकर कमर में बाँधना ज़रूरी है।

गंगा का भाव— साधारण नायिका भाव में पीठ पर चढ़ कर खड़े होकर "अंबरायणम् कट्टि" पैरों को जोड़ कर शरीर को थोड़ा घुमाते हुए हिलते रहना।

देवों का भाव— उत्तरीय कमर में बाँध कर पीठ पर खड़े होकर पलकें गिराये बिना देखते रहना।

विदूषक स्तोभम्— यज्ञोपवीत पकड़ कर मलना, बाल सँवारना, दुपट्टा (मेलपुटवा) निचोड़ना, दुपट्टे से पंखा झलना, गालों को फुलाना, हास्यात्मक भाव से (हास्य रस से) सभा को देखना आदि अनुष्ठानों को (तन्टेटाट्टंतिनोइ) विदूषक स्तोभ कहते हैं।

राक्षसी स्तोभम्— दोनों हथेलियाँ उलटा कर ऊँगलियाँ पिरो कर 'राक्षसी भाव' में खड़े होकर सामने तीन दिशाओं की ओर हाथ उलटा कर तीन-तीन पग आगे और पीछे रख कर "कितित्थें धकुक्कुं" इस बोल से ताल मिलाकर दिखाना।

वानरस्तोभम्— दाढ़ी, शरीर आदि में खुजलाना, पीठ पर बैठकर डालियाँ हिलाने की चेष्टा, हास्यात्मक ढंग से पैर रखते रखते कूदने का भाव दिखाना और गरजना आदि दूसरी उचित चेष्टाएँ दिखाना आदि का नाम है— वानरस्तोभम्।

सिंहस्तोभम्— सिंह मुद्रा में दोनों हाथ सामने जमीन पर रखकर छाती आगे की ओर बढ़ाकर शरीर को संकुचित कर (मेय्योतुकि) सिर ऊँचा कर के रौद्र भाव से देखना।

गजस्तोभम्— एक पैर उठाकर आगे की ओर तथा पीछे की ओर झुलाकर (विक्षेप कर) दोनों हाथ भ्रमर मुद्रा में पकड़ कर उनसे कान हिलाने का अभिनय, एक हाथ से फिर दोनों हाथों से एक साथ दिखाकर उठा हुआ पैर आगे की ओर विक्षेप पहले रख कर फिर दूसरा पैर उठाकर विक्षेप आगे रख कर फिर पैर फैला कर रख कर दोनों कान (अकत्ति) दूर हटा कर स्थिर रख मदमन्थर दृष्टि में खड़े रहना।

पक्षी स्तोभम्— भ्रमर मुद्रा में पंख फैला कर पैर बदल-बदल कर उठाकर रखते हुए पैर व चोंच मार कर पंख दिखा कर अलग करना सा दिखाकर, पंख हिलाते हुए एक पैर में एक-दो बार कूदकर उड़ना सा दिखा कर खड़े रहना।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कथापात्र आदि की चालें

विभिन्न कथापात्रों की चाल में जो अन्तर है उनके आधार पर उनका प्रस्ताव (विवरण) नीचे है।

उत्तम नायक की चाल— कळप्पुरत्तु नटक्कुक, वट्टत्तिल् नटक्कुक।

नायिका की चाल— नायिका भाव में चेल्लुन्ति नटंक्कुक।

ब्राह्मणों की चाल— ब्राह्मण भाव में घूमते हुए चलना।

धीरोद्धतों की चाल— हर एक पैर उठाकर विक्षेप कर कूदते हुए मण्डलाकार चलना।

सेना की चाल— हाथों को हिलाते हुए पैर उठा-उठा कर रखते हुए द्रुतगति से मण्डलाकार चलना।

गजों की चाल— गजमुद्रा बना कर दाएँ और बाएँ पैर फैलाकर और मिलाकर द्रुतमात्रिक त्रिपुटा ताल में बोल के अनुसार पैर रखते हुए चलना।

राक्षसियों की चाल— दोनों हाथ पसार कर ऊपर नीचे पकड़ कर, एक पैर अधिक उठाकर दोनों कोणों में 'कितित्थें कितित्थें' इस बोल के अनुसार कूद कर चलना।

साँपों की चाल— दाएँ हाथ से सर्पशिर मुद्रा पकड़ कर सर्पदृष्टि में साँप का रेंगते रेंगते सिर उठाना दिखाकर दाएँ-बाएँ तथा आगे-पीछे पैर रखकर चलना और देखना।

घोड़े की चाल— "तेरुपेरुमाट्टम्" की तरह कूद कर चलना।

रथारोहण— सूत का हाथ पकड़ कर "तित्तित्तत तित्तित्तत तर्ह्य त्थें" द्रुतमात्रिक त्रिपुटा में इस बोल के अनुसार आगे की ओर और पीछे की ओर चल कर रथ में चढ़ने का सा भाव दिखाना।

'अश्वारोहण' भी इसी प्रकार किया जाता है।

गजारोहण— (हाथी पर चढ़ना)— 'तर्ह्य त्थें तर्ह्य त्थें तर्ह्य त्थें तित्तक्किर्ति तर्ह्य त्थें' इस बोल के अनुसार पैर दाएँ और बाएँ की ओर फैलाकर पदाघात कर चढ़ने की मुद्रा दिखाना।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विदूषक निर्वहणम्

कूटियाट्टम् में विदूषक का निर्वहण नाटक के अन्य पात्रों से बिल्कुल भिन्न है। 'विवाद तीर्कलील्' से आरम्भ कर 'राजसेवा' में परिसमाप्त होने वाले इस निर्वहण को 'पुरुषार्थंगल' भी कहते हैं। 'राजसेवा' के साथ विदूषक अपने साथी नायक के साथ-साथ ही रहता है। विदूषक के निर्वहण के मुख्य विषय निम्नलिखित हैं—

वादन्तीर्क्कल— मेक्कान्तल, कीष़कान्तल इन दो मन्दिर के (ट्रस्टियों) अधिकारियों के अपने-अपने अधिकार सम्बन्धी वाद-विवाद हल करना ही इसका प्रमेय है। कुछ इने-गिने व्यक्तियों के स्वार्थ-वाद के कारण पूरे समाज के कलेवर में जो-जो दोष लग जाते हैं, सरस भाषा में उनकी समालोचना निशित (तेज़ धार जैसे) रूप में प्रस्तुत करना और इस बीच में कवियों की काव्यरचना सम्बन्धी सब प्रकार की कमियों और त्रुटियों का सोदाहरण हास्यात्मक रीति से विचार-विमर्श करना और उनको दूर करने की ओर इशारा करना इसका विषय है। वादंतीर्क्कल असल में समालोचना एवं साहित्यिक प्रभाषण की सच्ची अनुभूति सामाजिकों में पैदा कर देता है।

विनोदम्— स्त्री-लम्पट पुरुषों और दुराचार में फँसी स्त्रियों को स्पर्श करने वाली एक तरह की सामाजिक समालोचना है— विनोदम्। ऐसे दुराचारों से दूर रहना है, उनका दुष्परिणाम अमुक है, अमुक है, इसलिये समाज को इनसे बचते रहना है तथा जो अत्यधिक विषयी होते हैं, उनको विषय भोगकर उससे विरक्त होना है— इत्यादि तत्त्वों का बोध गद्य-पद्यात्मक कथानक के रूप में प्रस्तुत कर "कान्तासम्मिततया" उपदेश देना ही इसका उद्देश्य है।

वेश्यावञ्चनम् (रूपाजीवा को धोखे में डालना)—

यह आजकल वर्षों से रंगमञ्च पर प्रस्तुत नहीं किया जाता। वैराग्य उत्पन्न करने के उद्देश्य से ही इसका प्रयोग किया जाता था। 'वेश्या-वञ्चन' के वेश्या शब्द से व्यंग्य ऐहिक विशेष काम्य विषयों से मन को वञ्चित कर सच्चे परम तत्त्व की ओर लौटा लाना, अर्थात् मनुष्य को निर्मोही बनाने के उद्देश्य को सिद्ध करने योग्य कथा-कथनात्मक हास्यपूर्ण चित्रीकरण है— वञ्चनम्।

अशनम्—

यह एक धनिक के "वार्षिकश्राद्ध" के बड़े भोज का वर्णनात्मक अभिनय है। चूँकि सभी कार्यों का प्रमाण संतृप्ति है, संतृप्ति का उत्तम उपाय भोजन-सुख है, और भोजन-प्रिय ज्यादातर ब्राह्मण होते है, इसलिए उनमें से एक धनी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ब्राह्मण के भवन में चलने वाले (पन्त्रण्टां मास भोजन) प्रथम वार्षिक श्राद्ध का भोजन ही इसका वर्ण्य विषय है। पूर्णकाम, निश्चिन्त और धर्मनिरत बनना ही मनुष्य का कर्तव्य है,— इस तत्त्व का अवबोध साधारण लोगों में पैदा करना 'अशन पुरुषार्थ' आन्तरिक सत्ता (उद्देश्य) है।

राजसेवा— राजा- महाराजाओं की वदान्यता (दानशीलता) आदि गुण-गणों का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत कर दोषहीन (निर्दोषी) राजाओं को चुनकर उनका आश्रय लेने से मनुष्य राज-तुल्य बनेगा और दुनियाँ में सबसे अधिक श्रीसम्पन्न हो जायेगा, इसका बोध कराना ही 'राजसेवा-पुरुषार्थ' का प्रमेय है।

इस प्रकार इन चार पुरुषार्थों में काम, मोक्ष, धर्म और अर्थ-इन चार पुरुषार्थों का प्रतिनिधित्व कल्पित किया गया।

मुख्य अभिनय के बीच आने वाले कुछ विशेष अभिनय

राजधानी का वर्णन—

इसमें गोपुर, दीवारें (प्राकार), खाइयाँ, स्नानागार (गुसलखाना) अर्चनागृह, दरबार का मण्डप, हथसाल (हस्तिशाला), घुड़साल (अस्तबल), रथ-वीथी, लता-गृह, उद्यान एवं चन्द्रशालाओं आदि का वर्णन होता है।

पर्वतवर्णन—

पर्वत का निरीक्षण करना, फिर उसकी विशालता, ऊपरी हिस्से का फैलाव, पहाड़ियाँ चोटियाँ, पेड़, लताएँ, चोटियों से निकल कर बहने वाले झरने, गुहाएँ, सिंह, हाथी, व्याघ्र, गैरिक (खनिज) आदि का विस्तार से अभिनय होता है।

उद्यानवर्णन—

निकुञ्ज, लता मण्डप, क्रीडा शैल, केलीगृह, सरोवर, कमल के फूल, भौंरे, हंस, शुक-पिक आदि पक्षी, क्रीडामयूर, झूले, लता-कुसुम, मन्द-पवन आदि का विस्तार से अभिनय होता है।

वृक्षवर्णन—

पेड़ों की मोटाई, लम्बाई, डालियाँ, शाखाएँ, टेढ़ी-मेढ़ी शाखाएँ अन्दर की ओर टेढी शाखाएँ, दो मुख्य शाखाएँ, पत्ते, पल्लव, मुकुल, फूल, फल, चिड़ियाँ, भौंरे, भौंरो का प्रिया के साथ मधुपान करते गुंजार करना, लताएँ जो पेड़ों पर लिपटी रहती हैं, हवा में उनका हिलना, इत्यादि का विस्तृत अभिनय और "पक्षी-स्तोभ" का अभिनय भी किया जा सकता है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आश्रम-वर्णन—

प्रशान्त रमणीयता, आश्रम के पेड़, समिधा, कुश आदि, कूटे गये इंगुदीफल से निकले तेल से स्निग्ध शिलातल, जानी दुश्मन जानवरों का परस्पर प्रेम से रहना, क्यारियों से सुशोभित बालवृक्ष, बटु-समूह, झरने, झरनों के स्वच्छ जल के नीचे सुस्पष्ट दिखाई देनेवाले कमण्डल, मेखला आदि, पर्णशालाएँ, हविर्गन्ध युक्त धुआँ, वेदोच्चारण ध्वनि, इत्यादि का विस्तृत अभिनय, इनके अलावा, आश्रम-वर्णन के उपयुक्त श्लोकों का अभिनय भी किया जा सकता है।

वर्षा-वर्णन—

समुद्र में उतर कर पानी पीकर बादलों का आसमान की ओर उड़-उड़ कर हवा के झोंकों से फैल जाना, बादलों की गरज, बिजली का कौंधना, पानी बरसना, मोरों का नाच, चातकों का सन्तोष के साथ वर्षाजल का पान करना, हंसों का मानस की ओर उड़ते जाना, सारसों का बादलों को स्पर्श करते हुए उड़ते जाना, (कूणुकळ) खुम्बी आदि का उगना नदियों का वेलातीत (कूल-किनारे लाँघकर) बहते जाना आदि का अभिनय होता है।

स्वर्ग-वर्णन—

आकाश-गंगा, कल्पतरु, दिव्यस्त्रियाँ, नन्दनवन, उपवन में मन्दार, पारिजात, हरिचन्दन आदि सुरलोक के वृक्ष, जिनकी डालों पर कभी न कुम्हलाने वाले कुसुम, सुवर्णकमल, मरकत-शिलाओं से निर्मित स्वर्गगंगा के घाट, विशेष उपवन, इधर-उधर दिव्यरत्नों आभूषणों से सुसज्जित दिव्य कन्याओं का नृत्त-नृत्य, गानालाप, उनसे मेल खाने वाले गाजे-बाजे, स्वर्ग-प्राप्त वीरों के वरण करने में उत्सुक सुरतरुणियों का स्वयंवरोत्सव, अमृतपान-महोत्सव, ऐरावत, उच्चैःश्रवा नामक इन्द्र का घोड़ा आदि का वर्णन।

विरह-वर्णन—

कुसुम-सायक के बाण चुभना, (कामशरंकोळल्), चन्द्र की किरणें लगना, मन्द हवा का स्पर्श, चाँद के दर्शन, भौंरों का गुंजार सुनना, रात्रि हो जाना, पानी बरसना आदि को बरदाश्त करने की क्षमता का क्षीण होना इत्यादि का अभिनय करना।

कैलासोद्धारण—

कैलास का निरीक्षण कर 'पर्वत वर्णन' का अभिनय पूरा कर 'यह पर्वत बिलकुल असार नहीं, पर यहाँ से इसको हटाकर रास्ते की बाधा दूर करना ही है'— यह मुद्रा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दिखाकर, पास जाकर 'त्रिपुट' में खास बोल के अनुसार पर्वत पर दो-तीन बार मुष्टि प्रहार कर 'नूपुर पादत्तिल इरुन्न' नूपुर-पाद में ज़मीन पर बैठ कर हाथों को दरारों से अन्दर की ओर डालकर हिलाकर, 'यह हिलता नहीं' इस प्रकार मुद्राभिनय कर, उठ कर चोटियाँ तोड़कर दूर फेंकने का अभिनय करना। इसके लिए ताल भी अलग है। इसके बाद फिर पहले जैसे घूँसा मार कर बैठ कर, हाथों को अन्दर की ओर डालकर पहाड़ उठाकर प्रेक्षकों को जानने दिये बिना (प्रेक्षकों के अनजाने में ही) ऊँचा उठ खड़े होकर छाती पर रख कर हाथों को ढीला कर पर्वत को हाथों में लेकर ऊपर की ओर फेंकना, गिरते समय दौड़ के जाकर पकड़ना, फिर फेंकना, गिरने पर दौड़ के पकड़ना, चाहे तो पर्वत को ऊपर फेंक कर नेपथ्य में जा सकता है, आते हुए दौड़ के पर्वत पकड़ कर फिर फेंकना, ऊपर की ओर देख कर 'पर्वत मेघों के बीच छिप गया दीखता नहीं' इस प्रकार मुद्राभिनय के साथ दिखा कर नीचे बैठकर अरे जुआ खेलने की सामग्रियाँ, "मद्य व मांस आदि जल्दी ला" कह कर, 'ले आये जाने' का नाट्य कर, मद्यपान कर जुआ खेलने लगना और खेल के बीच में 'पर्वत के नीचे की ओर आने' का निरीक्षण करना। एक बार "पर्वत आ रहा है"— इस प्रकार का अभिनय कर पैर से जुआ की सामग्रियाँ हटा कर जल्दी जा कर (दौड़ के जाकर) पहाड़ फिर फेंकना। इस पूरे अभिनय का नाम है— कैलासोद्धारण।

पार्वतीविरह—

कैलासोद्धारण के समय गंगाधर शिवजी पार्वती जी को गोद में लिए कैलास में विराजमान हैं। पति के सिर पर गंगा को देखकर शंकाकुल हृदय से पार्वतीजी और शिवजी के बीच प्रश्नोत्तर के रूप में प्रणय-कलह का वर्णन किया जाता है। इसके लिए उपयुक्त आट्टश्लोक (अभिनय के लिए निश्चित श्लोक) नीचे दिया जाता है—

मौलौ किन्नु महेश, मानिनि जलम्, किं वक्त्रमम्भोरुहम्
किं नीलालकवेणिका, भ्रमरिका, किं भ्रूलते वीचिका।
नेत्रे किं शफरी किमु स्तनयुगं प्रेंखद्रथाङ्गद्वयम्
साशङ्कामिति वञ्चयन् गिरिसुतां गंगाधरः पातु वः।।

शिवजी को देखने, गंगा को देखने तथा अपनी स्थिति पर विचार करते समय पार्वती, अनुराग, ईर्ष्या, दुःख आदि भावों का मिश्रित रूप में बदल-बदल कर अभिनय कर अन्त में उठकर शिवजी को छोड़कर चले जाने के भाव में दो तीन पग आगे बढ़ कर कैलास पर्वत की चञ्चलता के कारण डर से काँपकर वापस आकर पति से मिल

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जाती है। इस प्रकार के अभिनय की सामान्य संज्ञा है 'पार्वती-विरहम्'। इसके अलावा पार्वती के स्नान को जाने आदि दूसरी एक घटना का अभिनय भी पार्वती-विरह के लिए करने की प्रथा चालू है। यह नट की इच्छा पर निर्भर है।

केशादिपादवर्णन—

केशादिपादम् की मुद्रा दिखाकर हाथों से उत्तरीय नाभि के पास पकड़कर "मेय्युकोण्ट् चुष्ट्टि" शरीर एक बार घुमाकर ध्रुवाताल में एक पूरा आवर्तन खड़े होकर, फिर सिर के बाल आदि सभी अंगों का विस्तार से रस भाव तथा चक्षु-विशेष रूपी प्रत्येक रीति से उपश्लोकों के साथ अभिनय करना। यह पूरा अभिनय ध्रुवाताल में होगा। इन सब विधाओं का नाम है— केशादिपादम्।

कामशरं कोळुक— (कामशर लगना)

काम के शर छाती पर चुभने से दोनों हाथों से आंग्य से दिखा कर फिर ताप लगता सा दिखाना। यह दो तीन बार दिखाना है। इसके बीच चन्द्र की किरणों का लगना, मन्द हवा का शरीर में स्पर्श करना और उससे होने वाले ताप को भी दिखाकर अन्त में परवश हो जाने का अभिनय करना। इसी का नाम है— "कामशरं कोळुक"। यह आट्टम् द्रुतमात्रिक त्रिपुटाताल में है।

उपश्लोक-वर्णनम्— यह दो प्रकार का है। रोमावलि के लिए—

रोमावली भुजंगी नाभेरुदिता मुखेन्दुमालेढुम्।
दृष्ट्वा कचभरबर्हं कुचगिरिमध्ये निलीयते तन्व्याः।।

तलमुटिक्क्—

अस्याः कचानां शिखिनश्च किन्नु
विधिं कलापो विमतेरगाताम्।
तेनाङ्कमारोप्य सुमैरपूजि
प्रभर्त्सि दत्त्वा स किमर्धचन्द्रम्।।

इस प्रकार हर एक अंग का खास वर्णन करने की रीति पर एक प्रकार का उपश्लोक वर्णन है, तो दूसरा नाटक के किसी भाग को लेकर दूसरे श्लोक से भंग्यन्तर से वर्णन करने को भी उपश्लोकाट्टम् कहते हैं। उदाहरण—

शशिमणिशिला सेयं यस्यां विपाण्डरमाननम्
करकिसलये कृत्वा वामे घनश्वसितोद्गमा।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चिरयति मयि व्यक्ताकूता मनाक्स्फुरितैर्भुवो-
र्नियमितमनोमन्युः दृष्टा मया रुदती प्रिया।।

नागानन्द के दूसरे अंक में नायक के श्लोक के लिए भी एक उपश्लोक है। वह नीचे है—

रम्भायामुदितं सनालकमलं तस्मिन् कलानां निधिः
शेते तत्र विकासि कोकनदतो जाता कलिन्दात्मजा।
सा मेरोश्शिखरे निपत्य तरसा व्योमाङ्गणं गाहते
दृष्ट्वैतच्चरितं ममापि हृदयं नो धैर्यमालम्बते।।

यह उत्प्रेक्षारूपी श्लोक है।

इसी प्रकार नायक के श्लोक के कुछ पदों के लिए भी खास उपश्लोक का अभिनय करने की रीति है।

नीताः किन्न निशाः शशाङ्करुचयो नाघ्रातमिन्दीवरं
किन्नोन्मीलितमालतीसुरभयः सोढाः प्रदोषानिला।
झंकारः कमलाकरे मधुलिहां किं वा मया न श्रुतो,
निर्व्याजं विधुरेष्वधीर इति मां केनाभिधत्ते भवान्?

'नागानन्द' के दूसरे अङ्क के प्रस्तुत श्लोक के "शशाङ्करुचयः" इस शब्द मात्र के लिए एक उपश्लोक का अभिनय किया जाता है, जो नीचे है—

उदयाद्रिनावमधिरुह्य शनैः शशिदाशकेन जगतीसरसि।
करजालजालमवतत्य युवत्यभिमानमीनकुलमाचकृषे।।

यह श्लोक पात्रभेद के अनुसार अभिनय किया जाता है। अभिनय करने के ऐसे उपश्लोक कई प्रकार के हैं।

समुद्रवर्णन— समुद्र का निरीक्षण कर (समुद्रं नोक्किक्कण्ट्) इधर-उधर लहरें मारने वाले बड़े-बड़े तरंग, मछलियाँ, कछुए, मगर, शंख, सलिल, सर्प-आवर्त, तरङ्ग के आघात की ध्वनि, जलमानुष, मकर-मकरी, तिमिंगल (ह्वेल) आदि का वर्णन मुख्यतया किया जाता है।

कोप्पणियिक्कुक— (नायिका का श्रृङ्गार करना) प्रसाधन करना।

बाएँ-दायें चेटियाँ 'सखीभाव' में तथा बीच में 'नायिका भाव' में नायिका, तीनों का खड़ी हो जाना, सखियाँ बनकर "अब हम इसका अलंकार करें" ऐसा दिखाकर एक चेटी नायिका का बाल संवार कर बाँध रखती है, दूसरी माला पहिनाती है, तीसरी आखों में काजल लगाती है और एक तिलक लगाती है, और दूसरी आभूषण पहनाती

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

है। एक ओर चेटी कपड़े पहनाती है तो दूसरी एक अपनी साथिन से श्रृङ्गार कराने के सम्बन्ध में वार्तालाप भी करती हैं। कभी-कभी प्रश्न करती है और कभी-कभी नायिका की ओर देखती है। एक प्रश्न करती तो दूसरी जवाब देती है। इस प्रकार (सखियों का) चेटियों का नायिका का प्रसाधन करना ही कोप्पणियिक्कल् कहलाता है।

क्रीडा—ध्रुवताल में 'अम्मानाट्टं' ऊपर-नीचे उछालना (कन्दुक क्रीडा) गेंद का खेल, वीणा वादन, संगीत, ताल लगाना, झूले में झूलना, आदि कई प्रकार के विनोद भी इसमें हैं। इन सबका अभिनय क्रीडा शब्द से व्यवहृत हैं।

चूतुकळि—द्रुतकाल त्रिपुट ताल में यह 'आट्टम्' चलता है। अपने साथियों के साथ एक नट जमीन पर बैठकर "हम जुआ खेलें" कह कर "मांस, मदिरा, जुआ खेलने की सामग्रियाँ ला" इस प्रकार नौकरों को आज्ञा देकर उनके द्वारा लायी गयी उन सब चीजों को लेकर मदिरापान दिखा कर, जुआ खेलने का चौपड़ बिछा कर जुए के पासे को फैलाकर, एक कथापात्र के भाव में पासा (पाँसा) हाथ में लेकर ताल के अनुसार हाथों में रगड़ कर ज़मीन पर फेंकता है। पासा निकाल कर रुक जाता है, केवल आँखों से अभिनय कर गिनती लगाकर गोट सरका कर रखता है और अन्त में किसी एक के जीतने तथा दूसरे के हारने का अभिनय कर पराजित व्यक्ति पैर से जुआ, पासा सब लात मार कर दूर हटा कर "आ लड़ने आ" कह कर उठ जाता है। इस 'आट्टम्' का नाम है 'चूतुकळि' (द्यूतक्रीडा)।

'पटपुरप्पाट्'— इसमें (मुरुकिय त्रिपुटा) द्रुत मात्रिक त्रिपुटा, एक ताल, आदि ताल-भेद होते हैं। भटों (सिपाहियों) के रूप में— "अरङ्गुपेरुमाट्टम्" में हथियार उठाना, सवारियों में चढ़ना, पंक्ति में संघ में चलना, भेरी बजाना, दूसरे बाजे बजाना, आदि दिखता है। अपने स्वामी के निकलने के लिए कमर कसना, हथियार उठाना, रथ में चढ़ना, रथ हाँकना, "तेरपेरुमाट्टम् काट्टुक" मण्डलाकार चलना, सेना-निवेशन करना, शत्रु को युद्ध के लिए ललकारना आदि मुख्य तथा अन्य उचित अभिनय, अनुबन्ध रूप में भी अभिनय करता है। इसका नाम है 'पटपुरप्पाट्'।

काऴचवेक्कुक— उपहार ला कर रखना।

आश्चर्य-चूडामणि नाटक के अशोक-वनिकाङ्क में "अऴकुरावण" (वेषभूषा से समलंकृत कामी रावण) सीता को प्रसन्न करने के लिए कई उपहार भेंट करते हैं— इसका अभिनय ही काचवेक्कल् संज्ञा से व्यवहृत है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रंग में रखे दीप के दाईं ओर सीता के प्रतिनिधि रूप में एक छोटा दीप रखा जाता है। उसके सामने रेशम का कपड़ा बिछाकर उसमें सीता को प्रसन्न कर अपनी ओर आकृष्ट करने (अपने वश में लाने) के लिए रावण कई प्रकार के आभूषण 'मिश्रावणा' के बाएँ कोने से नौकर से लेकर "चुवटुचवुट्टिकोण्ट्" सीता के पास जाकर, अपने हाथ की चीजें दिखाकर उनकी विशेषताएँ बताते हुए "तू मुझ पर प्रसन्न हो जा" कह कर भेंट करता हैं। इस प्रकार दो तीन बार दिखा कर सीता के चेहरे की ओर देखकर 'यह प्रसन्न नहीं'— ऐसा दिखाकर क्रुद्ध होकर उठ जाता है। इस क्रिया का नाम है— काश्चवेक्कल।

लङ्कादहन— पूँछ पर आग लगाने पर पूँछ पकड़ कर आठ दिशाओं की ओर "कळकळवाद्यम्" की तरह दौड़ते हुए चल कर, जलाना दिखा कर 'पीठ' पर चढ कर जलाना दिखाना, राक्षसों को भागते हुए देखकर उन्हें आग लगा कर भगाना, कईयों को पकड़ कर आग में डालना आदि दिखाने वाले हनुमान के "आट्टम्" को लङ्कादहन कहते हैं।

वेषविधान

धीरोदात्त नायक

'तलयिल् कोट्टि' चेहरे पर (पच्च) श्याम रंग लगाकर आँखों तथा भौंहों पर काजल लगाकर, तिलक लगाकर होठों पर लालरंग चढाकर "(चुण्टप्पोटियिट्ट)" चुण्टप्पू (बैंगन की जाति के छोटे गोल-गोल फलवाले पौधे के) फूल का बीज आँखों में डालकर आँखों में ललाई चढ़ाकर 'माट्ट' पहन कर पैरों के घुटनों के नीचे की ओर पूरा भाग चावल के आटे से सफेद बना कर कमर में तैयार किया गया (माट्टकेट्टि) माट्ट बाँधकर, सामने पोयनख लटका कर, उस पर कमर में 'कटिसूत्र' बाँध कर, कुर्ता पहन कर 'छन्नउर' 'तोळवळा' कटक, पोषुम्प, मारमाला आदि बाँधने के बाद बैठकर 'चुवप्पुतुणि' उतारकर गोंद में रखकर, (क्योंकि ऐसा नियम है कि नट 'चुवप्पुतुणि' को शरीर से अलग कर और कहीं न रखें) कुण्डल पहन कर, किरीट पहन कर केशभार भी उससे बाँध कर, 'चुट्टित्तुणि' 'चुवप्पुतुणि', पीलिप्पट्टम् रत्नपट्टं, धूसरं आदि बाँधकर चेविप्पूव् लगाकर उठकर उत्तरीय पहन कर आँखों के अन्दर काजल लगा कर, जप कर पानी छिडका कर (जपिच्चु तळिच्च्) रंग प्रवेश के लिए तैयार हो जाता है।

नायिका वेष—

नंगियारम्मा "तलयिल् केट्टि" बाँध कर, घी लेकर चेहरे पर मलकर, चायि लगाकर, आँखों और भौंहों पर काजल लगा कर, घुँघराली लटें आँक कर, पिसे चावल के घोल से कुम्हड़े के बीज के समान तिलक लगाकर 'चुट्टि' के बदले चायिल्य के चारों ओर काजल की सीमा खींच कर, उठकर लाल

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रेशम और सफेद कपड़ा मिला कर पहन कर, उसके ऊपर "पिनचोरा" बाँधकर, सामने कपड़े से 'पोयनख्' की भाँति चुन्नट बना कर (इसका नाम है— "वलिच्चिटुक") गात्रिका कंचुकी पहन कर (मुलक्कच्च केट्टि) गले में और हाथों में सोने के आभूषण पहन कर 'तोळ्वळा' के स्थान में चावल का घोल लगाकर उँगली से (वैसी आकृति बना कर,) उत्तरीय पहन कर बैठना और फिर "चुवप्पुतुणि" उतार कर गोंद में रखकर चाँदी के 'कुण्डल' चेविप्पूव् बाँधकर 'कूट्' सिर पर रख कर चुवप्पुतुणि, पीलिप्पट्टम्, रत्नपट्टं, धूसरं आदि बाँधकर उठकर मुख पर प्रोक्षण की भांति पानी छिडका कर तैयार हो जाना। इतना करने पर नायिका वेष पूरा होता है।

कत्तिवेच्च वेषम्—

"तलयिल् केट्टि" गालों और भाल पर चायिल्य से 'कत्ति' तथा बाकी भागों में 'पच्च' श्याम (हरा रंग) लगाकर नाक और भाल पर पूव् (फूल-उण्ट) रख कर मुख पर तथा कत्ति के बाहर 'चुटिट् कुत्ति' चुट्टि लगा कर आँखों और भौंहों पर काजल लगा कर दंष्ट्राएँ रखकर नाखून पहन कर "तूउङ्माला" भी पहनना चाहिए। उत्तरीय को बाँह पर डालना भी चाहिए। बाकी सब साधारणतया नायक की तरह तैयार करना होता है।

सूत्रधार का वेष—

'तलयिल् केट्टि' मुख पर चायिल्य, लटें, सप्तछद पुष्प का सा तिलक, काजल से "वलय" (चारों ओर की रेखा) गालों पर तिलक, सिर पर "कुश़ल्" चुवप्पुतुणि, पीलिप्पट्टम्, वासिकं, फणक्कूट्टम्, कुण्डल, चेविप्पूव, आदि पहन लेना। गले के नीचे सब नायक के वेष की तरह करना होता है।

'चेरिय' (छोटे) सूत्रधार का वेष—

चेहरे पर घी मल कर, आँखों और भौंहों पर काजल लगाकर चावल के घोल से 'गोपी' (लम्बा तिलक) लगा कर, उसके बीच लाल फूल लगाकर "चुण्टप्पोटि" डालकर, कमर मे 'ताऺत्तियुट्टुत्त' नीचा वस्त्र तथा कटिसूत्र बाँधकर कुर्ता, अंगद (तोळ्वळा) कटक, पोषुम्प् बाँधकर, उत्तरीय डालकर, सिर प़र कुण्डल, "उष्णीष" चुवप्पुतुणि, पीलिप्पटम्, चेविप्पूव, आदि पहन कर चेरिय सूत्रधार का वेष तैयार होता है। चूँकि दूसरे सभी वेषों के वेषविधान की रीतियों का उल्लेख 'क्रमदीपिका' ग्रन्थ में उल्लिखित है, इसलिये उनका विस्तार यहाँ नहीं किया।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अनुक्रममाटुक

पीठम् पर बैठ कर "अभिवाद्यं चेय्त्" अभिवादन कर 'सभानिरीक्षणम्' कर 'कमलपरिवर्तन त्तिल तोषुत्' के बाद 'एड्किलो पण्ट्' 'एन्नु काट्टि' 'निर्वहणं' पूरा हो जाने के कथा भाग से लेकर ('पुरप्पाट्' के दिन आरंभ करने वाली कथा से) निर्वहणम् शुरु होनेवाली कथा तक हर एक वाक्य का पीछे की ओर अंभिनय करना। अभिनेता नंबियार हर एक वाक्य के आरम्भ में "अतिन्नुमन्न में" (उसके पहले) की मुद्रा दिखाता है। इस प्रकार वाक्य सब पूरा होने पर 'इतोक्कवेयुम् एङ्ङिने'? (ये सब कैसे?) की मुद्रा दिखाकर "सभानिरीक्षण कर" 'कमलपरिवर्तनत्तिल् तोषुत्' इस क्रिया के साथ "अनुक्रममाटुक' पूरा हो जाता है। (गणित शास्त्र की एक, दस, सौ आदि संख्याएँ लिखते जाने के जैसे हैं— अनुक्रममाटल्, ऐसा कह सकते हैं।

संक्षेप माटुक

अनुक्रममाटल् के बाद संक्षेपमाटल् शुरु होता है। कहीं केवल संक्षेपमाट्ल शुरु होता है। कहीं केवल संक्षेपमाटल् का अभिनय हो सकता है, लेकिन केवल अनुक्रममाटल् कहीं भी नहीं होता। संक्षेपमाटल् (संक्षेपमाटुक) की रीति यह है—

'सभानिरीक्षण कर' 'कमल परिवर्तन त्तिलतोषुत्' कर के 'एड्किलोपण्ट' बहुत दिनो के पहले— ऐसी मुद्रा दिखाकर 'निर्वहणम्' शुरु करने तक की कथा का अभिनय करना। 'संक्षेप माटुक' असल में अभिनय किये जाने वाली निर्वहण की अवतारिका स्वरूप ही है। पूर्व कथा का अभिनय कभी निकट पूर्व की कथा से लेकर आरंभ से लेकर और कभी बीच में से लेकर प्रसंगानुकूल किया जाता है। 'संक्षेप माटल्' के अन्त में भी सभानिरीक्षण और 'कमल-परिवर्तन-त्तिलतोषुकल्' दोनों अनिवार्य हैं। इसके बाद निर्वहण शुरु होता है।

निर्वहणम् आटुक

अभिनय किये जाने वाले नाटक की पूर्व कथा का श्लोकों के रूप में निर्वाह करने का नाम निर्वहण कहलाता है। अर्थात् मान लीजिये कि नाटक के दूसरे अङ्क का अभिनय किया जा रहा है, तो केवल पहले अंक का निर्वहण करना काफ़ी है। लेकिन अगर सातवाँ अंक अभिनय किया जा रहा है, तो पहले अंक से छहों अंकों का निर्वहण करना है। लेकिन चाहें तो केवल छठे अंक का निर्वहण मात्र कर सकते हैं। निर्वहण के सभी श्लोकों का पाठ नंगियारम्मा करेगी। श्लोकों तथा उसमें के विशेषार्थ सब का अभिनय हो जाने पर ही नंग्यारम्मा का श्लोक-पाठ चलता है। उस समय पदार्थाभिनय की रीति से नट मुद्राभिनयमात्र करेगा।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

केट्टाटुक (क)

'पाटिच्चआटुक' पढ़वा कर अभिनय करना दाएँ हाथ से नट सूचीमुख मुद्रा पकड़ कर सुनने का सा अभिनय करता है। कुहनी से बाजा रोक कर नंग्यारम्मा से श्लोक पढवाकर उसके सब अर्थों का विस्तार से अभिनय करता है। जब नंगियारम्मा श्लोक पढती है, तब वाचिकाभिनय के रूप में मुद्रा नहीं दिखाएगा। यह निर्वहण के बीच में आने वाले केट्टाळुक की रीति है।

केट्टाटुक— (ख)

सूचीमुख मुद्रा में सुनने का सा भाव दिखाकर नंबियार मिझाव में 'वायिच्च्' वादन बन्द करता है। तब दूसरे पात्रों का ग्रन्थ-पाठ सुनने के बाद उन पात्रों की स्थायी में उनके सब अर्थों का अभिनय पूराकर "इसी प्रकार तो तुमने बताया"? ऐसा अपनी स्थायी में खड़े होकर दिखाता है। यह साधारण नाटकों के बीच में आनेवाला केट्टाटल है।

चोल्लियाटुक (क)

श्लोक और वाक्य हर-एक कथा-पात्र स्वयं पढ़ लें और उसके साथ मुद्राभिनय भी करें— फिर उसका अर्थ विस्तार से अभिनय करे। अगर विशेष अभिनय की गुंजाइश है, तो उनका अन्वय के साथ अभिनय करें, फिर बाजा बन्द कर दुबारा पहले के जैसे वाचिकाभिनय के रूप में अभिनय कर ले। इसका नाम 'चोल्लियाटुक' है।

चोल्लियाटुक (ख)

'पुरप्पाट्' के दिन चोल्लियाटल् जहाँ पर समाप्त किया था वहाँ से पूरा ग्रन्थ अभिनय कर फिर आदि से पूरा ग्रन्थ वाचिक के रूप में 'चोल्लियाटि' अन्त में 'कुण्डलमिट्ट मुट्टिच्च्' बाजे के साथ पढना आदि परम्परा से अनुवर्तन करने वाली विधाओं से युक्त 'निर्वहण' के अन्त में किये जाने वाले अभिनय को भी चोल्लिपाट्टम् कहते है।

अन्वयिच्चाटुक

पहले मूलग्रन्थ पढकर अभिनय करना, फिर आकांक्षा (प्रश्न; तर्क) के साथ अन्वय-क्रम के अनुसार अभिनय करना। उसके बाद विशेष तथा अन्य सभी पदों के अर्थ का आकांक्षा के साथ अभिनय करना। फिर सामान्य अर्थ के साथ कोई विशेष अर्थ या ध्वनि की संभावना है, तो उसका भी अभिनय करता है। इस प्रकार विस्तार के साथ अभिनय पूरा कर, श्लोक का केवल उत्तरार्द्ध पढ कर अभिनय करता है।

इळकियाट्टम्

आट्टम् के समय शारीरिक अंग-विशेष व पाद-विक्षेप 'चविट्टिच्चटु' आदि के साथ मुद्राओं का 'मारटक्कम्' रीति छोड़कर मुद्रा रसों को अधिक प्रधानता देते हुए

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

की जाने वाली एक विशिष्ट अभिनय रीति है इलकियाट्टम्। इसका इळकियाट्टम् (हिलते हुए अभिनय) संज्ञा बहुत कुछ सार्थक है। क्योंकि शारीरिक चालन इसमें मुख्य है।

आट्टम्

कथा-पात्रों के तत्कालीन परिस्थिति के पूर्व तक की स्थिति का प्रतिपादन करने वाला अवतारिका-रूपी अभिनय है आट्टम्। भूत और भविष्यत् कथानक का संक्षिप्त अभिनय भी इसके अन्तर्गत है। इन दोनों को 'प्रमेयमाटल्' कहते है। प्रमेय का मतलब है कथानक का संक्षेप।

प्रमेयमाटुक

अनुक्रम, संक्षेप आदि क्रम छोड़कर पूर्व की कथाओं का अवतारिका के रूप में अभिनय कर उस दिन शुरु किये जाने वाले अभिनय के विषय और कथापात्र को प्रस्तुत करने वाले कथा-संग्रह आदि का अभिनय ही प्रमेयम् आटुक कहलाता है।

भरतवाक्यमाटुक

अभिनीत नाटक के आदि से अन्त तक के सभी कथापात्रों के ग्रन्थार्थों का विशेष कथापात्रों की स्थायी में पूरा संक्षिप्त अभिनय कर नाटक के भरतवाक्य श्लोक पढ कर अभिनय करना। नाटक के प्रधान नट का कर्तव्य है भरतवाक्यम् आटल्। भरतवाक्य के अभिनय करने वाले नट को विशेष अधिकार और हक है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मुद्रा-ताल-प्रकरण

मुद्राएँ (हस्त)

कूटियाट्टम् की मुद्राएँ अथवा हस्त सामान्यतया वे हैं जो 'हस्तलक्षण-दीपिका' में निर्दिष्ट हैं। इसलिये उसके लक्षण-श्लोकों के साथ पहले मौलिक मुद्राओं का विवरण दिया जा रहा है।

१. पताका—

"नमितानामिका यस्य पताकस्स करः स्मृतः"। अनामिका का अग्रभाग अन्दर की ओर झुका कर बाकी उँगलियाँ सीधे पकड़ने से पताका मुद्रा बनती है। एक हाथ से यह मुद्रा 'गमन' (जाना) आदि तथा संयुक्त हाथ राजा आदि प्रदर्शित करते हैं। इन दोनों हस्तों को असंयुक्त और संयुक्त हस्त भी कहते हैं।

२. मुद्रा—

अङ्गुष्ठस्य तु तर्जन्या यद्यग्रो मिलितो भवेत्।
शेषा विश्लथिता यस्य मुद्राख्यस्स करः स्मृतः।।

केवल अंगुष्ठ और तर्जनी के अग्र मिला कर बाकी तीनों अंगुलियाँ खोलकर आपस में मिलने न देकर पकड़े तो 'मुद्रा' नामक मुद्रा बनती हैं।

इस मुद्रा के संयुक्त हस्त से स्वर्ग आदि तथा असंयुक्त हस्त से 'चिन्ता', अभिलाष आदि दिखाये जाते हैं।

३. कटक—

अङ्गुष्ठाङ्गुलिमूलं तु संस्पृशेद्यदि मध्यम।
मुद्राभिधानहस्तस्तु कटकाख्यां व्रजेत्तदा।।

'मुद्रा' हस्त की बीज की उँगली के अग्र से अंगुष्ठ का मूल स्पर्श करे तो कटक मुद्रा बनती है।

कृष्ण, बाण, आदि युग्म कटक तथा नारी, दर्पण आदि अयुग्म कटक होते हैं।

४. मुष्टि—

अङ्गुष्ठस्तर्जनीपार्श्वमाश्रितोऽङ्गुलयः पराः।
आकुञ्चिताश्च यस्य स्युः स हस्तो मुष्टिसंज्ञकः।।

अंगुष्ठ को तर्जनी से मिलाकर बाकी सभी उंगलियाँ अन्दर की ओर मोड़कर पकड़ें तो मुष्टि संज्ञक मुद्रा बन जाती है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

यमराज, पुण्य आदि संयुक्त मुष्टि मुद्रा से तथा सचिव, लाँघना आदि असंयुक्त मुष्टि मुद्रा से दिखाते हैं।

५. कर्तरीमुख—

कनीयस्युन्नता यत्र तिस्रः स्युस्सन्नताः पराः।
अंगुष्ठस्तर्जनीपार्श्वं संस्पृशेद् भरतर्षभ।
कर्तरीमुखमित्याहुर्हस्तं तं नृत्तवेदिनः।।

छोटी उँगली को उठाकर बाकी तीनों उँगलियाँ झुका कर अंगुष्ठ को तर्जनी से मिला दें तो कर्तरीमुख मुद्रा बन गयी।

ब्राह्मण, श्रम आदि संयुक्त कर्तरी मुख से तथा अस्मच्छब्द का बहुवचन, बालक आदि असंयुक्त कर्तरीमुख से दिखाये जाते हैं।

६. शुकतुण्डम्—

भ्रूलतेव यदा वक्रा तर्जन्यंगुष्ठसंयुता।
नमितानामिका शेषे कुञ्चितोदञ्चिते तदा।
शुकतुण्डकरं प्राहुराचार्या भरतादयः।।

तर्जनी को टेढ़ा कर अंगुष्ठ को तर्जनी से मिलाकर बाकी उँगलियाँ झुकाकर हाथ से मिलाकर पकड़ें तो शुकतुण्ड मुद्रा बन जाती है। निश्चय को, संयुक्त कर से तथा चिड़ियाँ असंयुक्त कर से शुकतुण्ड मुद्रा द्वारा दिखाते हैं।

७. कपित्थम्—

नमितानामिकापृष्ठमंगुष्ठो यदि संस्पृशेत्।
कनिष्ठिका सुनम्रा च यस्मिंस्तु स करः स्मृतः।
कपित्थाख्यश्च विद्वद्भिर्नृत्तशास्त्रविशारदैः।।

तर्जनी तथा बीच की उँगली खोलकर सीधी मिलाकर रखें। चौथी और पाँचवीं उगलियाँ अन्दर की ओर हथेली से मिलाकर रखें और अंगुष्ठ को अनामिका के पिछले भाग पर रखें तो कपित्थ मुद्रा बनता है। मोर पंखा, स्पर्श आदि संयुक्त कपित्थ से दिखाते हैं।

८. हंसपक्षम्—

अंगुल्यश्च यथापूर्वं संस्थिता यदि यस्य तु।
स हस्तो हंसपक्षाख्यो भण्यते भरतादिभिः।

सभी अंगुलियाँ खोल कर रखना हंसपक्ष है। चाँद, हवा आदि संयुक्त (दोनों हाथ) हंस पक्ष से, युष्मच्छब्द, तलवार आदि असंयुक्त हंस पक्ष से दिखाते हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

९. शिखरम्—

पुरतो मध्यमां चापि पृष्ठतः तर्जनीं नयेत्।
कपित्थहस्तस्तु तदा प्राप्नुयात् शिखराभिधाम्।

यह कपित्थ मुद्रा की सी है। लेकिन केवल तर्जनी को थोड़ा पीछे की ओर हटा कर पकड़ना है। यात्रा, चरण (पैर) आदि में संयुक्त शिखर मुद्रा होती है।

१०. हंसास्यम्—

संगताश्चलदग्राः स्युः तर्जन्यंगुष्ठमध्यमाः।
इतरे चोन्नते यत्र हंसास्यं तदुदीरितम्।।

तर्जनी, मध्यमा अंगुष्ठ इनके अग्रभागों को परस्पर रगड़ने जैसी क्रिया में चलायें दूसरी दोनों अंगुलियाँ उठाकर खोलें तो हंसास्य मुद्रा है। आँखों का तारा, मृदुत्व, आदि संयुक्त हंसास्य से तथा वर्षा का प्रारंभ, सिर के बाल आदि असंयुक्त हंसास्य मुद्रा से स्पष्ट करते हैं।

११. अञ्जलि—

करशाखास्तु विश्लिष्टा मध्यं हस्ततलस्य तु।
किञ्चिदाकुञ्चितं यस्य लुठितं सोऽञ्जलिः करः।।

हाथ की सभी अंगुलियों को परस्पर मिलाये बिना रखे तथा हस्त तल थोड़ा सा झुकाकर पकड़े तो अञ्जलि मुद्रा है। आग, प्रवाह आदि संयुक्त से और क्रोध आदि असंयुक्त अञ्चलि से दिखाते हैं।

१२. अर्द्धचन्द्रम्—

अंगुष्ठं तर्जनीं चापि वर्जयित्वेतराः क्रमात्।
ईषदाकुञ्चिता यत्र सोऽर्द्धचन्द्रकरः स्मृतः।।

तर्जनी और अंगुष्ठ खुला छोड़ कर शेष तीनों अंगुलियाँ थोड़ासा झुका कर रखें तो अर्द्धचन्द्रमुद्रा बनी। आसमान, विवशता आदि संयुक्तार्द्ध चन्द्र से तथा प्रस्थान, मुस्कराहट आदि असंयुक्त अर्द्ध चन्द्र से होता है।

१३. मुकुरम्—

मध्यमानामिके नम्रे अङ्गुष्ठोऽपि परस्परम्।
यद्यारभेते स्पर्शाय मुकुरस्स करो मतः।।

मध्यमा (बीच की अंगुली) तथा चौथी अंगुली को झुकाकर उनको अंगुष्ठ के अग्र से स्पर्श करता सा मिलाकर पकड़ने पर मुकुर मुद्रा हो गयी। दंष्ट्रा, वियोग, ओखली आदि संयुक्त मुकुर से, किरण, गला आदि असंयुक्त से होते हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१४. भ्रमरम्—

नमिता तर्जनी यस्य स हस्तो भ्रमराह्वयः।

तर्जनी का मध्य अन्दर की ओर मोड़कर रखें तो भ्रमर मुद्रा बनती है।

पंख, गान, जल, हाथी के कान आदि संयुक्त भ्रमर से, गन्धर्व, रुदन आदि असंयुक्त भ्रमर से होते हैं।

१५. सूचीमुख—

मध्यमानामिकापृष्ठमंगुष्ठो यदि संस्पृशेत्।
कनिष्ठिका कुञ्चिता च सूचीमुखकरः स्मृतः।।

तर्जनी खोलकर बाकी उँगलियाँ समेट कर अंगुष्ठ उनके पृष्ठ पर दबा कर रखें तो सूचीमुख मुद्रा है।

अलग करना, उत्पतन, संसार आदि संयुक्त सूचीमुख से, अकेला, कष्ट, आदि असंयुक्त सूचीमुख से सूचित होते हैं।

१६. पल्लव—

मूलं चानामिकाङ्गुल्याः अंगुष्ठो यदि संस्पृशेत्।
यस्मिंस्तु नृत्तशास्त्रज्ञैः पल्लवः स करः स्मृतः।।

चौथी अंगुली के मूल को यदि अंगुष्ठ स्पर्श करे तो पल्लव मुद्रा हो गयी। वज्र, पर्वतश्रृंग आदि संयुक्त पल्लव से, दूरी, धुआँ आदि असंयुक्त पल्लव से सूचित होते हैं।

१७. त्रिपताकम्—

अंगुष्ठः कुञ्चिताकारः तर्जनीमूलमाश्रितः।
यदि स्यात् स करः प्रोक्तः त्रिपताको मुनीश्वरैः।।

अंगुष्ठ को टेढाकर तर्जनी के मूल का स्पर्श कराके बाकी उँगलियाँ खुली रखें तो त्रिपताक मुद्रा है। अस्त होना संयुक्त कर से और संबोधन असंयुक्त कर से सूचित होता है।

१८. मृगशीर्षं—

मध्यमानामिका मध्यं अंगुष्ठो यदि संस्पृशेत्।
मृगशीर्षकहस्तोऽयं कथितो मुनिपुङ्गवैः।।

तीसरी और चौथी उँगलियाँ झुकाकर अंगुष्ठ के अग्र से उनके मध्य भाग का स्पर्श करें तो मृगशीर्ष-मुद्रा बनी। हिरण, परमात्मा आदि के लिए यही मुद्रा है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१९. सर्पशिरः—

त्रिपताकस्य मध्यं तु निम्नं यदि भवेत्तदा।
हस्तस्सर्पशिरो नाम विषे सर्पे फणे मतः।।

त्रिपताक मुद्रा को थोड़ा झुका कर पकड़ें तो सर्पशिर हो गया। यह सर्प, विष, फन आदि के लिए प्रयुक्त होता है। यह संयुक्त और असंयुक्त दोनों है।

२०. वर्द्धमानकम्—

स्पृशेत् प्रदेशिनीं रेखां तर्जन्यंगुष्ठमध्यगाम्।
कुञ्चितोदञ्चिताश्शेषाः स हस्तो वर्द्धमानकः।।

तर्जनी का अग्र अंगुष्ठ की मध्यरेखा का स्पर्श करे और बाकी अङ्गुलियाँ तर्जनी की भाँति नतोन्नत (ऊँची-नीची) बना दें तो वर्द्धमानक मुद्रा बन गयी। स्त्रियों के कान के आभूषण, रत्नहार, अंबष्ठ (नाई) आदि संयुक्त वर्द्धमानक से, आवर्त (भँवर), नाभि, कुआँ आदि असंयुक्त वर्द्धमानक से सूचित होते हैं।

२१. अरालम्—

तर्जनीमध्यगां रेखां अंगुष्ठो यदि संस्पृशेत्।
कुञ्चितोदञ्चिताश्चान्ये अरालस्स करः स्मृतः।।

तर्जनी की मध्य रेखा अंगुष्ठ के अग्र से स्पर्श करें और अन्य उंगलियाँ ऊँची-नीची रहें तो 'अराळ' मुद्रा बनी। बेवकूफ, वृक्ष, कली, आदि संयुक्त अराल मुद्रा से सूचित होते हैं।

२२. ऊर्णनाभम्—

ऊर्णनाभवदाकाराः पञ्चाङ्गुल्योऽपि यत्र हि।
ऊर्णनाभाभिधः प्रोक्तः स हस्तो मुनिपुङ्गवैः।।

मकड़े के समान पाँचों अङ्गुलियाँ अलग-अलग रखने पर ऊर्णनाभ मुद्रा बनती है। बाघ, कमल, आदि संयुक्त ऊर्णनाभ से तथा घोड़ा, फल आदि असंयुक्त ऊर्णनाभ से सूचित होते हैं।

२३. मुकुलम्—

पञ्चानाममङ्गुलीनां च यद्यग्रो मिलितो भवेत्।
सुष्ठु यत्र तु विज्ञेयो मुकुलाख्यकरो बुधैः।।

पाँचों अङ्गुलियों के अग्र सुचारु रूप से मिलाने पर मुकुल मुद्रा बनती है। सियार संयुक्त मुकुल से और वानर (बन्दर) असंयुक्त मुकुल से सूचित होता है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२४. **कटकामुखम्—**

मध्यमातर्जनीमध्यमङ्गुष्ठः प्रविशेद्यदि।
शेषा सन्नमिता यत्र स हस्तः कटकामुखः।।

मध्यमा और तर्जनी के बीच से अंगुष्ठ को घुसा कर हाथ समेट कर पकड़ें तो कटकामुख मुद्रा बनती है। ऊपर बताई गयी चौबीस मुद्राएँ मौलिक मुद्राएँ है, इनके अलावा समानमुद्रा, मिश्रमुद्रा नामक मुद्राओं का एक अवान्तर भेद भी है। उनका विवरण दिया जाएगा।

समान मुद्राएँ

विभिन्न दो वस्तुएँ प्रदर्शित करने के लिए एक ही मुद्रा का उपयोग जहाँ पर किया जाता है, वहाँ उस मुद्रा को समान मुद्रा या समान-हस्त मुद्रा कहते हैं। नीचे श्लोकों में एक ही मुद्रा से दिखाई जाने वाली विभिन्न वस्तुओं की सूची दी गयी है—

समीपसमयौ तुल्यौ समौ दानवकौणपौ।
सरोजले तुल्यहस्ते तुल्यौ वरुणवारिधी।।
लावण्यभूषणे तुल्ये चित्तबुद्धी समानकौ।
क्रूरशत्रू समकरौ समौ सैनिकशूद्रकौ।।

समहस्तौ सिद्धवादौ तुल्यौ मौनिश्वासगद्‌गदौ।
जयशक्ती तुल्यहस्तौ तुल्यौ पुण्यगुणावुभौ।।
तमस्त्रियामे द्वे तुल्ये अल्पबिन्दू समानकौ।
ज्वालाधूमौ तुल्यहस्तौ ज्येष्ठभीमौ समानकौ।।

नकुलो भरतस्तुल्यौ समौ विजयलक्ष्मणौ।
शत्रुघ्नसहदेवौ च तुल्ये पालनकर्मणी।।
ध्वजदण्डौ तुल्यहस्तौ समाने दर्पयौवने।
तुल्ये सम्मोहवैवश्ये समे पातालगह्वरे।।

मासपक्षौ तुल्यहस्तौ सभादेशौ समानकौ।
पाशप्रतोदौ तुल्यौ द्वौ समाने स्पर्शसङ्गती।।
समानौ धन्यगम्भीरौ स्वनवाद्ये समानके।
पूजाभक्ती तुल्यहस्ते समानौ सुहृदाशयौ।।

विस्तारशय्ये द्वे तुल्ये कलुषव्याकुलौ समौ।
समानौ चारसञ्चारौ तुल्ये तु धनहाटके।।
बिम्बखेदौ च तुल्यौ द्वौ सन्देहविपरीतकौ।
महीनिर्वर्तने तुल्ये पुरातद्वाचके समे।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गोदक्षिणे तुल्यहस्ते समौ रजककिङ्करौ।।
भ्रूकुचौ तुल्यहस्तौ द्वौ कीलसूचीसमानके।।
तनुम्लानी तुल्यहस्ते प्रायशो नाट्यदर्शनात्।।
द्व्यर्थश्लेषास्समाख्याता हस्ता केचिद्यथामति।

श्लोकों का सार—

समीप और समय दोनों तुल्य है यानि एक ही मुद्रा से दिखाने चाहिएँ। वैसे दानव (असुर) और कौणप (राक्षस) दोनों के लिए एक ही मुद्रा है। सरोवर (जलाशय) और पानी दोनों के लिए एक मुद्रा है, वरुण और समुद्र दोनों के लिए एक ही मुद्रा है। सौन्दर्य और आभूषण, चित्त (मन) और बुद्धि, क्रूर और शत्रु' फौजी जवान और शूद्र, सिद्ध और वाद-विवाद, निःश्वास और गले का रुँध जाना, जीत और ताकत, पुण्य और गुण, अन्धकार और रात्रि, थोड़ा और बिन्दु, आग की लपट और धुआँ, बड़े भाई और भीम, नकुल और भरत, विजय (अर्जुन) लक्ष्मण, शत्रुघ्न और सहदेव, समान मुद्रा से ही प्रदर्शित किये जायेंगे। इसी प्रकार मास और पक्ष, दर्प और यौवन, सम्मोह और विवशता, पाताल और गह्वर समान मुद्रा से प्रदर्शित किये जाते हैं। पाश और चाबुक, स्पर्श और संगति, धन्य और गम्भीर, शब्द और वाद्य समान मुद्रा से प्रदर्शनीय हैं। पूजा और भक्ति, सुहृद (मित्र) और आशय, विस्तार और शय्या, (मन की) कलुषता और व्याकुलता, चरण और संचरण, धन और स्वर्ण, बिम्ब और खेद, सन्देह और वैपरीत्य भी समान मुद्रा से दिखलाये जाते हैं। पृथ्वी और उसका निर्वर्तन (परिपालन), पुराकाल और 'उस' का वाचक, गाय और दक्षिणा, रजक (धोबी, रंगरेज़) और सेवक, भौंह और स्तन, कील और सूई, कृशता और मलिनता प्रायः समान मुद्रा से प्रदर्शित किये जाते हैं। इस प्रकार हस्त द्व्यर्थक और श्लिष्ट कहे गये हैं।

मिश्र मुद्राएँ

आगे मुद्राएँ बतायी जा रही हैं। दोनों हस्तों में विभिन्न मुद्राएँ पकड़ना ही मिश्रमुद्रा अथवा मिश्रहस्त कहलाता है। उदाहरण के लिए— एक हस्त शिखर और दूसरा मुष्टि पकड़े, तो 'इन्द्र' की सूचना देने वाली मुद्रा बनी। इसलिए 'इन्द्र' मिश्रहस्त हैं। नीचे श्लोकों में करीब-करीब सभी मिश्रहस्तों की सूची दी गयी है।

वैधव्यं सुरतं युद्धं रामः स्त्री दानमित्यपि।
एते पञ्च समाख्याता हस्ता कटकमुष्टयः।।
इन्द्रशिखरमुष्टिस्स्यात् प्रियो हंसास्यमुष्टिकः।
ब्रह्मा कटकपक्षः स्यात् शिवस्तु मृगपक्षकः।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कर्तरीमुखमुष्टिस्तु विद्याधर उदाहृतः।
यक्षस्तु पक्षमुष्टिस्स्यात् वध्यश्चन्द्रार्धमुष्टिकः।।
कर्तरीकटकश्शास्त्रं कल्याणस्य पताकतः।
पताककटकौ मासः तद्वदेव च गौ स्मृता।।

कर्तरी कटकः कन्या, श्रीवत्सः शिखराञ्जली।
वर्धमानकहंसास्यस्त्वधरः परिकीर्तितः।।
पताकमुष्टी हिंसा स्यात् प्रतिबन्धस्तथैव च।
पताकमुकुलो हस्तः सुग्रीवांगदबालिनः।।

संयुक्तहंसपक्षास्स्युर्हनुमान् प्रमुखः कपिः।
पताककर्तरीहस्तः पत्तनं दशकन्धरः।।
अञ्जली कटकः प्रोक्तो यागः पल्लवमुष्टिकः।
हस्तः कटकमुद्राख्यः सत्यं धर्मश्च संस्मृतिः।।

मुद्रामुष्टी पिता तद्वत् सेनापतिरितीरितः।
माता कटकपक्षस्स्यात् स एव च सखी मतः।।
मुद्रापताकश्चिह्नं स्यात् हृद्यं पक्षपताकंतः।
कार्यं भार्या विवाहश्च हस्तो मुकुलभेदकः।।

तार्क्ष्यश्शिखरभेदस्स्यादन्नं मुकुलभेदकः।
वर्द्धमानाञ्जली रत्नं विक्रीडां कटकाञ्जलिः।।
नाशस्तु मुष्टिभेदस्स्यान्मध्यं शिखरपक्षकः।
सूची मुखाञ्जलिश्चित्रं पौत्रपुत्रावुदाहृतौ।।

कर्तरीमुखमुद्राख्यौ पुत्री कटकसूचिका।
वर्द्धमानकपक्षाख्यं बुधैः पीयूषमिष्यते।।
मुद्राख्यपल्लवो बाहुरुपायः परिकीर्तितः।
कटकाख्यकरः प्रायः स्त्रीत्वे सर्वत्र योजयेत्।।

कटको मुकुरोपेतः सुन्दरी परिकीर्तिता।
पताककर्तरी हस्तौ युवराज इति स्मृतः।।
संयुक्तहंसपक्षाख्यो दुःखं स्यादथ सम्मदः।
हस्तो हि पक्षमुद्राख्यः शौर्यं संयुक्तमुष्टिकम्।।

कर्तरीमुखहस्तास्स्युः शंखसोपानवेणवः।
नीवीसंयुक्तमुद्राख्यो नासिका वर्द्धमानका।।
हंसास्यो मण्डपो हस्तः अलको हंसपक्षकः।
शैवलं च तदेवाहुः नाट्यशास्त्रविशारदाः।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

द्वित्वे सर्वत्र योज्यस्स्यात् सूचीमुखसमन्वितः।
हस्तशिखरनामेति विज्ञेयं विबुधैस्सदा।।
प्रायः प्रोक्ताः मिश्रहस्ता नाट्यशास्त्रोक्तवर्त्मना।
नाथः पिता गुरुस्तुल्या लीलानृत्तोत्सवाः समे।।

थैर्यारम्भसमास्तुल्याः सिद्धश्चिह्नं फलं नव।
स्नेहानुरागविश्वासास्तुल्यास्तुल्यकराः स्मृताः।।
पापापराध-दोषाश्च ताक्ष्य-हंस-जटायुषः।
विलम्बक्रममन्दाश्च तुल्यहस्तास्समीरिताः।।

विषादव्याधि-दुःखानि समहस्तानि केवलम्।
अनेकार्थकराः प्रायो दर्शिताश्शास्त्र-वर्त्मना।।

(हस्त-लक्षण-दीपिका)

[हिन्दी में सारांश]

वैधव्य, सुरत (कामकेलि), युद्ध, राम, कन्यादान ये पाँचों कटक तथा मुष्टि की संयुक्त मुद्रा से सूचित किये जाते हैं। इन्द्र के लिए 'शिखर' और 'मुष्टि' की संयुक्त मुद्रा है, और प्रिय के लिये हंसास्य तथा मुष्टि है। ब्रह्मा के लिए कटक और हंसपक्ष है। शिव के लिए मृगशीर्ष और हंसपक्ष है। विद्याधर की मुद्रा 'कर्तरीमुख' तथा मुष्टि के संयोग से बनती है और यक्ष के लिए हंसपक्ष एवं मुष्टि की मुद्रा है। वध्य (मारने योग्य) के लिए अर्धचन्द्र एवं मुष्टि का संयोग है। कर्तरीमुख तथा कटकमुद्रा के संयोग से 'शास्त्र' दिखाया जाता है। कर्तरीमुख एवं कटक के संयोग से कन्या, श्रीवत्स, शिखर तथा अञ्जलि बनते हैं। वर्धमानक एवं हंसास्य मिला कर यज्ञ की मुद्रा बनती है। हिंसा-प्रति-बन्ध के लिए पताका और मुष्टि की संयुक्त मुद्रा है। पताका और मुकुल मिला कर बनायी गयी संयुक्त मुद्रा सुग्रीव, अङ्गद एवं बाली के लिए प्रयुक्त है। संयुक्त हंसपक्ष से हनुमान्, मुख्य वानर आदि की मुद्रा दिखाई जाती है। पताका एवं कर्तरीमुख की संयुक्त मुद्रा पत्तन (नगर, स्थान) के लिए प्रयुक्त होती है। रावण के लिए अञ्जलि एवं कटक की संयुक्त मुद्रा है। याग (यज्ञ) के लिए पल्लव एवं मुष्टि मुद्रा का संयोग होना चाहिए। कटक तथा मुद्रा के संयुक्त हस्त से सत्य धर्म एवं स्मृति दिखाई जाती है। मुद्रा तथा मुष्टि मिला कर पिता एवं सेनापति दिखाये जाते हैं। कटक तथा हंसपक्ष मिला कर माता और सखी (सहेली, चेटी) की मुद्रायें बनती हैं। मुद्रा और पताका के मेल से चिह्न दिखाया जाता है। हंसपक्ष और पताका मिला कर रुचिर, प्रिय, हृद्य की मुद्रा बनती है। मुकुल एवं मुष्टि की मिली हुई मुद्रा कार्य; पत्नी, विवाह आदि के लिये निश्चित की गयी है। शिखर और सूचीमुख मिला कर गरुड की मुद्रा है तथा भोजन के लिए सूचीमुख तथा मुकुल मिला कर दिखाया जाता है। वर्धमान और अञ्जलि के संयुक्त

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रूप से रत्न की और कटक और अञ्जलि मिला कर विक्रीडा की मुद्रा बनती है। मुष्टि और सूचीमुख मुद्रा मिला कर नाश दिखाया जाता है। मध्य के लिये शिखर तथा हंसपक्ष मिलाया जाता है। सूचीमुख और अञ्जलि मिला कर चित्र या छबि की मुद्रा बनती है, कर्तरीमुख तथा मुद्रा के संयोग से पुत्र-पौत्र आदि दिखाये जाते है, किन्तु, पुत्री के लिये कटक तथा सूचीमुख की संयुक्त मुद्रा का प्रयोग होता है। पीयूष (अमृत) के लिये वर्धमानक और हंसपक्ष का संयोग किया जाता है। 'उपाय' दिखाने के लिये पल्लव और मुद्रा का संयुक्त रूप बनाया जाता है। स्त्रीत्व के लिये आम तौर पर प्रयुक्त होने वाली मुद्रा कटक है, परन्तु कटक जब मुकुर से मिलाया जाता है तो सुन्दरी की मुद्रा बनती है। पताका और कर्तरीमुख मिलने पर युवराज की मुद्रा बनेगी। संयुक्त हंसपक्ष से दुःख की मुद्रा बनती है।

मद के लिये हंसपक्ष और मुद्रा का संयुक्त रूप निश्चित है। संयुक्त मुष्टि मुद्रा से शौर्य सूचित होता है। शङ्ख, सोपान तथा वेणु के लिये संयुक्त कर्तरीमुख मुद्रा है। वर्धमानक की संयुक्त मुद्रा नीवी तथा नासिका को सूचित करती है। हंसास्य और हंसपक्ष मिल कर मण्डप और अलक (भाल पर की लटों) को सूचित करते हैं। शैवाल के लिए भी यही मुद्रा प्रयुक्त है। सूचीमुख और शिखर का संयुक्त हस्त द्वित्व (दुबारा) के लिये प्रयुक्त है।

यों मिश्रहस्तमुद्राओं का प्रयोग बताया गया है। अब तुल्य हस्तों के नाम दिये जाते है। नाथ, पिता, गुरु ये समान मुद्रा के है। वैसे ही लीला, नृत्त, उत्सव ये तीनों, धैर्य, आरम्भ, सम और सिद्ध, चिह्न, फल ये नौ तुल्य मुद्रा से सूचित किये जाते हैं। स्नेह, अनुगम, विश्वास ये तुल्यहस्त हैं, पाप, अपराध, दोष, गरुड, हंस, जटायु, विलम्ब, क्रम, मन्द (धीमा)— ये सब समान हस्त से दिखाये जाते हैं। विषाद, व्याधि, दुःख भी समान मुद्रा से सूचित होते हैं। विविध अर्थ सूचित करने वाली मुद्राओं का शास्त्रविधान इस प्रकार प्रतिपादित किया गया है।

ताल

ध्रुव ताल— मात्रा-१४

लघु की चतुरश्र जाति में आने वाली ५ मात्रा के बाद एक आघात, इस क्रम से १४ मात्रा बजाने वाला ताल है— ध्रुवताल।

एकताल-(१) मात्रा-४

एक लघु की चतुरश्रजाति में आनेवाला है एकताल। इसमें लघु की तीन मात्रा छोड़कर चौथी पर आघात है।

(२) मात्रा-२— एक छोड़ एक आघात। यह सरल और छोटा ताल है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

त्रिपुटताल (१) सात मात्रा— लघु की त्र्यश्र जाति में आनेवाला त्रिपुटा है। दो छोड़ एक आघात, फिर एक छोड़ एक आघात, फिर एक छोड़ एक आघात।

त्रिपुटा ताल (२) (मिश्रचापु)—

तीन आघात कर एक छोड़ना, फिर तीन आघात करना (इसे सात में आधा साढ़े तीन भी गिन सकते है।)

अटन्त ताल— (खण्डजाति अटताल) **१४ मात्राएँ**—

चार आघात, एक छोड़ना, फिर चार आघात, एक छोड़ना फिर एक आघात एक छोड़ना और फिर एक बजा कर एक छोड़ना।

झम्पाताल (खण्ड चापु)— दस मात्राएँ। अक्षर में आधी गिनती।— (पाँच अक्षर-कालम्)

चेम्पट— (चतुरश्रजाति त्रिपुटा)— ८ अक्षर— ४-२-२- इस प्रकार ताल लगाना।

लक्ष्मीताल— यह जटायु के उड़ते हुए पैर रखने के लिए है— "मुकुट्टी तिरुताळी काटे पटले परिच्चु कषुकित्ता" इस बोल के अनुसार बजता है।

यह ताल प्रसंगानुकूल क्रियाओं, अभिनयों, भावों तथा कुछ विशेष चारिकाओं और रसों के लिए भी उपयुक्त होता है।

आगे निर्दिष्ट स्वर के लिए निश्चित तालों का विवरण दिया जाता है—

मुट्टार्त्तवीरतर्केषु चेटीपञ्चमदाणयोः।
कोरक्कुरुञ्जिरागे च ध्रुवतालः प्रकीर्तितः।।
श्रीकण्ठीतोण्ट्पुरनीरकैशिकास्विन्दलेषु च।
एकतालो विनिर्दिष्टो भिन्नपञ्चमदुःखयोः।।

घट्टन्तर्याख्यरागे च तर्के चान्तरिसंज्ञके।
त्रिपुटाताल एव स्यात् सविलम्बितमात्रकः।।
मध्यममात्रां त्रिपुटां वेळाधूळ्यां वदन्ति ताळज्ञाः।
अपरैः पुनर्हि नाट्ये ध्रुव इति कैश्चित् समाख्यातः।।

श्रीकामरे च पौराल्यां त्रिपुटातिद्रुता मता।
मुरळीन्दलरागे तु ध्रुवतालो विलम्बितः।।
एकतालेन कार्यं स्यादन्यत् सर्वं यथोचितम्।।

मुट्टन् आर्तन्, वीरत्तर्कन्, चेटीपञ्चमं, दाणं, कोरक्कुरुञ्जि इन स्वरों के श्लोक आदि पढ़कर उनके अभिनय के प्रसंगों में ध्रुवताल में मिश्राव बजाना है। श्रीकण्ठी,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तोण्ट, पुरनीर, कैशिकी, इन्दलम्, भिन्नपञ्चम, दुःखगान्धारम् आदि स्वरों (राग) के अभिनयों में एकताल में बजाना है। घट्टन्तरि, अन्तरि, तर्कन् इनके आट्टम् के समय में त्रिपुटाताल में बजाना है। वेळाधूलि राग में जब अभिनय चलता है, तब मध्यम मात्रा के त्रिपुटाताल में बजाना है। मुरळिन्दल राग के मूल वाक्यों आदि के अभिनय में विलम्बित मात्रा का ध्रुवताल अपनाना है। श्रीकामर और पौराळी में अतिद्रुत त्रिपुटा ताल होना चाहिये। जहाँ ताल का विशेष विधान नही है वहाँ ध्रुवताल या एकताल का प्रयोग किया जाना चाहिए। बाजा बजाने वाले नंबियार के विवेक के अनुसार एकताल का उपयोग कहीं भी निषिद्ध नहीं।

इन तालों के अलावा पञ्चारि, मल्लताळं आदि कई तालों का प्रयोग भी प्रसंगानुकूल किया जाता है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्वर-प्रकरण

कूटियाट्टम् में वाचिकाभिनय के लिए पात्र, रस, काल आदि भेद के अनुसार कई प्रकार के स्वरों का उपयोग किया जाता है। इनके लिए 'राग' शब्द का भी प्रयोग किया जाता है। इन स्वरों के नाम, उपयोग, उदाहरण आदि को इस प्रकरण में प्रस्तुत किया जा रहा है—

स्वरों की संज्ञाएं

मुड्डुन् श्रीकण्ठितोण्टार्तन् इनीळं मुरळीन्दळम्।
वेळाधूळी पुनर्दाणम् वीरतर्कन् च तर्कनुम्।।

कोरक्कुरुञ्ञि पौराळी पोरनीरुं तथैव च।
दुःखगान्धारवुं चेटीपञ्चमं भिन्नपञ्चम्।।

श्रीकामरं कैशिकी युं घट्टन्तरि युमन्तरी।
स्वरनामङ्ङळीवण्णं पत्तुं पत्तमतायिट्टुम्।।

प्रयोग

आगे स्वरों के प्रयोग का सोदाहरण विवरण दिया जाएगा।

आर्तन्— शृङ्गारे रतिभावे च प्रायेणार्तो निगद्यते।

नायिका पर अनुरक्त धीरोदात्त आदि नायकों के शृङ्गार और रति-भाव में पढ़े जाने वाले श्लोक और वाक्यों को पढ़ने में 'आर्तन्' राग का प्रयोग करना है। कहीं-कहीं 'इन्दल' राग का भी प्रयोग होता है।

आर्तराग के लिए उदाहरणार्थ कुछ श्लोक—

१. **चलकुवलयधाम्नो रञ्जनस्निग्धमक्ष्णो—**
र्भयचलधृतियुग्मं केयमालोलयन्ती।।
मुखपरिमललोभाद् भृङ्गदत्तानुयात्रा
शिथिलयति सुभद्रामुद्रितं मानसं मे।।

(सुभद्रा धनञ्जय नाटक, पहला अंक)

२. **अनया जघनाभोगभरमन्थरयानया।**
अन्यतोऽपि व्रजन्त्या मे हृदये निहितं पदम्।।

(नागानन्द, पहला अंक)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इन्दलं के लिए उदाहरण—

न खलु न खलु मुग्धे, साहसं कार्यमेतद्-
व्यपनय करमेतं पल्लवाभं लतायाः।
कुसुममपि विचेतुं यो न मन्ये समर्थः
कलयति स कथं ते पाशमुद्बन्धनाय।।

(नागानन्द, दूसरा अंक)

मुरलीन्दलम्—

"श्रीरामस्य तु संभोगश्रृङ्गारे मुरलिन्दळः"। ऐसा नियम है कि श्रीराम के सीता से सम्मिलन-परक श्रृङ्गार में मुरलीन्दल राग का ही प्रयोग करना चाहिए।

उदाहरण—

शैलायामिभिरम्बुवाहनिवहच्छायैस्त्रियामाचरैः
सेव्या पञ्चवटीति मे मतिरभूदुद्वेलकौतूहला।
सेयं देवि, चिरोचितामुपनयत्युद्यानयोग्यां श्रियं
श्रोतुर्विस्मयनीयवस्तुविषयाश्शैलाटवीसागराः।।

(आश्चर्य-चूडामणि, दूसरा अंक, १)

विरहसन्देश—

आयातं मामपरिचितया वेलया मन्दिरं ते
चोरो दण्ड्यस्त्वमिति मधुरं व्याहरन्त्या भवत्या।
मन्दे दीपे मधुलवमुचां मालया मल्लिकानां
बद्धं चेतो दृढतरमिदं बाहुबन्धच्छलेन।।

(चूडामणि, अंक छः, १८)

राक्षसों की विप्रलंभ-मूर्छा में भी मुरळीन्दळं का प्रयोग किया जा सकता है, ऐसा भी मत है।

मुड्डुन्— राक्षसानां तु श्रृङ्गारे रसे मुड्डो निगद्यते।

राक्षसों के श्रृङ्गार-रस में 'मुड्डुन' राग का प्रयोग किया जाता है।

उदाहरण—

पिबन् मधु, मुखं चुम्बन्नालिङ्गन् गाढमालपन्।
मन्दोदर्या चिरं रेमे रावणः काममोहितः।।

(राक्षसोत्पत्ति)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मरकततटे मन्दाकिन्या मदङ्कनिषादिनी
कनकनलिनोद्गन्धीन् स्वर्गानिलान् प्रतिगृह्णती।
भयपरवशे दत्तापाङ्गा महेन्द्रपरिग्रहे;
मनुजमवधूयैषा कामं मया सह रंस्यते।।

(चूडामणि, तीसरा अंक, २६)

श्रीकामरम्— श्रीकामराख्यस्तेषां तु विप्रलम्भस्य मूर्छने।

श्रीकामर राग राक्षसों के विप्रलंभ श्रृङ्गार की मूर्छा में प्रयोग किया जाता है।

उदाहरण—

गन्धर्व-दैत्य-गगनेचर-नाग-यक्ष-कन्यासनाथमवरोधनमस्मदीयम्।
सर्वस्वमेव तव सुन्दरि, दासकृत्यमालम्बते यदि तवास्ति मयि प्रसादः।।
(अये, देवि! मयसुता मन्दोदरी) *(चूडामणि, पाँचवाँ अंक, २९)*

पौराळी— 'श्रीरामस्य तु पौराळी विप्रलम्भस्य मूर्छने। श्रीराम की विप्रलम्भ-मूर्छा में पौराली राग का प्रयोग होना है।

उदाहरण—

आपाद्य भङ्गि शयनं तरुणैः प्रवालै—
रालूय पुष्पमलकाभरणास्थया ते।
वैदेहि चण्डि, मम जीवित-मानिनि त्व-
मेहीति सान्त्वयति कामपि पुष्पवल्लीम्।।

(चूडामणि, छठा अंक, १३)

भिन्न-पञ्चमम्— सिर्फ संभोग श्रृङ्गार के बीच में आनेवाले विस्मय के लिए तथा केवल श्रीराम के लिए प्रयुक्त होनेवाला राग भिन्नपञ्चम है।

उदाहरण—

चरणनलिनसाध्यं यानमाहार्यमम्भः
शयनमवनिपृष्ठं, मण्डनं स्नानमात्रम्।
तव तरुणि, तथापि त्वं श्रिया चक्षुषी मे
हरसि पुरमयोध्यामावसन्तीव चित्रम्।।

(चूडामणि, दूसरा अंक, ४)

अब तक श्रृङ्गार रस के उपयोगी रसों का प्रस्ताव किया गया। आगे दूसरे रसों के उपयुक्त रागों का वर्णन किया जाता है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कैशिकी— रसयोः कैशिकां प्राहुर्हास्यबीभत्सयोरपि।

हास्य बीभत्स में से किसी एक का प्रसंग आने पर कैशिकी (कैशिका) राग में उसका पाठ करना है।

हास्य का उदाहरण—

डिण्डी दण्डं दधानो भसितसिततनुः भस्मक्लृप्तत्रिपुण्ड्री
भास्वत्कौपीनवासाः प्रविशति गणयन् दक्षिणां माषकाणाम्।
मन्त्रार्थं वह्निशालां प्रतिकृतसमयः सत्सखीभ्यामुभाभ्यां
नो पश्यामीति जल्पन् जड इव मतिमान् मोदकं देवपीठे।।

(वसन्तक का आळामम्)

बीभत्स का उदाहरण—

नीलोत्पलाकृतिमपास्य रथांगरूपमापद्यते नयनयुग्ममिदं तनुश्च।
आलूननासिकतया विवृतान्तमूलैर्दन्तैस्सरिद्भिमथितेव सितैर्मृणाळैः।

(चूडामणि, ३९)

उच्छ्रितैकभुजयष्टिमागतां श्रोणिलम्बिपुरुषान्त्रमेखलाम्।
तां विलोक्य वनितावधे घृणां पत्रिणा सह मुमोच राघवः।।

(रामायणम् चम्पूप्रबन्धः)

करयोर्नूपुरे केयं पदोः केयूरकंकणे।
अञ्जनं गण्डयोर्धृत्वा कबर्यां वेष्टितांशुका।।

दुःखगान्धारम्— दुःखगान्धाररागस्तु शोके च करुणे मतः।

करुण रस और उसके स्थायि-भाव शोक में पढ़े जाने वाले श्लोक या वाक्य सबके लिए निश्चित राग है दुःखगान्धार।

उदाहरण—

एताः पुनर्हर्म्यगताः स्त्रियो मां वातायनार्धेन विनिस्सृतास्याः।
हा चारुदत्तेत्यभिभाषमाणा बाष्पं प्रणालीभिरिवोत्सृजन्ति।।

(चारुदत्तम्)

विस्रम्भादुरसि निपत्य लब्धनिद्रा-
मुन्मुंच्य प्रियगृहिणीं गृहस्य शोभाम्।
आतङ्कस्फुरितकठोरगर्भगुर्वीं
क्रव्याद्भ्यो बलिमिव निर्घृणः क्षिपामि।।

(उत्तररामचरितम् प्रथम अङ्क)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तर्कन्— क्रोधे रौद्ररसे चापि तर्कराग उदाहृतः।

रौद्ररस में तथा उसके स्थायी भाव क्रोध को प्रकट करने के प्रसंगों में पढे जानेवाले श्लोक आदि तर्कराग में पढे जाते हैं।

रौद्र का उदाहरण—

वर्णेभ्यो हृतमुपजीव्य षाष्ठमंशं
षाड्गुण्यं भुवि नयतां धरापतीनाम्।
सामान्या तव जननी समुद्रनेमी
चारित्रं तव किमिदं पतिव्रतानाम्।

(चूडामणि, ४/?)

कथं कथं भो नववाक्यवादिन् श्रृणोमि शीघ्रं वद केन चाद्य?
मुमूर्षुणा मुक्तभयेन धृष्टं वनाभिमर्दात् परिधर्षितोऽहम्।।

(अभिषेकनाटकम्)

क्रोध के लिए—

आक्रन्दन्तीमनाथामिव मम मिषतः कन्यकां कृष्यमाणां
मुक्त्वैनां याहि नो चेदुदयगिरिशिरोवर्ष्मणः कृष्णधाम्नः।
आग्नेयास्त्रास्यनिर्यद्बर्हिशिखिशिखाश्रोणिनिर्दग्धमूर्तेः
सोऽहं सद्यो विदध्यां तव सितभसितापाण्डुरां भूतधात्रीम्।।

(सुभद्राधनञ्जय, १ अंक)

वीरतर्कन्— वीरनाम्नि रसे रागो वीरतर्को बुधैः स्मृतः।

वीर रस में सबके लिए वीरतर्क राग का प्रयोग होता है। धीरोदात्त नायकों के 'उत्साह' में भी वीरतर्क राग है।

उदाहरण—

१. व्याजृम्भते जलधरोदरचुम्बिबाहुरावर्तते क्षणनतोन्नतभूमिचक्रा।
व्यादाय वक्त्रमभिधावति भीममस्मानुद्घाटितार्गलकवाटपुटा पुरीव।।
२. सन्ध्यारुणासलिलवाहपरम्परेव शैलस्य धातुरसधूसरितेव भित्तिः।
बालातपप्रणयिनीव तमालवीथिः संदृश्यते सरसलोहितताम्रमूर्तिः।।

(चूड़ामणि, २/६,१५)

धीरोद्धत स्वभाव के लिए—

अहिपवनपिधानान्यायुधीकृत्य शैलान्यमरजयिनि सैन्ये रक्षसामात्तकक्ष्ये।
कथमिव रणभूमौ वर्तते वानराणामुपवनतरुवल्लीपल्लवोन्माथियूथम्।।

(चूडामणि, ५/९)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दाणम्— क्रम प्राप्त 'भयानक', तथा 'हास्य' के साथ 'बीभत्स' का प्रस्ताव हो चुकने के कारण उसे छोड़कर 'अद्‌भुत' को साथ लिया जाता है।

'दाणरागोऽद्‌भुतरसे, भयानकरसे क्वचित्'।

अद्‌भुत रस, विस्मय-स्थायीभाव और कहीं भयानक रस में भी दाण नामक स्वर का प्रयोग किया जाता है।

अद्‌भुत का उदाहरण—

वासोऽर्थं दययैव नातिपृथवः कृत्तास्तरूणां त्वचो
भग्नालक्ष्यजरत्कमण्डलुनभःस्वच्छं पयो नैर्झरम्।
दृश्यन्ते त्रुटितोज्झिताश्च बटुभिर्मौञ्ज्यः क्वचिन्मेखला
नित्याकर्णनया शुकेन च पदं साम्नामिदं पठ्यते।।

(नागानन्द, २ अंक)

भयानक रस के लिए—

अन्तर्गुहोद्‌गतमहाजगरस्य दंष्ट्राव्याकृष्टपादमुरुगर्जितमेष सिंहः।
दंष्ट्राग्रकृष्टपृथुकुंभतटास्थिवल्गद्ग्रीवानिखातनखमाक्षिपति द्विपेन्द्रम्।।

(कल्याण-सौगन्धिक-व्यायोगः)

कहीं-कहीं भयानक रस के लिए वेळाधूळि राग का भी उपयोग किया जाता है। उदाहरण के लिए नीचे के श्लोक वेळाधूळि में पढ़े जाते हैं—

कोलाहलश्रवणजृम्भितसंभ्रमस्य
सिद्धाश्रमस्य सविधे सहसा व्यलोकि।
उत्तालकालजलदप्रतिमल्लकान्ति
रक्ताम्बुवर्षि बहुराक्षसचक्रवालम्।।
एहि पश्य शरीराणि मुनीनां भावितात्मनाम्।
हतानां राक्षसैर्घोरैर्बहूनां बहुभिर्वने।।

(रामायणम् प्रबन्धम्)

तोण्ट्— तोण्टाख्यरागश्शान्ते च भक्तिभावे च कथ्यते।

शान्त रस, भक्ति भाव, शान्त स्थायी रूप शम आदि प्रकट करने के लिये श्लोक व वाक्य आदि 'तोण्ट्' राग में पढे जायेंगे।

शान्त का उदाहरण—

अज्ञाननिद्राशायितो भवता प्रतिबोधितः।
सर्वप्राणिवधादेष विरतोऽद्यप्रभृत्यहम्।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भक्ति का उदाहरण—

भस्मालङ्कारगौरः शशिकुसुमजटाशूलकौपीनधारी
नृत्तारम्भप्रसक्तो मुखरडमरुकः देवसोमासहायः।
पीत्वा पीत्वा कपालात् सहयुवति सुरामट्टहासं वितन्वन्
आधावत्येष मत्तः स्खलितपदयुगः सत्यसोमः कपाली।।

(मत्तविलास में कपाली का आळापश्लोक)

इन्दळम्—

वीराणां नायकादीनामुत्तमानां स्वभावतः।
गीतसिद्धान्ततत्त्वज्ञैः इन्दलो राग इष्यते।।

उत्तम वीर नायकों का स्वाभाविक स्वर है 'इन्दलम्'। उत्तमनायक यानी धीरोदात्तनायक। स्वाभाविक का मतलब यही है कि शृंगार आदि रसों, दूसरे भावों के आविष्करण से, जब विकारभेद या भावभेद नहीं होता याने व्यत्यस्त भावों का संचार नहीं होता तब।

उदाहरण— श्रीराम—

अयं देशस्समः श्रीमान् पुष्पितैस्तरुभिर्वृतः।
इहाश्रमपदं सौम्य यथावत् कर्तुमर्हसि।।

(चूडामणि, १/) (निर्वहण)

जीमूतवाहन—

न्याये वर्त्मनि योजिताः प्रकृतयः सन्तस्सुखं स्थापिता
नीतो बन्धुजनस्तथात्मसमतां राज्येऽपि रक्षा कृता।
दत्तो दत्तमनोरथाधिकफलः कल्पद्रुमोऽप्यर्थिने
किं कर्तव्यमतः परं कथय वा यत्ते स्थितं चेतसि।।

(नागानन्द, १ अङ्क)

अर्जुन—

अम्बास्तन्यमहाभिषेकमुपरि प्रेमाश्रुपातं गुरो—
रार्यस्यापि वृकोदरस्य चरणाश्लेषं यमाश्लेषणम्।
कृष्णायाश्च कटाक्षवीक्षणसुखं नासादयं प्रापितः
पुष्पेषोर्विशिखैर्मुकुन्दसहजासन्मार्गपुष्पस्पृहाम्।।

(सुभद्राधनञ्जय, १ अङ्क)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विद्याधर—

द्रुतमञ्जननीलमावयोः खं शिखरादुत्पततोः शिलोच्चयस्य।
अनुपूर्विकया विकारजातं ग्रसमानेव वसुन्धरा विभाति।।

कोरक्कुरुञ्जि—

कोरक्कुरुञ्जि रागः स्यात् कपीनां तु स्वभावतः। वानरों (बन्दरों) के स्वाभाविक स्थायियों में कोरक्कुरुञ्जि राग का प्रयोग होता है। मतलब यह है कि जहाँ रस, भावों में विशेष अन्तर न हो वहाँ, कोरक्कुरुञ्जि राग का पाठ करना है।

हनुमान्—

मैनाकं नागकन्यासुरतसुहृदमुल्लंघ्य बन्धुं पयोधेः
आकर्षन् वेगवश्यं दिव इव शिथिलं चर्म जीमूतजालम्।
लङ्कां प्राप्तोऽस्मि देवं गुरुमपि मम विस्मापयन्नाशुगत्या
राज्ञो रामस्य देव्यै प्रहित इव शरो धारयन्नङ्गुलीयम्।।

(चूडामणि, ६/१)

हनुमान्— अद्भुत रस के लिए—

एषां पल्लवमंशुकानि कुसुमं, मुक्ताफलं विद्रुमं
वैडूर्यं दलमङ्कुरो मरकतं हैमं च शाखाशतम्।
एते के जगतीरुहो वनजुषाप्यज्ञातपूर्वा मया
प्रायः सारममी दिवो विटपिनः किन्तैर्ममान्यो भरः।।

(चूडामणि, ६/४)

क्रोध के लिए—

अभिहतवरवप्रगोपुराट्टां रघुवरकार्मुकनादनिर्जितस्त्वम्।
हरिगणपरिपीडितैस्समन्तात् प्रमदवनैरभिसंवृतां स्वलङ्काम्।

(अभिषेकनाटक, ३, अंक)

पुरनीरु—

पुरनीराख्यरागस्तु वर्षाकालस्य वर्णने।
प्रभातवर्णनायां च गीतज्ञैरुपगीयते।।

प्रभात, सूर्योदय, बरसात आदि के वर्णन में 'पुरनीर' राग का प्रयोग होना चाहिए।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वर्षावर्णन उदाहरण—

केकया च शिखिनां मृदुधूतकेतकीसुमनसा मरुता च।
नीरवाहमलिनासु निशासु प्राणसंशयमगात् स मुहूर्तम्।।

(चूडामणि, ६/११)

प्रभातवर्णन के लिए—

क्षीरोदवारिधवले शयने प्रसुप्तं
प्राबोधयन्नुषसि बन्दिगणा नरेन्द्रम्।
पर्जन्यवारिविरतौ ललितैर्वचोभि-
राद्यं पुमांसमिव तुम्बुरुनारदाद्याः।।

(प्रतिज्ञायौगन्धरायण के मन्त्रांक-निर्वहण में)

सूर्योदय के लिए—

आराद्दृष्टं चलदलपुटैर्दीर्घिकापद्मिनीनाम्
अर्धोन्मीलन्मुकुलनयनैः प्रस्फुरद् भृङ्गनादैः।
तुच्छीकुर्वत्तुहिनकणिकाजालकं मे पुरस्ता-
दाविर्भूतं किरणनिकरैरम्बरादर्कबिम्बम्।।

(तपतीसंवरणम्, अंक १)

श्रीकण्ठी—

अङ्कावसाने श्रीकण्ठी दुष्टानामपि हिंसने।
सन्ध्यावर्णनवेलायां मध्याह्नस्य तु वर्णने।
भक्तिभावे च विद्वद्भिः कथ्यते गीतिपारगैः।।

नाटकों के प्रत्येक अङ्क का अन्तिम श्लोक और वाक्य श्रीकण्ठी में पढ़ा जाना चाहिए। दुष्टों की हत्या, सन्ध्या का वर्णन, मध्याह्नवर्णन, भक्तिभाव के कुछ प्रसंग आदि में इस राग का प्रयोग होता है।

उदाहरण— अङ्कावसान—

अपरगिरिनिषण्णं वासरं वासरश्रीरभिमतमभिसर्तुं प्राणनाथं प्रदोषे।
स्वतनुमतनुरागात् संवृणोतीव साक्षादसितजलदनीलेनान्धकारांशुकेन।।

(सुभद्राधनञ्जय अंक १)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सन्ध्यावर्णन—

रथचरणायुधस्य चरणेन हतो रभसान्नभस
इव च्युतो नमुचिरस्रकणैः क्षरितैः।
प्रतिनवबन्धुजीवकुसुमञ्च छविभिः सविता
शशिमुखि दिङ्मुखानि किरणैररुणीकुरुते।।

मध्याह्नवर्णनम्—

तापात्तत्क्षणघृष्टचन्दनरसापाण्डू कपोलौ वहन्
संसक्तैर्निजकर्णतालपवनैः संवीज्यमाननः।
संप्रत्येष विशेषसिक्तहृदयो हस्तोज्झितैश्शीकरैः
गाढायल्लकदुस्सहामिव दशां धत्ते गजानां पतिः।।

(नागानन्द, १अंक)

दुष्टनिग्रहवार्ता—

ताटकायां हतायां तु विबुधा हृष्टमानसाः।
मुमुचुः पुष्पवर्षाणि तेषां मूर्धसु सत्वराः।।
विससृजुरथ वृष्टिं कौसुमीमम्बुवाहाः
ननृतुरमरवध्वो दध्मतुः खे मृदंगाः।
जगुरनिमिषसूता दिक्पुरन्ध्र्यः प्रसेदुस्-
तुतुषुरखिललोका मंगलेनेव पूर्णाः।।

(रामायणप्रबन्धम्)

भक्तिभाव—

भालोद्यद्घनघर्मबिन्दुमटनिन्यस्ताग्रहस्ताम्बुजं
मध्ये मुष्टिनिविष्टपञ्चषशरं बिभ्राणमन्यं करम्।
वीरश्रीनखरक्षतैरिव नवैर्बाणव्रणैरङ्कितम्
रामं देवमवस्थितं प्रणमत प्रोन्मथ्य लङ्केश्वरम्।।

(रामायणप्रबन्धम्)

दुष्टनिग्रहण—

आरोक्ष्यामि तवाङ्गमात्ममहसा रे कृष्ण कृष्णेत्यलम्
क्षिप्तेषोर्द्विषतस्सुदर्शनमसौ दुर्द्दर्शनं प्रोद्वहन्।
उच्चैर्धर्मपथो जयत्विति वदन् मार्त्ताण्डचण्डत्विषा
तेनाकुण्ठजवं चखण्ड कुमतेः कण्ठं विकुण्ठेश्वरः।।

(राजसूय-प्रबन्धम्)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वेळाधूळि—

वेळाधूळिर्भयाद्धेतोर्दूरस्थस्य वचोविधौ।
हास्ये क्वचिदवज्ञायां त्वरायां चापि कथ्यते।।

डर कर कहना, दूर से चिल्लाकर कहना, घृणा की दृष्टि से कहना, हँसी उड़ाकर कहना आदि प्रसङ्ग में वेळाधूळि राग का प्रयोग किया जाता है।

उदाहरण— चिल्लाकर कहने का

आदत्तामग्निरद्यप्रभृति हुतमसन्दूषितं यातुधानै-
राप्लुत्याकाशगङ्गापयसि मुनिवृषास्सप्त सन्ध्यां जपन्तु।
भानोर्वाहा भजेरन्नचकितमृजुना वर्त्मना मन्दराद्रिं
साध्व्यश्चारित्रभङ्गाज्जहतु भयमपास्तार्गला द्यौरपि स्यात्।।

(चूडामणि, ७/४)

दूर से कहने को—

मां वृका भक्षयिष्यन्ति शार्दूला द्वीपिनोऽपि वा।
मां हरोत्सृज्य काकुत्स्थौ नमस्ते राक्षसेश्वर।।

(रामायणप्रबन्धम्)

डरकर कहने को—

कोपं प्रभो संहर! संहरेति यावद्गिरः खे मरुतां चरन्ति।
तावत् स वह्निर्भवनेत्रजन्मा भस्मावशेषं मदनं चकार।।

(मत्तविलास)

जल्दी से कहने को—

अस्ति द्वारवती नाम पारे पश्चिमसागरम्।
पुरुहूतपुरीभूतिपरिभूतिकरी पुरी।।

(सुभद्राधनञ्जय-निर्वहणम्)

तिरस्कार के साथ कहने को—

अलमिष्ट्वा मखान् मूर्खाः खड्गधारेयमस्ति नः।
अदवीयानयं पन्थाः स्वर्ल्लोकमुपतिष्ठते।।

(रामायणप्रबन्धम्)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हँसी के लिए—

रे रे रावण, राक्षसाधम पशो मग्नोऽसि मोहार्णवे
शत्रुं ते समुपागतं जडमते! नो बुध्यसे केवलम्।
रामश्चैष करावलम्बितधनुः तीक्ष्णोज्ज्वलत्सायकः
साक्षात्काल इवापरः तव पुरद्वारि स्थितः सानुजः।।

(रामायणप्रबन्धम्)

'चेटीपञ्चमम्'—

द्वितीयादिषु पात्रेषु नीचपात्रेषु बालके।
स्वाभाविको भवेद्रागश्चेटीपञ्चमनामकः।।

दूसरे स्थान के कथापात्र आदि का, निम्नतर पात्रों का तथा बालकों का स्वाभाविक स्वर चेटीपञ्चम है।

उदाहरण— दूसरे पात्र के लिए—

उन्मर्यादमुपेक्ष्य रावणमहं रामाद्विनश्यामि नु
व्याहृत्याप्रियमाप्नुयान्नु विपदं चण्डादुत स्वामिनः।
पक्षौ द्वावपि मे न पत्थ्यमनयोः श्रेयानयं रावणा-
न्नाशो, मे पतनावसानमचिरान्नेक्षे यतः स्वामिनः।।

(चूडामणि ५/७)

नीच पात्र के लिए—

यस्यां न प्रियमण्डनापि महिषी देवस्य मण्डोदरी
स्नेहाल्लुम्पति पल्लवान्न च पुनर्वीजन्ति यस्यां भयात्।
वीजन्तो मलयानिला रविकरैरस्पृष्टबालद्रुमा
सेयं शक्ररिपोरशोकवनिका भग्नेति विज्ञाप्यताम्।।

(अभिषेकनाटक, ३ अंक)

बाल कथापात्र के लिए—

वृद्धास्तेन विचारणीयचरितास्तिष्ठन्ति हुं वर्तते
सुन्दस्त्रीदमनेऽ प्यकुण्ठयशसो लोके महान्तो हि ते।
यानि त्रीण्यकुतोमुखान्यपि पदान्यासन् खरायोधने
यद्वा कौशलमिन्द्रसूनुनिधने तत्राप्यभिज्ञो जनः।।

(उत्तररामचरितम्)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

यथेन्दावानन्दं व्रजति समुपेते कुमुदिनी
तथैवास्मिन् दृष्टिर्मम कलहकामः पुनरयम्।
झणत्कारक्रूरक्वणितगुणगुण्यद्गुरु धनुर्-
धृतप्रेमा बाहुर्विकचविकरालव्रणमुखः।।

(उत्तररामचरितम्,)

भिन्नपञ्चमम्

भिन्नपञ्चमरागस्स्यात् श्रीरामस्याद्भुते क्वचित्।

राक्षसों के विप्रलम्भ श्रृङ्गार, विप्रलम्भ मूर्छा, श्रीराम के श्रृङ्गार तथा अद्भुत में भिन्नपञ्चम राग का प्रयोग किया जाता है।

राक्षसों की विप्रलम्भ मूर्छा का उदाहरण—

नयति नयने सावज्ञं मां करोति करावृतां
श्रुतिमसहना श्रोत्रानन्दं वचो मयि जल्पति।
विलपति पुरो रामं बद्धाञ्जलौ मयि तिष्ठति
प्रतिदिनमहं जाने नास्याः प्रसादनसाधनम्।।

(चूडामणि ५/२६)

घट्टन्तरि—

दुष्टनिग्रहवार्तायां घट्टन्तरिरुदाहृता।
आशीर्वादविधावेषा मङ्गलप्रार्थनाविधौ।।

दुष्ट-निग्रह का प्रतिपादंन करने वाली भक्ति में, आशीर्वाद करनेवाले भरतवाक्य में, कुछ अभीष्ट देवताओं की प्रार्थना में, नान्दी, मङ्गलाचरण आदि प्रसङ्गों में घट्टन्तरि राग प्रयुक्त होता है।

दुष्ट-निग्रह-प्रतिपादिका भक्ति— (उदाहरण)—

भालोद्यद्घनघर्मबिन्दुमटनिन्यस्ताग्रहस्ताम्बुजं
मध्ये मुष्टिनिविष्टपञ्चषशरं बिभ्राणमन्यं करम्।
वीरश्रीनखरक्षतैरिव नवैर्बाणव्रणैरङ्कितं
रामं देवमवस्थितं प्रणमत प्रोन्मथ्य लङ्केश्वरम्।।

(रामायणप्रबन्धम्)

भरतवाक्यम्—

इमां सागरपर्यन्तां हिमवद्विन्ध्यकुण्डलाम्।
महीमेकातपत्राङ्कां राजसिंहः प्रशास्तु नः।।

(भास)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इष्टदेवता-प्रार्थना—

का त्वं सुन्दरि, जाह्नवी, किमिह ते, भर्ता हरो नन्वसौ,
अम्भस्त्वं किमु वेत्सि मान्मथरसं, जानात्ययं ते पतिः।
स्वामिन् सत्यमिदं, नहि प्रियतमे सत्यं कुतः कामिनाम्
इत्येवं हर-जाह्नवी-गिरिसुतासञ्जल्पितं पातु वः।।

नान्दीमङ्गलम्—

कृत्वा प्रदक्षिणमशेषवसुन्धरायाः
तीर्थावगाहपरिशुद्धमतिः प्रभासे।
श्रुत्वा मुकुन्दसहजामुदिताभिलाषः
पायात् स वः पृथुलकीर्तिभुजः किरीटी।।

(सु. धनञ्जय १-अंक, अरंगुतेलियिक्कल श्लोक)

अन्तरि—

कविवाक्ये कथाक्षेपे क्वचिदन्तरिरुच्यते।

कवियों के वाक्यों में तथा कथा-कथन-मात्र प्रसङ्गो में 'अन्तरि' नामक राग का प्रयोग किया जाना चाहिए।

उदाहरण— कविवाक्य—

तस्मिन् विप्रकृताः काले तारकेण दिवौकसः।
तुरासाहं पुरोधाय धाम स्वायंभुवं ययुः।।

(मत्तविलास-निर्वहण, कुमारसम्भव से)

कथाकथन—

तं देशमारोपितपुष्पचापे मधुद्वितीये मदने प्रपन्ने।
काष्ठागतस्नेहरसानुविद्धं द्वन्द्वानि भावं क्रियया विवव्रुः।।

(मत्तविलास निर्वहण, कुमारसम्भव से)

इस प्रकार कूटियाट्टम में प्रयुक्त होनेवाले विभिन्न रागों (स्वरों) का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया गया।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रस-प्रकरण

नाट्यम्

धीरोदात्त आदि नायकों की दशाओं के, रसानुकूल, सात्त्विक, आङ्गिक, वाचिक तथा आहार्य इन चार प्रकार के अभिनयों से, अनुकरण करने को 'नाट्य' कहते हैं। भावाश्रय-नाट्य नृत्य है, तोताललयाश्रित नृत्त है।

'नट अवस्पन्दने' इस धातु के साथ 'ण्य' प्रत्यय लगाने से निष्पन्न 'नाट्यम्' शब्द सात्त्विकाभिनय की बहुलता को सूचित करता है। 'नाट्य' शब्दार्थ की व्युत्पत्ति (अवबोध) का आनुषङ्गिक (प्रासङ्गिक) 'अभिनय' शब्द नीञ् धातु से उत्पन्न है। 'अभि' उपसर्ग का अर्थ है 'सामने' 'नीञ्' धातु का अर्थ है 'लाना' (नायिक्कुक)। इन दोनों शब्दों का अर्थ जोड़ने पर अभिनय शब्द निकलता है। अभिव्यञ्जन करना यही अभिनय शब्द का अर्थ हो जाता है। अभिनय सात्त्विक, आङ्गिक, वाचिक, आहार्य इस क्रम से चार प्रकार के होते हैं। 'संगीतचूडामणि' के रचयिता ने इन बातों का यों प्रतिपादन किया है—

अभिव्यञ्जन् विभावानुभावादीन् नाटकाश्रयान्।
उत्पादयन् सहृदये रसज्ञानं निरन्तरम्।।
अनुकर्तृस्थितो योऽर्थोऽभिनयः सोऽभिधीयते।
आङ्गिको वाचिकश्चैव सात्त्विकाहार्यकाविति।
स चतुर्धा कृतस्तज्ज्ञैराङ्गिकोऽङ्गक्रियोच्यते।।
रागानुषङ्गि यद्वाक्यं नाट्ये तद्वाचिकं स्मृतम्।
सत्त्वक्रिया सात्त्विकं स्यादाहार्यो भूषणादिकम्।।

श्रीराम आदि कथापात्रों के सुख-दुःख आदि के अनुभव से मन का जो अत्यन्त अनुकूल भाव होता है, उसके कारण तन्मयता (तादात्म्य)-प्राप्त नट का अभिनय है सात्त्विकाभिनय। कर, चरण, आँखें, चिबुक, आदि अंगों व उपांगों से सम्पन्न अभिनय ही आंगिकाभिनय है। प्रसंगानुकूल स्वरों के अनुसार पढ़े जानेवाले नाटक-वाक्यों से प्रकट किया जाने वाला अभिनय है— वाचिकाभिनय। किरीट, कटक आदि आभूषणों से बनाए जाने वाले वेश-विधान-सौन्दर्य को आहार्याभिनय कहते हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रसोत्पत्ति

सभी नाट्य विषयों में 'रस' प्राणस्थानीय

सभी नाट्य-विषयों का प्राण है 'रस'। विभाव, अनुभाव, सात्त्विक भाव, व्यभिचारी भाव आदि कारण-सामग्रियों से प्रकट किया जाने वाला स्थायी भाव ही रस है। व्यञ्जनों (मसाले) की मिलावट से जिस प्रकार खाद्य पदार्थ स्वादिष्ट बनते हैं, उसी प्रकार विभावादि से स्थायिभाव भी सरस बनते हैं। रस के हेतुभूत विभाव दो प्रकार के हैं— आलम्बन विभाव, उद्दीपन विभाव। जिस वस्तु के अवलम्ब या आश्रय से रस उत्पन्न होता है, वह आलम्बन विभाव है। श्रीराम के सीता-विषयक शृङ्गार का अवलम्बन-विभाव सीता है। उद्दीपन विभाव चार प्रकार के हैं— आलम्बन का गुण, उसकी चेष्टाएँ, उसका आभूषण और तटस्थ। यौवन (युवावस्था) आदि आलम्बन के गुण हैं, लज्जा आदि उसकी चेष्टाएँ हैं, हार नूपुर आदि उसका अलङ्करण हैं और चन्द्र, मन्द पवन आदि तटस्थ कहे जाते हैं। इन विभावों अर्थात् कटाक्ष (कनखियों से देखना) आदि अनुभावों, रोमाञ्च (रोंगटे खड़े होना) आदि सात्त्विक भावों, निर्वेद आदि व्यभिचारी भावों से श्रृंङ्गार आदि रस सामाजिकाश्रित बन कर अभिव्यक्त होते हैं।

राम की भूमिका में नट सचमुच राम का तादात्म्य प्राप्त कर रङ्गमञ्च पर राम के हृदयगत भाव आदि का अभिनय जब करता है, तब प्रेक्षक सदस्यों में व्यञ्जना वृत्ति के अनुसार सच्चे रस का आस्वादन (स्फूर्ति) होता है। 'रस' का अवतरण इस प्रकार संक्षिप्त किया जाता है।—

रस तथा भाव

"शृङ्गार-हास्य-करुण-रौद्र-वीर-भयानकाः।
बीभत्साद्भुतशान्ताश्च रसाः पूर्वैरुदाहृताः।।
रतिर्हासश्च शोकश्च क्रोधोत्साहौ भयं तथा।
जुगुप्साविस्मयशमाः स्थायिभावा नव क्रमात्।।"

"नाना-व्यञ्जनौषधि-द्रव्य-संयोगाद् भोजने यथा रसनिष्पत्तिः तथा नाना-भावोपगमाद् रसनिष्पत्तिः।"

"यथा बहुद्रव्ययुतैः व्यञ्जनैर्बहुभिर्युतम्।
आस्वादयन्ति भुञ्जाना भक्तं भक्तविदो जनाः।।

—(ना.शा. ६/३२)

भावाभिनयसंबद्धान् स्थायिभावाँस्तथा बुधाः।
आस्वादयन्ति मनसा तस्मान्नाट्ये रसाः स्मृताः।।"

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

"नानाभिनय-सम्बद्धान् भावयन्ति रसानिमान्।
यस्मात्तस्मादमी भावा विज्ञेया नाट्ययोक्तृभिः।।"

"नानाद्रव्यैर्बहुविधैः व्यञ्जनं भाव्यते यथा।
एवं भावा भावयन्ति रसानभिनयैस्सह।।"
"न भावहीनोऽस्ति रसो न भावो रसवर्जितः।
परस्परकृता सिद्धिस्तयोरभिनये भवेत्।।"

(वही, ३३-३६)

"शृङ्गारो विष्णुदैवत्यो हास्यः प्रमथदैवतः।
रौद्रो रुद्राधिदैवत्यो करुणः यमदैवतः।।
बीभत्सस्य महाकालः कालदेवो भयानकः।
वीरो महेन्द्रदेवः स्याद् अद्भुतो ब्रह्मदैवतः।।"

(वही, ४४-४५)

शृङ्गारः— "उत्तमयुवप्रकृतिः स्त्रीपुरुषालीरतिप्रभवः शृङ्गारः"।

"ऋतुमाल्यालङ्कारैः प्रियजन-गान्धर्व-काव्यसेवाभिः।
उपवन-गमन-विहारैः शृङ्गाररसः समुद्भवति।।
नयन-वदन-प्रसादैः स्मितमधुरवचो-धृति-प्रमोदैश्च।
मधुरैश्चाङ्गविहारैः तस्याभिनयः प्रयोक्तव्यः।।"

(वही, ४७-४८)

शृङ्गार के दो भेद हैं— संभोग शृङ्गार तथा विप्रलम्भशृङ्गार; दोनों का स्वरूप नीचे दिया जाता है।

'संयुक्तयोस्तु सम्भोगो विप्रलम्भो वियुक्तयोः"। परस्पर आलोकन, आलाप, आलिङ्गन, चुम्बन आदि भेद से सम्भोग शृङ्गार कई प्रकार का है। फिर भी यहाँ एक ही प्रकार का शृङ्गार स्वीकृत किया गया है। विवाहित नायक और नायिका के शृङ्गार को ही सम्भोग शृङ्गार कहा जाएगा। वियुक्त (अलग, विरह में रहने वाले) नायिका-नायकों के शृङ्गार को विप्रलम्भ शृङ्गार कहते हैं। यह विप्रलम्भ अभिलाष, ईर्ष्या, विरह, प्रवास आदि दशाओं से चार प्रकार का है। परस्पर सुनकर या देखकर नायिका और नायक के बीच होने वाले अनुराग के कारण जो शृङ्गार होता है उसे अभिलाष-विप्रलम्भ शृङ्गार कहते हैं। अपना पति अन्य किसी स्त्री पर अनुरक्त है, इस शंका से मन में होने वाले विकार को प्रकट करने वाले शृङ्गार को ईर्ष्या-विप्रलम्भ कहते हैं। एक साथ रहने वाले नायक नायिका के दैवगति से परस्पर अलग हो जाने की नौबत आती है और फिर आपस में मिलने का अवसर जाए, तो उनके बिछुड़ने और फिर मिल जाने

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

के बीच के विरह में होने वाले शृङ्गार को विरह-विप्रलम्भ शृङ्गार कहते हैं तथा नायिका-नायक के बिछुड़ जाने और दोनों जब दूर देश में आपस में जाने बिना रहें तब उनका जो शृङ्गार होता है, उसे प्रवास-विप्रलम्भ शृङ्गार कहते हैं।

हास्यः— "विकृतवेषालङ्कार-धार्ष्ट्य-लौल्य-कुहकासत्प्रलापादिजन्यो हास-स्थायिभावात्मको हास्यः।।"

"विपरीतालङ्कारैर्विकृताचाराभिधानवेषैश्च।
विकृतैरर्थविशेषैर्हसतीति रसः स्मृतो हास्यः।।
विकृताचारैर्वाक्यैरङ्गविकारैश्च विकृतवेषैश्च।
हासयति जनं यस्मात्तस्माद् ज्ञेयो रसो हास्यः।।"

(ना.शा. ६/४९-५०)

करुणः— "शापादि-क्लेशेष्टजन-विप्रयोग-विभवनाश-वध-बन्धादिजन्य-शोक-स्थायिभावप्रभवः करुणरसः।"

"इष्टवधदर्शनाद्वा विप्रियवचनस्य संश्रवणाद्वापि।
एभिर्भाव-विशेषैः करुण-रसो नाम सम्भवति।।
सस्वनरुदितैर्मोहागमैश्च परिदेवितैर्विलपितैश्च।
अभिनेयः करुणरसो देहायासाभिघातैश्च।।"

(वही, ६२-६३)

रौद्रः— "क्रोधाधिक्षेपानृतवाक्पारुष्यातिद्रोहजन्यः रक्षोदानवाद्युद्धतप्रकृतिर्युद्धहेतुकः क्रोधस्थायिभावात्मको रसो रौद्रः।"

"युद्ध-प्रहार-घातन-विकृत-च्छेदन-विदारणैश्चैव।
संग्राम-संभ्रमाद्यैरेभिस्संजायते रौद्रः।।
नाना-प्रहरण-मोक्षैः शिरः-कबन्ध-भुजकर्तनैश्चैव।
एभिश्चार्थ-विशेषैरस्याभिनयः प्रयोक्तव्यः।।
इति रौद्ररसो दृष्टो रौद्रवागङ्गचेष्टितैः।
शस्त्र-प्रहार-भूयिष्ठः उग्र-कर्म-क्रियात्मकः।।"

(वही, ६४-६६)

वीरः—"नय-विनय-बल-पराक्रम-शक्ति-प्रताप-प्रभावादिजन्य उत्तम प्रकृतिरुत्साहस्थायि-भावात्मको वीर-रसः।।"

"उत्साहाध्यवसायादविषादित्वादविस्मयान्मोहात्।
विविधादर्थविशेषाद् वीररसो नाम सम्भवति।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्थिति-धैर्य-वीर्य-गर्वैरुत्साह-पराक्रम-प्रभावैश्च।
वाक्यैराक्षेपकृतैर्वीररसः सम्यगभिनेयः।।
(वही ६७-६८)

भयानकः—"विकृत-रव-सत्त्वदर्शन-शिवोलूक-त्रासोद्वेगशून्यागारारण्यगमन-स्वजनवध-बन्धनदर्शन-श्रवणादपि विभावजन्यो भयस्थायिभावात्मको भयानकरसः।"

"विकृतरवसत्त्वदर्शनसंग्रामारण्यशून्यगृहगमनात्।
गुरुनृपयोरपराधात् कृतकश्च भयानको ज्ञेयः।।
गात्र-मुख-दृष्टिभेदैरूरुस्तम्भादिवीक्षणोद्वेगैः।
सन्नमुख-शोष-हृदयस्पन्दन-रोमोद्गमैश्च भयम्।।
एतत्स्वभावजं स्यात्सत्त्वसमुत्थं तथैव कर्तव्यम्।
पुनरेभिरेव भावैः कृतकं मृदुचेष्टितैः कार्यम्।।
करचरणवेपथुस्तम्भगात्र-हृदय-प्रकम्पेन।
शुष्कोष्ठ-तालु-कण्ठैर्भयानको नित्यमभिनेयः।"
(ना.शा. ६/६९-७२)

बीभत्सः— "अहृद्याप्रियानिष्टश्रवणदर्शनकीर्तनादिजन्यो जुगुप्सास्थायिभावात्मको बीभत्सनामा रसः।"

"अनभिमतदर्शनेन गन्धरसस्पर्शशब्ददोषैश्च।
उद्वेजनैश्च बहुभिर्बीभत्सरसः समुद्भवति।।
मुखनेत्रविकूणनया नासाग्रप्रच्छादनावनमितास्यैः।
अव्यक्तपादपतनैर्बीभत्सः सम्यगभिनेयः।।"
(वही, ७३-७४)

अद्भुतः—"दिव्यजनदर्शनेप्सितमनोरथावाप्त्युपवनदेवकुलादिगमनसभामायेन्द्रजाल-सम्भावनादिजन्यो विस्मयस्थायिभावात्मकोऽद्भुतनामा रसः।"

"यत्त्वतिशयार्थयुक्तं वाक्यं शिल्पं च कर्मरूपं वा।
तत्सर्वमद्भुतरसे विभावरूपं हि विज्ञेयम्।।
स्पर्शग्रहोरुस्वनैर्हाहाकारैश्च साधुवादैश्च।
वेपथुगद्गदवचनैः स्वेदाद्यैरभिनयस्तस्य।।"
(वही, ७५-७६)

शान्तः—"तत्त्वज्ञानवैराग्याशयशुद्धिप्रभृतिभिर्यमनियमाध्यात्मध्यानधारणोपासन-सर्वभूतदयादिभिश्च प्रदीपितो मोक्षसाधकशमस्थायिभावात्मकश्शान्तो रसः।"

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

"मोक्षाध्यात्म-समुत्थस्तत्त्वज्ञानार्थहेतु-संयुक्तः।
निःश्रेयसोपदिष्टश्शान्तरसो नाम सम्भवति।।
बुद्धीन्द्रियकर्मेन्द्रिय-संरोधाध्यात्म-संस्थितोपेतः।
सर्वप्राणिसुखहितः शान्तरसो नाम विज्ञेयः।।
न यत्र दुःखं न सुखं न द्वेषो नापि मत्सरः।
समः सर्वेषु भूतेषु स शान्तः प्रथितो रसः।।
भावा विकारा रत्याद्याः शान्तस्तु प्रकृतिर्मतः।
विकारः प्रकृतेर्जातः पुनस्तत्रैव लीयते।।"

(वही, पाठभेद)

ऊपर का रस-निरूपण भरत-शास्त्र के अनुसार बताया गया है। विभाव, अनुभाव, सात्त्विक, व्यभिचारी आदि सामग्रियों से समुल्लासित स्थायी भाव ही रस है।

"विभावैरनुभावैश्च सात्त्विकैर्व्यभिचारिभिः।
आनीयमानस्वादुत्वं स्थायी भावो रसः स्मृतः।।"

विभाव

"यमालम्ब्य रसस्फूर्तिः स विभावः प्रचक्षते।
आलम्बनोद्दीपनतो द्विविध स उदाहृतः।।"

रसोत्पत्ति का कारण विभाव है। वह विभाव दो प्रकार का है— आलम्बन विभाव और उद्दीपन विभाव। इसमें आलम्बन विभाव रस का समवायि-कारण है। उद्दीपन, विभाव, निमित्तादि अन्य कारण होते हैं।

उद्दीपन विभाव चार प्रकार का है—

"आलम्बनं गुणश्चैव तच्चेष्टा तदलंकृतिः।
तटस्थश्चेति विज्ञेयाश्चतुर्धोद्दीपनक्रमाः।।"

आलम्बन के गुण, आलम्बन की चेष्टा, आलम्बन का शृङ्गार (आभूषणादि) और तटस्थ — ये चार प्रकार के हैं उद्दीपन विभाव। जिसके आश्रय में रस उत्पन्न होता है, वह आलम्बन है। श्रृंगार का आलम्बन स्त्री-पुरुष है। नल के दमयन्ती विषयक श्रृंगार में आलम्बन नल भी है। इस प्रकार सभी रसों के लिए आलम्बन का स्वरूप समझना चाहिए। आलम्बन के गुण, यौवन आदि शरीर-सौन्दर्य है, आलम्बन की चेष्टा लज्जा हाव आदि है, आलम्बन के अलङ्करण, हार, नूपुर आदि आभूषण हैं और तटस्थ मलयानिल, चन्द्र आदि है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अनुभाव

कार्यभूत और शरीरज कटाक्ष आदि अनुभावों का प्रस्ताव नीचे किया जाता है।

''भ्रूविक्षेपकटाक्षादिविकारो हृदयस्थितम्।
भावं व्यनक्ति यस्सोऽयमनुभावः प्रकीर्तितः।।

भ्रू को टेढ़ी करना, कनखियों से देखना, पैर की अँगुलियों से ज़मीन पर लकीर खींचना आदि व्यापार से हृदयगत भाव को व्यञ्जित करने की जो प्रवृत्ति है— वह अनुभाव कही जा सकती है। 'अनु' याने बाद को (पश्चात्) होता है (भवति) इति अनुभावः— इसका तात्पर्य है कि यह विभाव के बाद उत्पन्न होता है।

''सत्त्वेन भवाः सात्त्विकाः, परस्य सुखदुःखादेः अनुभावेन चेतसः।
अत्यन्तेनानुकूल्येन येन तद्भावाभावनम् तत्सत्त्वं तेन निर्वृत्ताः सात्त्विका इत्युदीरिताः।''

दूसरे किसी व्यक्ति के सुख-दुःख आदि देखने से मन में जो अनुकूल भाव पैदा होता है, वही 'तद्भाव-भावन' है, वही सत्त्व है। सत्त्व से उत्पन्न होने वाला सात्त्विक है। सात्त्विक भाव आठ प्रकार के हैं।

''स्तम्भः प्रलयरोमाञ्चौ स्वेदो वैवर्ण्यवेपथू।
अश्रुवैस्वर्यमित्यष्टौ सात्त्विकाः परिकीर्तिताः।।''

१. **स्तम्भ**— भय और राग आदि से उत्पन्न होने वाली शरीर की निष्क्रियता को शून्यावस्था को, निश्चलता को स्तम्भ कहते हैं।

२. **प्रलय**— सुख-दुःखादि से इन्द्रियों की बेहोशी।

३. **रोमाञ्च**— सुखाधिक्य आदि से रोम खड़े हो जाना।

४. **स्वेद**— ताप, परिश्रम, कामकेलि आदि से शरीर में पसीना आना।

५. **वैवर्ण्य**— विषाद, रोष, मद आदि से शरीर का रंग उड़ जाना।

६. **वेपथु**— राग, रोष, भय इन के कारण शरीर की कँपकँपी।

७. **अश्रु**— दुःख, रोष और आनन्द में अश्रु का गिरना।

८. **वैस्वर्य**— अत्यन्त हर्ष-विषाद-भय आदि में गला रुँध जाना और ठीक-ठीक शब्द न बोल पाना ही वैस्वर्य अर्थात् स्वरविपर्यय है।

इस प्रकार आठ सात्त्विक भावों के वर्णन के बाद व्यभिचारी भावों का वर्णन किया जा रहा है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

व्यभिचारी भाव

''विभावाश्चानुभावाश्च कथ्यन्ते व्यभिचारिणः।
व्यभिचारिणस्तु भावा रसस्य सहकारिणः।।''

लोक में जिसे कारण, कार्य और सहकारी कहते हैं वे ही नाट्य में विभाव, अनुभाव व्यभिचारी कहे जाते हैं। विभावों अनुभावों और रसों में विविध प्रकार से तथा आभिमुख्य से चरण के कारण ये व्यभिचारी भाव कहलाते हैं, जो नीचे दिये गये हैं।

१. **निर्वेद**— जो कुछ भी करें, कोई लाभ नहीं,— इस विचार से मन ऊबने पर कहीं अलग बैठना, तब आँखों से आँसू निकलेगा, लम्बी साँस निकलेगी।

२. **ग्लानि**— अंगों की बलहीनता, अरुचि आदि पैदा करने वाली शारीरिक थकावट है ग्लानि।

३. **शंका**— 'अनिष्ट कोई बात घटेगी' इस बात की चिन्ता।

४. **असूया**— दूसरों की उन्नति पर मन में होने वाली असह्यता या ईर्ष्या।

५. **मद**— मदिरा जैसी नशीली चीज़ों के उपयोग से होनेवाली अत्यधिक सन्तुष्टि।

६. **श्रम**— तेज़ी से अधिक दूर चलने से या काम-क्रीडा करने आदि से होने वाली थकावट।

७. **आलस्य**— अपने कर्तव्य के प्रति होने वाली अलसता ही आलस्य है।

८. **दैन्य**— आगे के कर्तव्य को पूरा करने की शक्ति न होने आदि के कारण वह कार्य पूरा न कर सकने से होने वाला अपकर्ष-बोध ही दैन्य है।

९. **चिन्ता**— मन की इच्छा के अनुसार कोई कार्य न कर सकने से उसी कार्य के बारे में निरन्तर सोचते रहना।

१०. **धृति**— किसी के प्रति अभिलाष न रखनेवाला मन का साहस ही धृति है।

११. **स्मृति**— पूर्वकाल में अनुभूत विषयों की चिन्ता कर उसका स्मरण करना ही स्मृति है।

१२. **मोह**— निकट भविष्य में अपने ऊपर भारी विपत्ति (दुःख और भय) आयेगी इस सन्देह में अथवा उन के आजाने पर बेहोशी आ जाना।

१३. **व्रीडा**— अनुराग, काम आदि की प्रशंसा सुनने पर मनमें रहने वाला संकोच।

१४. **चपलता**— राग-द्वेष आदि के कारण मन में होने वाली चञ्चलता।

१५. **हर्ष**— मेला आदि मनोरञ्जक वस्तुएँ देखने का औत्सुक्य।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१६. **आवेग**— इच्छित और अनिच्छित बातों के आने से मन में विभ्रान्ति।

१७. **जड़ता**— इष्ट-अनिष्ट बातों को ठीक-ठीक समझ न पाना और मन में होने वाला जाड्य ही जडता है।

१८. **गर्व**— अपनी शक्ति से दूसरों की शक्ति का तिरस्कार कर आत्मोत्कर्ष प्रकट करना।

१९. **विषाद**— अपने इच्छित कार्य सम्पन्न होने का कोई मार्ग न दिखाई पड़ने से मन में होने वाली कुण्ठा।

२०. **औत्सुक्य**— जरा सा भी विलम्ब न सहने से मन में होनेवाला ताप और विशेष अभिलाष।

२१. **निद्रा**— मन का निमीलन, याने मन का सुषुम्णा में छिप जाना।

२२. **अपस्मार**— दुःख के आवेग और मोह के आवेग से होनेवाला एक प्रकार का अंग-ताप (शरीर-ताप)।

२३. **सुप्ति**— निद्रा की चरमावस्था, बेहोशी की हालत।

२४. **विबोध**— आँखे मलते और जम्हाई लेते नींद से जागरण।

२५. **अमर्ष**— अपने प्रति अपराध करते रहने वाले शत्रु के प्रति मन का प्रज्ज्वलन।

२६. **अवहित्था**— सन्तोष आदि भावों को छिपाना।

२७. **उग्रता**— अपराध करते देखकर होनेवाला मन का क्रूर भाव।

२८. **मति**— तत्त्व मार्ग पर बार-बार मन को दृढ करना।

२९. **व्याधि**— मानसिक ताप से होने वाला ज्वर (ताप)।

३०. **उन्माद**— एक प्रकार की चिन्ता-विभ्रान्ति (पागलपन)।

३१. **मरण**— मर जाने की इच्छा से सम्बन्धित कार्य करना।

३२. **त्रास**— आकस्मिक भय (भयानक स्वप्न आदि से) मन में होने वाला क्षोभ।

३३. **वितर्क**— सन्देह के कारण विभिन्न मार्ग से चलने वाले मानसिक सङ्कल्प-विकल्प।

शृङ्गार-चेष्टाएँ

आचार्यों ने शृङ्गार रस की अठारह चेष्टाएँ बतायी हैं। उनका विवरण नीचे दिया जा रहा है।

१. **भाव**— रस को समझने की शक्ति।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२. **हाव**— विकार को थोड़ा सा प्रदर्शित करना।

३. **हेला**— विकार को पूरा बाहर प्रदर्शित करना।

४. **माधुर्य**— बिना आभूषणों के ही शरीर का विशेष सौन्दर्य।

५. **धैर्य**— शील, स्वभाव (आदत), चरित्र को क्षति पहुँचाए बिना उसे स्थायी रखना।

६. **लीला**— बात-चीत, कार्यकलाप, चाल-ढाल आदि से प्रियतम का अनुकरण करना।

७. **विलास**— प्रियतम को देखने पर तुरन्त होने वाला भाव-परिवर्तन।

८. **विच्छित्ति**— बहुत कम इने गिने आभूषण पहनने पर भी अत्यन्त आकर्षक या सौन्दर्य-पूर्ण लगना।

९. **विभ्रम**— गले में पहनने वाला आभूषण पैर में, पैर में पहनने वाला गर्दन में, इत्यादि आभूषणों को स्थान बदल कर पहनना।

१०. **किलिकिञ्चित**— रोष, हर्ष, भय इनका मिश्रण ही है— किलिकिञ्चित।

११. **कुट्टमित**— रति-क्रीडा के समय मारने या शरीर मलने से प्रसन्नता।

१२. **बिब्बोक**— प्रिय का वृत्तान्त सुनने पर थोडा सा अनादर होना।

१३. **मोट्टायित**— प्रिय की कथा किसी के मुख से सुनने पर अपने मनोभाव प्रकट करना।

१४. **ललित**— अत्यन्त मृदुल फूल आदि के स्पर्श, गमन आदि अंग विन्यास, कुसुमास्तरण (फूल बिछाना), पुष्प शय्या पर लेटना आदि।

१५. **कुतूहल**— विशिष्ट वस्तुओं के दर्शन से होने वाला चापल्य।

१६. **चकित**— डर से काँपना।

१७. **विहृत**— समय-समय पर जिसकी ज़रूरत है, लज्जा के कारण उसे व्यक्त न करना।

१८. **हसित**— यौवन के अनुकूल विकार आदि कारणों से बिना हेतु के हँसना;

शृङ्गार रस के रोपने, अंकुरित, पल्लवित और फलित होने के हेतु से हँसना।

मदनावस्थाएँ

१. **चक्षुः प्रीति**— अत्यन्त आदर से देखते-देखते तृप्त होना।

२. **मनः संग**— हर समय प्रियतम का मन प्रेयसी पर संलग्न रहना।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

३. संकल्प— प्रियतमा-सम्बन्धी मनोराज्य।

४. प्रलापित— प्रेयसी के गुणों को ही दुहराते रहना।

५. जागर— नींद से बिल्कुल वञ्चित रहना।

६. कृशता— शरीर का प्रतिदिन कमज़ोर होते रहना।

७. अरति— दूसरे सभी व्यापारों में अरुचि होना।

८. व्रीडात्याग— लज्जा का पूरा-पूरा त्याग करना।

९. ज्वर— ऐसा कठोर ताप जो सह्यं न किया जा सके।

१०. मूर्छा— आँख, कान जैसे बाहर के इन्द्रियों को बेसुध करने वाला आन्तरिक विकार।

११. उन्माद— सचेत और अचेत वस्तुओं के प्रति समान तरह की मानसिक वृत्ति।

१२. मृति— मर जाने के विभिन्न प्रयास करना (गले में रस्सी बाँध कर लटकना, बहना आदि)।

इस प्रकार मदन की बारह दशाएँ हैं। आचार्यों में इस विषय में मतभेद भी है, कुछ आचार्य बारह न मान कर दस ही मानते हैं।

रस-दृष्टियाँ

ये रस-दृष्टियाँ अभिनय आदि के लिए अत्यन्त उपयोगी हैं।

शृङ्गार-दृष्टि—

"किञ्चित् चलत्कपोला च सस्मिता रतिसंयुता।
विचलद्भ्रूकटाक्षा च शृङ्गारे दृष्टिरुच्यते।।"

कपोल को थोड़ा हिलाकर, भौंहों को कम्पित कर, मुस्कराते हुए, ओष्ठ को खोलकर तथा हृदय में काम-लीला-सुख की इच्छा करके शृङ्गार-रसालम्बन को (नायक नायिका को, नायिका नायक को) देखकर आँखों के त्रिभाग से देखना, यानी कटाक्ष करना। भाव-दृष्टि से आलम्बन के गुण आदि देखते हुए हँसकर काम-लीला के प्रति अत्यन्त अभिनिवेश से भौंहों और गालों को थोड़ा-सा कम्पित कर दृष्टि को आलम्बन पर स्थिर कर, थोड़ी सी हवा का संचार कर, दृष्टियों को थोड़ा सा प्रफुल्लित करना। विभाव आदि से होनेवाला परिपोष ज्यादातर मानसिक होता है। आलम्बन के गुण आदि उद्दीपनों से शृङ्गार को पुष्ट करना।

पुरुष का स्त्री की ओर और स्त्री द्वारा पुरुष की ओर कटाक्ष करना। आँखें ज्यादा खोलकर अभिप्रायगुम्फित त्रिभाग से देखने वाला दृष्टिपात है कटाक्ष।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

माणि माधव चाक्यार

नायक और नायिका

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

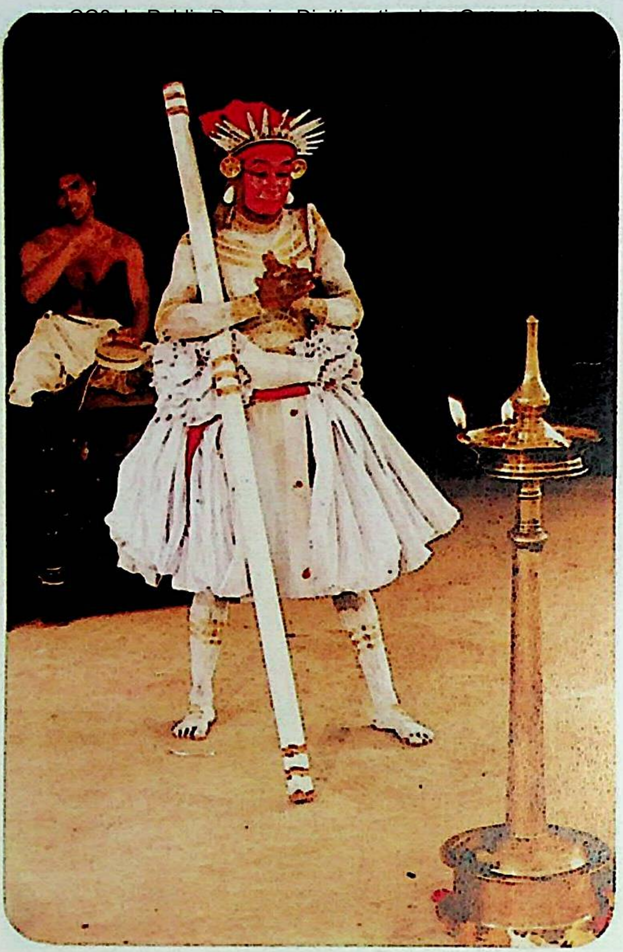

मन्त्राङ्क में वसन्तक

एक अन्य नायक और नायिका

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विदूषक

बाली और सुग्रीव

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लक्ष्मण और सूर्पणखा

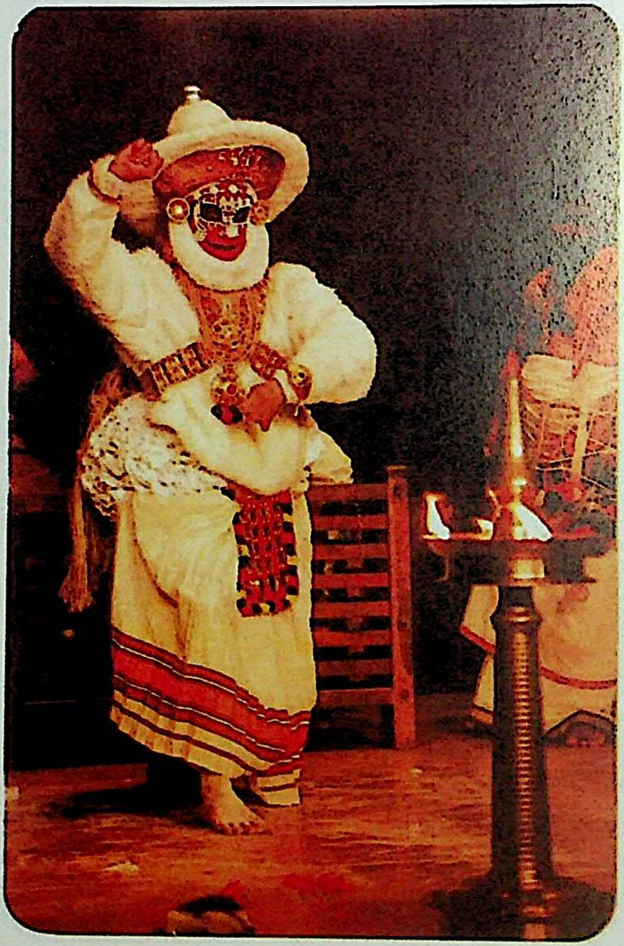

हनुमान

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सूत

कत्तिवेष (रावण)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आहार्य-कक्ष (शृङ्गार कक्ष)

शृङ्गार-रस

हास्य-रस

करुण-रस

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अद्भुत-रस

बीभत्स-रस

शान्त-रस

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वीर-रस

रौद्र-रस

भयानक-रस

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हास्य-दृष्टि—

"आकुञ्चितपुटापाङ्गा विभ्रान्तस्वल्पतारका।
अव्यक्तसंचारवती दृष्टिर्हास्ये प्रकीर्तिता।।"

दोनों पलकों को थोड़ा सा संकुचित कर, दोनों पलकों को बिना हिलाये बहती हुई सी दृष्टि को चलाकर अपाङ्ग से देखना। यह दोनों ओर इंच्छानुसार कर सकते हैं।

करुण-दृष्टि—

"पतितोर्ध्वपुटा सास्रा मन्युमन्थरतारका।
नासाग्रानुगता दृष्टिः करुणा करुणे रसे।।"

आँखों की ऊपरी पलकों को बलहीन बनाकर नीचे की ओर गिराकर आँसू निकालते हुए, पीड़ा से पुतलियाँ स्थिर कर नाक के अग्रभाग की ओर सामने वेदना के साथ देखना।

रौद्र-दृष्टि—

"निष्टब्धोर्ध्वपुटा रूक्षा क्रूरा चलदधःपुटा।
कुटिलभ्रूकुटीदृष्टिः रौद्रा रौद्ररसे स्मृता।।"

आँखों की दोनों पलकें सबल बनाकर, ऊपर उठाकर, नीचे की पलकें हिला-हिला कर यानी आँखों को उठाकर नीचे की पलकें हिला-हिला कर यानी आँखों के तट कँपा कर, दोनों भौंहों को चढ़ाकर, टेढ़ा कर, दर्शकों के मन में भय पैदा करने लायक लक्ष्य का निर्देश कर, क्रोध के साथ दूर देखते हुए पुतली में खूब हवा का प्रवेश कर दूरस्थ शत्रु को लक्ष्य कर देखने वाली क्रूर दृष्टि ही रौद्र-दृष्टि है।

वीर-दृष्टि—

"उत्फुल्लमध्या गम्भीरा दृप्ता समकनीनिका।
भवेदभीता दृष्टिस्तु धीरा वीररसाश्रया।।"

आँखें खूब खोल कर बीचोंबीच पुतलियाँ स्थिर कर, बिल्कुल हिलने न देकर धीरज के साथ स्थिर पुतलियों मे एक हवा भरकर, किसी की परवाह किये बिना, गाम्भीर्य और उत्साह से देखने वाली दृष्टि वीरदृष्टि है।

भयानक-दृष्टि—

"इतस्ततः चलत्तारा स्तब्धोभयपुटाञ्चिता।
भयानकरसे दृष्टिः भयभावसमन्विता।।"

दोनों आँखें खूब खोलकर, पलकों को झपकाए बिना, पुतलियों को स्थिर कर, बाएँ, दाएँ इधर-उधर तेज़ी से देखते रहना। भयजनक वस्तु को गौर से देखने की प्रतीति

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दृष्टि में होनी चाहिए। भयजनक कोई वस्तु आ रही है ऐसा प्रेक्षकों को प्रतीत होने लायक भयभावपूर्ण दृष्टि भयानक दृष्टि है।

बीभत्स-दृष्टि—

"निकुञ्चितपुटापाङ्गा जुगुप्सोत्प्लुततारका।
संश्लिष्टपक्ष्मदृष्टिस्तु बीभत्साख्यरसे स्मृता।।"

दोनों पलकें संकुचित कर, मानसिक अरुचि के साथ एक ओर से देखना। देखते समय थोड़ा सा ऊपर की ओर पलकों के बीच में से पुतलियों पर का बल ढीला कर जुगुप्सा के स्थान से दृष्टि को फेर लेना। यही बीभत्स दृष्टि है।

अद्भुत-दृष्टि—

"स्फुरत्कपोलनासाग्रा स्मयमानमुखाम्बुजा।
निष्पन्दपक्ष्मतारा दृक् चलद्भ्रूः कथ्यतेऽद्भुते।।"

गालों को थोड़ा सा हिला कर, चेहरे-पर हँसता सा भाव फैलाकर, भौंहें हिलाकर आँखें खूब खोल कर, स्थिर कर के, नासिका के सामने आलम्बन को देखना। यही अद्भुत दृष्टि है।

शान्त-दृष्टि—

"किञ्चिदाकुञ्चितपुटा विकसन्मृदुतारका।
रसेषूक्तेष्वनाविष्टा दृष्टिः शान्ता शमान्विता।।"

आँखें पूरी न खोल कर पुतलियों में हवा न भर कर प्रसादपूर्ण शम-प्रधान, सब सहने का भाव प्रकट कर पुतलियाँ आँखों के बीच स्थिर कर, श्रृंगार आदि आठों रसों में किसी में भी न आने वाली ब्रह्मालम्बन-दृष्टि ही शान्त दृष्टि है।

भाव-दृष्टियाँ

रति-दृष्टि—

"व्याकोचमध्या मधुरा स्थिरताराभिलाषिणी।
सानन्दभ्रूलता दृष्टिः स्निग्धेयं रतिभावजा।।"

श्रृंगार रस के स्थायी भाव रति में स्निग्धा दृष्टि होनी चाहिए, प्रेक्षकों में अत्यधिक स्पृहा (अभिलाषा) पैदा करने वाली, पुतली, देखने पर मुस्कुराती-सी लगने वाली, अभिलाषा प्रकट करने वाली, आँखों का मध्य प्रफुल्लित रहे, भौंहों को थोड़ा सा हिलाने वाली दृष्टि ही रति-दृष्टि है।

हास-दृष्टि—

"चला हसितगर्भा च विशत्ताराऽनिमेषिणी।
किञ्चिदाकुञ्चिता हृष्टा दृष्टिर्हासे प्रकीर्त्तिता।।"

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अँदर धँसती-सी पुतली, अंदर की ओर खिंची, पलकें झपके बिना थोड़ी सी हिलती और थोड़ी सी नीचे की ओर झुकी, प्रेक्षकों के मन में ऐसा भाव पैदा हो कि यह संतुष्ट है —ऐसी दृष्टि हास्य के स्थायी हास की है।

शोक-दृष्टि—

"अधःस्रस्तोत्तरपुटा रुद्धतारा जलाविला।
मन्दसञ्चारिणी दीना सा शोके दृष्टिरुच्यते।।"

आँखों में आँसू भर कर, ऊपर की पलकें बलहीन कर, नीचे गिरती हुई पुतलियों को संभाल कर, रोक-रोक कर, इधर-उधर वेदना के साथ किसी को न देखते हुए देखना। इस दृष्टि को दीना कहते हैं। यह करुण के स्थायी-भाव शोक की दृष्टि है।

क्रोध-दृष्टि—

"रुक्षा स्थिरोद्वृत्तपुटा निष्टब्धोद्वृत्ततारका।
कुटिलभ्रूकुटी दृष्टिः क्रुद्धा क्रोधे विधीयते।।"

दोनों भौंहें ऊपर उठाकर, टेढ़ी बना कर, आँखें खूब खोलकर, पलकें बिना हिलाए हवा को स्तंभित कर, पुतलियाँ बँधी-सी स्थिर कर, बाहर की ओर हवा फेंक कर, प्रेक्षक भय से देख न सकें ऐसी क्रोध से युक्त दृष्टि है क्रुद्धा दृष्टि। यह रौद्र रस के स्थायी क्रोध की दृष्टि है।

उत्साह-दृष्टि—

"संस्थिते तारके यस्याः स्थिरा विकसिता तथा।
सत्त्वमुद्गिरती दृप्ता दृष्टिरुत्साहसम्भवा।।"

दोनों आँखें खूब खोल कर, दृष्टियों में उल्लास भरते हुए, स्थिर कर पूर्ण मानसिक उद्वेग प्रेक्षकों को मालूम हो ऐसी रीति से पुतलियों में हवा भरकर देखना। प्रेक्षकों को ऐसा लगना चाहिए कि यह किसी की परवाह नहीं करता। यह दृष्टि वीर के स्थायी भाव उत्साह की है।

भयदृष्टि—

"विस्फारितोभयपुटा भयकम्पिततारका।
निष्क्रान्तमध्या दृष्टिस्तु भयभावे भयान्विता।।"

आँखें खूब खोल कर, पलकों को स्तब्ध कर, डर से-इधर उधर (बाएँ और दाएँ) दो तीन बार धीरे-धीरे गति बढ़ा कर देखना। इस प्रकार दृष्टि हरेक भाग में पहुँचने पर पुतलियों में हवा भरना है। यह भयानक के स्थायी भाव भय की दृष्टि है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जुगुप्सा दृष्टि—

"संकोचितपुटन्यासा दृष्टिर्म्मीलिततारका।
लक्ष्योद्देशात्समुद्विग्ना जुगुप्सायां जुगुप्सिता।।"

दोनों पुतलियों को थोड़ा मूँदते हुए, दोनों पलकें बलहीन और संकुचित स्थिर करके लक्ष्य की (देखने की वस्तु की) ओर एक बार देख कर वहाँ से थोड़ा पीछे हटाते हुए दृष्टि को स्थिर कर देना। यह बीभत्स के स्थायी जुगुप्सा की दृष्टि है।

विस्मित दृष्टि— (विस्मय दृष्टि)

"विमलोद्वृत्ततारा च हृष्टोभयपुटाञ्चिता।
समा विकसिता दृष्टिर्विस्मिता विस्मये स्मृता।।"

पलकों को खुशी से ऐसा विकसित करें कि पुतलियाँ पूरी-की-पूरी-देखती सी हों, आँखों को बीचोंबीच स्थिर कर आश्चर्य भाव से हवा भरकर देखना। अद्‌भुत के स्थायी विस्मय की इस दृष्टि का नाम विस्मिता दृष्टि है।

शमदृष्टि—

"नातिविस्तारितपुटा मध्यस्थाऽप्यूर्ध्ववीक्षणा।
सन्त्यक्तवासना दृष्टिस्तत्त्वचिन्तापरायणा।।"

आँखें सामान्यतया खोल कर, थोड़ी सी सबल पुतलियों को बीचों-बीच ऊपर की ओर स्थिर कर सभी वासनाएँ त्याग कर ब्रह्मध्यान का भाव प्रकट करते हुए अलक्ष्य रूप से ब्रह्म को देखते रहना। शान्त के स्थायी शम की दृष्टि है यह।

रसाभिनय की रीतियाँ

शृङ्गार— आँखें ज्यादा न खोलकर, मानो सन्तोष में हों ऐसे चेहरा और भौहें स्थिर कर, स्नेह, मोह, सन्तोष आदि भाव पुतलियों में भर कर किसी एक दिशा में देखना। इस रतिभाव दृष्टि से आलम्बन को देखकर मुस्कुराते हुए कामलीला करने की इच्छा से भौहों और गालों को थोड़ा हिलाते हुए फुलाकर कटाक्ष करते हुए से पुतली में एक हवा देकर थोड़ी देर स्थिर करना।

हास्य— पलकें मारे बिना आँखों को थोड़ा सा संकुचित कर, हँसी उड़ाती सी पुतलियाँ थोड़ा अंदर की ओर खींच कर इधर-उधर चलाना। इस हास्य दृष्टि को बहता हुआ-सा चलाकर कनखियों से थोड़ा ऊपर की ओर देखना।

करुण— पलकें बलहीन तारकों पर स्पर्श करती-सी नीचे गिराकर बिल्कुल धीरे से आँसू निकालते हुए पुतलियों को चलाना। यह शोक-दृष्टि नाक के अग्रभाग

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पर आँसुओं के साथ, दुःख के साथ दृढ़ कर रखना। गालों को ढीला-सा कर डालना।

रौद्र— आँखों की पलकें दृढ और स्थिर कर, दृढ पुतलियों में खूब हवा देकर, भौंहे टेढ़ी कर, प्रेक्षकों में डर पैदा होने लायक आँखें पूरी-पूरी खोलकर देखना। इस रौद्र दृष्टि से आलम्बन को देख कर आँखों का तट हिलाते-हिलाते थोड़ी देर स्थिर कर रखना।

वीर— आँखे खूब खोल कर बीचों-बीच उत्साह और घमण्ड के साथ पुतलियों में हवा देकर स्थिर रखना। अक्षिगोलक के चारों ओर की सफेदी दीख सकने लायक आँखें खूब खोल कर बीचों-बीच पुतलियों को बिलकुल हिलने न देकर, दृढ कर, हवा देकर दूर देखते रहना।

भयानक— आँखें खोल कर, पलकें झपके बिना, खड़ी कर डर से काँपने वाली पुतलियों से, बीच का स्थान छोड़कर, दोनों ओर देखना। इस दृष्टि से दूर देख कर मानो किसी शैतान को देख कर डरती सी पुतलियों को पीछे की ओर खींच कर दूसरी ओर से भी वैसा ही देखना और पीछे खींचना। इस प्रकार दोनों भागों में तेजी से दो-तीन बार देख कर पुतलियों को चञ्चल करते हुए देखते रहना।

बीभत्स— पलकें और तारिकाएँ संकुचित कर, किसी वस्तु को देखकर पुतलियाँ अन्दर की ओर खींच कर, अधिक (अवज्ञा) अरुचि के साथ दृष्टि को सीधे खड़ा करना, अरुचि में डूबी दृष्टि को संकुचित कर के दोनों पलकों की बरौनियों के बीच से कनखियों से आलम्बन को देखते रहना।

अद्‌भुत— दोनों आँखे खोल कर, पलकें प्रफुल्लित कर, पुतलियाँ आँखों के बीच प्रसन्न खड़ी कर देना। इस विस्मय दृष्टि को नाक के सीधे सामने स्थिर कर चेहरे-पर हँसी की प्रभा फैला कर गाल और भौहें हिला कर, बरौनियाँ और पुतलियाँ स्थिर कर किसी विशिष्ट वस्तु को देखते हुए से रहना।

शान्त— दोनों आँखें साधारण रूप से खोल कर, पुतलियों में बिलकुल बल न देकर प्रकाशमान करते हुए, ईश्वर को आलम्बन कर विराग के साथ अन्य कोई रस न प्रकट होने दे कर केवल वैराग्य की भावना प्रेक्षकों में पैदा कर, आँखें स्थिर कर देना। रसाभिनय करने की यह रीति गुरूपदेश के अनुसार नटों के उपयोग के लिए यहाँ जोड़ी गयी है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्थायी भाव

रसों में परिणत होने वाले स्थायी भाव पहले श्लोक रूप में प्रकट किये हैं। उनका स्वरूप नीचे दिया जा रहा है।

१. शृङ्गार का स्थायी भाव रति है। कामलीला-विषयक अभिलाषा ही रति है।

२. हास्य रस का स्थायी भाव है हास। कूबरी जैसे विकृत रूप देखने पर होने वाली हँसी है यह।

३. करुण रस का स्थायी भाव है शोक, याने कई प्रकार के भारी दुःख।

४. रौद्र रस का स्थायी भाव है क्रोध। यह दुश्मन के कुकर्म से होने वाला मानसिक प्रज्ज्वलन है।

५. वीर का स्थायी भाव उत्साह है। यह श्रेष्ठ कार्य करने का स्थिर प्रयास है।

६. भयानक रस का स्थायी भाव है भय। हिंस्र जन्तुओं के दर्शन पर होने वाली अनर्थ की शंका ही भय है।

७. बीभत्स रस का स्थायिभाव जुगुप्सा है। कुष्ठ रोग, नाक, कान आदि के कटने से विकृत रूप लिये लोगों के दुष्ट दर्शन से मन का संकोच (अरुचि) ही बीभत्स है।

८. अद्‌भुत रस का स्थायिभाव है विस्मय। यह अद्‌भुत वस्तुओं के दर्शन आदि से मन में पैदा होने वाला सन्तोषात्मक विकार है।

९. शान्त रस का स्थायिभाव है शम। वैराग्य आदि से बन जाने वाली विकार-शून्य दशा ही शान्त है।।

रसों का पारस्परिक विरोध

अभिनय में विरुद्ध रसों का आना मना है। मुद्राओं के रसों के बीच विरोध की स्थिति आने पर नट को चाहिये कि अभिनय में विरोधी रस न आने पायें। यह खास उपदेश है।

''शृङ्गारबीभत्सरसौ तथा वीरभयानकौ।
रौद्राद्‌भुतौ तथा हास्यकरुणौ वैरिणौ मिथः।।''

शृङ्गार के बीच बीभत्स, और बीभत्स के बीच शृङ्गार का आना निषिद्ध है। वैसे वीर और भयानक, रौद्र और अद्‌भुत तथा हास्य और करुण परस्पर विरोधी माने गये हैं। एक के बीच दूसरे का आना निषिद्ध है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सञ्चारिणी दृष्टियाँ

१. शून्या—

**"समतारा समपुटा निष्कम्पा शून्यदर्शना।
बाह्यार्थाग्राहिणी क्षामा शून्या दृष्टिः प्रकीर्तिता।।"**

आँखें खोलकर पुतलियों को बीच में स्थिर कर बाहर की किसी भी वस्तु को न देखते हुए बलहीन देखना ही शून्य दृष्टि है।

२. मलिना—

**"प्रस्पन्दमानपक्ष्मा या नात्यर्थमुकुलैः पुटैः।
मलिनान्ता च मलिना दृष्टिर्विभ्रान्ततारका।।"**

आँखों की पलकें ज्यादा मूँदे बिना बरौनियाँ हिलाकर, पुतलियाँ प्रसाद-हीन कर घबराहट से दोनों ओर देखना ही मलिन दृष्टि है।

३. श्रान्ता—

**"श्रमात् प्रग्लानितपुटा क्षामान्ताञ्चितलोचना।
सन्ना पतिततारा च श्रान्ता दृष्टिः प्रकीर्तिता।।"**

श्रम से पलकें कुम्हलायी सी बलहीन हों, आँखों की कोरें संकुचित हों, थकावट से पुतलियाँ नीचे की ओर लटकी हों, ऐसी दृष्टि श्रान्ता है।

४. सलज्जा—

**"किञ्चिदञ्चितपक्ष्माग्रा पतितोर्ध्वपुटा ह्रिया।
त्रपाधोगततारा च दृष्टिर्लज्जान्विता तु सा।।"**

लज्जा से ऊपर की पलकें नीचे की ओर झुकाकर, पलकों के बालों के बीच से पुतली को थोड़ा सा नीचा कर देखना— यही सलज्जा दृष्टि है।

५. म्लाना—

**"म्लानभ्रूपुटपक्ष्मा या शिथिला मन्दचारिणी।
क्रमप्रविष्टतारा च म्लाना दृष्टिस्तु सा मता।।"**

भौहें, पलकें, बरौनियाँ सब कुम्हला कर थोड़ा नीचे की ओर गिरी हुई सी, थकी हुई बलहीन पुतलियाँ धीरे से इधर-उधर चलाते हुए देखना। यही म्लाना दृष्टि है।

६. शङ्किता—

**"किञ्चिच्चला स्थिरा किञ्चिदुद्गता किञ्चिदायता।
गूढा चकिततारा च शङ्किता दृष्टिरिष्यते।।"**

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आँखें साधारण रीति से खोल कर, पुतलियों को बीच में हिला कर बीच में ही स्थिर कर के, बीच में हवा भर कर, आगे बढ़ा कर, निगूढ़ता से, डरते हुए से, थोड़ा सा कँपाते हुए से देखना— यही शङ्किता दृष्टि है।

७. विषादिनी—

"विषादविस्तीर्णपुटा पर्यस्तान्तानिमेषिणी।
किञ्चिन्निष्टब्धतारा च कार्या दृष्टिर्विषादिनी।।"

आँख की पलकें खोलकर बिना झपकाये, कटाक्ष संकुचित कर के विषाद से थोड़ी सी स्तब्ध पुतलियों से युक्त दृष्टि है विषादिनी।

८. मुकुला—

"स्फुरिताश्लिष्टपक्ष्मार्ग्रा मुकुलोर्ध्वपुटान्विता।
सुखोन्मीलिततारा च मुकुला दृष्टिरिष्यते।।"

दोनों पलकें संकुचित कर सुख से अलसाई पुतली से बरौनियों में से थोड़ा सा देखते रहना— यही मुकुला दृष्टि है।

९. कुञ्चिता—

"या निकुञ्चितपक्ष्माग्रा पुटैरकुञ्चितैस्तथा।
सा निकुञ्चिततारा च कुञ्चिता दृष्टिरिष्यते।।"

दोनों पलकें संकुचित कर, उन संकुचित पलकों के बालों के बीच में से संकुचित पुतलियों से देखना कुञ्चिता दृष्टि है।

१०. अभितप्ता—

"मन्दायमानतारा या पुटैः प्रचलितैस्तथा।
सन्तापोपप्लुता दृष्टिः अभितप्ता तु सव्यथा।।"

दुःख से संतप्त बलहीन दृष्टि से चञ्चल पलकों के बीच से देखना अभितप्ता दृष्टि है।

११. जिह्मा—

"लम्बिता कुञ्चितपुटा शनैस्तिर्यग्निरीक्षणैः।
निगूढा गूढतारा च जिह्मा दृष्टिरुदाहृता।।"

दोनों पलकें थोड़ी सी संकुचित कर, पुतलियाँ अन्दर की ओर खींचकर, थोड़ा नीचे की ओर से छिप कर इधर-उधर देखना जिह्मा दृष्टि है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१२. ललिता—

"मधुरा कुञ्चितान्ता च सभ्रूक्षेपा च सस्मिता।
समन्मथविकारा च दृष्टिः सा ललिता स्मृता।।"

भौहें चलाकर हँसते हुए, आँखे थोड़ी सी छोटी कर काम-विकार प्रकट कर कनखियों से प्रेक्षकों में भी अभिलाषा प्रतीत कराने जैसा देखना ललिता दृष्टि है।

१३. वितर्किता—

"वितर्कोद्वर्तितपुटा तथैवोत्फुल्लतारका।
अधोगता विचाराढ्या दृष्टिरिष्टा वितर्किता।।"

सन्देह से दोनों पलकें खुल गई हों, पुतलियाँ विकसित होकर थोड़ा सा नीचे की ओर झुकी हों, ऐसी विचार से भरी दृष्टि वितर्किता है।

१४. अर्धमुकुला—

"अर्धव्याकोचपक्ष्मा या ह्लादार्धमुकुलैः पुटैः।
स्मृतार्द्धमुकुला दृष्टिः किञ्चिल्लुलिततारका।।"

दोनों पुतलियाँ थोड़ी सी मुँदती हुई सी हों, दोनों पलकें और पक्ष्मरोम (बरौनियां) आधी संकुचित हों— इस प्रकार देखने वाली दृष्टि अर्धमुकुला है।

१५. विभ्रान्ता—

"अनवस्थिततारा या विभ्रान्ताकुलदर्शना।
विस्तीर्णोत्फुल्लमध्या च विभ्रान्ता दृष्टिरिष्यते।।"

आँखें खूब खोलकर, पुतलियाँ अव्यवस्थित और संभ्रान्त कर के जिसे देखना मुश्किल है उसे देखते हुए-से बीच से देखना। त्रिभंगी 'स्थायी' में मध्य से देखना। यही है विभ्रान्ता दृष्टि।

१६. विप्लुता—

"पुटौ प्रस्फुरितौ यस्यां निष्टब्धौ पतितौ पुनः।
प्रकामोद्वृत्ततारा च दृष्टिरेषा तु विप्लुता।।"

आँखों की पलकें हिलाकर थोड़ी मींच कर खुली हों और खुलते समय पुतलियाँ खिली हुई हों— ऐसा देखना ही विप्लुता दृष्टि है।

१७. आकेकरा—

"आकुञ्चितपुटापाङ्गा सङ्गतार्धनिमेषिणी।
मुहुर्व्यावृत्ततारा च दृष्टिराकेकरा स्मृता।।"

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दोनों आँखें थोड़ी सी संकुचित कर कनखियों से देखना। लक्ष्य से निवृत्त कर बार-बार उसी की ओर देखना। यही आकेकरा दृष्टि है।

१८. विकोशा—

"विकोशितोभयपुटा प्रोल्फुल्ला चानिमेषिणी।
अनवस्थिततारा च विकोशा दृष्टिरिष्यते।।"

पलकों को थोड़ा संकुचित कर आँखें खोल कर, पलकें झपकाये बिना, पुतली को एक ओर स्थिर रहने दिये बिना देखना विकोशा दृष्टि है।

१९. त्रस्ता—

"त्रासोद्वृत्तपुटा या तु तथोत्कम्पिततारका।
सन्त्रासोत्फुल्लमध्या च त्रस्ता दृष्टिरुदाहृता।।"

दोनों पलकों पर बल देकर आँखें खूब खोल कर भय से पुतलियों को बीच में चञ्चल खड़ा कर काँपते-काँपते देखना। यही है त्रस्ता दृष्टि।

२०. मत्तमदा—

"भृशोद्वृत्तपुटा या तु तथोत्कम्पिततारका।
अनवस्थिततारा च दृष्टिर्मत्तमदा भवेत्।।"

दोनों आँखों से घूरते हुए पुतलियों को नीचे गिराये बिना ऊपर की ओर घुमाते हुए देखने वाली दृष्टि है मत्तमदा।

२१. मदिरा (उत्तममदा)—

"व्याघूर्णमानमध्या या क्षामान्ताञ्चितलोचना।
दृष्टिर्विकसिताऽपाङ्गा मदिरा तरुणे मदे।।"

आँखें खूब खोलकर बीच में लाल कर पुतलियाँ बीच में ला कर कनखियाँ थोड़ी सी मूँद कर, बीच में थोड़ी सी खुलती पुतलियों से आँखों के कोर की ओर देखना। यह दृष्टि मदिरा है।

२२. मध्यमदा—

"किञ्चिदाकुञ्चितपुटा किञ्चिल्लुलिततारका।
अनवस्थित-सञ्चारा दृष्टिर्मध्यमदा स्मृता।।"

पलकें थोड़ी सी सिकोड़ कर, पुतलियाँ थोड़ी सी मूँद कर, अव्यवस्थित हो इधर-उधर चलने वाली दृष्टि मध्यमदा है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२३. अधममदा—

"सनिमेषा निमेषा च किञ्चिद्दर्शिततारका।
अधोभागचरी दृष्टिरधमे तु मदे भवेत्।।"

बीच-बीच में पलके झपका कर, बीच में घूर कर, पुतलियाँ पूरी न दिखाकर, आँखों के करीब-करीब नीचे से सञ्चार करने वाली दृष्टि अधममदा दृष्टि है।

२४. मदमन्थरा—

"व्याघूर्णमानमरुणं मुहुरामीलदन्तरम्।
अपरिच्छिन्नविषयं मदमन्थरमीरितम्।।"

आँखें मल कर लाल हों, रह-रह कर बीच का हिस्सा बंद हो और खुला हो, किसी को लक्ष्य न बना कर बलहीन दृष्टि मदमन्थर दृष्टि है।

व्यभिचारिणी दृष्टियाँ

विभावों, अनुभावों रसों में होने वाली व्यभिचारिणी दृष्टियाँ बाईस प्रकार की हैं। वे प्रकार नीचे दिये गये हैं।

१. मुग्धम्—

"स्वभावालोकितं मुग्धं भावगर्भमविच्छलम्।"
सुन्दर भावगुम्फित स्वाभाविक दृष्टि ही मुग्धम् है।

२. निष्पन्दम्—

"निष्पन्दं तद्यदन्यत्र दृष्टान्न स्पन्दते क्वचित्।"

देखे हुए किसी वस्तु से और कहीं भी न हटने वाली दृष्टि निष्पन्द है।

३. स्तिमितम्—

"स्वगोचरान्न चाल्येत यत्तत् स्तिमितमुच्यते।"

अपनी देखी वस्तु पर स्थिर हो कर और कहीं चलित न होने वाली दृष्टि स्तिमित है।

४. मसृणम्—

"मसृणं तदिति ख्यातमनुरागकषायितम्।"

आँखों में एकमात्र अनुराग का रंग भरी हुई दृष्टि मसृण है।

५. वक्रम्—

"ऊर्ध्वाधोभागसञ्चारो यत्र तद्वक्रमुच्यते।"

कनखियों के ऊपर और नीचे के भागों में सुचारु रूप से चलने वाली दृष्टि वक्र है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

६. मधुरम्—

"शीतलीक्रियते तापो येन तन्मधुरं स्मृतम्।"

जिस दृष्टि का आलोकन सब प्रकार के तापों को दूर कर शीतलता प्रदान करता है उसे मधुर दृष्टि कहते हैं।

७. प्रसन्नम्—

"तत्प्रसन्नं भवेत् सभ्रूविलासं सस्मितं च यत्।"

भौहें हिलाकर मन्द हँसी से युक्त दृष्टि प्रसन्न है।

८. अलसम्—

"अलसं तदभीष्टार्थाद् व्रीडाद्यैर्यन्निवर्तनम्।"

अभीष्ट पदार्थ देख कर लज्जा से देखते रहने में असमर्थ बलहीन दृष्टि को अन्दर की ओर संकुचित करना अलस दृष्टि है।

९. पलितम्—

"पलितं तन्निवृत्तस्य भूयस्त्र्यंशावलोकनम्।"

निवृत्ता दृष्टि से पुनः पुनः त्र्यंशावलोकन करना (तीसरे भाग से कटाक्ष करना) पलित है।

१०. विह्वलम्—

"अनवस्थिततारं यत् तद्विह्वलमुदाहृतम्।"

पुतलियाँ कहीं भी स्थिर न रह कर चञ्चल रहें ऐसी दृष्टि विह्वल है।

११. उदञ्चितम्—

"अपांगयोरूर्ध्वभागावलोकनमुदञ्चितम्।"

आँखों की कोरों का ऊपर की ओर देखते रहना उदञ्चित दृष्टि है।

१२. सोत्सुकम्—

"सोत्सुकं तद्यदालोक्य भूयो-भूयोऽवलोकनम्।"

जिसे देखा हो उसी को अत्यधिक अभिलाषा से पुनः पुनः देखना सोत्सुक दृष्टि है।

१३. समन्मथम्—

"यद्दर्शने विरक्तोऽपि क्षुभ्यते तत् समन्मथम्।"

जिस दृष्टि के कटाक्ष से वैरागी भी काम से विवश हो जाता है वह समन्मथ दृष्टि है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१४. त्रिभङ्गी—

**"मूलमध्याग्रभागेषु भङ्ग्या यद्विस्मयग्रहः।
तत्त्रिभङ्गीति कथितं त्र्यंशं तिर्यगुदञ्चितम्।।"**

हँसता सा भाव दिखाकर आँखों के त्रिभागों में नीचे, बीच में और ऊपर तिरछा इधर-उधर कमनीय रूप से देखना। आँखों के नीचे की पलकों की कोर थोड़ा सा ऊपर की ओर उठाना भी चाहिए। इसका नाम है त्रिभङ्गी दृष्टि।

१५. कुटिलम्—

**"निष्ठुरं पुटयोरन्तस्तारयोर्लुठनं मुहुः।
प्रकटभ्रूकुटीवृत्तिर्यत्र तत् कुटिलं विदुः।।"**

दोनों भौहें उठा कर, आँखे खूब खोल कर, पलकें दृढ कर, पुतलियों में जोर से हवा देकर पुनः पुनः गोलाकार घुमाना। इसका नाम है कुटिला दृष्टि।

१६. चटुलम्—

"चटुलं यत्तदत्यन्तदुष्प्रेक्ष्यं रूक्षभावतः।"

इतनी रूक्षता से देखना जिसे देखने में प्रेक्षक स्वयं असमर्थ हो जाय।

१७. ससम्भ्रमम्—

"अनवस्थितिरेकत्र यत्र तत् स्यात् ससम्भ्रमम्।"

घबराहट से पुतलियाँ आँखों में कहीं भी स्थिर न रहकर चञ्चल होते रहना ससम्भ्रम दृष्टि है।

१८. जडम्—

"सञ्चारशून्यदौर्बल्याद्यत्तज्जडमुदीरितम्।"

पुतलियों को ऐसा बलहीन बना देना जिससे कि वे चलने में असमर्थ हों, ऐसी दृष्टि जव है।

१९. अविक्रियम्—

"अनिश्चलं यत् शस्त्रास्त्रघातेऽपि तदविक्रियम्।"

अस्त्र-शस्त्र आदि के आघात से भी दृष्टियों में कोई चञ्चलता या विकार न हो तो वह दृष्टि अविक्रिय है।

२०. अकृत्रिमम्—

"स्वभावालोकितं यत्र तदकृत्रिममुच्यते।"

बिना किसी विकार से स्वाभाविक दृष्टि को अकृत्रिम कहते हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२१. अनुल्बणम्—

"अविकारि विकारस्य हेतौ यत्तदनुल्बणम्।"

विकार के अनेकों कारण रहते हुए भी जिस में कोई विकार न आये वह दृष्टि अनुल्बण है।

२२. अरोचकम्—

"अपाङ्गकूणनं यत्र तदरोचकमुच्यते।"

केवल आँखों की कोरें थोड़ा सा भींच कर पुतलियों में बल न देकर देखना अरोचक है।

रसों का जन्य-जनक भाव

"हास्यो भवति श्रृङ्गारात् करुणो रौद्रकर्मणः।
अद्भुतश्च तथा वीराद् बीभत्साच्च भयानकः।।"

श्रृङ्गार से हास्य, रौद्र से करुण, वीर से अद्भुत और बीभत्स से भयानक निष्पन्न होता है।

रसों में सात्त्विक तथा व्यभिचारिभावों का अनुप्रवेश

सात्त्विक और व्यभिचारी अनेक-रस-साधारण हैं। प्रत्येक रस में किन-किन भावों का अनुप्रवेश होता है, इसका संक्षिप्त उल्लेख नीचे दिया जा रहा है।

श्रृङ्गार में— श्रृङ्गार में सभी व्यभिचारी भावों का प्रवेश है।

हास्य में— हास्य में ग्लानि, श्रम, चपलता, हर्ष, अवहित्था आदि पाँच व्यभिचारी भावों का प्रवेश होता है।

करुण में— मद, धृति, व्रीडा, हर्ष, गर्व, औत्सुक्य, उग्रता इन सात भावों को छोड़ बाकी सभी भावों का करुण में प्रवेश होता है।

रौद्र में— निर्वेद, असूया, मद, मूर्च्छा, धृति, चपलता, हर्ष, गर्व, औत्सुक्य, विबोध, अमर्ष, उग्रता, मति, मृति, वितर्क, जैसे सोलह भावों का प्रवेश रौद्र रस में होता है।

वीर में— रौद्र के सोलहों भाव तथा निर्वेद भी मिलाकर सत्रह भाव वीर में आते हैं।

भयानक में— असूया, मद, धृति, व्रीड़ा, हर्ष, गर्व, निद्रा, सुप्ति, अमर्ष,, अवहित्था, उग्रता, मति, ये बारह भाव छोड़ बाकी सभी व्यभिचारी भावों का प्रवेश भयानक में होता है।

बीभत्स और अद्भुत में— चिन्ता, त्रास, आदि का प्रसङ्गानुकूल अन्दाज लगाया जा सकता है।

शान्त रस में— इसमें केवल निर्वेद और धृति का प्रवेश होता है। समझ लेना चाहिए कि व्यभिचारी भावों में प्रत्येक रस के स्वभाव का गुण ही रहता है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'नागानन्दम्' कूटियाट्टम् में जीमूतवाहन और मलयवती का शृङ्गार

जीमूतवाहन अपने वयस्य आत्रेय (विदूषक) को साथ लिये अपने माँ बाप के लिए पर्णकुटी बनाने के लिए मलय पहाड़ पर उचित स्थान की खोज करते घूम रहे थे। अचानक मधुर संगीत की ध्वनि से आकृष्ट हो गौर्याश्रम पहुँच जाते हैं और वहाँ अपनी सहेलियों के साथ चन्दन-लतागृह में वीणावादन कर भगवती की उपासना करने वाली मलयवती को देखकर उससे वार्तालाप करते हैं। यह शृङ्गार की अंकुरित दशा हैं। फिर आपस में अनुराग पुष्ट होने लगा। पिता के निर्देश से जब महर्षि शाण्डिल्य आकर मलयवती को साथ ले गये, तो वह (नायिका) नायक को (जीमूतवाहन को) कनखियों से देखती भी है।

इस प्रकार बिछुड़ जाने के बाद नायक (जीमूतवाहन) अपनी राजधानी में लौट आये, मगर खाने-पीने या आराम करने तक में उन्हें मन न लगा। सपना देख कर परेशान हो कामदेव को सामने दिखता सा दिखाकर उनसे कुछ कहते हुए पागल से बन जाते हैं। एक दिन वे गुरुशुश्रूषा आदि अपना कृत्य जल्दी से ही पूरा कर वयस्य के साथ मलय पर्वत की ओर निकल कर वहाँ चन्दन-लतागृह में बैठ कर मलयवती को देख न सकने के कारण दुःखी होकर उसका रूप चन्द्रकान्त-शिला में खींचकर वही रूप देखते आनन्द का अनुभव कर रहे थे कि मलयवती का भाई मित्रावसु अपने पिता विश्वावसु के आदेश से वहाँ आकर कहता है कि वह अपनी बहिन मलयवती का ब्याह उसके साथ कर देना चाहता है।

तब जीमूतवाहन यह न जान कर कि मलयवती और गौर्याश्रम में देखी कन्या दोनों एक ही है, कहते हैं कि वह दूसरी एक कन्या पर अनुरक्त है, इसलिए मित्रावसु की बहन से शादी करना असंभव होगा। इतना कह कर वे मित्रावसु को लौटा देते हैं।

इस बीच में नायिका तो खान-पान नींद आदि छोड़कर एकदम परेशान हो चुकी है। जब सखियों ने उससे कहा कि "चन्दन-लतागृह जावें, तो तदनुसार मलयवती उनके साथ निकल कर नायक जीमूतवाहन के पहुँचने के पहले ही चन्दन-लतागृह में पहुँच जाती है, और यह कह कर कि कोई आ रहा है, उसकी सच्चाई जान लेने के लिये, हम छिपी रहेंगी, वे पेड़ों की आड़ में लताओं से ढंकी छिपी खड़ी रह जाती हैं। ठीक उसी वक्त नायक (जीमूतवाहन) और विदूषक वहाँ पहुँच जाते हैं। उनका वार्तालाप सुन कर नायिका के मन में नायक के परानुराग की शंका होती है। और यह जानकर कि वे किसी कन्या का रूप खींच कर उसे देखकर आनन्द का अनुभव कर रहे हैं, ईर्ष्या भी पैदा हो जाती है। अपने भाई की शादी की प्रार्थना का तिरस्कार करते देखकर नायिका बेहोश भी हो जाती है और फिर आत्महत्या करने के विचार से लतापाश गले में डाल कर स्वयं लटकते हुए मर जाने की तैयारी से लतापाश गले में बाँधती है और लटक भी जाती है। यहाँ अनुराग की पल्लवित दशा का सूचन है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नायिका को लेकर सखियों का विलाप सुनकर नायक और विदूषक वहाँ पहुँच ज़ाते हैं और लतापाश-बन्ध से तुरन्त नायिका को मुक्त कर सच्ची बातें बताकर उसके विश्वास के लिए अपने द्वारा खींचा हुआ मलयवती का चित्र भी उसको दिखा देते हैं। चित्र में लिखित अपना रूप देखकर नायिका लज्जित हो सिर नीचा कर लेती है। वहीं बिना देरी के गान्धर्व-विधि से उन दोनों का विवाह संपन्न हो जाता है। इसके साथ नायक-नायिका का अनुराग कुसुमित दशा में पहुँच जाता है फिर नायक-नायिका का विवाह अपने सगे-सम्बन्धियों के साथ ठाट-बाट से सम्पन्न होने पर वे दोनों मिल कर कामकेळि में मगन हो आनन्द का अनुभव करने लगे। यह फलित दशा को सूचित करता है।

जीमूतवाहन की मलयवती के साथ प्रणय-लीला

जीमूतवाहन के मलयवती से ब्याह करने के पश्चात् शृङ्गार की फलित दशा का वर्णन किया गया है।

"दृष्ट्वा दृष्टिमधो ददाति कुरुते नालापमाभाषिता,
शय्यायां परिवृत्य तिष्ठति बलादालिङ्गिता नेङ्गते।
निर्यान्तीषु सखीषु वासभवनान्निर्गन्तुमेवेहते,
जाता वामतयैव सुतरां प्रीत्यै नवोढा प्रिया।।"

खेदाय स्तनभार एव किमु ते मध्यस्थहारो परः,
श्राम्यत्यूरुयुगं नितम्बभरतः काञ्चन्यया किं पुनः।
शक्तं पादयुगस्य नोरुयुगलं वोढुं कुतोऽम्बरपुटौ,
स्वाङ्गैरेव विभूषितासि वहसि क्लेशाय किं 'मण्डनम्'।।"

अहो कुसुमाकरोद्यानस्य परा श्रीः, इह हि—

निष्पन्दश्चन्दनानां शिशिरयति लतामण्डपे कुट्टिमान्ता-
नाराद् धारागृहाणां ध्वनिमनु तनुते ताण्डवं नीलकण्ठः।
यन्त्रोन्मुक्तश्च वेगाच्चलति विटपिनां पूरयन्नालवाला-
नापातोत्पत्तिहेला इत कुसुमरजः पिञ्जरोऽयं जलौघः।।

अमी गीतारम्भैः मुखरितलतामण्डपभुवः,
परागैः पुष्पाणां प्रकटपटवासव्यतिकराः।
पिबन्तः पर्याप्तं सह सहचरीभिः मधुरसं,
समन्तादापानोत्सवमनुभवन्तीव मधुपाः।।

एतत्ते भ्रूलतोल्लासिपाटलाधरपल्लवम्।
मुखं नन्दनमुद्यानमतोऽन्यत् केवलं वनम्।।
स्मितपुष्पोद्गमोऽयं ते दृश्यतेऽधरपल्लवे।
फलं त्वन्यत्र मुग्धासि चक्षुषोर्मम पश्यतः।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

यहाँ जीमूतवाहन के शृङ्गार का आलम्बन विभाव मलयवती है। "दृष्ट्वा दृष्टिमधो ददाति" इत्यादि से वामतारूपी आलम्बन चेष्टाएँ "खेदाय स्तनभार एव किमुते मध्यस्थ" इत्यादि रूप, यौवन आदि आलम्बन गुण, हार आदि आलम्बनालङ्करण "अहो कुसुमाकरोद्यानश्रीः" "निष्यन्दश्चन्दनानां" इत्यादि से तटस्थ— इस प्रकार चार प्रकार के उद्दीपन प्रकट किये गये हैं। "स्मितपुष्पोद्गमोऽयं ते' आदि से मन्दहँसी रूपी अनुभाव, भौरों का अपनी सहचारिणियों के साथ सुख-भोग कर खेलते रहना देख— इत्यादि से सात्त्विक भाव तथा निर्वेद आदि व्यभिचारी भाव, अलस, पलित, मसृण, मधुर, प्रसन्न, समन्मथ आदि व्यभिचारी दृष्टियाँ, भाव, हाव, कुतूहल आदि श्रृङ्गार चेष्टाएँ प्रकाशित हैं। इस प्रकार सूक्ष्म निरीक्षण से यह अनुभव हो जाएगा।

'नलचरितम्' कथकलि में नल का दमयन्ती के प्रति श्रृङ्गार

"एवं श्रुत्वा भारतीं नारदीयां पूर्वं तस्या पान्थलोकाच्छ्रुतायाम्।
सक्तं चित्तं तस्य वैदर्भपुत्र्यां जातं सातङ्कातिरेकातिदूनम्।।"

इस श्लोक से नल की चक्षुः प्रीति आदि तीन स्मर-दशाएँ सूचित की गयी हैं।

"कथनेन मुनेरनेन राजा कदने सौमदनेषुजे निमज्जन्"— इत्यादि से पल्लविता दशा प्रकट है।

दमयन्ती विषयक नल के श्रृंगार की फलित दशा "रेमे भैमी रहसि रमयंश्चाटुवचनैः" इत्यादि से सूचित है। यहाँ आलम्बन विभाव दमयन्ती है। 'कुवलय-विलोचने' 'किसलयाधरे' आदि से सौन्दर्य, 'बाले' से यौवन, 'चारुशीले' से स्वभाव गुण 'भैमी' से कुलीनता आदि प्रकट हुए हैं। ये आलम्बन गुण हैं। 'इनियो निन् त्रपयोन्ने एनिकु वैरिणि मन्ये" (पहले तो तुम्हारी लज्जा को ही मैं अपनी वैरिणी (शत्रु) मानता हूँ।) 'ध्वान्तं त्रपामयमपास्य' से प्रकट होने वाली लज्जा, आलम्बन चेष्टा और आभूषण अलङ्करण भी है। "मत्तकोकिलमायोरुधानत्तिल्-चेन्नत्तलेन्ये वाक् नाम" (मदमस्त पिकों से आकर्षक उपवन में जाकर सन्ताप छोड़ कर हम आराम करें") इत्यादि से तटस्थ भी सूचित है। इस प्रकार चार प्रकार के उद्दीपन विभाव यहाँ व्यक्त किये गये हैं। अलावा इसके कटाक्ष आदि अनुभाव 'सह तेन रेमे' से स्पष्ट है कि कामकेलि की आसक्ति देखकर अत्यन्त अनुराग से नायिका का भी उस पर मुग्ध हो जाने का सात्त्विक भाव, व्यभिचारी भाव, विभ्रमित, कुट्टमित आदि शृङ्गार चेष्टाएँ प्रकट हो जाने से नल-दमयन्ती विषयक प्रस्तुत श्रृङ्गार को सबसे अधिक पूर्णता तथा श्रेष्ठता प्राप्त हुई है। इस प्रकार श्रृङ्गार सम्बन्धी अन्य कई बातें युक्ति के अनुसार सोच-विचार कर प्रकृति के साथ जोड़ी जा सकती हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अभ्यास-प्रकरण

चाक्यार एवं नंगियारम्मा का (अभ्यास) प्रशिक्षण क्रम

१. सुबह करीब तीन बजे उठकर हाथ-मुँह धोकर 'श्रीकण्ठी, 'पोरनीरु' 'आर्तन्' आदि रागों के श्लोकों का पाठ करना।

२. ज़मीन पर जम कर बैठकर (कण्णिलक्कुक) दृष्टिविक्षेप का अभ्यास करना। भौहें चलाना, गालों को स्पन्दित कराना।

३. निम्नपाद में खड़े रहने का अभ्यास करना (ताणु निक्कल) क्रमशः दोनों पैरों के सामने का पदतल खोलकर एड़ी को आगे करके कमर का पृष्ठ-भाग पीछे की ओर जाने न देकर (मेय्यु) शरीर की व्याप्ति के अनुसार आधा बैठा आधा खड़ा सा खड़े रहना। दोनों पैरों को आपस में मिलने न देने के लिए दोनों घुटनों के बीच एक छड़ी रखने का रिवाज़ भी है। प्रतिदिन कम से कम पाँच-पाँच मिनट के क्रम से यों खड़ा रह कर धीरे-धीरे एक घंटे तक 'ताणु निक्कल' का प्रशिक्षण दिलाना होता है।

४. ताणुनिक्कल के साथ-साथ हाथ के दोनों तल खोलकर औंधा पकड़े, कभी बंद कर पकड़े, कभी मण्डलाकार घुमाकर पकड़ना चाहिए। कभी-कभी इसके साथ श्लोक-पाठ भी कराया जायेगा।

५. इस प्रकार चुवडु (CHUVADU) चारिकाओं आदि का प्राथमिक अभ्यास पूरा करने के बाद 'नित्यक्रिया' का आरम्भ करता है। जब तक 'नित्यक्रिया' स्वयं गलती किये बिना शिक्षार्थी कर नहीं पाता, तब तक दूसरी कोई भी क्रिया नहीं शुरु की जाएगी। नित्यक्रिया का पाठ पूरा हो जाने पर अङ्गुलीयाङ्क, मत्तविलास आदि क्रियाएँ सिखायी जाती हैं। पर इन सभी क्रियाओं के अभ्यास के साथ-साथ पूर्वपाठ नित्य-क्रिया आदि का दोहराना अनिवार्य है।

६. सभी क्रियाओं की शिक्षा पूरी हो जाने पर 'इळकियाट्टम्' सिखाया जाता है। उसका क्रम यों है—

रागों के अनुसार श्लोक स्वयं पढ़े, और पढ़े जाने वाले प्रत्येक शब्द की मुद्राएँ उनके स्वभाव के अनुसार ज़ोर से पदाघात कर कूदते हुए पैर ऊपर उठाकर पकंड़े, पैर फैला कर पदाघात करके कोने की ओर पदाघात कर कूदते हुए मुड़ कर शरीर को शिथिल बनाते हुए घुमाकर श्लोक के पूरा होने तक अभिनय करना, वैसे ही विस्तार

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

से अर्थाभिनय कर उसके बीच में आनेवाले दूसरे अभिनय और विशेष क्रियाएँ करना आदि इळकियाट्टम् के अन्तर्गत है।

७. फिर 'पुरप्पाट्' 'केशादिपादम्', कोप्पणियिक्कल, पर्वतवर्णन, वृक्षवर्णन, पक्षिस्तोभम्, तालंचविट्टुक आदि विशेष अभिनयों का प्रशिक्षण दिया जाता है।

ऊपर का अभ्यास सुबह आठ बजे तक का है।

८. दोपहर को श्लोक, नाटक, आट्ट-प्रकार आदि शक्ति के अनुसार शिष्यों को कण्ठस्थ कराया जाता है।

९. रात के समय पहले नेत्रों का परिशीलन चलता है। बीच में कभी-कभी नेत्रों को विश्राम (आराम) देते समय नीचे ऊपर दोनों हाथों की कलाइयाँ उठाकर घुमा कर हँस मुद्रा में हथेली को उलटा पलटी कर हथेलियों के संचालन का अभ्यास कराते हैं। फिर पुनः आँखों का अभ्यास शुरु कर देते हैं। भौंहे हिलाना, फिर आँखों का अभ्यास, फिर गालों को हिलाना और फिर आँखों का अभ्यास, इस प्रकार करीब एक घंटे तक यह अभ्यास-क्रम जारी रहता है।

रात के अभ्यास से आँखों को अपेक्षित चालन-शक्ति जब मिल जाती है तब रसों का अभिनय सिखाना, श्लोकों का मुद्राभिनय सिखाना आदि शुरु होता है।

आँखों का अभ्यास करीब-करीब पूरा हो जाने पर तथा रसाविष्कार की शक्ति आ जाने पर मुख्य मुद्राएँ रस के साथ अभिनय करने का अभ्यास शुरु होता है।

सो जाने से पहले दोपहर को सीखे श्लोकों का राग के साथ पाठ करने का क्रम भी जारी है। ऊपर बताए गए सारे अभ्यास-क्रम पूरा कर हाथ, शरीर, आँख, स्वरालाप आदि के लिए आवश्यक अभ्यास मिल जाने पर अँगुलीयकाङ्क, मन्त्राङ्क आदि सीखने लगते हैं। इससे अभिनय के सभी विषय तथा विदूषक के वाचिकाभिनय आदि शिक्षार्थियों के कन्ठस्थ हो जाते है। अलावा इसके शुरु से ही संस्कृत भाषा की शिक्षा भी शुरु होती है। धीरे-धीरे काव्य, नाटक, अलंकार तथा तर्क, व्याकरण आदि शास्त्र भी पढ़ कर उसे आवश्यक विद्वत्ता भी हासिल कर लेनी होती है।

आँखों के अभ्यास-क्रम (पुतलियों के चलाने का क्रम)— ज़मीन पर जम कर बैठना, फिर दोनों पलकों पर घी लगाकर आँखों को खूब दोनों ओर मल कर ऊपर की दोनों पलकें खूब बल देकर उँगलियों से ऊपर की ओर उठा कर पकड़ते हुए पुतलियों का अभ्यास शुरु कर देना है। अभ्यास के समय आचार्य को शिष्य के सामने बैठकर हाथ से मण्डलाकार आदि इशारे देकर उन इशारों पर से जरा भी भ्रष्ट होने न देकर (साधक को) अभ्यास कराना है। आँखें इस अभ्यास से जब

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

करीब-करीब विकसित हो जाती हैं, तो फिर हाथों से उठाकर पकड़ने की आवश्यकता नहीं रहती।

पुतलियों के संचार क्रम के अनुसार इक्कीस प्रकार का अभ्यास-क्रम है। वे यों हैं—

१. (O) पुतलियों को बाएँ और दाएँ गोलाकार चलाना।

२. (++) बीचों-बीच से बाएँ और दाएँ चलाना।

३. (‡) बीचों बीच से ऊपर-नीचे चलाना।

४. (V) कोने से कोने की ओर बाएँ दायें चलाना।

५. (∪) बाईं आँख की छोर से, नीचे की ओर दाईं आँख के छोर तक अर्धचन्द्र की आकृति में चलाना।

६. (∩) ऊपर बताई विधि से आँख के ऊपरी हिस्से से चलाना।

७. (ω) मलयालम के इस 'घ' अक्षर के रूप में चलाना।

८. (ന) मलयालम के 'न' अक्षर के रूप में चलाना।

९. (३) इस आकृति में चलाना।

१०. (ε) इस आकृति में।

११. (V) पुतली को आँख के ऊपर बाएँ कोने से नीचे आँख के बीच में लाकर ऊपर, दाएँ कोने तक V इस आकृति में चलाना।

१२. (Λ) ऊपर बताए रूप के ठीक उलटे रूप में चलाना।

१३. (W) इस प्रकार ऊपर, तीन स्थान बनाकर अभ्यास करना।

१४. (M) ऊपर बताए रूप का सीधा उल्टा रूप।

१५. (>) इस प्रकार तिरछा अभ्यास।

१६. (<) ऊपर दिखाये गये का उल्टा।

१७. (⋝) तिरछा तीन स्थान लगाकर अभ्यास।

१८. (⋜) ऊपर दिखाये गये का ठीक उल्टा।

१९. (∞) पड़े अंग्रेजी 8 के रूप में।

२०. (8) खड़े 8 के रूप में।

२१. (ꟺ) इस प्रकार तीन-तीन स्थान तिरछे ऊपर-नीचे देकर अभ्यास करना।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इस प्रकार करीब करीब अभ्यास पूरा हो जाने पर गुरु की कुशलता तथा उपदेश के अनुसार पुतली में हवा देकर साधक को अभ्यास पूरा कर देना चाहिए। लेकिन हवा देकर 'साधन' (अभ्यास) कराने पर विशेष ध्यान रखना चाहिए कि सर्पदृष्टि न होने पावें। पुतली में तीन हवा देकर अभिनय करने की सिद्धि हासिल करनी है। इस कदर अभ्यास प्राप्त होने पर ही अभिनय में रसाविष्कार की संपूर्ण योग्यता सिद्ध हो पाएगी।

कूटियाट्टम् में चाक्यार का और स्त्रियों की भूमिका लेनेवाली नंगियारम्मा दोनों का अभ्यास-क्रम एक ही है। लेकिन चाक्यार के जैसे उतना अधिक निम्नपद में खड़े रहने का अभ्यास नंगियारम्मा को आवश्यक नहीं माना जाता।

नंबियार का अभ्यास-क्रम

विशेषाभिनय (आट्टम्) आदि के अनुसार मिष़ाव बजाने वाले नंबियार का अभ्यास क्रम नीचे दिया जा रहा है।

बड़े सबेरे उठकर शरीर-शुद्धि के बाद गुरु के उपदेश के अनुसार "पाठकय्युकल् कोट्टि" (पाठ के उपयुक्त प्रत्येक ताल में बजाने वाले प्रयोग कर) हाथ का प्रयोग-लाघव साधक हासिल कर लेता है। यह नीचे के 'जति' (बोल) के अनुसार लंबी मात्रा के क्रम से धीरे-धीरे द्रुत मात्रा तक तथा सीधे उलटे द्रुत मात्रा से शुरु कर लंबी मात्रा में ही समाप्त हो जाने लायक होना चाहिए। ये (पाठ्क्कय्युकल्) प्रयोग आम तौर पर चार-पाँच प्रकार के हैं— **(१) तक्किट, (२) तरिकिट (३) तक्किट किटतकि तरिकिट किटतकि (४) धिक्कितक्क धिक्कित्तक्क धिक्कित्तक्कत्त।**

इस प्रकार पाठक्कय्युकल् (पाटवक्कय्युकल) पाटव हासिल करने के हाथ के आभास प्रयोग बजाने के बीच कई एण्णङ्ङुलू विशेष क्रम से बढ़ा-बढ़ा कर फिर घटा-घटा कर तथा उसका विशेष का कलाश (समापन) बजाने का, 'तिरु' बजाने का, पूर्वविराम बजाने आदि का अभ्यास भी सिखाया जाता है। इस प्रकार बजा-बजा कर हस्त में लाघव आने पर साधक नाटकाभिनय के आवश्यक मिष़ाव का विशेष प्रयोग सिखाने लगता है— जैसे मिषावोच्च प्पिटुत्तुक, गोष्ठिकोट्टुक, नित्यक्रियाएं सिखाना आदि। इसके बाद अंगुलीयकाङ्क, मत्तविलास, मन्त्राङ्क आदि कूत्तु नृत्य की क्रियाओं के अनुसार मिष़ाव बजाने का अभ्यास दिया जाता है। प्रत्येक ताल में मिश्रित ऊपर बताए अंकों की क्रियाएँ निर्दिष्ट विशिष्ट तालों के अनुसार ताल देकर बजाया जाता है। इसके बाद 'आट्टम्' के लिए आवश्यक प्रत्येक विधाएँ सिखायी जाती हैं। इसके लिए त्रिपुटा, विदूषक का एकताल, अटन्ता, ध्रुवताल, झंपाताल आदि तालों में 'स्थायी' में रह कर 'निलनिन्नन्' प्रारंभिक मात्रा में शुरु कर विशेष विधाएँ बजाने तथा कथापात्र की मुद्राओं के अनुसार बजाने का अभ्यास किया जाता है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चाक्यार या नंग्यारम्मा द्वारा पढ़े जाने वाले राग समझ कर विभिन्न तालों में प्रसंगानुकूल बजने की श्रुति में ऊँच-नीच भाव डालकर समस्थायी में ललित रूप में तथा रुक्ष रूप में बजने का अभ्यास प्राप्त कराना है। इसके अलावा, पटप्पुरप्पाट्, "कैलासोद्धारण", 'वृक्षवर्णन', 'केशादिपाद', 'युद्धचारि', 'तालंचविट्टल्', 'उद्घट्टनम्', 'मयिलाट्टम', 'कोप्पणियिक्कल', 'क्रीडा', ('मून्नांतालत्तिल्' इन्नइन्वपदु 'पुरप्पेटल्',) उत्तरीयवंशल्, 'प्रावेशिकम्', मद्यपान, वानरस्तोभ, पक्षिस्तोभ, उत्तरीयंवीशल्, 'प्रावेशिकम्', मद्यपान, वानरस्तोभ, पक्षिस्तोभ, चुवटुचविट्टल् आदि विशेष आट्टों के लिए खास प्रकार के वाय्चोल्लुकल् (जति) के ताल के अनुसार बजाने का प्रत्येक का 'तालवट्ट' (तालकाल) उपदेशानुसार निश्चित गणनाओं के साथ ठीक-ठीक बजाने का अभ्यास दिया जाता है।

इस प्रकार मामूली सब क्रियाओं का अभ्यास प्राप्त कर चुकने के बाद कूटियाट्टम् आदि के रंगों में अलङ्करण रूप में किया जाने वाला **'तायंपका'** विभिन्न काल में भिन्न-भिन्न तालों विशेष रूप से अभ्यास से प्राप्त वादन प्रवीणता दिखानेवाला तनियावर्तन (वाद्य मात्र का प्रयोग) सिखाया जाता है। साधारण रूप में **'चेंटा'**-वाद्य में छड़ी पर लाये जाने वाले सभी प्रयोग विशेष दाएँ हाथ में 'चेंटा' में बाएँ हाथ से बजने वाले सभी प्रयोग बाएँ हाथ में लाकर बजाने का विशेष अभ्यास 'तायंपका' के लिए आवश्यक है। दूसरे प्रकार का एक अभ्यास क्रम भी है। दोनों हाथों में मिलाकर सभी प्रयोग लाने की यह रीति कम गौरवपूर्ण मानी जाती है। इसके लिए एक दो निलावभ्यास (चन्द्रिका अभ्यास) भी कराया जाता है। निलावभ्यास माने शुक्लपक्ष और कृष्ण पक्ष की चाँद के प्रकाश की समयपरिधि के हिसाब से लगातार अभ्यास करते रहना। शुक्लपक्ष में बढ़ते-बढ़ते पूरी रात बाजा बजाते रहने की क्षमता सिद्ध करनी है। फिर घट, घट कर अमावस्या तक न्यूनतम। इस प्रकार लम्बे अर्से तक बाजे पर प्रयोग-चातुरी दिखाने का अभ्यास क्रम निलावभ्यास-कूटियाट्टम् के मिष़ाव-कलाकार को प्राप्त कराया जाता है। इस बाजे के अभ्यास में लाघव की क्रिया सुबह तथा बजाने का विशेष प्रयोग रात को सिखाया जाता है। दोपहर को 'तमिलकुत्त' कण्ठस्थ करना, नाटकोंका सामान्य ज्ञान प्राप्त करना, राग और मुद्राएँ सीखना, आट्टप्रकार और क्रमदीपिका पढ़कर 'आट्टम्' के विषयों का स्वभाव समझ लेना आदि कराया जाता है।

कुष़ल वादन के अनुकूल मिष़ाव में बजाने का अभ्यास भी नंबियार को प्राप्त करना है। कभी-कभी रंगमंच से नट नेपथ्य में जाते हैं और वापस आने में देरी का अनुभव हुआ तो प्रेक्षकों का मानसिक उल्लास बढ़ाने के लिए (कम न होने देने के लिए) मिष़ाव पर अपने मनोधर्म के कुछ विशेष वादन करने की उपाधियों में एक है—कुष़ल-पट्ट के साथ बजाना।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मिष़ाव का अभ्यास पहले काले पत्थर (करिंक्कल्ल्) पर, फिर काठ के तख्ते पर और फिर चमड़े से मुँह ढके काठ के स्तम्भ खण्ड (मरक्कुट्टी) पर किया जाता है।

ऊपर बताए अभ्यास के अलावा 'चुट्टिकुत्तल', अणिकुत्तल् कोप्पुपणि, आणियिप्पिक्कल, (श्रृंगार करना) केशभार बाँधकर तैयार करना, 'माट्टमटक्कल' उत्तरीय बाँधना, कपड़े को रस्सी की तरह बट देना (नागानन्द) आदि प्रत्येक कूत्तुनृत्य के आवश्यक सभी रंग सज्जीकरण प्रक्रियाएँ तैयार करने का अभ्यास भी नंबियार को हासिल करना है। चाक्यार को भी ये सब सीखनी है। लेकिन 'परक्कुंकूत्तील्' में रस्सी पकड़ने की कला केवल नंबियार को ही सिखायी जाती है।

मिषाव के उपवाद्य के रूप में 'इट्यका', 'तिमिला' कुष़ल, शंख आदि का प्रयोग किया जाता है।

नंबियार के विशेष दायित्व

नागानन्दम् कूटियाट्टम् के 'परक्कुंकूत्तू' में 'रस्सी पकड़ना' के 'केट्टिञालल्' के लिए चुन्नटोंवाला कपड़ा तैयार करना, बहने का दृश्य दिखाने (ओष़किलङ्क) में नदी का आभास पैदा करने हेतु रङ्गमञ्च पर बुनाई के सूत के ताने को थोड़ा टेढ़ा (थोड़ा ऊपर से नीचे की ओर) कर के फैलाना, सूत डालना (नूलिटल्) आदि खतरे की संभाव्यता तक रहने वाले रंग-सज्जीकरण का दायित्वं पूर्ण कार्य नंबियार के कर्तव्यों के अन्तर्गत हैं। इक्कीस अंकवाले रामायण कूटियाट्टम् में भारतवाक्यम् के अभिनेता चाक्यार के जैसे कथानक का तमिष़ पढ़ने वाले नंब्यार को भी विशेषकर्मों का अधिकारी माना जाता है।

किसी किसी नाटक में नान्दी-सूत्रधार का पूरा भाग, किसी-किसी में स्थापना सूत्रधार के कुछ-कुछ अँशों का निर्वाह भी नंबियार के दायित्व पर चलता है। प्रसंग के अनुसार कुछ वेश भी नंबियार धारण करता है। लेकिन कूत्तु और कूटियाट्टम में नंबियार, नंगियारम्मा और चाक्यार के अलावा और किसी को वेष धारण करने का या रंग में प्रवेश करने का अधिकार नहीं दिया गया है।

नंगियारम्मा के दायित्व और विशेष प्रशिक्षण

कूटियाट्टम् में नंगियारम्मा के दो दायित्व है—

एक तो नाटक के स्त्री कथा पात्रों का अभिनय, दो— रंग में बैठ कर मँज़ीरे से ताल देना तथा श्लोकों वाक्यों आदि का पाठ करना। इनमें पहला दायित्व-स्त्रीवेष-नटी के अभ्यास के बारे में पहले विचार किया गया है। दूसरा दायित्व रंग में कुतप स्थान पर बैठना है। रंग में बैठने की रीति यह है कि सूत्रधार के प्रवेश के साथ रंगमंच पर आ बैठे तथा मिष़ाव के बजने के अनुसार मजीरे से ताल दे। ताल के साथ 'अक्कित्ता'-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'चोल्लुका', 'मुळुक', 'पाटुक', 'अळाम्' आदि श्लोक, नाटक की चूर्णिकाएँ तथा श्लोक का पाठ करना आदि है।

जब तक सभी कथापात्र रंग से निष्क्रमण कर 'कूत्तु मुटिक्कुक' कूत्तु नृत्य की परिसमाप्ति होती है तब तक नांगियारम्मा को रंग में बैठना चाहिए। विशेष अभिनय आदि के समय एक से अधिक नंगियार रंग में बारी-बारी से या एक साथ बैठने की रीति है।

रंग में बैठकर निर्वाह करने वाले कार्यों के लिए भी विशेष अभ्यास आवश्यक है। वह यों है— मिषाव में बजाये जाने वाले सभी ताल हाथ से लगा-लगा कर दृढ करना है। ताल के अनुसार ताल के साथ पढ़े जाने वाले अक्कित्ता आदि के श्लोक निर्दिष्ट ताल के साथ पढ़ने का अभ्यास करना। श्रीकण्ठी, तोण्ट, पुरनीर, आदि जो-जो राग चाक्यार लोग पढ़ते है, उन सबको बड़े तड़के उठ कर पढ़-पढ़ कर कण्ठस्थ करना।

चाक्यार के 'परक्कुंकूत्तु' की तरह नंगियारम्मा को 'केट्टिञालुक' 'ओषुकुक' आदि करना है, जिसके लिए विशेष प्रशिक्षण भी दिया जाता है।

चोल्लियाट्टम् सिखाने की रीति

जिस प्रकार रंग में प्रेक्षकों के सामने दिखाया जाता है, वैसे नंबियार का बाजा, नंगियारम्मा का ताल लगाना, श्लोक पढ़ना, चाक्यार का अभिनय, 'आट्टम्' इस सब का मिश्रित अभ्यास ही चोल्लियाट्टम् है। मुद्राएँ, अभिनय, रसाविष्करण, आदि का सही प्रशिक्षण देना ही इसका उद्देश्य है। इस रीति के स्पष्टीकरण के लिए एक श्लोक की चोल्लियाट्टम् रीति यहाँ नीचे दी जाती है—

''मयि जीवति मानुषादवाप्तां विपदं मे सहजा शुचं जहातु।
अवमर्द्य पतिं हरामि सीतां तुरगान् सूत जवेन चोदय त्वम्।।''

(आश्चर्यचूडामणिनाटक, तृतीय अङ्क)

यह रावण के अभिनय के लिए निश्चित श्लोक है। नट रावण की स्थायी में ''मून्नांत्ताल'' में निकल कर सीधे सामने की ओर मुड़ आकर 'सभानिरीक्षण'कर ''कमलपरिवर्तनत्तिळ्तोषुत्'' पीठ पर बैठकर ''अभिवाद्य'' और 'सभानिरीक्षण' कर 'कमलपरिवर्तनत्तिळ्तोषुत्' ''अनुक्रम'' और 'संक्षेप' का अभिनय करे। (इस समय ताल के अनुसार नंबियार का बाजा आदि चलते रहेंगे) फिर नट, रावण के भाव में उत्तरीय हथेली पर डालकर सीता का ''पञ्चाङ्गमाटुक'' करे। उसकी रीति— पहले ''केशादिपाद'' की मुद्रा दिखा कर फिर केशजाल, आँखे, चेहरा, स्तन, पैर, ये मुद्रायें भाव, रस और ताल मेल के साथ दिखावें फिर 'केशादिपाद' मुद्रा दिखाकर 'त्रिपुटताल'

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

में "कामशरंकोळ्ळल" कामशर लगने का भाव दिखाकर अन्त में पीठ पर बैठकर ही उद्विग्न भाव में थोड़ा बैठकर फिर जागता सा दिखाकर विप्रलम्भ शृङ्गार में सीता के प्रति अभिलाषा दिखावे, फिर चिन्तित हो "तो सीता को लाने के लिए निकलना ही है" की मुद्रा दिखाकर फिर स्नान आदि से शरीर की शुद्धि कर, देवकार्य, भोजन आदि कर, आस्थान मण्डप में सिंहासनारूढ हो कर किरीट, कटक, अंगद आदि से अलंकृत हो कर, पान चबा कर, आइने में देखकर, सीता के प्रति अनुराग दिखाकर 'सीता को लाने लिए जाना ही है'—दिखा कर 'अरे सूत, रथ जल्दी लाना' कह कर पीठ से उठकर, पीठ हटाकर, 'उत्तरीय' को कमर में बाँधकर 'पोयनख्' भी बाँधकर कमर कस कर 'चन्द्रहास' दिखाकर, उसे स्पर्श कर शिरोधार्य कर, उसे हाथ में लेकर ऊपर की ओर फेंक कर फिर पकड़कर हिलाकर सामने की ओर खड़े हो कर "हे शूर्पणखा, तू रथ में चढ़" इति मुद्रा से दिखाकर, दाएँ ओर घूम कर बाएँ ओर देखकर "शूर्पणखा रथ में चढ़ चुकी" इस प्रकार मुद्रा दिखाकर आप स्वयं सूत का हाथ पकड़कर रथ में आरूढ़ होकर "तेर पेरुमाट्टम्" में घूमकर, सामने की ओर खड़े होकर, सीता का "पञ्चाङ्गम्" आदि अभिनय कर "कामशरंकोळ्ळुक" करने पर पास खड़ी शूर्पणखा को देखकर "यह मेरा चापल्य देख रही है, बुरा ही हुआ", 'क्या और किसी ने देखा'? यह दिखाकर चारों ओर घूमते हुए देखकर ऊपर की ओर देखने पर, देवों को हँसी उड़ाते देखकर 'जरा ठहरो'— दिखाकर— 'अरे सूत, रथ जल्दी हाँको'— दिखाकर— 'तेर पेरुमाट्टम्' में एक बार चलकर घूमकर-दीप के सामने निम्नपद में खड़े होकर सीता का पञ्चाङ्ग-अभिनय कर, 'कामशर' लगा हो ऐसा दिखा कर पास खड़ी शूर्पणखा को देखकर लज्जा आदि सब दिखाकर, देवों को हँसी उड़ाते देखा— "अरे देवों, मैं इसका बदला चुकाऊँगा" ऐसी मुद्रा दिखाकर "अये सूत, जल्दी रथ हाँक दो" दिखा कर फिर 'तेर पेरुमाट्टम्' में चलकर घूमते हुए, दीप के सामने निम्न पद में खड़े होकर सीता पञ्चाङ्गाभिनय कर, पहले जैसे सब दिखाकर 'देवों की हँसी देखकर' "अरे देवो! मैं सीता को जबरदस्ती से पकड़कर लङ्का लाकर इसका बदला चुकाऊँगा" यह दिखाकर फिर बाईं ओर "अये सूत, जल्दी घोड़ों को चलाओ" वह क्या? मेरी इस भगिनी को नाक और कान काटे जाने से बड़ा दुःख है। उस दुख को वह छोड़े। मेरी यह सहजा (बहिन)— ऐसा कहने का कारण क्या है? "कुम्भकर्ण की बहिन" या "विभीषण की बहन" ऐसा कोई भी इसे नहीं पुकारता। सब लोग इसे रावण की बहिन शूर्पणखा ही मानते हैं इसीलिए तो मैंने 'मेरी बहन' कहा। यह कैसी? मोटे तगड़े मेरे जीते जी किसी मानव की वजह से ऐसी विपत्ति इसे भोगनी पड़ी है। काश! अगर आज यह देवराज इन्द्र की वजह से हुई होती तो इतना बुरा न लगता। या देवों में किसी की वजह भी क्यों न हो तो भी सहा जाता, या फिर भूमि के किसी राजाधिराज ने की हो तो भी परवाह नहीं, इनमें से किसी ने यह दशा नहीं की। जंगल में, हवा, वर्षा, बरफ, धूप

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आदि सह कर दाढ़ी मूँछे बढ़ाकर 'ऋषभणस्नान' (किसी को घर से निकालने पर या स्वयं संन्यास लेने पर किया जाने वाला स्नान) भी कर कन्द-मूल, फल आदि से भूख मिटाने वाले एक साधारण मानव ने ऐसा किया है। हाय! अगर इसकी हत्या की होती तो मुझे दुःख न होता, इस विचार से कि मैं हमेशा इसे देखता ही रहूँ, उस मानव ने ऐसा किया। मगर मैं अभी जा कर उस राम को मार कर सीता का अपहरण कर लाऊँगा। वह कैसे? मैं कमर कस कर, चन्द्रहास लेकर, राम के सामने जा कर उसे युद्ध के लिए ललकारूँगा तब राम कमर कस कर धनुष चढ़ा कर तूणीर बाँध कर मेरी ओर लड़ने आयेगा। इस दुर्बल मनुष्य की हत्या के लिए मुझे हथियार की ही क्या जरूरत? ऐसा दिखाकर तलवार नीचे डालकर राम के पास जाकर गला घोंट कर उसे मार कर सीता के पास जा कर फिर (निम्नपद में खड़े होकर 'मुड्डन' की स्थायी में) 'अरी, रूपवती सीता तू दुर्बल राम की चिन्ता से दुःखी न होना, मेरे साथ लंका आकर सुखी रह, तो तुम्हें बहुत बड़ा सुख मिलेगा, तुम्हारे मन की इच्छाएँ क्या क्या हैं? जो कुछ भी हो सब सफल बनाऊँगा। (फिर मुड्डन की स्थायी छोड़कर) सीता की ओर गौर से देखकर, इतना सब करने पर भी इसमें कोई भाव-भेद नहीं होता? तो देखो "सीता को केश में पकड़कर घसीटते-घसीटते लङ्का ले आऊँगा। ऐसा करने पर उसके मन का दुःख दूर होगा। इसलिये हे सूत घोड़ों को हाँकों, 'धीरे से हाँकना काफी नहीं' जल्दी करना है। वह क्यों? सब लोग ऐसा सुनें— "अरे रे रावण सीता को जबरदस्ती पकड़ कर ले गया"। उसका कारण क्या? शूर्पणखा के कान और नाक काट डालना ही है। इस प्रकार जब लोग सुन लें, शूर्पणखा के कान और नाक काट लिए जाने की वजह से रावण सीता को चुरा कर जबरदस्ती घसीटते घसीटते लंका ले गया। यह पहले सुन लें, इसलिए घोड़ों को जल्दी हाँक दो। मुद्रा दिखाकर "विलक्कि" (रोक कर) "मयि जीवति मानुषा"…….यह श्लोक पढ़ावे।

Ӿ

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दृष्टान्त-प्रकरण

आट्टप्रकारम्— नागानन्द— दूसरा अङ्क

पहला दिन— नायक का'पुरप्पाट'

आचार के अनुसार रङ्ग-प्रसादन कर दीप रखकर परम्परा की रीति के अनुसार चाक्यार "तलयिल् केट्टि" चेहरे पर चायिल्य लगा कर आँखों व भौंहों पर काजल चढाकर (बिना चुट्टि के भी) "चुण्टप्पोटियट्ट्" होठ लाल कर 'चुण्टप्पू इट्ट' (आँखें लाल कर) 'मिनुक्कि' पैरों पर चावल का घोल लगाकर 'माट्टकेट्टि' 'पोयनख' डाल कर 'कुप्पायम्' कुर्ता पहनकर "छन्नउरम्" 'पोषुम्प्' तोलवला कटक, कटिसूत्र, मारमाला (छाती पर की माला) इत्यादि 'अणिजाल' पहनकर कानों में कुण्डल पहन कर, सिर पर किरीट और केशभार बाँधकर, चुट्टित्तुणि, चुवप्पुतुणि, पिलिप्पट्टम् रत्नपट्टम् धूसरम् आदि सब दृढ़ बाँधकर उत्तरीय पहन कर चेविप्पूव पहन कर नायक (जीमूतवाहन) वेष का सब विधान सम्पन्न किया जाता है। (अणिञ्ञुकूटुन्नु)

चाक्यार के "तलयिल केट्टल्" के बाद वेष विधान के लिए अपेक्षित समय का अन्दाज लगाकर नंबियार दीप की तीनों बत्तियाँ जलाकर रङ्ग में "तालक्कूट्टम्" रख कर आचार के अनुसार मिष़ावोच्चप्पेटुत्तियाल् (मिषाव ओच्चप्पेटुत्तल् करने पर) नंगियारम्मा के रङ्ग में आ बैठने पर नंबियार "गोष्ठी कोट्टल" शुरु करता है। उसके बाद नंबियार नान्दी सूत्रधार का वेष लेकर जल-गन्ध-पुष्प-युक्त अञ्जलि लिये रंग में प्रवेश कर नान्दी-सूत्रधार और स्थापना-सूत्रधार दोनों के कर्तव्य-रूपी मङ्गलकामना के साथ कथावस्तु की सूचना का भी एक पद्य पढकर, निर्वाह कर, फूलों की आराधना कर, हाथ जोड़ कर अभिवादन कर "अरङ्गु तळिक्कुक" का कार्य पूरा कर देता है। प्रस्तुत अङ्क के अरंगुतळि के लिए निर्दिष्ट श्लोक—

"अमलगुणविभूषां सिद्धराजेन्द्रपुत्री—
मचलवरतनूजां मन्दिरात् साधु दृष्टाम्।
मनसिजपरितापेनालिखन्निन्दुकान्ते,
बुधजननयनेन्दुः पातु विद्याधरेन्द्रः।।"

प्रस्तुत श्लोक से यह सूचित किया जाता है कि सिद्धराज की पुत्री, सर्वाभरण-भूषिता मलयवती को गौर्याश्रम में देखने पर कामपीडित हो चन्द्रकान्त-शिला पर उसका रूप लिख कर प्रसन्न होने वाला बोधिसत्त्व जीमूतवाहन हम सबकी रक्षा करे और इस

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मंगल प्रार्थना से तुरन्त प्रवेश करने वाले कथा-पात्र मलयवती के प्रति कामार्त-जीमूतवाहन ही है यह वस्तु-निर्देश भी सूचित किया जाता है।

इस प्रकार 'अरङ्गुतेलियिक्कल' व कथा सूचना हो जाने पर यवनिका पकड़कर "वायिक्कुक" पूरा करने पर दयावीर कथानायक जीमूतवाहन "मुखत्तुनीरु तळिच्च्" (मुखाचमन कर) रंग में प्रवेश कर मिष़ाव की ओर खड़े होकर "मरयिल् मुतळ्नटा" 'मुटिच्च' नेपथ्य में आवें। फिर आचमन कर (मुखत्तु नीरुळिच्च्) विदूषक (आत्रेय) के हाथ पकड़े हुए भाव में प्रवेश करते हैं। (ततः प्रविशति नायको विदूषकश्च)। थोड़ी देर खड़े होकर, दोनों ओर देखकर, विचार-भाव का अभिनय कर, गौर्याश्रम में देखी हुई कन्या का "केशादिपादम् आटि कामशरं कोण्ट्" कसकर परवश होकर बेहोशी से जागता दिखाकर सामने कामदेव को देखकर 'इससे कुछ कहना ही तो है' यह दिखाकर बाजा बन्द कराके श्लोक का पाठ करें।— "व्यावृत्यैव क्षितासितेक्षणरुचा तानाश्रमे शाखिनः कुर्वत्या विटपावसक्तविलसत्कृष्णाजिनौघानपि। यद्दृष्टोऽस्मि............तक पढ़ कर अर्थाभिनय कर दुबारा पढने पर "यद्दृष्टोऽस्मि तया" तक पढकर फिर बाकी श्लोक का अर्थ आटि (अभिनय कर) पूरा होने पर 'विलक्कि' 'तथा' यह पढ़कर 'चेरियक्क्', 'वलियक्क', 'कुंकुण' आदि नित्यक्रियाएँ दिखाकर श्रीपरमेश्वर और श्री पार्वती के केशादिपाद्माटि" "मारशरीरं" पूरा हो जाने पर दिक्पालवन्दन कर 'नृत्त' में 'कूत्तु' "मुटिक्कुक" (कूत्तु की परिसमाप्ति करें)।

(नागानन्द के दूसरे अङ्क कूटियाट्टम् के लिए विद्याधरोत्पत्ति तथा पहला अङ्क नायक-निर्वहण के रूप में अभिनय करता है)

'पुरप्पाट' के दूसरे दिन याने दूसरे दिन, नायक निकल कर "कळियुं वेच्चु तिरिञ्ञ्" 'सभानिरीक्षणम्' कर 'कमलपरिवर्तनत्तिल् तोषुतु" पीठ पर बैठकर 'अभिवादन' कर सभा-निरीक्षण 'कमलपरिवर्तनत्तिल् तोषुकल' आदि कर 'अनुक्रममाटुक' अनुक्रम का अभिनय शुरु करें।

अनुक्रमम्— बहुत दिनों के पहले गौर्याश्रम में मलयवती को देखकर जीमूतवाहन काममोहित हुआ, सो कैसे? उसके पहले जीमूतवाहन ने पर्णशाला (पर्णकुटी) बनाने के लिए मलय पर्वत पर चढ़कर चलते वक्त गौर्याश्रम को देखा, सो कैसे? उसके पहले जीमूतवाहन पिता के निर्देश से पर्णकुटीर बनाने के लिए आत्रेय को साथ लिए निकला, सो कैसे? उसके पहले जीमूतवाहन ने देश की रक्षा के लिए अमात्यों को नियुक्त कर आत्रेय को साथ लेकर वनभूमि में जाकर माता-पिता की सेवा-शुश्रूषा की, सो कैसे? उसके पहले जीमूतवाहन ने स्वर्ग में जाकर कल्पवृक्ष को भूमि में लाकर अर्थियों के आग्रहों की पूर्ति की, सो कैसे? उसके पहले जीमूतकेतु अपने पुत्र के युवावस्था में पहुँचने पर देशरक्षा का भार उसे सौंपकर पत्नी महापुण्या के साथ निकल

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कर वन प्रदेश में तपस्या कर दिन काटने लगा, सो कैसे? उसके पहले जीमूतकेतु का जन्म हुआ, सो कैसे? उसी के पहले विद्याधरों के आवास के लिए हिमाचल की चोटी पर एक राजधानी हुई, सो कैसे? उसके पहले हिमालय की उत्पत्ति हुई सो कैसे?

इस प्रकार 'अनुक्रममाटि' (अनुक्रम का अभिनय कर) 'सभानिरीक्षण' व 'कमलपरिवर्तनत्तिल् तोषुकाल' दोनों करने पर 'संक्षेपमाट्टुक' शुरु करें।

संक्षेपम्— 'पुरा किल' (पहले) प्रलय के अन्त में श्रीनारायण के नाभिकमल से ब्रह्मा की उत्पत्ति हुई। ब्रह्मा ने श्रीनारायण की तपस्या कर त्रैलोक्य की सृष्टि करने की शक्ति पाकर त्रैलोक्य की सृष्टि की— स्वर्ग, भूमि, पाताल। स्वर्ग में इन्द्रादि देवतागण, भूमि में मानव, पशु, पक्षी, मृग आदि, पाताल में सर्प, असुर— इस प्रकार सृष्टि करते समय भूमि में उत्तर की दिशा में हिमालय नामक एक पहाड़ का आविर्भाव हुआ। इस प्रकार दिखाकर 'सभानिरीक्षण' 'कमलंपरिवर्तनत्तिल् तोषुत्', बाद को 'निर्वहणम्' शुरु कर दें। पर्वत का निरीक्षण कर 'पर्वतवर्णन आटि', इसके ऊपर गंगा बह रही है, इसलिए गंगाजल से यह अत्यन्त रमणीक है। इतना ही नहीं, श्री पार्वती के पिता हैं। देवों और दानवों के लिए अभिवन्द्य है। यों अनेकों गुणों सें युक्त है। दोष एक भी नहीं। इस प्रकार अर्थाभिनय कर 'विलक्कि'।

'अस्त्यस्तदोषो निजमूर्द्धसंगी............' शीर्षक श्लोक पढ़वाते हैं। इस प्रकार के पर्वत के ऊपर विद्याधरों के आवास के लिए एक राजधानी बन गयी। यह राजधानी कैसी? इस प्रकार दिखाकर "राजधानी वर्णन" आट्टुक। (राजधानी के वर्णन का अभिनय किया जाय)।

उक्त राजधानी में पुत्र-पौत्र-परम्परा से राजाओं की वृद्धि हो रही थी। उन दिनों जीमूतकेतुनामक एक नामी विद्याधर राजा हुआ, वह राजा सब शत्रुओं को जीतकर अपनी राजधानी में सुख से रहा जैसे स्वर्ग में इन्द्र है। 'विलक्कि'— 'तस्याचलेन्द्रस्य.........' यह श्लोक पढ़ावें।

चोल्लियाट्टम्— इस प्रकार आराम से रहते समय एक दिन जीमूतकेतु स्नान, देवकार्य और भोजन कर किरीट, कटक आदि आभूषणों से अलंकृत होकर छत्र-चामर आदि से परिवृत होकर आस्थान मण्डप में सिंहासनारूढ होकर बैठ गया। उस समय अमात्यों और परिजनों को उपचार-पूर्वक खड़े देखकर उनसे यों कहा— "प्यारे अमात्यो, मेरी शादी के लिए तुम किसी कन्या की खोज करो" जब यों कह कहे थे त्यों देखा एक दूत को अपनी ओर आते हुए। दूत ने क्या कहा! महापुण्या की शादी निश्चित हुई है। उसके लिए आपको लिवा लाने के लिए स्वामी ने मुझे भेजा है" यही तो कहा? इस प्रकार "केट्टारि" यह सुनकर प्रसन्न हो अमात्यों के साथ निकल कर

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कन्या महापुण्या से विवाह कर राजधानी में आकर सुख से रहते समय गर्भवती पत्नी ने जीमूतवाहन नामक प्रसिद्ध पुत्र को जन्म दिया। वह पुत्र कैसा? सबसे अधिक तेजस्वी; "तेजस्वी; "विलक्कि"— "तस्य पुत्रोऽ भवच्छ्रीमान्——"। यह जीमूतवाहन कैसा बन जाएगा? साक्षात् जिनदेव जीमूतवाहन के रूप में प्रत्यक्षीभूत हो जीमूतकेतु के तेजस्वी पुत्र होकर प्रादुर्भूत हुआ है। जिनदेव कैसे? समस्त जनता के कल्याण के लिए अवतीर्ण, इतना ही नहीं, लोगों के प्रति दया रखने वाला। 'विलक्कि'— "बोधौ स्थितः——— —" इस श्लोक का पाठ करावे। जीमूतकेतु, पुत्र का मुख देखकर स्नान कर, जातकर्म, नामकरण, अन्नप्राशन आदि सभी क्रियाएं विधि के अनुसार करता है। धीरे धीरे बड़ा हो जाने पर बालक सभी विद्याएँ प्राप्त कर, शास्त्र और विद्या का निधान बन कर पानी के लिए समुद्र के समान उतना ही नहीं, सबसे अधिक विनम्र भी है। विद्याएँ कैसी? विद्याधर वंशजों के ग्रहण करने योग्य! इतना ही नहीं, सभी प्रकार की संपत्ति की वृद्धि, प्रभाव और स्पृहणीय वस्तुओं के लिए आधारभूत। 'विलक्कि'—"स बाल एव—" इस श्लोक का पाठ करावें।

चाँद में कलाएँ जैसे पूरी हो जाती है वैसे सभी कलाविधाएँ मन में प्रकाशित हुईं। मन कैसा! सर्वशास्त्र-युक्त। उतना ही नहीं जो-जो ग्राह्य वस्तुएँ हैं उन सब का ग्रहण करने योग्य। इसके अलावा जनता के प्रसाद की आवास भूमि, सबसे अधिक मेधाशक्ति युक्त, 'विलक्कि'— "अधीत शास्त्रे———" यह श्लोक पढ़ावें।

इस प्रकार सभी विद्याएँ सीख कर आराम से रह रहे थे कि उसका शरीर धीरे धीरे जवानी प्राप्त करने लगा। वह जीमूतवाहन कैसे! आहुति के पदार्थों से जलती हुई आग के समान तेजस्वी होकर रहने वाला, विद्याधर-युवतियों के हृदय और आँखों को बाँधने में सबसे अधिक योग्य, शरीर कैसा? कल्पवृक्ष की शोभा के समान कान्ति रखने वाला। फिर, आभूषणों से अत्यधिक रक्ताभ। "विलक्कि"— "तस्य क्रमात्——— —" यह श्लोक पढ़ावें।

उन दिनों जीमूतकेतु एक दिन पुत्र का शरीर देखकर प्रसन्न होकर इसे जवानी आ गयी है, ऐसा सोच कर "देश का शासन इसे सौंप कर तप के लिए जाना ही है।" इस विचार से बड़ी कठिनाई से शासन का भार पुत्र को सौंप कर कल्पक वृक्ष को भी देकर 'कृतकृत्य होकर' माता पिता दोनों उस तपोवन की ओर निकले जहाँ ऋषि-मुनि तपस्या कर रहे हैं। पुत्र कैसा व्यक्ति है? पिता के विविध वचनों से मन ही मन अत्यधिक व्याकुल, फिर इन्द्रिय-सुखों से हमेशा विरक्त। 'विलक्कि' "अथ शपथशतैः——— —-" श्लोक पढ़ावें।

तपस्या के लिए माँ-बाप के चले जाने पर जीमूतवाहन ने ऐश्वर्य से मेघ रूपी विमान पर सवार होकर रात में कैलास, सूरज के निकलने पर मन्दर पर्वत और सन्ध्या

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

के समय सह्यपर्वत की भी सेवा की (पूजा की)। जीमूतवाहन कैसा? रिश्तेदारों से युक्त, "विलक्कि"— "निशायां कैलासं———" यह श्लोक पढ़ावें।

इस प्रकार घूम कर जीमूतवाहन राजधानी में सुख से जब रह रहे थे तब अर्थियों को दान देते देते सारा धन खत्म हो जाने पर, फिर भी दान देने के लिए महामेरु पर्वत पर जाकर, पर्वत का निरीक्षण कर घूँसा मार कर सोना निकाल कर भिखारियों की प्रीति के लिए चारों दिशाओं में डाल दिया (वर्षा की)। इस प्रकार चढ़ती जवानी में भी सबसे अधिक क्षमाशील और निर्मल चित्त था। इतना ही नहीं, हमेशा पुण्य कार्य के सिवा और कोई कार्य न करेगा। "विलक्कि" "स क्षान्तिमान्———" यह श्लोक पाठ करावें।

उस समय, अमात्य की स्थायी में खड़े होकर, "अये कुमार, जब आप द्रव्य प्राप्त करने की इच्छा से प्रदेशान्तरों में घूमेंगे तब शत्रुगण अवसर पाकर विनाश पैदा कर देंगे। इसलिए आपको कहीं जाना नहीं चाहिए" ऐसा कह कर मेधावी अमात्य सुमति ने उन्हें रोका। 'विलक्कि'— "वारयामास सुमति——-" यह श्लोक पढावें।

"गुणों के आकर, निधियाँ हमेशा आपके द्वार पर सेवा कर रही है। निधियाँ कैसी? जंजीरों-जैसे सर्पों से बँधी हुई हैं। इतना ही नहीं, काली घटा से भी बढ़कर कलेवर से युक्त 'विलक्कि'— "विषधरैर्निगहैरिव"——यह श्लोक पढ़ावें।

'अये कुमार, आपके हाथी जब रत्नखचित मकानों के आँगन में खड़े हो जाते हैं, तब अपने प्रतिबिम्ब देखकर जल्दी से सूँड़ से स्पर्श कर उनको अपने विरोधी हाथी समझ कर क्रोध से बढ़ते मदजल से युक्त होते हैं'। 'विलक्कि'— "तवेह——" यह श्लोक पढ़ावे।

"अये कुमार, आप, पिता के भवन में जितना धन है वह सब याचकों को अवश्य दें, पर इस कल्पवृक्ष को कदापि न दें। कल्पक वृक्ष कैसा? अपने वंश की रक्षा के योग्य है। इसलिए इस कल्पक वृक्ष को याचकों को देना उचित नहीं" 'विलक्कि'— "इति यत्——" श्लोक पाठ करावें।

"यह कल्पकवृक्ष विशाल होकर शाखाओं रूपी हाथों से सुनहरी लताओं को धारण करता है। वे सुनहली लताएँ कैसी? अनेकों मोतियों से युक्त, फूलों के गुच्छों से शोभित, अनेकों रत्नों से शोभित बत्तियों से युक्त, देखने पर ऐसा लगेगा कि याचकों की अभिलाषाओं को धारण कर खड़ा हो।" विलक्कि— "मुक्ताफल———" यह श्लोक पाठ करावें।

"विद्याधर-वंश के अलंकारभूत आप इस प्रकार विचित्र वस्तुओं का निदान बन कर इस कल्पक वृक्ष को न दे कर अन्य वस्तुओं का दान अवश्य करें (जब अपने भवन के धन की क्षति होती है तब यह वृक्ष प्रभूत धन पैदा करेगा।" "विलक्कि"— "इत्यद्भुतास्पद ——-" यह श्लोक पढ़ावें।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जब अमात्य गण यों कह चुप हो गये तब फिर पीठ पर बैठ कर 'नायक' की स्थायी में (भाव में) जीमूतवाहन अपनी बुद्धि से सोचता है कि इन्होंने जिस वृक्ष को पहले न देने का उपदेश किया, पर मैं उसको भूमि में लेजाकर निर्धन याचकों के आग्रह पूरा कर देने के लिए स्थापित करूँगा। 'विलक्कि'— "विरतवचसि"——-श्लोक पाठ करावें।

फिर चिन्तित हो, तपस्या के लिए निकलते समय "पिता के दिये इस वृक्ष को भूमि में ले जाकर रोपना ही है" इस प्रकार निश्चय कर, पीठ से नीचे उतर कर "अम्बरायणम्" दिखा कर स्वर्ग में जाकर कल्पक वृक्ष से यों कहा— "अये कल्पक वृक्ष, तू स्वर्ग से भूमि में आ जा!", भूमि की ओर जाते हुए पैजनियों की आवाज न सुनाई जाय। फिर रत्नों का प्रवाह, और ओस की जल फुहारों तथा शैत्य से युक्त जल प्रवाह को भी रोक दे, इतना ही नहीं, राजहंसों के मद भरे कलनाद को भी रोकें, 'विलक्कि'— "गामस्माद् भज————" श्लोक पढ़ावें।

"अये वृक्ष! भूमि में जरा और व्याधि से सबसे अधिक पीड़ित, अन्धे तथा लँगड़े लोगों की संख्या अधिक है। वे तेरे पास आकर माँगने के लिए स्वयं असमर्थ हैं। इसलिए तेरी शाखाएँ हजारों मीलों तक लंबी हो जाएँ।" 'विलक्कि'— "जरामयपीडित——-" श्लोक पढ़ावें।

उस समय कल्पवृक्ष जीमूतवाहन की बात सुनकर स्वर्ग से भूमि की ओर निकला— इस प्रकार दिखाकर 'विलक्कि' वृक्ष के रूप में घूमते समय "अपेत———" यह श्लोक पढ़ावें।

इस प्रकार कल्पकवृक्ष भूमि में पहुँचने पर जीमूतवाहन ने भूमि में आकर कल्पकवृक्ष की स्थापना की। जीमूतवाहन कैसे? अपने गुण रूपी आभूषणों से सुशोभित, फिर बढ़ी हुई दया का आगार; कल्पक वृक्ष कैसा? अर्थियों के मन की इच्छाओं की पूर्ति करने में तत्पर, ऐसा कर सुमति नामक अमात्य को राज्य की रक्षा पर नियुक्त कर माँ बाप से मिलने के लिए अपने वयस्य आत्रेय के साथ निकला— यह दिखाकर, चल कर वनभूमि में जाकर, माता और पिता के चरणों पर नमस्कार कर फिर उठकर उपचार पूर्वक खड़े होकर 'विलक्कि'— "स भूमौ संस्थाप्य————" श्लोक पढ़ावें।

फिर पीठ पर बैठ कर जीमूतकेतु पुत्र का मुख देखकर प्रेम भाव से कहने लगा— 'अये पुत्र, इस प्रदेश में समित्कुशादि के उपभोग से उन सब की क्षति हो गयी है, इसलिए समीप में दूसरा आश्रम बनाइए 'विलक्कि'— "उपयुक्तसमित्पुष्प यह श्लोक पढ़ावें।

(फिर नागानन्द का पहला अङ्क निर्वहण के रूप में अभिनीत होता है)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ज़मीन पर खड़े होकर जीमूत वाहन पिता की बात सुनकर वैसा ही हो, ऐसा कह प्रणाम कर आत्रेय के साथ निकल कर— "कलप्पुरत्तु नटत्रू" खड़े होकर अपने शरीर की ओर देखकर मैं जवान हो गया, (जवानी मुझे आ गयी है) यह जवानी मेरी सम्प्रीति के लिए होगी या नहीं, इसका मुझे पता नहीं, उसकी वजह क्या? मैं जानता हूँ कि, राग के बैठने का स्थान है। सो कैसे? तरुणाई आ जाने पर सब लोगों को विशिष्ट वस्तुओं के प्रति आकर्षण बढ़ता रहेगा। सुन्दर नारियों को देखते समय दूसरी वस्तुओं से मन निवृत्त हो कर उन की ओर सबसे अधिक आकर्षित रहेगा। उसके साथ सानन्द रहने को मन चाहेगा। उतना ही नहीं, सबसे अधिक सुरभित सुमनों को देखने पर, आश्चर्य! ये कुसुम मेरे सिर पर अलंकृत करना है, ऐसा आग्रह पैदा होगा। फिर अद्भुत भोजन की सामग्रियाँ देखने पर ऐसा आग्रह होगा कि यह मुझे अवश्य खाने को मिले, फिर सुन्दर सेज देखने पर ऐसा आग्रह होगा कि मुझे इस पर चढ़ कर सोना है। ऐसे रागों का आधार ही है जवानी, ऐसी बात नहीं, और भी दोष हैं। सो क्या? यह जवानी नश्वर है। हमेशा जवानी साथ न रहेगी जल्दी विनष्ट होगी। इस प्रकार विचार कर, मेरे मन में अच्छी तरह विश्वास स्थिर हो गया है, और भी दोष है कृत्या-कृत्य विचार करते समय मन प्रतिकूल होता है। यह न जानने वाला भूमि में कोई नहीं है। सब लोगों ने जान लिया है। इस प्रकार हर एक दोष के बारे में सोचने पर इन्द्रिय के वशीभूत होने के कारण यह जवानी घृणित है। ऐसा होने पर भी श्रद्धा से अगर माता-पिता की सेवा करते हुए यह जवानी ढल गयी तो वह मेरी प्रसन्नता और प्रीति के लिए सहायक ही रहेगी। विलक्कि— "रागस्यास्पद———" श्लोक पढ़ावे (स्वरम् इंन्दलम्-एकताल)

फिर नायक विदूषक का ग्रन्थ "केट्टाटि"। विदूषक भाव में खड़े होकर "प्यारे वयस्य, आप इतना काल अधमरे इन बूढ़ों के लिए वनवास का दुःख भोग कर विरागी न बनें। इस कारण आप प्रसन्न हो जाइये, अभी गुरुजनों की सेवा से निवृत्त हो राजधानी में जा कर सिंहासनारूढ हो राज्यसुखों का उपभोग कर लें, इतना अभिनय कर फिर नायक भाव में खड़े होकर, क्या आत्रेय ने ऐसा ही कहा? "प्यारे वयस्य, तुम्हारा यह कहना, अच्छा न हुआ।"

वह क्या? माता-पिता को छोड़कर राज्य में जाकर बैठना है, यह तुम्हारा कहना उचित नहीं, तुम्हारा यों कहने का कारण क्या है? पिता के सामने खड़े हो जाने पर जैसी शोभा होती है वैसी सिंहासन पर बैठते समय नहीं होती। पिता के चरणों को गोद में रखकर उनकी शुश्रूषा करने पर बहुत बड़ा सुख है। राज्य में जाकर सिंहासन पर बैठते समय सामन्तगण (दूसरे राजा) उपहार ला कर अपने पैरों पर रख कर प्रणाम करेंगे, उस समय उनके सिर पर पैर रखने पर भी ऐसा आनन्द न मिलेगा। पिता के

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भोजन के बाद, "प्यारे बेटा तू भोजन कर ले," इस प्रकार पिता के कहने पर, भोजन करने में सबसे बड़ा आनन्द है। त्रैलोक्य का भोग करने पर भी ऐसा आनन्द नहीं होता। फिर पिता को छोड़, शासन करना मुश्किल है, उससे कोई लाभ नहीं होता, 'विलक्कि'— "तिष्ठन् भाति........." श्लोक पढावें। फिर विदूषक का ग्रन्थ "केट्टाटि", आत्रेय ने क्या कहा? विदूषक भाव में खड़े हो कर 'प्यारे मित्र, मैं राज्य सुख के बारे में नहीं कहता, केवल गुरुजन-पूजा नहीं, स्वराज्य नें लौट कर दूसरा एक कार्य भी करना है। इसलिये ही मैने ऐसा कहा', फिर नायक भाव में, "ऐसा ही तुमने कहा? प्यारे मित्र, मैंने अपना सब कर्तव्य ठीक निभाया है। बिना तेरी जानकारी के मैंने कुछ नहीं किया है। तू जरा सोच, जो जो मैंने किया वह सब तुम्हें बताऊँगा, सुनो— मैंने प्रजा को धर्माचारों में प्रतिष्ठित किया, फिर विद्वान् लोगों को प्रभूत धन और सुन्दर महल देकर सानन्द बसाया है; फिर माता-पिता के वंशजों को यहाँ लिवा लाकर वस्त्रों, आभूषणों और भोजन से अपने समान प्रसन्न किया है। फिर क्या मैंने देश की रक्षा नहीं की? नहीं बात ऐसी नहीं, शत्रुओं के आक्रमण से देश की सुरक्षा की है, फिर क्या याचकों को देनेवाला कोई नहीं, वह भी नहीं, याचक लोगों के लिए कल्पवृक्ष स्थापित किया गया है। कल्पवृक्ष कैसा? अर्थिजनों के प्रार्थना करने पर उनके मन के आग्रह से कहीं अधिक दान देनेवाला, इस प्रकार मुझे जितना करना चाहिए, उससे कहीं अधिक किया है। अलावा इसके तुम्हारी बुद्धि में जो कुछ भी सूझा है वह मुझे अवश्य बताओ, वह मैं करूँगा।"

फिर विदूषक का ग्रन्थ 'केट्टाटि' विदूषक भाव में— 'अये मित्र, मतङ्ग नामक एक विद्याधर आपका प्रतिद्वन्द्वी है। वह आपके साम्राज्य के पास रहकर सभी प्रजाओं को परेशान कर रहा है। आपका प्रधान अमात्य यद्यपि देश की रक्षा खूब करता है तो भी बदमाश उस मतङ्ग के प्रजाद्रोह से रक्षा करने में असमर्थ है। इसलिये अगर आप देश में जा कर न रहें तो सुरक्षा पर्याप्त नहीं होगी, ऐसा ही मेरा विचार है। यह सोचकर ही मैंने कहा कि एक और कार्य करना है।"

नायक भाव में— "ऐसा ही तो कहा? अये वयस्य, विद्याधर मतङ्ग देश पर काबू करेगा, ऐसा सोचकर तो तुमने यों कहा? अगर उसने राज्य का अपरहण किया तो उससे मेरे मन में दुःख नहीं होगा। उसकी वजह क्या? मैं कहूँगा, सुनो, मुझे इस शरीर, राज्य या राजभोग में कोई आग्रह नहीं, मैं परोपकार के लिए ही शरीर की रक्षा कर रहा हूँ। इसलिए चाहे तो मतङ्ग राज्य हड़प ले, मुझे कोई दुःख नहीं, लेकिन राज्य उसे न देने का भी कारण है।———-'प्यारे पुत्र, तुम राज्य का सुशासन करो' ऐसा मुझसे पिता ने कहा है। उसको मानते हुए मैं राज्य पर शासन कर रहा हूँ। इसलिए राज्य-दान नहीं देना चाहता। विद्याधर-राज पिता के निर्देश का पालन करना मुझे प्रिय

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

है, इस लिए तो मैं शासन कर रहा हूँ। प्यारे वयस्य, इस प्रकार वार्तालाप करने से हमें विशेष लाभ नहीं, अब पिता की आज्ञा का पालन ही करें, पिता ने क्या कहा? 'प्यारे वत्स जीमूतवाहन, कई दिनों से यहीं तपस्या करने से फलमूल और नीवार, कुशदर्भ आदि यहाँ बिल्कुल कम हो गये हैं इसलिये तू मलय पर्वत जाकर मेरी तपस्या के अनुकूल एक पर्णकुटीर बना दो', इस प्रकार पिता ने मुझसे कहा है, इसलिए हम मलय पर्वत की ओर जावें"— ऐसा दिखाकर, 'कळप्पुरत्तु नटत्र्' मन्द हवा लगी, ऐसा अभिनय कर विदूषक भाव में "इस मलय पर्वत से आने वाली हवा रास्ते की थकावट दूर कर प्रियवयस्य को सुख पहुँचाती है। 'मलयमारुत कैसा? नमी से पूर्ण चन्दन के पेड़ों पर लगने से सबसे अधिक सुगन्धपूर्ण और मन्थर है। और भी विशेषताएँ हैं, पहाड़ की चोटियाँ फट कर निकल आने वाले झरने तराइयों के निम्नोन्नत (ऊँचे-नीचे) प्रस्तर-खण्डों पर गिर कर चूर-चूर कर निकलने वाले शीकरों (जल के फुहारों) से लद जाने के कारण शीतल, सालों से संगम की चाह और प्रेम से रहने वाले प्रियतमा के आलिङ्गन के समय जैसे रोंगटे खड़े कर देंगे, वैसे यह मलयसमीरण प्रियवयस्य को रोमांञ्चकञ्चुकित बना डालता है। नायक के भाव में— "ऐसा आत्रेय ने कहा। हम लोग यहाँ पहुँच चुके, रास्ते की थकान भी न हुई"।

फिर "पर्वतं नोक्किकण्ट्" (पहाड़ का निरीक्षण कर) यह पहाड़ सारहीन नहीं (तुच्छ नहीं) ऐसा दिखा कर "पर्वतवर्णनम् आटु" पहाड़ का वर्णन दिखावें। फिर निरीक्षण कर, उस पहाड़ पर दिग्गज, मदान्ध होकर चन्दन के पेड़ों पर गालें रगड़ने से चन्दन वृक्षों के चमड़े फटकर चन्दन रस निकलता रहा। सो कैसे? दिग्गज मुद्रा दिखाकर "गजस्तोभं" दिखाकर गाल फट कर मदजल निकलने से खुजली न सह सकने से चन्दन वृक्षों के पास जा कर रगड़ता सा भाव दिखाकर, इस प्रकार रगड़ने पर चन्दन का पेड़ रगड़कर चन्दन का रस बहने से सुरभिल हो गया है। फिर निरीक्षण कर समुद्र से लहरें मारने से गुफाओं का भीतरी भाग कोलाहल से भरा है। फिर लहरें मारता सा अभिनय करें, उस समय गुफा के अन्दर से निकलने वाली आवाज सुनने पर ऐसा लगेगा, दो मित्र आपस में लड़ते-प्रहार करते समय कोई रो रहा हो, फिर निरीक्षण कर सिद्धाङ्गनाएँ जब इस पर्वत पर चलती है तो उनके पैरों पर लगाए अलक्तक (चेप्पञ्चिच्चार) से मोती की शिलाएँ अरुणाभ हो गयी हैं। सो कैसे? सिद्धस्त्रियाँ— दिखाकर— एक नारी हो कर स्त्रीभाव में चिन्तित हो "प्यारी सहेलियो! हम खेलने निकलेंगी, तुम लोग मुझे खूब सजाओ। उस समय— सहेलियाँ— दिखाकर 'सखी भावमें उसी ओर देखकर— 'इसे अलंकृत करना है' कह कर "कोप्पणियिप्पिक्कुक" पूराकर फिर देख कर "इसके अलंकरण में शोभा की कमी है।" गौर से देख कर "पैरों पर अलक्तक लगाना भूल गयी" ऐसा दिखाकर एक सखी होकर अलक्तक लगाकर

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

देखा, वाह! वाह! इस प्रकार "कोप्पणियिक्कल्" पूरा हो जाने पर नायिका-भाव में "हम क्रीडा के लिए निकलेंगी" ऐसा दिखाकर सखियों का हाथ पकड़कर "चेल्लुन्तिनटन्नू" इस पहाड़ पर आकर, "अरी सखियो, हम यहीं खेलेंगी, कहकर "क्रीडा" "आटुक" खेल का अभिनय शुरु करें। इस प्रकार खेलते समय उनके पैरों पर का अलक्तक लग कर मोती की शिलाएँ रक्ताभ हो गयीं। इस प्रकार दिव्यजनों के चलने से सब लोगों को सेवा करने योग्य है, अतः इस पहाड़ पर चढ़कर भ्रमण करने के लिए मेरा मन थोड़ा सा उत्सुक हो रहा है— श्लोक— "माद्यद्दिग्गज——— —" पढ़ावें। "इसलिये तुम आओ, हम इस पहाड़ पर चढ़कर पिताजी को तपस्या करने योग्य पर्णकुटी बनाने का स्थान देख कर निर्धारित कर ले" यह कह कर आत्रेय का हाथ पकड़ कर "अंबरायणम्" दिखाकर पहाड़ पर चढ़कर "दायीं आँख हिली"— ऐसा अभिनय कर 'प्यारे मित्र मेरी दायीं आँख फड़क रही है, — इसलिए ऐसा लगता है कि शुभ होने वाला है। मुझे सुख की सामग्रियों में आग्रह नहीं, इसलिए इस आँख का फड़कना क्या बेकार ही होगा? नहीं, अतुलनीय वैभव पूर्ण ऋषि-मुनियों की वाणी सत्य होकर ही रहेगी। इसमें सन्देह नहीं, लेकिन यह नेत्र-स्पन्दन मेरे लिए हितकारी ही होगा— यही तो तुमने कहा?" "विलक्कि" श्लोक पाठ करावें— "स्पन्दते दक्षिणं————"। फिर 'केट्टाटि' विदूषक भाव में खड़े होकर "प्रिय वयस्य, आपके लिए अत्यन्त प्रियकर वस्तु पास पहुँच गयी, यही तो अक्षिस्पन्द सूचित करता है, फिर नायक भाव में "यही तो कहा, तो वह वैसा ही हो"।।

'केट्टाटि' विदूषक भाव में "प्रिय वयस्य" 'यह प्रदेश किसी तपोवन-सा लग रहा है' यह प्रदेश कैसा? मोटे और लम्बे पेड़ों से शोभित है, उतना ही नहीं, फिर सुरभिल हविर्गन्ध से निकलने वाले धुएँ से युक्त है। फिर कैसा? परस्पर वैरी मृग भी विरोध के बिना मिलकर रास्ते में निर्भय पड़े हैं। अतः यह तपोवन ही लग रहा है। नायक भाव में— 'यही तो कहा? अये मित्र तेरा कहना बिल्कुल ठीक है। यह तो तपोवन ही है। सो कैसे? यहाँ के पेड़ों के छाल ऋषि-मुनियों से कपड़ों के उपयोग के लिए काट लिए गये दीख पड़े हैं। उनके प्रति दया के कारण अधिक गहराई से नहीं काटे गये हैं। आकाश के जैसे स्वच्छ जलाशयों में पुराने टूटे कमण्डल दीख पड़ते हैं, और कहीं 'मुञ्जप्पुल्लु' की बनी टूटी पुरानी मूँजमेखलाएँ पानी में फेंकी सी दिखायी पड़ती है। फिर हमेशा बार-बार सुनने से तोते सामवेद के पद बार-बार पढ़ते सुनाई देते रहते हैं। 'विलक्कि'— 'वासोर्थं............... श्लोक पढ़ावें,— 'इसलिए तुम आओ, इस तपोवन में जाकर, देखें'। फिर प्रवेश कर देखते हुए "आश्चर्य ही है" अभिनय कर "इस तपोवन की शान्तता और रमणीयता विस्मयावह है मुनिगण प्रसन्न हो कर सन्देह-पूर्ण वेद वाक्यों का पुनः पुनः परिचिन्तन कर रहे हैं। फिर ब्रह्मचारिगण (बटुगण) वेद

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पाठ करते हुए समित्कुशादि बटोरते हैं। ऋषिकुमारियाँ छोटे वृक्षों के मूल में आलवाल (क्यारियाँ) बनाकर घट से उनमें पानी भर देती हैं। इसलिए इस तपोवन की शान्तता एवं रम्यता आश्चर्यजनक है। यहाँ भौंरे पेड़ों के फूलों का मधुपान करके मस्त हो गूँजते हैं, इनका गुञ्जार सुनकर ऐसा प्रतीत होगा कि मानों ये पेड़, 'प्यारे पथिको! क्या तुम आराम से आये?' ऐसा कुशल पूछ रहे हों। इन पेड़ों की शाखाएँ फलभार से झुकी देखकर ऐसा लगता है कि मानों ये मुझे प्रणाम कर रहे हों, फिर हवा के झोकों से पेड़ों की डालों से फूल गिरते देखने पर ऐसा मालूम होगा कि मानों, फूलों की वृष्टि से ये मेरी पूजा कर रहे हों। ऋषियों को पथिकों की पूजा करते देखकर मानों पेड़ भी अतिथि-पूजन करने का अभ्यास कर रहे हैं''। ''मधुरमिव'' .... श्लोक पाठ करावें, ''ऐसा तपोवन कभी न देखा है, फल, मूल, समिध, कुश आदि खूब है। इसलिए यही तप करते रहना उचित है, ऐसा मैं सोचता हूँ। यहाँ रहते मेरे माता पिता सुख प्राप्त करेंगे''।

''केट्टाटि'' विदूषक भाव में— ''प्यारे मित्र, ये हरिण गर्दन थोड़ा सा मोड़कर चबाए हुए घास का मुँह से नीचे गिरना न जानकर एक कान ऊँचा खड़ा कर, आँखें नीचा कर बिना हिले खड़े हैं मानों कुछ सुन रहे हैं। बताइए कि क्या सुनाई दे रहा हैं।'' फिर नायकभाव में ''ऐसा ही कहा? फिर सुनता सा भाव दिखाकर 'हाँ जान गया' ऐसा भाव दिखाकर ''अये आत्रेय, तुमने मुझसे जो कहा वह सच ही हैं, वह क्या?, ये हिरण दाँतों के बीच घास चबाने की आवाज रोक कर शरीर तिरछा कर गान सुन रहे हैं। गान कैसा? सुस्पष्ट मनोहर पदों से युक्त, छाती, गला, सिर इन स्थानों तक पहुँचने से प्रकटित स्वरोत्थान के साथ षड्ज और पंचम की उच्चकोटि की दृढता का ज्ञान रखने वाला, फिर कैसा? भौरे की सी मीठी आवाज से युक्त, वीणा से युक्त, फिर कैसा? भौरे की सी मीठी आवाज से युक्त, वीणा के मधुर नाद से युक्त, इस प्रकार मनोहर गान सुनकर ये हिरण खड़े हैं। 'विलक्कि'— 'स्थानप्राप्त्या'........'' श्लोक पढावे, फिर 'केट्टाटि',— नृत्य, गीत आदि के प्रतिकूल इस तपोवन में कौन गाना गा रहा है? वह सोचकर बतला दीजिए''— नायक भाव में खड़े होकर ''यही तो आत्रेय ने कहा? सबसे अधिक मृदुल उँगली की नोक से स्पर्श (बजाने) करने के कारण वीणा के तार ठीक नहीं बजते। इसलिए मैं ऐसा सोचता हूँ किसी देवतायन में एक नारी देवता की पूजा कर के फिर वीणा बजाकर स्तुति गा रही है। इसी प्रदेश में रहने तथा मनमोहक गान सुनने की वजह मैं यही सोचता हूँ कि यह कोई दिव्यनारी ही है''। 'केट्टाटि' विदूषक भाव में 'प्यारे मित्र, हम यह देवतायन जा कर देखें', नायक भाव में ''यही तो आत्रेय ने कहा है? प्रिय वयस्य, तुम्हारा कहना अच्छा ही हुआ। देवता तो अवश्य वन्दनीय है, इसलिए हम जावें'', दो चार पग जा कर जल्दी रुक कर विचार कर ''अगर यह

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कुलस्त्री हो तो हमें देखने का अधिकार नहीं। इसलिए इस लतागृह में छिप कर खड़े देवता दर्शन के अवसर की प्रतीक्षा में ठहरें, लतागृह के पास जाकर छिपे खड़े होकर फिर चेटी के साथ जमीन पर बैठे वीणावादन करने वाली नायिका का गान सुनें''। 'केट्टाटि', 'विलक्कि'— ''उत्फुल्ल कमल ....'' श्लोक का पाठ करावें।

नायिका भाव में बैठकर दाईं ओर देखकर 'भगवति गौरि आपकी कृपा से मेरा मनोरथ पूरा कर दें'। गौरी कैसी? विकसित-कमल-केसर के पराग के समान लाल रंग से शोभित'। नायक भाव में खड़े होकर, 'ऐसा तो गा रही है', फिर सुनकर 'विस्मय भाव में' खड़े हो कर ''अये मित्र, वह गान आश्चर्यजनक ही है, वीणावादन भी विचित्र है, ऐसा मैंने नहीं सुना। इस गान की विशेषता बताऊँगा, सुनो, इस वीणा वादन में दस प्रकार का वीणा बजाना प्रकट है। इस वादन सें ताल के मध्य का काल तीन प्रकार प्रकट हुआ है, सो कैसे? वेग से, मध्य से और मन्द से होने वाली विशेषताएँ ठीक मालूम होती हैं। फिर गोपुच्छा आदि तीनों यतियाँ वीणा-वादन से ज्ञात होती हैं।'' 'विलक्कि'— व्यक्त व्यञ्जन .... श्लोक का पाठ करावें। फिर 'केट्टाटि' क्या कहा? चेटी भाव में खड़े होकर ''अयि! भर्तृदारिके!, लम्बे अर्से से वीणावादन करने से तेरे कराग्रों को किसी प्रकार का आयास नहीं होता?'' नायिका भाव में खड़े होकर- 'यही तो कहा' फिर 'केट्टाटि' नायिका भाव में- 'अयि सखि चतुरिके, भगवती के सामने बैठकर वीणा बजाने से मुझे परिश्रम नहीं होगा।' फिर नायक भाव में— 'यही तो सुना?' फिर 'केट्टाटि' चेटीभाव में 'अयि भर्तृदारिके, कृपाहीन इस देवी के सामने बैठकर वीणा बजाने से तुम्हें क्या लाभ है? कोई प्रयोजन नहीं, कन्याओं के लिए असाध्य व्रतों और अनुष्ठान-उपवासों से भक्तिपूर्वक इतने लम्बे अर्से से पूजा करने पर भगवती ने प्रसन्न हो कर तुझे अभीष्ट वर नहीं दिया।' फिर नायक भाव में, 'ऐसा ही तो कहा?' फिर केट्टाटि विदूषक भाव में,''प्यारे मित्र, यह कन्या ही है, इसलिए हम जल्दी जावें।'' फिर नायक भाव में 'यही तो आत्रेय ने कहा— इसे देखने में कोई दोष नहीं, कन्यका को देखना किसी के लिए भी मना नहीं, लेकिन हमें उसके बिल्कुल पास जाकर देखना उचित नहीं। उसकी वजह क्या? चूँकि यह बाला है इसलिए हमें देखने पर लज्जा और भय से यहीं ठहरेगी नहीं, जल्दी भाग जायेगी। इसलिए हम इस लतागृह के बीच से देखेंगे।' लताएँ हटाकर देखकर 'केट्टाटि', विदूषक भाव में 'प्रिय वयस्य, देखिये- यह वीणावादन से कानों को सुख पहुँचाती है। इतना ही नहीं, वैसे ही रूप सौन्दर्य से आँखों को भी सुख पहुँचाती है। इसलिए यह कौन है? बताइए कि यह स्वर्गस्त्री, नागकन्या या विद्याधर-कन्या है?' नायक के भाव में खड़े होकर, ''ऐसा ही तो आत्रेय ने कहा। प्रिय वयस्य, मैं नहीं जानता कि यह किस वंश (कुल) की है। मैंने अनेकों सुन्दर स्त्रियों को देखा है, 'इसके समान सुन्दर और किसी को नहीं देखा है'।'' रोमाञ्च का अभिनय

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कर, "केशादिपादम् आटि" 'प्यारे मित्र, अगर यह स्वर्ग-कन्या होती तो देवराज इन्द्र के हजार आँखों का होना सफल हुआ, अगर यह नागकन्या हो तो जब तक इसका चेहरा है तब-तक पाताल चाँद से हीन नहीं होगा। अगर यह विद्याधर-कन्या है तो हमारी जाति सब जातियों को हरा देगी। अगर यह सिद्ध वंश में पैदा हुई है तो सिद्धलोग त्रैलोक्य में सबसे अधिक प्रसिद्ध रहेंगे, इसमें सन्देह नहीं', 'विलक्कि'— "स्वर्गस्त्री यदि ...." यह श्लोक पढ़ावें।

फिर 'केट्टाटि' 'चेटी भाव में' 'अयि भर्तृदारिके, इस बिल्कुल करुणा-विहीन देवी के सामने आपके वीणावादन का क्या प्रयोजन? कुछ भी नहीं'। 'यही तो कहा' यह नायक भाव में फिर 'केट्टाटि', 'क्या नायिका का कहना है?' फिर नायिका भाव में, 'हे सखी, इस प्रकार भगवती की निन्दा न करना। आज मुझे भगवती का प्रसाद हुआ।' 'यही तो कहा है? नायक भाव में खड़े होकर 'केट्टाटि' '— चेटीने क्या कहा?, चेटी भाव में, "अये भर्तृदारिके, भगवती का प्रसाद क्या है? बताइए', 'यही तो कहा? नायक भाव में फिर 'केट्टाटि', नायिका ने क्या कहा? नायिका भाव में— "अरी सखी, आज मैं सपने में इसी प्रकार जब वीणावादन कर रही थी तब भगवती गौरी ने मुझसे कहा— "वह क्या? प्यारी वत्से, मलयवती, तेरे वीणावादन से प्रसन्न हो गयी हूँ, इतना ही नहीं, बालाजनों के सुदुर्लभ तेरी अनन्य भक्ति से मैं और भी प्रसन्न हूँ। अतः विद्याधर-चक्रवर्ती जीमूतवाहन अधिक बिलम्ब के बिना तेरा पाणिग्रहण करेंग"। ऐसाही तो भगवती ने कहा हैं, नायक भाव में— 'ऐसा ही तो कहा है न?' फिर 'केट्टाटि' क्या चेटी ने कहा है? फिर चेटी भाव में 'अयि भर्तृदारिके, क्यों आपने कहा कि स्वप्न में? आपके मन का इच्छितवर ही देवी ने दिया है'। 'ऐसा ही तो कहा'। नायक भाव में फिर 'केट्टाटि' क्या वयस्य ने बताया? विदूषक भाव में खड़े होकर "प्यारे मित्र, हमें देवी के दर्शन करने का समय यही है, इसलिए आइए हम अन्दर जाकर देखें, फिर विदूषक नायक का हाथ थामें, आगे चल कर पास पहुँचा, फिर नायक 'केट्टाटि' 'क्या वयस्य ने बताया?' विदूषक भाव में "स्वस्ति भवत्यै"— आपका शुभ हो। 'इसका कहना सच ही है, वह क्या? हृदय स्थित वर को ही देवी मुझे देती है, यह नायक भाव में 'यही तो कहा?' फिर केट्टाटि नायिका भाव में खड़े हो कर, 'प्यारी चेटी ये कौन है?' फिर नायक भाव में, 'यही तो कहा न?' फिर नायिका को देखकर यों कहता है— 'अयि रूपवती, तेरा यह शरीर तपस्या से बहुत अधिक परेशान हो गया है, तू फिर क्यों दुखी होती है? कठिन श्रम त्याग दो, तू कैसी? लम्बे साँसों से अधिक हिलने वाले स्तनों से युक्त, ऐसी तुम्हें अब श्रम करने की जरूरत नहीं', ऐसा दिखाकर 'विलक्कि',— "तनुरियं तरळायतलोचने, ..." यह श्लोक पढावें, फिर 'केट्टाटि' नायिका भाव में खड़े हो कर— 'अयि सखि, साध्वस से मैं इसके सामने

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ठहर नहीं पाती', नायक भाव में— 'यही तो कहा' फिर 'केट्टाटि' 'क्या वयस्य ने बताया? विदूषक भाव में, 'भवति, क्या आपके तपोवन की रीति-रिवाज यही है? अगर कोई अतिथि आवे तो, कम से कम वाणी से ही सही उसका उपचार तो करना है न?' नायक भाव में, 'वैसा ही तो कहा?' फिर 'केट्टाटि' क्या चेटीने बताया? चेटी भाव में— 'अयि भर्तृदारिके, इस ब्राह्मण का कहना उचित ही हैं, आपको अतिथि-सत्कार उचित ही है, इसलिए इस महानुभाव के अतिथि हो आने पर कुछ भी बोले बिना अबोध (अनाड़ी) की तरह क्यों रहती है?' अथवा 'भर्तृदारिके आप ठहरिये, मैं यथानुरूप सत्कार करूँगी। अये आर्य! आपका स्वागत है, यहाँ इस आसन पर बैठकर इस प्रदेश को अलंकृत कीजिए'। ऐसा तो कहा? नायक भाव में खड़े होकर 'प्यारे वयस्य, इसका कहना उचित ही है, हम यहाँ बैठकर थोड़ी देर विश्राम करें' 'ऐसा ही तो कहा?' नायक भाव में खड़े होकर "प्यारे मित्र, तुम्हारा कहना ठीक हैं", ऐसा कह कर विदूषक के साथ 'पीठ' पर बैठते हैं, फिर महर्षि को आते देखकर उठ कर, हे भगवन् तपोधन, मैं जीमूतवाहन आपका अभिवादन कर रहा हूँ। फिर 'केट्टाटि' 'मुनिभाव' में 'हे महाराज उपचार काफी है, क्योंकि सबके लिए अतिथि गुरु होते हैं न इसलिए हमलोगों के लिए आप ही आदरणीय हैं। इसलिए आराम से बैठिएगा।' 'यही तो कहा? फिर नायक 'जैसा आपका कहना', कह कर बैठ जाते हैं।

फिर "केट्टाटि" नायिका भाव में "हे महर्षि मैं आपकी वन्दना करती हूँ। 'यही तो कहा'? मुनिभाव में खड़े होकर 'प्रिये वत्से, तुम अनुरूप-भर्तृमती हो' हे मलयवती, कुलपति कौशिक के माध्यंदिन स्नान का समय व्यतीत हो रहा है। इसलिए जल्दी आइए ऐसा कह भेजा है। इसलिए तुम जल्दी आना। ऐसा ही तो कहा गया?' नायक भाव में, तापस के साथ जाते हुए मुड़कर मुस्कराकर तिरछी नजरों से देखते हुए 'यह यद्यपि ऋषि के साथ चली जा रही है तो भी पैरों को मेरे हृदय पर ही रखती है। यह कैसी? जघन-भार से मन्दगति से जानेवाली', 'विलक्कि'— "अनया जघनाभोगभर ...." यह श्लोक "आर्तराग" में पढ़ावें, फिर केट्टाटि, विदूषक भाव में खड़े होकर "मैं अब जो देखना था सो देख चुका, मेरे पेट की आग मध्याह्न की धूप से दुगुनी सी जल रही है। इसलिए हम जावें, ऋषियों के पास जाकर अतिथि बनकर फल आदि जो कुछ भी मिले, खाकर प्राण-धारण तो करें", 'ऐसा ही तो कहा? नायकभाव में खड़े हो, ऊपर की ओर देखकर 'ओ हो, सूरज तो आसमान के मध्य में पहुँच गया है। आश्चर्य। सो कैसे?' ऐसा दिखाकर वनभूमि का निरीक्षण कर, 'देखो मध्याह्न के तरणि-किरणों की असहनीय पीड़ा से सभी मृग पीड़ित हैं। यह एक हाथी गरमी न सह सकने के कारण चन्दन-वृक्षों के पास जाकर रगड़ते समय चन्दनरस से पुता है और जिसके गण्ड (गाल) अत्यन्त पाण्डुर हो गये हैं। सो कैसे?' 'गज' दिखाकर

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

"गजस्तोभ" दिखाकर, गरमी असह्य है, ऐसा दिखाकर दोनों ओर मुडकर देखता हुआ चन्दन-वृक्षों को देखकर इन पर जा कर रगड़ने पर गरमी जरा शान्त होगी, ऐसा सोच कर चन्दन वृक्षों के पास जाकर, एक गण्ड से रगड़ कर, चन्दनरस से भीग जाने पर 'जरा आश्वास है', ऐसा दिखाकर तो दूसरे गण्ड से रगड़े ऐसा निश्चित कर दूसरे गण्ड से भी रगड़ता रहा। इस प्रकार दोनों गण्डों से रगड़ते समय चन्दन-रस से पुता होने पर दोनों गाल गोरे हो गये हैं। इससे भी ताप कम नहीं होता, ऐसा दिखाकर "आगे क्या करें" ऐसा दिखाकर कानों के तालवृन्त से मुख की ओर पंखा झला कर, फिर भी ताप असह्य है, ऐसा दिखाकर 'और क्या करूँ' 'हृदय भिगों दें, दिखाकर सूँड के स्वेद जल से फुहार कर छाती को सींचता है। इस प्रकार वियोग से अधिक बढ़े विरही (वियोगी) की तरह यह हाथी असहनीय दशा में पहुँच गया है। विलक्कि— "तापात् तत्क्षणघृष्ट..............." यह श्लोक पढ़ावें, (रागश्रीकण्ठी) "प्रिय वयस्य, आत्रेय, हम माध्यन्दिन कर्म करने जावें, ऐसा दिखा कर, विदूषक के हाथ पकड़े हुए भाव में "कलप्पुरत्तु नटत्र" मुड़कर "आर्तन्" की स्थायी में गौर्याश्रम में से देखी हुई कन्या का "पंचाग माटि" "कामशरं कोण्ट" बँधकर जागकर, "मुनेरपि पुरः" से बाकी श्लोक का भाग पढ़कर फिर अर्थ का अभिनय कर "व्यावृत्यैव............ इत्यादि पूरा श्लोक पढ़ कर "कुण्डलमिट्ट मुटिच्च" बाजे के साथ पढ़कर "चोल्लियाट्टम्" पूरा कर "कलप्पुरत्तु" नटत्र् "मुटिच्च" (पूरा कर) नेपथ्य में आवें।

इस प्रकार "चोल्लियाट्टम्" पूरा हो जाने पर विदूषक (आत्रेयन्) का "पुरप्पाट्" (रंग प्रवेश) है। वह इसी दिन भी चलाया जा सकता है।

विदूषक का पुरप्पाट् और निर्वहण— अष्टमङ्गल्य आदि से समलंकृत रंग में दीप जलाने पर रिवाज के अनुसार "तलयिल् केट्टि" 'अणिञ्ञुकूटि' (वेष विधान पूरा कर) 'मिष्ावोच्चप्पेदुथि', यवनिका पकड़ना 'वायिक्कुक' आदि करने पर विदूषक रंग में आकर 'मरयिल्' (यवनिकान्तर्मत) 'चारि याटि' 'मुटिच्च्' मुँह पर पानी छिटक कर "कळियुं वेच्चु तिरिञ्ञ' दीप के सामने खड़े हो कर नायक के हाथ थप-थपाने का सेवक भाव दिखाकर यवनिका हटाने पर थोड़ी देर और सेवकभाव दिखाकर फिर अपनी स्थायी में खड़े हो कर क्रिया ('विदूषक का तट्ट') दिखा कर विदूषक-स्तोभ दिखाकर अन्त में "अभिवाद्यं चेयत्" (अभिवादन कर) 'विलक्कि'— 'तस्मै नमः कर्मणे' पढकर व्याख्या कर सम्बन्ध स्थापित कर "ब्रह्मा येन कुलालवन्नियमितो........." श्लोक पाठकर उसकी व्याख्या भी करके अपने कर्म की शक्ति का बयान कर जीमूतवाहन का सेवक हो कर माता-पिता की सेवा के लिए निकल कर अपने वयस्य कामदेव को देखकर वार्तालाप करने तक का भाग संक्षेप में कहकर नाटक के साथ सम्बन्ध स्थापित कर "भो वयस्स कहिं क्खु दे गअं हीस्तणम्"? पढ़ कर अर्थ कहकर "भो" कह 'चोल्लियाटि' 'मुटिच्च्' नेपथ्य में आना।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विदूषक के पुरप्पाट् के दूसरे दिन से चार दिन तक विदूषक निर्वहण है। विवाद, (वादुं तीर्कल्) विनोद, वञ्चनम्, अशनम्, राजसेवा, इस क्रम से यह चलता है। 'वञ्चनम्' के लिए भी एक दिन का निर्वहण पहले चलता था। लेकिन आजकल 'विनोद' के साथ एक श्लोक में उसे समाप्त कर लिया जाता है।

राजसेवा के दिन, विदूषक राजसेवा कह कर नाटक से सम्बन्ध बना कर "रागस्यास्पदं" .... से प्रथमाङ्क के 'माध्यन्दिनं कर्म करवामहे' तक नाटक पाठ की व्याख्या कर सम्बन्ध जोड़ कर "व्यावृत्यैव" इसकी व्याख्या पाठ के साथ करके "भो वयस्य" प्रस्तुत नाटक भाग पढ़कर उसकी छाया भी पढ़कर व्याख्या करने के बाद 'भो' पढ़ कर कुण्डलमिट्ट मुटिच्च् बाजे के साथ पढ़ कर मुड़कर नेपथ्य में आवें। फिर कूटियाट्टम् है।

मत्तविलास का तमिळ

चोत्रान् सूक्ति मुक्ताकलापनयि सुशिक्षितनायि स्वाधीनांगव्यापारनायि सर्वजनानुकरणनिपुणनाकिन कथासूचकन् सूत्र धारन्। विशुद्ध वेषनायि जितेन्द्रियनायि परिवारजनपरिवृतनायि भक्ति पुरस्सरमाकुंवण्णम् जल-गन्धपुष्पादि निवेद्यंञ्ञले कोण्ट् नान्दनकरमाकिय नान्दी पूजये निर्वर्त्तिच्च् पूजावसानत्तिङ्कल् श्रीकला, गौरीकला, मेदिनीकला, सरस्वती कला एन्निगने चतुष्कला संयुक्तनायि अक्षिप्तयायि मुटिच्च मन्त्रोच्चारणंगलेकोण्ट् असुरकळे वेरपेटुत्तु रंग में पञ्चपद विन्यासं चेयत् रंगमध्यंगतनाकिष्ऩ पद्मवसतिये पुष्पांजलि चेयत् नमस्करिच्च शुद्धवस्त्रानायि सभापति सनाथयाकिन पण्डित महासभयेक्कुरिच्च् आशिस्सायि उणर्तियंगुन्नोन् "त्रैलोक्यनाथनाकिदिव्यः कपाली" निंगळ् अवनिमण्डनभाजनमाकिन यशोराशिये तन्नरु ळुन्नोनाक्। एंगने यिरुप्पोरुत्तनेतान् भगवान्! नृत्तस्वरूपनायिरिप्पोरुत्तनेतान् नृत्तं ताने प्रकार मिरुन्नु! वेदाध्ययनं निमित्तं स्वाध्यायराकिन इन्द्रादिदेवतावर्गत्तिन् अनध्यायाध्ययनार्थमायि वेदनिधि विरिञ्चन् बह्मन् तिरुवटि ऋग्वेदत्तिल् निन्न् वाद्यं, यजुर्वेदत्तिल् निन्न् अभिनयं, सामवेदत्तिल् निन्न् स्वरं अथर्ववेदत्तिल निन्न रस भावंगल् एन्नी नालु वेदगंलिल् निन्न् इव नालिनेयुं उद्धरिच्चरुळुक निमित्तमायि वेद चतुष्टय स्वरुपमाकिन चाक्षुयागत्ते नृत्तमेन्नु चोल्लुन्नु। नृत्तोपपत्तियल्लो इच्चोन्नत! नृत्तं तानेप्रकारमिरुन्नु? वाचिकं आंगिकं, आहारिकं, सात्विकं एन्नी चतुरभिनयंगले आश्रयिच्च् भेदत्ते प्राप्तिच्चिट्टु मिरुन्नु। भावत्तिनुटे आवेशवशं निमित्तमायि अनेकरसतये प्रापिच्चिदु मिरुन्नु। निष्प्रतिबद्धमाकिन बोधमहिमयुटयवनायि प्रयोक्तावाकुन्नतुं प्रेक्षकनाकुन्नतुं तन्तिरुवटि यन्ने तान्। एन्निगने च्चोल्लि श्रुत्वास्थापना, कथास्थापना, स्मृत्वास्थापना, एन्निगंने स्थापनात्रयंगले क्कोण्ट् श्रुत्वास्थापना चेय्त् कष्ञिञ्ञ कथये रंगत्तिङ्कलाक्कि वरुवानुळ कथये सूचिप्पिच्च् नटियोटु कूटे चोल्लित्तुटंगिनान् कथा सूचकन् सूत्रधारन्। सत्यसोमननाकिन दिव्यः कपाली तिरुवेक्कालंबमाकिन शिवगृहत्तिन्नारिके

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उ्ळ उद्यानत्तिङ्क् इरुन्न् दयितयाकिय देवसोमयोटुं कूटे देवदेवनाकिन दाक्षायणी कान्तने जलगन्धपुष्प धूप दीप निवेद्यादि कळेक्कोण्ट् पूजिच्च पिन्ने सुर कोण्ट् पूजिच्च् पिन्ने सुरापानं चेयत् मदिरापूर्ण चित्तनायि पेरुमारुन्नोन् भार्याभिमुखनायि चोल्लियंङुन्नोन्— दयितयायुळोवे देवसमोमे, तपस्सुकोण्ट् कामरुपत्ते प्राप्तिक्कुमेन्नुत सत्यमन्त्रेतान्। एन्तेन्नल्ले? विशिष्टमाकिन व्रतत्तिण्टे विधिवत्ताकुं वण्णमायीत्। अत् एंगनेयेङ्किल्, सविलास चिल्लीलता समुल्लस्सित मायिरुन्न् निन्टे मुखसरोजम्। उटनुटन् निर्गतंगलायि निर्मलंगलाकिन धर्मजलंगललोटु कूटुकयाल् सविशेष रमणीय मायि रिप्पोन्नतु निन्नुटे आननम्। मातंगसुन्दरी गमनत्तिन्न् मन्दाक्षदानचतुरमायिरुन्नु निन्नुटे गतिविशेषम्। अकारणंगलायिरुन्न् निन्नुटे हसित विलसितंगल्। अव्यक्तवर्णंगलायिरुन्न् गीरुकळ्. रागाक्रान्तं-गलायि धीरेतरतारमायि अलसापांगं-गलायिरिन्नु निन्नुटे, नयनयुगलम्। स्त्रंसन्मालिकाजाल गंलायिरुन्नु निन्नुटे मूर्धजंगल् एन्निगने दयितयाकिय देवसीमये नोक्कि चोल्लित्तुटगिनान् सत्यसोमनाकिन दिव्यः कपाली।

कूटिच्चोल्लुन्न सम्प्रदायम्— शक्तिभद्र के आश्चर्य-चूडामणि नाटक के छठवें अङ्क अंगुलीयकांक में हनुमद्-सीतासंवाद में हनुमान का नाटक भाग चाक्यार (नट) और सीता का नाटक नंगियारम्मा (नटी) पढती है। इनके पढ़े जानेवाले नाटक-वाक्यों व श्लोकों का अर्थ नंबियार (सूत्रधार) 'रंग' में खड़े होकर देशी भाषा में व्याख्या के रूप में कहता है। इन सबके मेल की जो रीति है उसका नाम है कूटिच्चोल्ल्। केवल दृष्टान्त के लिए उसमें से एक अंश नीचे दिया जा रहा है। (इसमें हनुमान् का अंश संस्कृत, सीता का अंश प्राकृत और नंबियार की व्याख्या तमिल या प्राचीन मलयालम में है)।

सीता— होदु, एदम् एत्तएण पवण पुरत्त पियं खु शत्थियाणम्। मम खु दाव सोयं वीळं य उप्पादेदि। भणेहि भणेहि अधण्णाये मम की दे अज्ज पि तादिसो एव्व अय्यवुत्तो?

नंबियार— अरुळिच्चेताळ् सीतादेवी, विश्वलोकवन्द्यनाकिन भर्ताविन्टे विरहवृत्तान्तत्ते केट्ट— पोरुं पवनपुत्रा, एनिक्क दुखंगळे अरियिच्चत्। वियोगात्म कान्तोदन्त श्रवणत्तिल् आनन्दमुण्टावित् एल्ला जनत्तिन्नुम्। एनिक्क शोकलज्जादिकळने उण्टाकुन्नत् एटो, प्रभञ्जनात्मजा, चोल्लुक, चोल्लुक, मन्दभाग्ययाकियन्नान् हेतुवायि इप्पोषुं तादृशनो आर्यपुत्रन्? एन्नरुळिच्चेप्ताळ् सीतादेवी।

हनुमान्— नहि, नहि, सहायलाभात् इदानीं प्रसन्नो देवः।

नंबियार— उणर्तिनान् श्री हनुमान्— अल्लल्ल, सहायलाभं हेतुवायि इप्पो प्रसन्ननेत्रो देवन्— एन्नुणर्तिनान् श्रीहनुमान्।

सीता— अय्यवुत्तस्स अणथयमित्तं दाणीं केहेहि।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नंबियार— अरुळिच्चेय्ताळ् सीतादेवि— आर्यपुत्रनुटे आपान्मित्रत्ते एनिक्क अरियिक्क, एन्नरुळिचेय्ताळ् सीतादेवि।

हनूमान्— ततस्तस्माद्वनादुपनीय संस्कारेण शरीरशरीरिणोरिव रामसुग्रवीवयोः सम्बन्धो मया कारितः।

नंबियार— उणर्तिनान् श्रीहनूमान्— पिन्नेयो स्वामिनि, देवने, आ प्रदेशत्तिङ्कल् निन्न कूट्टिक्कोण्टुपोन्न् सुग्रीवने प्रापिप्पिच्च् पञ्चभूतसमवायमाकिन शरीरवुं क्षेत्रज्ञनं तंगलिल् संबन्धं वन्नकणक्के रामसुग्रीवन्मार्क अभीष्ट माकिन संबन्धत्ते परञ्ञुम्टाक्किनेन् जान्। एन्नुर्तिनान् श्रीहनूमान्।

सीता— तदो तदो?

नंबियार— पिन्नेयो पिन्नेच्चोल्लुक, एन्नरुळिचेटताळ् सीतादेवी।

हनूमान्— ततस्तदनुभावादत्यन्तदूरीकृतबालिभयमृक्षवानरैश्वर्यमखिलदिङ्मण्डल विषयमप्रतिहतशासनभयमृक्षवानरैश्वर्यमखिलदिङ्मण्डलविषयमप्रतिहतशासन-मयत्नमेव स्वामी प्रत्यपद्यत।

नंबियार— उणर्तिनान् श्रीहनुमान्— पिन्नेयो स्वामिनी, प्रभाकरवंशावतंसन्टे प्रभावत्ताल् बालि निहतनाकयाल अखिलदिङ्मण्डल विषयमाकिन ऋक्षवानरैश्वर्यत्ते अप्रतिहतशासन माकुंवण्णम् अयत्ने प्रापिच्चु एन्नुटे स्वामि सुग्रीवन्, एन्नुणर्त्तिनान् श्री हनुमान्।

सीता— तदो तदो?

नंब्यार— पिन्नेयो पिन्ने चोल्लुक, एन्नरुळिच्चेय्ताळ् सीतादेवी।

हनूमान्— एवं सिद्धार्थः सुग्रीवः पश्चात् त्वदन्वेषणोपक्रमे स्वामिकर्मणि व्यापृतः।

नंब्यार— उणर्तिनान् श्री हनूमान्— पिन्नेयो पिन्ने स्वामिनी, इप्रकारं सिद्धार्थनाकिन सुग्रीवन् रण्टामत् त्वदन्वेषणोपक्रममाकिन स्वामिकार्यत्तिङ्कल् व्यापृतानायान्, एन्नुणर्तिनान् श्री हनूमान्।

सीता— तदो तदो?

नंबियार— पिन्नेयो पिन्नेच्चोळुक एन्नरुळिच्चेय्ताळ् सीतादेवी।

हनुमान्— ततः परिहासमात्रमिव जन्मना, देवानामतिशायिनः कर्मणा, वानरवीरानृक्षाधिपतींश्च कृतसमयानसृजदाशाचतुष्टयम्।

नंब्यार— उणर्तिनान् श्री हनूमान्— पिन्नेयो स्वामिनी, जातिकोण्ट परिहास विषयन्मारेङ्किलुं वीर्यं कोण्ट् विबुधन्मारेप्पोलुं अतिशयि प्पिक्कुन्न ऋक्षेश्वरन्मारेयुं

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वानरवीरन्मारेयुं कृतसमयराक्कि नालुदिक्किलेक्कुं वेरतिरिच्च नियोगिच्चु।— एन्नुणर्तिनान् श्रीहनुमान्।

सीता— तदो तदो!

नंब्यार— पिन्नेयो पिन्ने चोल्लुक। एन्नरुळिच्चेय्ताल् सीतादेवी।

हनूमान— अस्यामपि दिशि युवराजकनेतृकमृक्षेश्वरपुरोगममस्मदादिविरळमादिशदिदं सैन्यम्।

नंब्यार— उणर्तिनान् श्रीहनूमान्— पिन्नेयो स्वामिनी, ई दिक्किन्न् युवराजवाकिनअंगदन् जांबवाने मुन्निट्टाक्कि दुर्बल राकिन एम्पोरुमारे चुरुक्कि ईदृशमाकिन सैन्यत्तेयुं नियोगिच्चु। एन्नुणर्तिनान् श्रीहनूमान्

सीता— संकणिज्ज एसा आसा। तदो तदो।

नंब्यार— अरुळिच्चेय्ताळ् सीतादेवी— एने, शङ्कनीयललो ई दिक्क्। आकयाल् समर्थरे नियोगिच्चु। पिन्नेयो पिच्चोल्लुक एन्नरुळि च्चैय्ताळ् सीतादेवी।

हनुमान्— ततः सर्वेषु वानरवीरेषु स्थितेषु पूर्वदर्शनविस्रंभान्मामुपह्वरमाहूतवता देवेन दत्तमुक्तं च।

नंब्यार— उणर्तिनान् श्री हनुमान्— पिन्नेयो स्वामिनी, एल्ला वानरवीरन्मारुं नोक्किन्किवे पूर्वदर्शन विस्रंभम् हेतुवायि देवन् एन्ने अरिके विळिच्च उन्नूण्ट् तन्नट्टूतुं उन्नूण्ट् अरुळिच्चेऽततुं। एन्नुणर्तिनान् श्री हनुमान्।

सीता— (सहर्षम्) किं किं?

नंबियार— अरुळिच्चेय्ताळ् सीतादेवी— अतेन्त् एनिक्क् तन्नूट्टत् एन्नरुळिच्चैय्ताळ् सीतादेवी।

(हनुमान् प्रणिपत्यांगुलीयकं प्रयच्छति)

सीता— एदं अच्छरियं अंगुलीयम्। एदं तपोधणेहिं दिण्णम्। एदं कुमारेण आणीदम्। (अंगूलीयमादाय विलपति)

नंब्यार— अरुळिच्चेय्ताळ सीतादेवी, वातात्मजात् वन्दिच्चु कोटुक्कप्पेट्ट अंगुलीयकत्तेक्कण्टु प्रसन्नहृदययायि— एने इतल्लो खरवधनिमितत्त मुदितन्मारायिरिक्कुन्न मुनिजनत्ताल कोटुक्कप्पेट्टतुं कुमारनाल् आनीयमायतुं अश्चर्यभूतवुमाय अंगुलीयकम्। एन्नरुळिच्चेय्ताळ् सीतादेवी।

हनूमान— एषा देवी—

आरोपयत्यलकमानयति स्ववक्त्रं भूयस्समाश्रयति बाहुलतोपपीडम्।
प्रत्येकमर्पयति चाङ्गुलिपल्लवेषु ध्यानाधिकं स्तिमितमार्द्रमवेक्षते च।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नंब्यार— अरुळिच्चोय्तान् श्री हनुमान्— एने इवळल्लो देवी, अंगुलीयकत्ते तिरुमुटियिल् अर्पिक्कुन्नोळ्, पिन्ने तिरुमुखत्तिल् अर्पिक्कुनोळ्, पिन्ने कुचतटत्तिल् वेच्चु गाढमाळुंवण्णम् आष्लेषि क्कुन्नळ्। पिन्ने करांगुलीय पल्लवङ्ङलि् प्रत्येक मर्पिक्कुन्नोळ् सीतादेवी। ध्यानपरवशयायि स्थिति चेय्युन्नोळ्, एन्नरुळिच्चेय्ताळ् सीतादेवी।

सीता— इदं ळोयाभरणस्स आभरणं, इदं बाणासणगुणपरिखेदियं। इदं रक्खस् मायापिसुणं, इदं रयणीसु रमणदीवो, इदं वदणालङ्कार विकप्पादरिसो।

नंब्यार— अरुळिच्चेय्ताळ् सीतादेवी— इनि इतल्लो लोकाभिरामन् तिरुवटि युटे आभरणम्? बाणासनगुण परिखेदितमायि, राक्षस माया प्रकाशन पटुवायि रात्रिकाळिल् रत्नदीपमायि तिरुमुखत्तिङ्कले अलङ्कार परीक्षणत्तिङ्कलेक्क् आदर्शमायि इरिप्पोन्नत्, एन्नरुळिच्चेय्ताळ् सीतादेवी।

हनूमान्— अस्याः कृते शतगुणमुन्मादं कर्तुमर्हति देवः।

नंब्यार— अरुळिच्चेय्तान् श्रीहनूमान्— एने ई देवियेक्काळ् नूरुमट्ङ्ङ दुखिप्पान् योग्यन् देवन्, एन्नुणर्तिनान् श्री हनूमान्।

सीता— अंगुळीय, दाणीं अय्यवुत्त हत्थब्दास्स विरहिदो तुवं वि। अय्यवुत्तेण पाणिणा गहीदोसि। तव केण विवण्णत्तं जादं? तुवं वि अहं वि रक्खसबन्दी भूदो।

नंब्यार— अरुळिच्चेय्ताळ् सीतादेवी— एटो अंगुलियकमे, सर्वप्रकारेणयुं नम्मळिल् सादृश्यमुण्ट्। एन्नेयुं निन्नेयुं विल्लुकोण्टल्लो परिग्रहिच्चतु देवन्। ज्ञान् तन्तिरुवटियो वेर-पेट्टं इप्रदेशत्ते प्राविच्चेन्। निणक्कुमेन्तीवण्ण मिरिप्पोरुरु आपत्तु संभविप्पान्? एन्नरुळिच्चेय्ताळ् सीतादेवी।

हनुमान्— **रघुवृषकरांगुली-वियोगादधिगतविश्रमेषु वासरेषु।**

विरहदहनवेदनापरीतं नयति नताङ्गि तवाङ्गुलीयकम्।।

नंब्यार— उणर्तिनान् श्री हनूमान्— एने रघुवृषभनाकिन श्रीरामदेवन् तिरुवटियोटु वेरपेटुकयात् मून्नुनालु दिवसंगळे दुःख मिळच्चिरुन्न अंगुलीयकं इप्पोळ् विरहाग्नियाल् चूटु पेरुक्कुन्न निन्तिरुवटियुटे कराविन्दत्ते प्रापिक्कयाल् दुखत्तोटुकूटियिरिक्कुन्नु। एन्नुणर्तिनान् श्री हनूमान्।

सीता— किण्णु खु करिस्सं?

नंब्यार— अरुळिच्चैय्ताक् सीतादेवी— एने एन्तिविटे चेय्येण्टतु ञान् एन्नरुळिच्चेयताळ् सीतादेवी।

हनूमान्— (आत्मगतम्) अस्याः खलु—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शरपाण्डुषु गात्रेषु श्यामां पुलकितामपि।
अङ्गुलीयस्य चरतः पश्यामि पदवीमहम्।।

नंब्यार— उणर्तिनान् श्री हनूमान्— एने ई देवियुटे शरपाण्डुक्कळाकिन गात्रंगळिल् पेरुमारुन्न अंगुलीयकत्तिनुटे श्यामयायुं पुळकितयायु इरिक्कुन्न पदविये ञान् काणुन्नेन्, एन्नुणर्तिनान् श्री हनुमान्।

सीता— वाचायस्स दाव दाणीं णामाखरम्।

नंब्यार— अरुळिच्चेय्ताळ् सीतादेवी— एने अंगुलीयक लिखितमाकिन रामनामाक्षरत्ते वायिप्पू ञान्, एन्नरूळिच्चेय्तु सावधान चित्तयायि स्थितिचेय्तरुळिनाळ् सीतादेवी।

हनूमान्— अरुणे परिशीर्णमञ्जलौ निपतन्तो नयनोदबिन्दवः।

नंब्यार— उणर्त्तिनान् श्री हनूमान्— कमलदलारुणमाकिन इवळ् तिरुवटियुटे अञ्जलिपुटत्तिङ्कल् मुत्तुमणि कणक्के वीषुन्न तिरुनयन जल बिन्दुक्कळ् चेन्तामरप्पूविनुटे अकयितळिन्त् वीणुकिटक्कुन्न मञ्जुतुळ्ळि पोले शोभिक्कुन्नु, एन्नुणर्तिनान् श्री हनुमान्।

सीता— भद्द, तव दंसण मत्तेण अहिमुहं देवदं त्तिमये विण्णादम्। अवीय अंगुलीय प्पदाणेण आळिंगिदाविय अय्यवुत्तम्। दाणि उणवसणस्सवेण सकुदूहलं मे हिययं। ख उण अहिण्णाण त्थं अवरं। अय्यवुत्तस्स अहिण्णाण वयणं मे भणेहि।

नंब्यार— अरुळिच्चेय्ताळ् सीतादेवी— एटो भद्र, निन्नेक्काणुकनिमित्त मायि दैवं एन्निक्क अनुकूलमेन्नु काल्पिक्कुन्नु। अन्नयुमल्ल, अंगलीयक प्रदानं कोण्ट् आर्यपुत्रने आलिंगनं चेय्युन्नितो एन्नु तोन्नुमारिरिक्कुन्नु। त्वद्विषयमुळ अविश्वासमल्ला कारण माकुन्नत्। एन्टे हृदयं आर्य पुत्र वचन श्रवणत्तिङ्कल् सकुतूहलमायि भाविक्कुन्नु। एन्नाल् अभिज्ञानवचनत्तेयुं चोल्लुक एन्नरुळिच्चेय्ताळ् सीतादेवी।

हनूमान्— अत्रभवत्याः वञ्चनाभूमौ वर्तमानायाः अभिन्नायाः अभिज्ञानदृढीकरणार्थमिदमप्याह।

नंब्यार— उणर्तिनान् श्री हनूमान्— इवञ्चनाभूमि-इङ्कल् चञ्चलमायि वसिंक्कुन्न निन्तिरुवटियुटे हृदयविश्वासार्थमायि विश्वलोकवन्द्यन् इत्रमात्रमोन्नुम्ट् अरुलिचैथाथम्, एन्नुणर्तिनान् श्रीहनूमान्।

सीता— किंणु खु? अवहिदम्हि।

नंब्यार— अरुळिच्चेय्ता् सीतादेवी— अतेन्त? इवळ् ञान् कुरिक्कोण्ट् केळकुन्नोळ् एन्नरुळिच्चैय्ताळ् सीदादेवी।

हनूमान्— श्रृणोतु स्वामिनी,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आयातं मामपरिचितया वेलया मन्दिरं ते
चोरो-दण्ड्यस्त्वमिति मधुरं व्याहरन्त्या भवत्या।
मन्दे दीपे मधुलवमुचां मालया मल्लिकानां
बद्धं चेतो दृढतरमिदं बाहुबन्धच्छलेन।।

नंब्यार— उणर्तिनान् श्री हनूमान्— केट्टरुळुवल्लो देवन्टे अभिज्ञानवचनत्तेः एटो सीते, नां मुन्नं अयोध्ययिङ्कल् अधिवसिक्कुन्न कालत्त् ओरु दिवसं कारणान्तरेण रात्रियिल् समयमतिक्रमिच्चु वन्न एन्ने् कण्ट् प्रणयकुपितयाय भवति मद्विषयमनुराग रहितनाकयाल् अन्यवनितागतचिन्तनाकिन भवान् चोरनेन्नपोले दण्डयन् एन्निंगने मधुरमाकुंवण्णं व्यवहरिच्च् मधुबिन्दु स्यन्दिनि याकिय मल्लिकामालकोण्ट् एकन्टे बाहुक्कळे पिटिंच्चु केट्टिनाळ्। बाहुबन्ध छलेन हृदयमे केट्टप्पेट्टत्, इतिन् मन्दमाय दीपं तन्ने साक्षि। इंगने देवन्टे अभिज्ञानवचनम्, एन्नुणर्तिनान् श्रीहनूमान्।

सीता— दाणीं आसाळदे, पसवं वन्धेहि। तुमं दाव मारुदिणो अमिदेण सञ्जीयसि, हिथय, तुमं वि उद्धप्पयाण मग्गोसि अय्यवुत्तेण। जीविय, तुमं पि जमलोयस्स अद्धवहे णिवुत्तोसि। पवणतनय, तुझ किं पि भणिदु काममिह। भणिदव्वं पुण ण जीणामि। अत्थि तव गुरु मारुयो ळोयस्सपाणो मम खु दाव तुमं पाणो संवुत्तो।

नंब्यार— अरुळिच्चेय्ताळ् सीतादेवी, अभिज्ञानवचनश्रवण संवर्द्धित हर्षित हृदययायि— एटो आशयायुल्ल लते, नीयिप्पोळ् मारुति वचनामृतवाल् ननक्कप्पेट्ट पूत्तालमयं। एटो हृदयमे, निय्युं लब्ध प्रयाणमार्गनायि। एटो प्राणङ्ले, निंगलु दमलोक गमन त्तिङ्कल् अर्धमार्गत्तिङ्कलवेच्च निर्गतङ्गलायिएन्निंगने प्रमोद प्रलापं चेय्त् पवनतनय, निन्नोटोन्नुण्टु ञान् चोल्लुवान् तुटङ्ङुन्नु। निरुपिक्कुम्पोल् ओन्नुं तोन्नुन्नतुमिल्ल। एन्नात् इत्रमात्रं चोल्लां। लोकंगळुटे प्राणंगल् निण्टे पिताव्। एन्टे प्राणंगल् नीयत्रे, एन्नरुळिच्चेय्ताल् सीतादेवी।

हनूमान्— दक्षा खलु देवी भृत्यसान्त्वने। (अधोमुखस्तिष्ठति)

नंब्यार— उणर्तिनान् श्रीहनूमान्— भृत्यसान्त्वनत्तिङ्कल् विदग्धयत्रे इवळ् तिरुवटि एन्नुणर्तिच्च् अधो मुखनायि स्थितिचैय्तरुळिनान् श्री हनूमान्।

सीता— पभञ्जणसुणो, कहेहि, कहेहि, अच्छरीयं खु एदं। केण दाणीं एव्थ आयोदळंधितो वा अयं महासमुद्दो।

नंब्यार— अरुळिच्चेय्ताळ् सीतादेवी— एटो प्रभञ्जनात्मज, चोल्लुक चोल्लुक, आश्चर्यमायिरिप्पोन्नत्, एन्तोरुपायं कोन्ट् इविटुत्ते प्रापिच्चतुं समुद्रलंघनं चेय्ततुं, एन्नरुळिच्चैय्ताळ सीतादेवी।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हनूमान्— ततस्तदानीं देवस्य शासनं शेषमिव शिरसा प्रतिगृह्य प्रक्रान्तामिमां दिशं वानरसैन्यमासीत्।

नंब्यार— उणर्तिनान् श्री हनूमान्— पिन्नेयो स्वामिनी, आमतंगाश्रमत्तिङ्कल् निन्न् देवन्टे शासनत्ते रोषये स्वीकरिक्कुं कणक्के शिरस्सु कोण्ट वाङ्ङिक्कोण्ट् इद्दिक्कु नोक्किप्पोन्नू वानरन्मार। एन्नुणर्तिनान् श्री हनूमान्।

सीता— तदो, तदो।

नंब्यार— पिन्नेयो पिन्ने च्चोल्लुक, एन्नरुळिच्चैय्ताल् सीतादेवी।

हनूमान्— ततः स खलु,

मेघावृतासु जगतीधरकन्दरासु रोधोवनेषु सरितां सरसद्रुमेषु।
वेलातटे जलनिधेरपि ते विनिद्रमन्वेषणाय समयो गमितः कपीन्द्रैः।।

नंब्यार— उणर्तिनान् श्री हनूमान्— अंभोदाळि विलग्नंगलाकिन अद्रि कन्दरं गलिलुं सरसद्रुमंगलाकिन नदीतीर प्रदेशंगलिलुं समुद्रदवेलावनत्तिङ्कलुं निन्तिरुवटिये अन्वेषिच्च् वानरान्मार्क् समयमतिक्रमिच्चु। एन्नुणर्तिनान् श्री हनूमान्।

सीता— तदो तदो?

नंब्यार— पिन्नेयो पिन्ने च्चोल्लुक एन्नरुळिच्चेय्ताळ् सीतादेवी।

हनुमान्— ततोऽतिक्रमात् समयस्य सर्वे वानरपतयः प्रायोपवेशनमतिं चक्रुः।

नंब्यार— उणर्तिनान् श्री हनूमान्— पिन्नेयो पिन्ने स्वामिनी, ईवण्णम् समयमतिक्रमिक्कयाल् साङ्कराकिन वानरान्मार प्रायोववेशनं दीक्षिच्च् मरिप्पानारंभिच्चार। एन्नुणर्तिनान् श्री हनूमान्।

सीता— हद्धी, तदो, तदो।

नंब्यार— अय्यो कष्टं! पिन्नेयो पिन्ने चोल्लुक एन्नरुळिच्चेय्ताळ् सीतादेवी।

हनूमान्— हतायुषो जटायुषः सहजः संपातिर्नाम गृद्धराजः स्वरोपलम्भे तां प्रायोपवेशन-भूमिमधिगतवानासीत्।

नंब्यार— उणर्तिनान् श्री हनूमान्— पिन्नेयो स्वामिनी, हतायुस्साकिनं जटायुस्सिनुटे सहजनाकिन सम्पाति एन्नु नामधेयनाकिन गृद्धेन्द्रन् स्वरोपलंभहेतु वायिट्ट आ प्रायोपवेशन-भूमिये प्रापिच्चेन्, एन्नुणर्तिनान् श्री हनूमान्।

सीता— तदो तदो?

नंब्यार— पिन्नेयो पिन्ने चोल्लुक, एन्नरुळिच्चेय्ताळ् सीतादेवी।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हनूमान्— ततः स खलु स्वामिनि, तवेमामवस्थां सहोषित इव व्यक्तमस्मानवेदयत्।

नंब्यार— आ पक्षीन्द्रन् निन्तिरुवटियुटे वृत्तान्तत्ते सहोषितन् एन्मपोले अरिञ्ञु व्यक्तमाकुंवण्णम् अंगल्क्करियिच्चन्, एन्नुणर्तिनान् श्री हनूमान्।

सीता— अहो उवयारप्खा सा जा दी पुव्वं वितस्स भादा मम कारणादो उज्झितवन्तो पाणिनि। तदो तदो?

नंब्यार— अरुळिच्चेय्ताळ् सीतादेवी, एने उपकारशीलरत्रे आ पक्षिजातिकळ्। मुम्प जटायुस्सेन्न् नामधेयनायि इवनुटे भ्रातावाकिन पक्षीन्द्रन् एन्नेकुरिच्च् प्राणंगले परित्यजिच्चान्। पिन्नेयो, पिन्नेच्चोल्लुक एन्नरुळिच्चैय्ताळ् सीतादेवी।

हनूमान— ततस्तदुपदेशात् लङ्घितो महार्णवः। प्राप्तमिदमुद्यानं च।

नंब्यार— उणर्तिनान् श्री हनूमान्— पिन्नेयो स्वामिनी, आ पक्षीन्द्रन्टे उपदेशं निमित्तमायि समुद्रमतिक्रमच्च ई उद्यानत्ते प्रापिच्चेन् ञान् एन्मुणर्तिनान् श्री हनूमान्।

सीता— मम सोय सायरो खु तुये ळंघिदो। कण्ण धार, इसमस् वसणस्स परियवसाणकालो कदमो?

नंब्यार— अरुळिच्चेय्ताळ् सीतादेवी— एटो भद्र, एन्नुटे शोकमाकिन सागरं निन्नाल् लंघिक्कप्पेट्टु। व्यसनवारिधि कर्णधारनायुळोवे, ई दुःखसागरत्तिण्टे पर्यवसानकालं एन्नुकिलो, एन्नरुळिच्चेय्ताळ् सीतादेवी।

हनूमान्— स्वामिनि, तवास्ति भर्तृसन्देशः।

नंब्यार— स्वामिनी, निन्तिरू वटिक्क भर्तृसन्देशंउण्ट् एन्नुणर्तिनान् श्रीमहूमान्।

सीता— अत्थि सन्देशो? अणुगहोदम्हि;

नंब्यार— अरुळिच्चेय्ताळ् सीतादेवी— एन्तु सन्देशमुण्ट एन्नु चोल्लियेङ्किल् अनुगृहीतयायेन ञान्। एन्नरुळिच्चेय्ताळ् सीतादेवी।

हनूमान्— अयं सन्देशः—

तदासि नमयता धनुर्मया त्वं गुरुजघने गुरुमन्दिरादवाप्ता।
दशवदननिरोधनादपि त्वां युधि विनमय्य शरासनं हरामि।। —इति

नंब्यार— उणर्तिनान् श्रीहनूमान्— केट्टरुळुवल्लो स्वामिनी, देवन्टे सन्देशत्ते। एटो गुरुजघनयायुळोवेवैदेही, मुन्नं विदेहराज सभयिङ्कल् निन्न् शैवँधनुस्सिने पूट्टेट्टु मुरिच्च निन्ने ञान् परिग्रहिच्चु इप्पोळ् वैष्णव शरासन प्रयुक्तंगलाकिन शरंगळेकोण्ट् रावणादि राक्षस निग्रहिच्च निन्ने ञान् परिग्रहिक्कुन्नेन्, एन्नु देवण्टे सन्देशम्। एन्नुणर्तिनान् श्री हनूमान्।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सीता— रक्खसस्स पाणाणि पुढमं गे्हीय पच्चामं हरिगच्छ सिग्धं। ग्ण इमं चूळामणि इसोणं अणुग्गहं। अय्यवुत्तो वि दाव इमं पे्खिय अणुपे्खिदव्वो भवे (चूडामणि प्रयच्छति)

नंबियार— अरुब्णिच्चेय्ताळ् सीतादेवी— राक्षसन्मारुटे प्राणन् अपररिचिट्टो आर्यपुत्रन्ह एन्ने परिग्रहिक्कुन्नत्? एन्नाल् कालतानसं वराते उषरिप्पोक वेणम् हनूमाने, मुनिजनानुग्रह लक्ष्यमाकिन मुटि चूडामाणियेयुं कोण्टुपोक। इत, कण्टाल् मद्विषयं औदासीन्य रहितनावुं आर्यपुत्रन् एन्नरुळिच्चेय्त् चूडामणियेयुं दानं चेय्युन्नोळ् सीतादेवी।

हनूमान्— अहो प्राप्तज्ञता दाक्षिण्यं च देव्याः?

नंब्यार— अरुळिच्चेय्तान् श्रीहनूमान्— एने ई देवियुटे प्राप्तज्ञतयुं दाक्षिण्यतयुं आश्चर्यमत्रे। एन्नुणर्तिच्च् मुटिचुडामणियेयुं स्वीकरिच्च् स्थिति चेय्तरुळिनान् श्री हनूमान्।

सीता— अय्यवुत्तो जह सोयपखसो न होयि, तह मे उत्तन्तं तस्य भणेहि।

नंब्यार— एटो भद्र, आर्यपुत्रन् शोक परवशनाकात्तवण्णम् एन्नुटे वृत्तान्ते चेरुक्कुमार अरियिक्केणमे, एन्नरुळइच्चेय्ताळ् सीतादेवी।

हनूमान्— अनुगृहीतोस्मि।

नंब्यार— अनुगृहीतनायेने ञान्, एन्नुणर्तिनान् श्री हनूमान्।

सीता— गच्छ दाणिं तुमं। अहंपि पुरोळमं सिंसपासंसिदा भाविय तुम्हाणं वुत्तन्तं पणिपाळयेमि।

नंब्यार— अरुळिच्चेय्ताळ सीतादेवी— एटो भद्रा पोकनीयिप्पोळ् ई मुन् भागत्त् काणुन्न शिंशपा वृक्षत्तिन् चुवट्टिल् निंगलुटे आगमनवुं पार्त्त अधिवसिक्कुन्नेन् एन्नरुळइच्चेय्त् विश्वस्त मानसमायि स्थिति चेय्तरुळिनाळ् सीतादेवी।

हनूमान्— यदाज्ञापयति स्वामिनी।

रक्षोवधाद्विरतंकर्म विसृज्य चापं
गोधाङ्गुलित्रपदवीषु धृत-व्रणेन।
रेखातपत्रकलशाङ्कितलेन रामो
वेणीं करेण तव मोक्ष्यति देवि, देवः।।

सीता— अविघ्नं से होदु।

नंब्यार— निन्तिरुवटियुटे नियोगं यातोन्न् अतव्वण्णमाक एन्नुणर्त्तिच्च् कालविळंबन शंका लेशं पोलुं इवळ् तिरुवटियुटे हृदयत्तिङ्कल् उण्टाकरुत् एन्न् निरुपिच्च्, भावियाकिय अवस्थान्तस्ते अरियिच्च् आश्वसिप्पिक्कुन्नेन्। सुप्रसन्नयायि-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्थितिचेय्तरुळीटेणमे स्वामिनी। अर्णवमदयतिङ्कल् अचल श्रृंग निविष्टमाकिन अरिनगरं प्रापिच्च पराक्रमिप्पू एन्नुळ्त् अत्यन्तं दुष्करं एन्नु निरुपिक्कोल्ला। महनीयोत्साहनाकिन मनुकुलेन्द्रन्न् एन्तोन्नशक्यमायत्?

नात्युच्चशिखरो मेरुः नातिनिम्नं रसातलम्।
व्यवसायसहायानां नातिपारो महोदधिः।।

एन्नुण्टाकयाल् निन्तिरुवटुयुटे वृत्तान्तं केट्टाल्तत्क्षणेन अक्षय बल बलीमुखनायि उपायान्तरेण समुद्रमतिक्रमिच्च् इविटेक्क् वन्न् दयितापहरण कृतापराधनाकिन निशाचरेन्द्रने पुत्रपौत्रादिकळोटुकूटे समरमुखत्तिङ्कल् निग्रहिच्च् साधित भुवनत्राणकृत कृत्यनायि, मुन्नं अगस्त्य कर दत्त मायि चारुतर चामीकर दण्टमाकिन वैष्णव कोदण्टत्ते कालान्तरत्तिङ्कलेक्कु लोकरक्षण साधन माकयाल् उचितमाकिन स्थानान्तरत्तिङ्कल् निक्षेपिच्च् कृतककृत्यानाकिन विश्वनाथन् गोधांगुलित्रंग्व्ळुटे पदविकळिल् अविर्भूतं गलाकिन वीरव्रणंगलोटुं कूटे आश्रित जनार्ति हरमायि रेखा यमाण कलशातपत्र कुलिश, कुशेशयादि सल्लक्षण लक्षित करं कोण्ट् कान्त विरह क्लान्तयाकिय निन्तिरुवटियुटे वेणीमोक्षते चेय्युन्नेन् देवन् एन्नुणर्तिच्च कुसुम परिपूरिताञ्जलियायि प्रदक्षिणं चेयत् नमस्कारिच्च परिगृहीतानुग्रहनायि अविटे निन्न् पुरप्पेट्ट तन्नुटे आगमनत्ते अरियिक्कानायिक्कोण्ट् उद्यान भञ्जनं चेयत्, उद्यानपालकन्मार किंकरन्मार, पञ्च सेनापतिकळ्, सप्तमन्त्रिकुमारन्मार अक्षकुमारन्, एन्निवरे निग्रहिच्च् लोकत्तिङ्कल् विश्रुत पौरुषनायि कार्वशात् मेघनादास्त्र बद्धनायि दशग्रीव समीपत्ते प्रापिप्च् उत्तर-प्रत्युत्तर सल्लापदिकळे क्कोण्ट्, कुपितनाकिन दशकन्धरनाल् प्रदीपितमाकिन लांगूलाग्निकोण्ट् लङ्कादाहं चेय्त् सीताधिवास धन्यतर माकिन प्रदेशवुं विभीषण भवनवुं वेन्तिल्ला एन्न् अंबर चारिकळ् चोल्लिक्केट्ट् प्रसन्नहृदयनायि समुद्रमति क्रमिच्च् सागरतीरस्थन्माराकिन वानरवीरन्मोराटुं कूटे मनुकुल तिलक सन्दर्शन समुत्सुकनायि मधुवनन्ते प्रापिच्च् मधुपानमत्तन्माराकिन वानरवीरन्मारोटुं कूटे मतंगाश्रमं नोक्कि एषुन्नरुळित्तुटंगी मारुतात्मजन् श्री हनूमान्।

क्रमदीपिका

अभिषेक नाटक का तोरण-युद्धाङ्क

शंकुकर्ण का पुरप्पाट्—

तोरण युद्धाङ्क के पुरप्पाट के लिए रङ्गसज्जीकरण कर धान और नारियल के फूल का गुच्छा तथा दीप रख कर 'मिष़ावोच्चप्पेटुत्तिं' 'गोष्ठि कोट्टि' अरंगुतेळिपू।

कालानले तूललवं वितन्वन् बालानले राक्षसराजधानीम्।
हालाहलग्रीवसमीरजन्मा मालां विपत्तेर्दहतात् कपिर्वः।।

अथवा "सीतामाश्वास्य वाक्यै............" शीर्षक श्लोक पढ़कर तेळियिच्च् "मुटिक्कु" समाप्त करना।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(शंकुकर्णन् अणिव् लक्ष्मण ने प्पोले।) शंकुकर्ण का वेश-विधान ठीक लक्ष्मण के जैसे, तिलक चन्द्रकला, 'पोयतकं' जरूर बाँधना है। पैरों पर पिसे चावल का घोल बनाकर लगाकर उस पर उंगलियों से लकीर-सी खींचकर पैजनी का रूप भी आँकना है। यवनिका पकड़ने के बाद वायिच्च 'वट्टत्तिल् नटप्पान्' बाजा बजने पर दोनों हाथों से 'कुशल्' का छोर पकड़ कर 'वट्टत्तिल् नटन्न' मुटिच्च्' 'मुखत्तु नीर तळिच्च' कळियुं वेच्चु तिरिञ्ञ् दोनों हाथों से कुशल पकड़ कर पैर जोड़ कर निम्न पद में खड़े होकर यवनिका हटाने पर डर कर पैर से सिर तक खूब थर-थर काँप कर रोते हुए से 'वें', 'वें' रोकर फिर जाँघें हिलाकर हाथ से पकड़ कर, घबराकर, घूमकर पीछे की ओर देखते रहना। बायें भाग से दाएँ नेपथ्य के दरवाजे की ओर तथा दायीं ओर से नेपथ्य के दाएँ दरवाजे की ओर देखना। 'बन्दरराज पीछे तो नहीं आरहे' ऐसा सोचकर, डरकर, मण्डलाकार घूमकर फिर दीप के सामने खड़े होकर ऊपर बताए ढंग से ही दिखावें। ऐसा तीन बार दिखाकर पेड़ों को उखाड़कर गरजता सा सुनकर डर कर 'रावण को निवेदित करने जाना' ऐसा दिखाकर 'मरयिल्' चलते जैसे चलकर "काञ्चन तोरण द्वार पर पहुँचा" ऐसा दिखाकर "विलक्कि" दाईं ओर 'कोञ्चच्च्' रुलाई के साथ मुद्राभिनय के बिना नाटक भाग का पाठ करे। उस समय दोनों हाथ पैरों के घुटनों पर रखते रहना फिर 'विलक्कि' "चेटीपञ्चम" राग में खूब अच्छी तरह पढ़े। "क इह भो, काञ्चनतोरण-द्वारमशून्यं कुरुते" यह 'चोल्लियाटि' विजया का ग्रन्थ 'केट्टाटि' बहुत डर कर काँप कर "विजये निवेद्यतां"..........यह ग्रन्थ, कोञ्चच्च् चोल्लि (अस्पष्ट पढ़कर) फिर साफ पढ़कर "कुतः" पढकर "यस्यां न, प्रियमण्डना अपि" तक पढकर मन्दोदरी, शृंगार कर सहेलियों के साथ उपवन में जाकर (कर्णपूर) कनफूल के लिए कोंपले तोड़ने में प्यार के कारण अशक्त होने का भाव अभिनय करें, फिर 'वीजन्तो मलयानिला"..........पढकर वायु को रावण द्वारा भगा दिया जाने का प्रसंग अभिनय करें, "रविकरैः अस्पृष्टबालद्रुमा" के लिए दूर भगा देने का प्रकार भी अभिनय कर लें, फिर 'सेयं', पढकर आगे बाकी श्लोक बिना पढे मुद्राभिनय कर और— 'सेयं, पढकर 'निर्गीता' व 'चारि' के पद विन्यास के साथ (कूत्तु मुटिप्पू) नृत्य का पर्यवसान कर लें।

शंकुकर्ण का निर्वहण—

दूसरे दिन— पुरप्पाट् के दिन के जैसे "अणिञ्ञुकूटि" वेष विधान कर (पोय्तक) 'केट्टि' निकलकर 'अभिवाद्यं चेय्त्' तुरन्त 'कुशल' पकड़कर मुडकर 'विजये निवेद्यतां' से शुरु कर "यस्यां न" श्लोक पूरा होने तक मुद्राभिनय कर 'मुटिच्च्' हाथ जोड़कर 'पोय्तकं' खोलकर पीठ पर बैठ कर 'अभिवाद्य' और सभानिरीक्षण कर 'कमलपरिवर्तनत्तितोष्तुत्' अनुक्रम का अभिनय शुरु करें। शुरु करने से लेकर पीछे की ओर निर्वहण श्लोक

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पढाने तक की कथा—। फिर संक्षेपम्— प्रस्तुत श्लोक से निर्वहण शुरु करें। "ततो युद्धं समभवत्........" तक करना है। (निर्वहण के श्लोक वैशेषिक प्रकरण में दिये गये हैं) इसमें 'अहं विजित्य...........' से शुरु होनेवाला निर्वहण का अन्तिम भाग कूटियाट्टम् के दिन करना है। उस दिन स्वर्ग से कल्पकवृक्ष उखाड़कर यहाँ ले आकर परिचर्या से पल्लवित और पुष्पित कर उसकी रक्षा के लिए राक्षसों को सौंपने का प्रकार भी अभिनय करने पर शंकुकर्ण एक बार मण्डल बनाकर घूमकर 'पुरप्पाड' के दिन के जैसे सब दिखाकर कोञ्ञच्च् 'शक्ररिपोः, आदि पढ़ लें, 'यस्यां न' से लेकर अंशतः पढ़कर फिर पूरा पढकर बाजे के साथ पढ लें। डर कर विजया का ग्रन्थ पढा कर फिर अपना ग्रन्थ पहले (कोञ्ञच्च्) मारे डर के कँप-कँपी के साथ अस्पंष्ट फिर स्पष्ट पढ़कर अभिनय कर विजया का ग्रन्थ 'केट्टाटि' नेपथ्य में आवें।

पहले दिन का कूटियाट्टम्

रावण 'अणिञ्ञकूटि', पीठ कपड़े से ढकना और यवनिका पकड़ना होने पर शंकुकर्णन् यवनिका के बाएँ भाग से दीप के सामने जा खडे होकर, दूर रावण को देखकर 'विलक्कि' 'वेळा धूळि' राग में 'अये' से शुरुकर 'य एषः' पर्यन्त पढ लें, फिर तर्क राग में 'अमलकमल' से आरम्भ कर श्लोक पढ़कर "इळकियाट्टम्, के रूप में अभिनय कर लें, "त्वरितमभिपतत्यसौ सरोषः" के लिए क्रुद्ध हो आते से टेढा (बिलंगन इळकिनटक्कु) शरीर चला चला कर चलना, 'यथार्कः' पढकर 'प्रावेशिक' दिखाकर दाएँ भाग से नेपथ्य में आवें।

'पन्तं' जलाकर यवनिका के पीछे पकड़ने पर 'वायिच्च' 'वट्टत्तिल् चाडि नटक्कुक' के लिए बाजा बजावें। रावण 'अणिञ्ञ्' 'तूड्ङमाला' भी पहनकर 'उत्तरीय' और 'पोय्तक' बाँधकर, पैरों पर पानी मिला चावल का घोल लगा कर शंकुकर्ण के जैसे लकीर खींच कर तलवार हाथ में पकड़कर 'मरयिल्' उद्धत यात्रा में 'मुटिच्च' 'मुखत्त् नीरु तळिच्च' (आचमन कर) 'चुनिकक्कूट्टिल् ताणु निन्न्' तलवार सामने दिखा ता हुआ चला कर निम्न पद में खड़े होकर यवनिका हटा कर 'तेळ्ळि' 'पन्त' (मशाल के साथ) निकलकर तलवार की ओर देखें, दष्ट्रं दिखाते हुए 'वट्टत्तिल् पेरुमारि' नेपथ्य में आवें, फिर बायें ओर से निकल कर तलवार ले कर 'प्रावेशिकम्' तीन बार दिखाने पर तलवार दीप के दाएँ ओर रखकर 'पन्तम्' (मशाल) पकड़कर, अभिनय करें, फिर तलवार लेकर उछाल कर पकड़ना, छाती पर लगाने का-सा भाव दिखाना आदि करें, इस प्रकार तीन बार 'प्रावेशिकम्' दिखाने पर 'उपवन का नाश किया गया' ऐसा विजया का कहना सुनकर क्रुद्ध हो तलवार लेकर 'विलक्कि' वीरतर्क राग में 'कथं कथं भो.........आदि खण्डशः पढने पर तलवार रख कर "कथं कथं भो नववाक्यवादिन्' इति पढकर अभिनय करने पर शंकुकर्णन् दौड़ते आकर डरते-डरते रोकर बाएँ होकर दोनों हाथों से कुशल

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पकड़कर काँपते हुए 'कोञ्चच्च' पढ़ लें— 'जयतु महाराजः' से लेकर 'अभिमृदिता अशोक-वनिका' तक पढ़कर फिर स्पष्ट 'कथं कथं भो, 'अविदितागमनेन' इति युक्त्यनुसारेण पढकर 'केनचित्' और केन चाद्य' कूटियाट्टम् में तर्क वितर्क पढ लें, फिर शंकुकर्ण 'वानरेण' यह धीमे से पढ लें, रावण यह सुनकर उसका मुख ढक कर 'क्व', 'क्व' पढकर 'कथं वानरेणेति' पढकर एक दंष्ट्रा दिखाकर लज्जा भाव दिखाकर 'विलक्कि' 'गच्छ, शीघ्रं निगृह्यानय' पढने पर 'यदाज्ञापयति महाराजः' यह दो बार पढकर मण्डलाकार चलकर नेपथ्य में आवें। रावण पोयतकं खोलकर उत्तरीय भुजा पर डालकर पीठपर बैठकर, उत्तरीय बाँह पर डालकर, पीठ पर बैठ कर, उत्तरीय से पंखा झल कर दोनों हाथों से दायें पैर के घुटने को बाँध कर स्थिर बैठ कर आँखों से घूर कर दंष्ट्रो को काट कर ऊपर और नीचे की ओर देखकर, विचार कर, एक बार सिर हिलाकर, विलक्कि बाएँ ओर "भवतु, भवतु" मात्रा में पढे, मिड़ाव पर मात्रा में धीमे से बजाया भी जाना चाहिए। "युधि-जगत्रय.........." प्रस्तुत श्लोक के चोल्लियाट्टम करते समय 'युधि' के लिए "पटपुरप्पाट" दिखावें, "निजशाठ्य-समुद्भवं फलमनुभवन्तु' के लिए देवों को शूल चुभो देने का प्रकार दिखाना है। "अमृताशिनः" देव बन कर रोते हुए पढना चाहिए। फिर रावण बन कर 'तर्क राग' में पढना चाहिए। इस प्रकार दो-तीन बार दिखाने पर उत्तरार्द्ध पढ कर पीठ पर बैठ कर कूत्तुमुटिप्पू।

दूसरे दिन का कूटियाट्टम्—

दूसरे दिन शङ्कुकर्णन् 'अणिञ्ञुकूटि' निकलने (चलने) के लिए बाजा बजाने पर पोयृतकं बाँधकर कुड़ल भी पकड़ कर घबराकर नेपथ्य से दौड़ते हुए आ कर गोलाकार में खड़े होकर 'पुरप्पाड' के दिन के जैसे सब दिखाकर 'विलक्कि' डर और कम्पन के साथ कोञ्चच्चू पढ़े— जयतु महाराजः से 'तेन हिं' तक एक बार कोञ्चच्च् फिर 'तर्कराग' में सुस्पष्ट पढ़े। 'आट्टम्' पूरा हो जाने पर 'तस्य च ग्रहण समर्थं' से शुरु कर पढ़ें। फिर रावण पिछले दिन के जैसे 'अणिञ्ञु कूटि' 'तर्कराग में बाजा बजाने पर नेपथ्य से "अभिवाद्यं चेय्तु" दौड़ते आकर पीठ पर बैठकर उत्तरीय झला कर धीरोद्धत भाव में बैठें। शंकुकर्ण आकर "जयतु महाराजः, महाबलः खलु" के लिए कूटियाट्टम् चाहिए। 'तेन खलु' के लिए रावण वानर को सारहीन बनावें। शंकुकर्ण तो वानर के व्यापार का बढ़ा-चढ़ा कर अभिनय करें। "यदाज्ञापयति महाराजः" पढकर कूदते चलकर जावें। फिर घबराकर दौड़ते गोलाकार में चलकर वें, वें", रो कर कोञ्चच्च् (अस्पष्ट) 'जयतु' से शुरु कर पढ़ें। फिर चेटीपञ्चम राग में 'अस्मदीयैर्महावृक्षैः...........श्लोक पढ़ कर अभिनय कर जाने पर कूदते कूदते चले आना। फिर रावण अक्षकुमार को भेजने पर 'अवश्यं युधि वीराणां' यह श्लोक 'चोल्लियाटुक' 'आनन्तर्य के लिए' शंकुकर्ण को भी 'तूंगु' माला पहनकर प्रवेश करना चाहिए। 'मिड़ावण' के दाएँ भाग में 'वक्रपाद

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

में' गिर कर, जमीन पर बैठ कर, रोना दिखा कर, छाती पर दोनों हाथों से मारकर 'पणकेट्ट' का अग्र जमीन पर रगड़ता-सा, सिर, पटकना भी चाहिए।— 'आनन्तर्यं, आनन्तर्यं' ऐसा पढ़ना भी चाहिए, फिर भी उठ कर गिरना चाहिए। पूरा पढ़ना, इस प्रकार तीन बार अपनी कुशलता के अनुसार पढ़ना और अभिनय करना है। इस प्रकार गिर-गिर कर, रेंग-रेंग कर, रंगमंच के बीच रावण की बाँई ओर पहुचने पर 'आनन्तर्यमानन्तर्यं' कई बार पढ़कर अन्त में 'बलं' यह पढ़ें। फिर कोञ्चच्च् पूरा पढ़कर 'श्रोतुमर्हति महाराजः पञ्चसेनापतयः' तक। फिर साफ पढ कर 'पञ्चसेनापतयः' फिर एक बार पढ़कर पैर बाँधकर कूदकर गिर कर "नूपुरपादत्तिल् इरिप्पू"। खींच कर जुआ खेलना शुरु करना (चू तुकळियाटूं) 'कुमारं वानरमभिगच्छन्तं' से लेकर 'महाराजेनाज्ञापितः'— तक स्वयं कहते से पढ़ना, फिर उठकर साफ पढ़ना। हनूमान् उनको मारें, 'ततस्तान्' से शुरु कर ग्रन्थ पढ़कर अभिनय करें, फिर रावण "तिष्ठत्वमह......." श्लोक पढ़ कर अभिनय करने पर उठ कर टेढ़ा हिलकर चले जाने का आरंभ करें। तब शंकुकर्ण के 'प्रसीदतु' से लेकर 'वनौकसं' पूरा होने तक "चोल्लियाटलं" के करने पर, रावण वह सुनते रहें। फिर शंकुकर्ण कूदते हुए चलता जावे। रावण विचार भाव में 'कुमारो हि' श्लोक 'चोल्लियाटि' आगमन की प्रतीक्षा में बैठने पर शंकुकर्ण गोलाकार कूदते चलते हुए आकर 'जयतु महाराजः' पढ़ने पर, 'संवृत्तं' के लिए एक बार पढ़ कर फिर हाथों से और सिर से ताल लगा कर बाजे के साथ पढ़ें, "संवृत्तं तुमुलं युद्धं कुमारस्य च तस्य च। ततः स वानरः शीघ्रम्" आदि तर्क राग में पढ़ें। राक्षस का ग्रन्थ "मूटिच्चोल्लू"। अन्त में शंकुकर्ण गोलाकार घूमकर कूदकर चल कर 'कूत्तुमुटिप्पू'। फिर रावण बैठकर विचार कर उठ कर 'कूत्तुमुटिच्चुकोळ्ळुक'।

तीसरे दिन का कूटियाट्टम्—

रावण 'अणिञ्ञुकूटि' तर्कराग में बाजा बजने पर दौड़े आकर पीठ पर बैठकर उत्तरीय झल कर पहले की स्थायी में, फिर विवेक की स्थायी में 'विलक्कि' 'भोः कष्टम्', से शुरु कर निरूपण के साथ पढ़ें, 'अचिन्त्या मनसा'— श्लोक 'चोल्लियाटि' लङ्कावर्णन 'आटू'। "सहितैस्सुरदानवैः.......", 'कैसे रहता है' का भाव अभिनय करें। फिर "जित्वा त्रैलोक्यमाजौ........" श्लोक 'चोल्लियाटि' 'पटपुरप्पाट्' संक्षिप्त रूप में अभिनय करें, 'गर्वितेन मया' के लिए सभी 'आट्टम्' कर 'क्रान्त्वा कैलासमीशं', के लिए कैलासोद्धरण और "साकमाकम्प्य देव्या" के लिए पार्वती विरह भी अभिनय करें। सब अभिनय कर उत्तरार्द्ध पढ़कर नेपथ्य में आवें। फिर विभीषणन-चित्रयोधि के जैसे 'अणिव' 'अटिंञ्ञूकूटि'। (चावल के घोल से फूल का आकार) ऊर्ध्वपुण्ड्रम्। यवनिका पकड़कर 'वायिच्च' 'मरयिल्' 'कळप्पुरन्तु नटन्नू' मुटिच्च्, कळियुं वेच्चुतिरिञ्ञ् यवनिका हटाकर पोय्तकं बाएँ हाथ से पकड़कर प्रसन्नभाव में "आहा!

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अब बड़ा सुख हुआ। वह क्या? मैं बड़े भाई रावण से मिलने के लिए जा रहा हूँ।" विचार कर 'विलक्कि' चेटी-पञ्चम-राग में "अहो नु खलु" से शुरु कर 'चोल्लियाटि', फिर कळप्पुरतुनटन्त्रू', पास जाकर रावण को विराजमान देखकर हाथ जोड़कर 'जयतु' ग्रन्थ के साथ पास जाकर "एष एष उपविशामि" पढ़ने पर बाएँ ओर पीठ पैर से सरका देने पर बाएँ ओर से जाकर बैठ जावें। 'यदाज्ञापयति महाराजः' पढ़कर 'कळप्पुरत्तुनटन्त्र' नेपथ्य में आवें।

फिर हनूमान् 'अणिञ्ञुकूटि' पोयतकं बाँधकर दोनों हाथ कपड़े से कटक के नीचे कलाई पर टेढ़ा कर लपेट कर बाँधकर उस कपड़े के दोनों छोर दो व्यक्ति पकड़ कर कपड़े से सिर ढक कर यवनिका पकड़कर 'वायिक्कुक' हो जाने पर वे दोनों हनूमान् को पकड़कर खींचते हुए मण्डल में रंग मंच पर चारों कोनों में चलें। हनूमान् गरजते हुए उनको हरेक कोने में ले जाकर गिराने की कोशिश करें। फिर सब मिलाकर मण्डलाकार घूम कर हनूमान् 'मिषावणक्कल्' 'मुटिक्कू'। विभीषण भी एक साथ 'कळियुंवेच्च् तिरिञ्ञ्' यवनिका हटाकर हनूमान दाएँ ओर तथा विभीषण बाएँ ओर निकल कर हनूमान गरज कर मूठ पकड़ कर (मुष्टि मुद्रा पकड़कर) 'प्रावेशिकं' दिखावें। फिर 'ओरं कोण्ट् विलक्कि' 'ओढ' कर खडे रहने वाले "आः इतः इतः" कहकर नेपथ्यमें आवें। फिर हनूमान् के बँधे हाथ के साथ एक बार फिर प्रावेशिकं दिखाने पर हाथ पीछे से खोलने पर 'चुरिकक्कूट्टिल् नित्र" 'प्रावेशिकं' और "वानरस्तोभं" दिखाकर सोच कर तर्क राग में "नैवाहं........." श्लोक पढ़ कर अभिनय करें। "स्वयं ग्रहणमापन्नः" पढ़ने पर 'उद्यानभञ्जनं' (उपवन तहस-नहस करना) अभिनय करते हुए पकड़ कर बाँधने तक का भाग अच्छी तरह अभिनय करें। फिर "नैवाहं—" श्लोक पूरा पढ़ने पर रावण बीच में बैठे। विभीषण हाथ जोड़कर बाएँ पीठ पर बैठें। हनूमान दाएँ भाग में खड़े होकर बाएँ ओर आँख उठाकर देखकर रावण के विराजमान होने का वर्णन करें। बैठने के लिए आसन दे कर सत्कार न करने से पूँछ गोलाकार ऊपर ऊपर चढ़ा कर आसन बना कर बैठें, फिर दाएँ कोने में नंगियारम्मा को पीठ न दिखाकर पीठ (स्टूल) आगे की ओर सरकाकर रावण की ओर बहुत कुछ पीठ फेर कर पीढ़े पर चढ़ कर बायें पैर के घुटने पर रख कर हाथ की उँगलियों को पिरो कर बायें ओर मुड़ कर धृष्टता और अवज्ञा के साथ देख कर तुरन्त उठकर 'पञ्चपुच्छमटक्कि' (बड़ी विनम्रता के साथ) दोनों हाथों से मुँह ढँक कर बड़ी से बड़ी अवज्ञा के साथ— "भोः राजन्" ग्रन्थ पढ़कर पहले के जैसे ही बैठें। बार-बार देखकर वही ग्रन्थ पढ़कर 'बेटे की मृत्यु के लिए तिलोदक दिया क्या' ऐसा मुद्राभिनय कर बैठें। फिर रावण का सिर गिनना हाथ गिनना, वानरस्तोभ दिखाना, हरेक ग्रन्थ के बाद मौन बैठने पर करते रहें। फिर रावण हनूमान् को देखकर वानररूप देखकर उपहास के साथ थोड़ा सा मुड़कर पैर बढ़ा कर बैठ कर निन्दा के साथ देख कर "विभीषण! किमस्य तत् कर्म?" पढ़ें।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ऐसा क्रम पूरा हो जाने पर हनूमान् अपने स्थान से उठकर पहले जैसे 'पञ्चपुच्छमटक्कि' पास जा कर तिरस्कार के साथ मुद्रा दिखाकर दोनों हाथों से मुँह ढँक कर गंभीर तिरस्कार के साथ 'एवंविधेन भवता' ग्रन्थ पढकर पहले जैसे अवज्ञा से देखते रहें। इस प्रकार क्रम से समाप्त होने पर शंकुकर्णन् (सिर ढँक कर) 'यदाज्ञापयति महाराजः' पढ कर 'इतः इतः' पढ़ लें। तब हनूमान् उठ कर रावण का ग्रन्थ पूरा होने पर पीठ पर से उठ कर चले जाने लगने पर रावण का ग्रन्थ सुनकर 'अयमस्मि' पढ़ कर रावण के पास आगे की ओर जाकर अकड़ कर खड़े हो जावें। फिर रावण का ग्रन्थ पूरा हो जाने के साथ-साथ हनूमान् 'अचिराद् द्रक्ष्यसि' से शुरु कर तर्क राग में 'चोल्लियाटि' फिर रावण का ग्रन्थ भी पूरा हो जाने पर हाथ बिना बँधे हुए भाव में मुष्टि बनाकर मण्डलाकार मरयिल् चलते-से एक बार चल कर पोयतकं खोलकर मिश्रावणा के दायें ओर खड़े हो कर 'कूतुमुटिप्पू'। फिर विभीषण और रावण आपस में कूटियाट्टम करें। अन्त में विभीषण 'अहमेव यास्यामि' ग्रन्थ चेटीपञ्चम में पढ़ें। 'चोल्लियाटि' पीठ पर से उतर कर जमीन पर खड़े हो कर, 'दुःख गान्धार' राग में "शासितोऽहं" श्लोक 'चोल्लियाटि' 'नूपुरपाद' में बैठकर प्रणाम करें। यह देखे बिना रावण पीठ पर खड़े रहें। विभीषण कमर कस कर निकल कर, गदा हाथ में लेकर घुमाकर "अंबरायणम्" दिखाकर अपनी सेना के साथ आकाश मार्ग से दिखा कर पीठ दीप के सामने रख कर उस पर चढ़ कर गदा घुमाकर फिर बगल में रखकर 'श्रीकण्ठी' राग में 'अयमिदानीम्' पढ़कर "अद्यैव तं" शीर्षक श्लोक पढ़कर अभिनय कर गदापाणी हो चार राक्षसों के साथ इस प्रकार 'अंबरायण' दिखावें ताकि श्रीराम को देख सके, फिर नीचे उतरकर उत्तरीय खोलकर "कूत्तुमुटिच्चुकोळ्ळू"। फिर रावण अपने ग्रन्थों के पाठ के बाद 'नगर की रक्षा करने जाना ही है' ऐसा दिखाकर उठ कर 'वट्टत्तिल् चाटिनटन्नू' मुड़कर 'कूत्तुमुट्टिकू'। "मुटियक्कित्ता" भी बजवाना है।

पहले दिन शंकुकर्ण का पुरप्पाट्, फिर विस्तार करने के अनुसार एक या दो दिन केवल शंकुकर्ण का निर्वहण। फिर तीन दिन कूटियाट्टम्। शंकुकर्ण के निर्वहण का अन्तिम भाग पहले दिन के कूटियाट्टम् के दिन चलाना है। तोरण-युद्धाङ्क इस प्रकार पाँच या छः दिनों के अभिनय से पूरा कर सकते हैं।

प्रतिज्ञायौगन्धरायण का मन्त्राङ्कम्

प्रतिज्ञायौगन्धरायण के मन्त्राङ्क में वसन्तक का 'अणिव'। मुख पर (पषुक्क) लाल (चायिल्य) लगा कर आँखों और भौहों पर काजल लगाकर 'माट्टुटुत्त' शरीर और पैरों पर चावल का पेस्ट लगाकर 'त्रिपुण्ड्रकम्' और 'कुरि' लगाकर, 'माट्ट', कौपीन के रूप में लपेट कर बाँधकर ऊपर रेशम का, एक कपड़ा भी बाँधकर, सिर पर 'कुंटुम' (मुटि) 'चुवप्पुतुणि' 'पीलिप्पट्टम्' 'पिरिशंखिन् माला', कानों में कुण्डल पिरो कर 'चेविप्पूव' लगाकर कन्धे में 'भोक्कण्ड' और हाथ में डण्डा ले कर निकलें।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दीप जलाकर 'तलयिल् केट्टि अणिञ्ञुक्टियाल्'' मिषावओच्चप्पेट्टुत्ति रंग पूजा का निर्वहण कर 'गोष्ठिकोट्टि' 'अरंगुतळिच्च्' यवनिका पकड़ने पर 'वायिच्च' कैशिकियिल् नंगियारम्मा दो बार मूळुकयुं पाटुकयुं 'छाया श्लोक पढ़ने पर फिर ''आळामं कोट्टियाल्'' नेपथ्यं— ''हरि, हरि'' से शुरु कर 'श्री परमेश्वरा हरि' पढ कर रंग मंच पर मिष़ाव के सामने खड़े हो कर 'मरयिल् क्रिया' 'आटू'। 'चारि' कलकलवाद्यं, 'जाति', 'तप्पियिरङ्ङिन्तट्ट' निर्गीत चारि, 'बन्धनानिर्गीता चारि' परिक्रम, नृत्त के बाद मुटिच्च् मुखत्तु नीरु तळिच्च 'कळियुंवेच्चुतिरिञ्ञ्' दीप के सामने जा खड़े होकर यवनिका हटाने पर 'भावत्रयं' दिखाना— दीनता, दुःख, क्रोध-यही है भावत्रयम्। फिर कळकळ वाद्य से ''मुखवर्णना'' का अभिनय करें। दूसरी तीनों दिशाओं में 'मुखवर्णना' कर सामने खड़े हो कर 'आट्टम्' 'आटू'। कष्टम्। दुष्ट महासेन ने मेरे स्वामी वत्सराज को पकड़ कर बाँधकर कारागृह में डाल दिया है। पहले जब अपने महल में रहते थे तब एक दिन स्नान, देवकार्य, भोजन आदि कर, सभामण्डप में जाकर सिंहासनारूढ होकर किरीट कटक, कुण्डल आदि आभूषणों से अलंकृत हो छत्र-चामर आदि से परिवृत हो बैठे थे और चारों ओर जब अमात्यगण वन्दना कर खड़े थे तब प्रतिकूल विधि के कारण महासेनन् ने पकड़ कर कारावास में डाला अब स्नान, देवकार्य और भोजन तक नहीं, महासेन के अमात्य 'द्रव्य लाओ' कहकर कनकवेत्र से मारेंगे। (सोने के बेंत से) उस समय महाराज डर के मारे कानों को हाथ से पकड़ कर सिर नवाँएँगे (दीनता), इस प्रकार दुःख का अनुभव कर रहे हैं। (दुःख) परन्तु देखना, मैं अभी अभी बड़ी सेना लेकर उसको युद्ध के लिए ललकारूँगा। उस समय वह युद्ध के लिए आयेगा। मेरे शर लगने पर डर कर उसकी सारी सेना भाग जायेगी। उस समय मैं उसके सिर के बालों को हाथ से जबरदस्ती पकड़कर तलवार निकाल सिर काट लूँगा (क्रोध) इस समय ''हरि'' कहना भी चाहिए। फिर ''अभिवाद्यं चेय्त्'' 'विलक्कि' 'हरि, हरि' से शुरु हो कर परिभाषा कहने पर अग्निगृह में जाकर ''प्रवेश किया'' ऐसा दिखा कर चारों कोनों में देखकर सूँघ कर 'विलक्कि' 'मोदक दिखाई नहीं देता' कह कर सम्बन्ध जोड़ कर 'बो देवयुळ पीठियाये मम मोदकं वळयं णिखिविय दूखिणा मासकाणि गणिय बन्धिय पडिणिमुत्तोदाणि मम मोदक वळयंण पेखामि' (अरे, देवकुलपीठिका में मेरा मोदकवलय रखकर दक्षिणामाषकों को (दक्षिणा में मिले पैसों को) गिन कर बाँध रखने के बाद जब वापस आया तो देखा कि मेरे मोदक पल्लक कहीं गायब हो गये।) यह पढ़ कर केवल अर्थ बताकर 'भो' मात्र दुबारा कह कर ''चारियाटि कूत्तु मुटिप्पू''।

आश्चर्य चूडामणि का सातवाँ अङ्क

विद्याधरन् विद्याधर के लिए 'अणिव' मत्तविलास के सूत्रधार के जैसे ''तलयिल् केट्टि'' मुख कर घी मल कर आँखों और भौहों पर काजल लगा कर चावल के घोल

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

से 'गोपिक्कुरि' बीच में लाल तिलक भी लगा कर होंठों पर लाल रंग डालकर "माट्टुटुत्त" ऊपर "माट्ट" झुर्रियों वाला बनाकर नीचे तक लम्बा पहन कर कटिसूत्र बाँधकर कुर्ता पहन कर 'पोषुम्पू', 'तोळवळा' बाँधकर 'छन्नउर' के बिना कुण्डल पहन कर 'कुषल' 'चुवप्पुतुणि', पीलीप्पट्टं 'वासिकं' और 'फणक्कूट्' बाँधकर 'चेविप्पूव' पहनकर, उत्तरीय भी डालकर निकलें। 'मरयिल् मुतल्नट याटि' मुटिच्च् "मुखत्त नीरु तळिच्च्" सौदामिनी के हाथ पकड़ा हुआ सा भाव दिखाकर प्रवेश कर पीठ पर बैठ कर यवनिका हटाने पर देवकार्य के लिए सरस्वती की पूजा के अन्त में बाजा बजने की आवाज सुनकर 'विलक्कि' "अद्यापि" से शुरुकर ग्रन्थ "चोल्लियाटि" "सौदामिनी, एहि' पढ कर पीठ हटा कर 'चेरियक्क्' से 'नित्यक्रिया' पूरा अभिनय कर श्री परमेश्वर और श्रीपार्वती का रूप केशादिपाद अभिनय कर मुटिक्कुक।

जाम्बवान्— आश्चर्यचूडामणि सातवें अङ्क के जाम्बवान् के लिए 'अणिव'— मुख पर घी मल कर विदूषक की तरह आँखों में काजल लगाकर भौंहें भी खींचकर भाल पर चावल के घोल से तिलक लगाकर बीच में काली बिंदी लगाकर, होठों पर लालरंग चढाकर दाढ़ी और मूछों को बाँधकर, सिर पर कुण्डल 'मायिल् मुटि' चुवप्पुतुणि', 'पीलिप्पट्टम्' और 'धूसर' भी बाँधकर 'चेविप्पूव्' लगाकर माट्ट के साथ लाल रेशम का एक कपड़ा भी पहन कर, दूसरा एक कपड़ा लपेट कर ऊपर बाँधकर पूँछ भी बाँध कर, 'कुर्ता' 'पोषुम्प' 'तोळवळा' 'कटक' भी बाँध कर, उत्तरीय को कमर में बाँधना। 'दाडी', मुटि, पूँछ, कुण्डल, 'बाली' रेशे के बने होते हैं। 'वायिच्च्' समाप्त करने पर 'अळाम' पढ़े— (आदत्तामग्निमद्यप्रभृति........) फिर 'वायिच्च्' 'पेरुम्परा' (वाद्य विशेष) बजा कर निकलना, उत्तरीय के छोर दोनों हाथों ले कर उससे 'पेरुम्परा' बजाकर गोलाकार में चलकर 'मुटिच्च्' 'मुखत्तु नीर तळिच्च्' (आचमन कर) 'वृद्धभाव' में प्रवेश कर घूम कर सामने खड़े होकर 'ओरंकोण्ट् विलक्कि' श्लोक के एक पाद का पाठ करें, इस प्रकार अन्य तीनों भागों में 'आदत्तां अग्नि' प्रस्तुत श्लोक पूरा करें। फिर क्रम से सब पढकर अभिनय पूरा हो जाने पर 'साधयामस्तावल्' 'चूर्णि' का पाठ के साथ अभिनय कर 'पेरुम्परा' बजाते गोलाकार घूमते चलकर "कूत्तुमुटिप्पू"।

सुभद्राधनञ्जयम् पहला अङ्क

धनञ्जय और कौण्डिन्य (विदूषक)—

मुख पर (चेहरे पर) 'श्याम' 'चुट्टी' और गोपी-तिलक, केशभार, किरीट, शेष सब 'नायक' के जैसे "अणिञ्ञकूटि" 'मारमाला' और उत्तरीय पहन कर निकलें। 'मरयिळ् मुतल्नटा रस वीर, उत्साह भाव में प्रवेश। फिर विप्रलम्भश्रृङ्गार प्रसङ्गानुकूल सब भावस्फुरण के साथ अभिनय कर "प्रापितः" पढकर "नित्यक्रिया" 'आटि' 'मुटिक्कुकं'। 'पुरप्पाट' रात में हो तो, देवदर्शन आवश्यक नहीं, फिर निर्वहण पूरा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कर "प्रापितः" से लेकर क्रमशः अभिनय कर आश्रम वर्णन पूरा कर 'वट्वृक्ष' के नीचे कौण्डिन्य के आगमन की प्रतीक्षाकर खड़े होने पर 'विदूषक' का ग्रन्थ 'केट्टाटि' "अये.........." प्रस्तुत ग्रन्थ 'चोल्लियाटि' मुटिक्कुक, उसी दिन या दूसरे दिन विदूषक का 'पुरप्पाट' चला सकते हैं। विदूषक का 'अणिव' नागानन्द में जैसा है, वैसा ही है। 'मरियल्' "वट्टत्तिल् नटक्कुक", हाथ में भिक्षा पात्र— (केले के पत्ते का अग्रभाग ले कर उसे मोड़ कर दोना सा बनावें) पकड़ कर भीख माँगने के भाव में प्रवेश करे, इष्टदेवता आदि पूरा कर 'भो' पढकर 'चारियाटि' 'मुटिक्कुक'। फिर निर्वहण पूरा कर 'पुरप्पाट' के दिन की 'चूर्णिका' के साथ सम्बन्ध स्थापित करते हुए भाषण कर मृगतृष्णिका देखकर भ्रम से पानी पीने के लिए जाते समय अर्जुन से मिल जाता है, फिर क्रम से सब व्याख्या कर भूत को सुभद्रा को ज़बरदस्ती पकड़ ले जाते देखकर अर्जुन आग्नेय बाण से भूत को जीत कर सुभद्रा की रक्षा करते हैं।

पतन्ती (सुभद्रा)

सुभद्रा-धनञ्जय के पहले अंक में भूत के हाथ से छूट कर आसमान से भूमि में गिरने वाली नायिका सुभद्रा के लिए 'पतन्ती' संज्ञा प्रयुक्त है। 'अणिव' नायिका के जैसे। 'मरयिल्' 'चेल्युन्ति नटक्कुक', रंग पर थोड़ा पीछे की ओर यवनिका पकड़कर पीठ पर से कँप-कँपी के साथ प्रवेश। यवनिका हटाने पर नायक अर्जुन और विदूषक रंगमञ्च पर अवश्य रहें। अर्जुन सुभद्रा को पकड़ कर नीचे उतार कर खड़ा कर दें। अर्जुन और सुभद्रा दोनों 'पंचांगमाटि' एक साथ मुटिक्कुक। विदूषक चाहे तो पहले समाप्त कर सकता है (मुटिक्काबुन्नताण्) एक साथ भी कर सकते हैं।

दूसरे दिन दोनों एक साथ प्रवेश करें। नायिका के ग्रन्थ पूरा कर 'मुटिच्च' समाप्त करने पर फिर विदूषक प्रवेश करें। "धर्माम्भः कणिका........." प्रस्तुत श्लोक कूटियाट्टम के रूप में बतावें। यक्षिणी है, मानुषी है ऐसा वाद-विवाद कह कर अन्त में सौन्दर्य वर्णन के लिए विदूषक नायक से आग्रह प्रकट करें। "सौन्दर्य सुकुमारता".........से शुरु करने वाले श्लोक के लिए कूटियाट्टम् चाहिए। क्रमशः युक्ति के अनुसार प्रकृत के अनुकूल भाषण कर 'स्तनांशुक' (मूलक्कच्चा) देख कर साँप के भ्रम से शंकित विदूषक को सत्य की बात समझा कर स्तनांशुक लेकर पीछे की ओर देकर "तदुभयप्राप्तये" के लिए दो विवाह किये हुए व्यक्ति की कथा कहें। फिर संध्या-वर्णन के साथ "अङ्कं मुटिक्कुक", 'मुटियक्कित्ता' भी चाहिए।

संस्कृत में लिखी गयी क्रमदीपिका

किसी प्राचीन ग्रन्थ में देखी संस्कृत भाषा में लिखी गयी क्रमदीपिका का एक अंश नमूने के लिए नीचे दिया जाता है। इससे स्पष्ट है कि प्राचीन काल में क्रमदीपिका संस्कृत में थी। बाद में वह मलयालम में लिखी जाने लगी।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

क्रमदीपिका—

"केषाञ्चन उपपात्राणां चार्यामागमनं निर्गतेन निष्क्रमणं च। उद्धतयात्रया प्रवेशः। तयैव निष्क्रमणम्। पूर्वरङ्गकथावस्तुविन्यासः मङ्गलाशंसा च। सूत्रधार-प्रमेयाणि। जर्जरपूजया गानेन वाद्यघोषेण च परिशुद्धं प्रसन्नमेव रङ्गं प्रविशन्ति कथापात्रभूमिका-धारिणो नर्तका इति। नागानन्दे द्वितीयेऽङ्के दयावीरो जीमूतवाहनः सरागपाण्डुरेण मनश्शिलादिना आननमलंकृत्य अञ्जनेन नयनभ्रुवौ रजनीपरागेणाधरञ्च प्रसाध्य, कटक-मुकुटकेशभारादिना धीरोदात्तनायकवदलंकृतस्सन् समग्रविधया प्रसन्नं रङ्गमुपदिष्टवर्त्मना प्रविश्य अन्तर्यवनिकः सूत्रधारवत् कुतपाभिमुखश्चारीभेदाद्याङ्गिकानि अभिनयानि निर्वर्त्य च पूर्वरङ्गान्निष्क्रामति। पुनस्सप्तपदविन्यासेन रङ्गमध्यगतो यवनिकामपनीय वीररसोत्साहभावं प्रदर्श्य क्रमेण च विप्रलम्भशृङ्गारमाविष्करोति।"

क्रमदीपिका का प्राचीन रूप संस्कृत था और फिर केरलीय उसे केरल भाषा में प्रस्तुत करने लगे। तब से लेकर केरली भाषा में क्रमदीपिका का रूप प्रस्तुत हुआ है, ऐसा समझना चाहिए।

'नाटकं चोल्लिप्परय्युक'

नागानन्द के दूसरे अंक में विदूषक (आत्रेय) पुरप्पेट्ट 'निर्वहणम्' पूरा कर राजसेवक बनकर रहते हुए— से शुरु कर कहते कहते कथा से सम्बन्ध जोड़कर नाटक के साथ प्रस्तुत करने योग्य तैयार करना। अपने देखे, सुने तथा अन्य प्रकार से ज्ञात सभी कथा-पात्रों के ग्रन्थों को निर्दिष्ट कथापात्रों के भाव तथा स्वर में पढ़कर उनके जैसे कहना विदूषक का काम है।

पहले अंक में नायक (जीमूतवाहन) और विदूषक प्रवेश करते हैं, तब नायक का ग्रन्थ पहले शुरु होता है, 'वयस्य क्या बोलते हैं'? ऐसा कहकर इन्दळ राग में "इदं यौवनं रागस्यास्पदं इति अवैमि"— 'मैं जानता हूँ कि यौवन राग का स्थान है— प्यारे आत्रेय, मैं खूब जानता हूँ कि यह जवानी अभिलाषाओं को जन्म देनेवाली है। उतना ही नहीं, और भी दोष हैं'। 'मे नहि ध्वंसि इति प्रत्ययः न"। 'मुझे यह ध्वंसकारी नहीं, ऐसा विश्वास नहीं, प्यारे वयस्य, यह जवानी कार्यों में विघ्न डालने वाली है, यह बोध मुझे नहीं ऐसा कहना भी मुश्किल है इतना ही नहीं', "इदं कृत्या-कृत्यविचारणासु विमुखम् इति क्षितौ को वा न वेत्ति?" 'कृत्य और अकृत्य के विचारणों में यह विमुख है ऐसा इस भूमि में कौन नहीं जानता? हे आत्रेय, जो करना है जो नहीं करना है ऐसी बातें सोचने का अवकाश तक जवानी नहीं देती, यह कौन नहीं जानता? सब को मालूम है, फिर' 'इन्द्रियवशम्'— 'इन्द्रियों के अधीन भी है। आँख, नाक, जीभ, कान, त्वचा इन पाँचों इन्द्रियों के अधीन होने के कारण प्रत्येक सुन्दर वस्तु को देखने, सुगन्धपूर्ण द्रव्यों को सूँघने, संगीत आदि सुनने, स्वादिष्ट वस्तुएँ खाने,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मन्द हवा, सुन्दर युवति आदि के स्पर्श-सुख भोगने आदि का आग्रह बार बार पैदा करता रहता है'। "हे प्रियवयस्य! एवं निन्द्यमपि इदं यौवनं भक्त्या याति यदि प्रीत्यै भवेत्"— 'इस प्रकार निन्दास्पद होने पर भी यह जवानी भक्ति से माँ-बाप की सेवा-शूश्रुषा-निरत मुझको इसी प्रकार बीत जाएगी, तो वह सबसे अधिक प्रीतिदायक रहेगी। इस प्रकार जवानी के कई दोष होने पर भी मुझे अगर माँ-बाप की सेवा-शूश्रुषा में बिताने का अवसर मिले तो कोई दोष नहीं होगा। इसलिए माँ-बाप की सेवा करते इसे बिताने का विचार ही मेरे मन में रहता है।" "ऐसा है तो वयस्य को कामरसिक बनाना चाहिए। तभी तो मजा है। जरा बता कर देखें। वयस्य मैं एक बात कहूँ, जरा सुनिएगा"— "भो वयस्स ण्ण जिव्वुण्णो योव्व तुमं एत्तियं काळं जीवन्त मुदाणं द्ढाणं किदे ईदिसं वणवास दुःखं अणुभवन्तों। ता पदसि, दाणी पि दाव गुरुयण सुस्सूसा णि व्बन्धादो णिवुत्तिय इच्छा परिभोय रमणिज्जं रज्जसोक्खं अणु हवी यदु। (फिर इसकी संस्कृत छांया पढ लें)— "भो वयस्य, न निर्विण्ण एव त्वं एतावन्तं कालं जीवन्मृतयोर्वृद्धयोः कृते ईदृशं वनवासदुःखमनुभवन्, तत्प्रसीद, इदानीमपि तावद् गुरुजनशुश्रूषानिर्बन्धान्निवृत्य इच्छापरिभोगरमणीयं राज्यसौख्यमनुभूयताम्"। "प्यारे वयस्य, आपको अब तक (जीवन-मृत) अधमरे बूढ़ों के लिए ऐसा वनवास का दुःख पूरा भोगने पर भी विराग नहीं हुआ? (अरुचि नहीं पैदा हुई) हाँ, तो अभी से ही सही, ससन्तोष गुरुजनों की शुश्रूषा मात्र करता रहूँ, यह हठ छोड़कर राज में जा कर इच्छानुसार राजसुख का भोग करें। प्यारे वयस्य, आइये, हम स्वराज की ओर चलें। क्या वयस्य बताते हैं? 'वयस्य न सम्यगभिहितम्' कुतः?— प्यारे मित्र, तुम्हारा कहना ठीक नहीं, क्या? खैर, प्यारे दोस्त, तो कहिए, मैं ज़रा सुनूँ। वयस्य, क्या बता रहा है? "तिष्ठन् भाति पितुः पुरो भुवि यथा सिहासने किं तथा, किं संवाहयतः सुखानि चरणौ तातस्य किं राजकम्। किं भुक्ते भुवनत्रये धृतिरसौ भुक्तोझिते या गुरोरायासः खलु राज्यमुज्झितगुरोः तेनास्ति कश्चिद् गुणः।"

'असौ पितुः पुरा भुवि तिष्ठन् यथा भाति सिंहासने तथा किं'? यह मैं पिता के सामने खड़े होते समय जिस प्रकार शोभित होता हूँ सिंहासन में क्या उसी प्रकार? प्यारे आत्रेय, पिता की सेवा शुश्रूषा कर उनके सामने विनम्र खड़े होने पर मेरी जो शोभा बढ़ती है वह सिंहासन में बैठे रहने पर क्या होगी? नहीं 'तातस्य चरणौ संवाहयतः मे यानि सुखानि भवन्ति, तानि राजकं चरणौ संवाहयतः मे किं भवन्ति?' पिता के पैरों की सेवा करते समय मुझे जो सुख मिलेंगे वे सुख राजकर्म की चरणों की सेवा करने वाले मुझको क्या मिलेंगे? जब मैं पिता के पैर उठाकर मेरी गोद में रखकर अपने हाथों से उन पैरों का स्पर्श करता रहूँ तब पिताजी सन्तोष के साथ जो उपदेश की बातें बता देंगे, उन्हें सुनते सुनते पुनः चरणों की सेवा करने में जो आनन्द होगा वह सुख सामन्त राजाओं से मेरे चरण स्पर्श कराने पर मिलेगा क्या? इतना ही नहीं 'गुरोः भुक्तोज्झिते

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

या धृतिः सा भुवनत्रये भुक्ते किं भवति?— गुरु (पिताजी) के भोजन के बाद शिष्टांश खाने में मुझे जो तृप्ति मिलेगी वह त्रिभुवन के भोग में नहीं होगी। माँ-बाप के भोजन के बाद जो शेष रह जाता है— उसका उपभोग करने पर जो आनन्द और संतुष्टि मिलेगी वह तीनों भुवनों के भोग से भी न मिल जाएगी। 'उज्झितगुरोः राज्यम् आयासः खलु— गुरु को छोड़ने वाले के लिए राज्य आयास ही तो है। माँ-बाप को छोड़ जाने पर मुझे राज्य कष्ट देनेवाला ही रहेगा। प्यारे वयस्य "तेन कश्चिद् गुणः अस्ति किं? उससे कोई विशेष फायदा है क्या? है तो बता दीजिए"। यही तो वयस्य बोल रहे हैं? प्यारे मैं तो केवल एक इसी उद्देश्य से नहीं बोलता? "भो वयस्य! न खलु अहं भज्जसोखं यौव्व उद्दीसिय फणामि, अण्णं दे करणिज्जं अत्यियौव्व"..........।

ऊपर बतायी शैली पर चेटी, तापस, नायिका आदि सभी कथा-पात्रों के ग्रन्थ पढ़कर प्रत्येक की स्थायी में व्याख्या करने को "नाटकं चोल्लिप्परयल्" (नाटक पढकर कहना) कहलाते हैं।

कुछ विशेष अभिनय के संकेत

बाह्यार्थ और आभ्यन्तर अर्थ— (वाच्यार्थ और गूढार्थ) महाकवि भास के नाटक 'प्रतिज्ञायौगन्धरायण' के मन्त्राङ्क में विशेषाभिनय की एक शैली है— कहना एक— उद्देश्य दूसरा, कहने वाला तो बाह्यार्थ है, किन्तु उसका उद्देश्य गूढार्थ है। बाह्यार्थ कहने पर मुद्राएँ तो आन्तरार्थ के लिए है। अपने स्वामी वत्सराज को कारावास से मुक्त करने के लिए मन्त्री वसन्तक, यौगन्धरायण आदि छद्मवेशी होकर प्रयत्न कर रहे हैं। उनका लक्ष्य, उनके प्रयत्न भी अत्यन्त रहस्यपूर्ण हैं। यही इस विशेष अभिनयरीति का प्रसङ्ग है।— वसन्तक के अभिनय में से कुछ उदाहरण नीचे दिये जाते हैं। इसमें के व्यंग्य (आन्तरार्थ) अपने लोगों को, वाच्य (बाह्यार्थ) दूसरे लोगों को लक्ष्य करके कहे गये हैं।—

"नाळिकेरकदळीगुळमिश्राण्यद्भुतानि घृतमार्जनभाञ्जि।
मोदकानि रसवन्ति बृहन्ति प्रीणिताखिलजगन्ति जयन्ति।।"

वाचिक रूप में पढे जाने वाले इस श्लोक के लिए मुद्रा से दिखाने वाला अर्थ यही है : वसन्तकन् यौगन्धरायणन् रुमण्वान् इन सचिवों से युक्त वत्सराज सभी प्रजा को प्रसन्न करते हुए विराजमान हैं। मामूली वत्स (एक पकवान) के लिए भी मेल रखने वाला बाह्यार्थ इसके लिए कहा जायेगा।

दूसरा एक—

पटं वेणमोरुत्तन्न् पणं वेण मोरुत्तन।
पटवुं पणवुं वेणमेन्नितेन्टे मनोरथम्।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इसके लिए मुद्रा से दिखाने वाला निगूढार्थ— "वासवदत्ता चाहिए" इस प्रकार-राजा, 'राजा को चाहिए' इस प्रकार यौगन्धरायण भी चाहता है। मेरी (वसन्तक की) इच्छा तो वासवदत्ता तथा राजा को भी लिवा ले आने की है।

पीलवान को देखकर, उत्सव (मेला) ध्वजारोहण कल नहीं, वसन्तक के इस वाक्य के लिए मुद्रा दिखानेवाला निगूढार्थ— 'राजा (वत्सराज) का जुलूस कल नहीं', यही है। 'तन्त्री के लड़की पैदा हुई', के लिए 'राजा को वासवदत्ता के प्रति अनुराग हुआ', और 'बिम्ब की ढलाई कल नहीं चाहिए मोम अपवित्र हुआ', इस प्रकार ढलाई के शिल्पी से कहने के लिए' राजा को कल नहीं लिवा लाना', कार्य में बाधा उपस्थित हुई है और 'मन्दिर का निर्माण कल नहीं चाहिए प्रधान ट्रस्टी के लिए अभिमत नहीं" इस प्रकार बढ़ई से कहने के लिए 'राजा को रिहा कर लाना कल नहीं, वासवदत्ता के बिना आना राजा को प्रिय नहीं" की भी मुद्रा दिखाते हैं।

'पाक्की पीक्की, परियत्तिरुन्न परुत्ति परिक्कुन्न, परुतल च्चक्किक्क् पाक्य मुण्टेङ्किल पर पन्ति रम्टे, पर पन्तिरण्ट्' इस प्रकार हाथ से ताली बजाकर पढ़ना और ताल के अनुसार गाते-गाते नाचना; फिर मुद्रा दिखाकर पढ़ते भी हैं। इस पढ़े जाने वाले वाक्य के लिए इस प्रकार मुद्रा दिखाते हैं कि 'अय्यय्यो' इस प्रकार चिल्लानेवाली पराशक्ति (अरुत्तिलम्मा) के अगर भाग्य हो तो 'वर पन्त्रण्ट् पन्त्रण्टायि वरट्टे' है।

'इन्दिरा वायोटा, तर्पणं कोळेटा
इन्नु नी पोकेटा, नाळेयुं वायोटा।
सूर्य नी वायोटा, तर्पणं कोळेटा।
इन्नु नी पोकेटा नाळेयुं वायोटा।'

इस के लिए 'इन्द्र, आइए, तर्पण स्वीकार कीजिए, आज चले जाना औ कल फिर आना। सूरज आओ, तर्पण स्वीकार कर चले जाओ। कल भी आओ।' ऐसा दिखाते हैं।

कुण्टनाट्टम्—

'कुण्टा, कुण्टा, कुण्टायो,
कुण्टनुट्टुत्त पुलित्तुकलुं
कोविणवुं कुरुमक्कळाट्टिप्परच्चेन् कुण्ट
कुण्टन् पैच्चु नटक्कोल्ला
कुण्टनोपा पिटि चौरिटुवान्
ओकरि ओकरि कुण्टायो'

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इस प्रकार डंडा ले कर वसन्तक के 'कुण्टनाट्टम्' का अर्थ यही है— कुण्टा, कुण्टा; अये कुण्टा (बच्चा, बच्चा, अरे बच्चा) तेरे पहने कपड़े आदि सब दुश्मनों ने छीन लिये हैं। तुम भूखों मत मरना मैं एक कौर चावल दूँगा। मेरी वृद्धि बढ़ती रहे।

मयिलाट्टम्—

'मयिलो कुयिलो चेम्पोत्तो
मयिलाटुं पारक्कल् चेन्नोरुण्टो
मयिलेण्ण तेच्चु कुळिच्चोरुण्टो
मन्निङ्ङ तल्लित्तकर्तोरुण्टो

वाषक्कचुट्टु चेरच्चोरुण्टो
कत्ति किलुङ्ङिना इट्टुरुळ
मञ्ञुळिटिच्चु पोटिच्चु मरप्पोत्तिल्
वेच्चिट्टु पोरुण्णी, मञ्ञुण्णी मयिलटुवान्।'

यह वसन्त के मयिलाट्टम् के लिए है। डण्डा कन्धे पर रख कर दोनों हाथों से उसमें ताल लगा कर पढ़ा जाता है।

उद्घट्टन के भेद—

उद्घट्टन के बारे में बताया जा चुका है ताल लगाकर कूदते हुए दिखाये जाने वाले उद्घट्टन के कुछ भेद—

१. 'मत्तविलासम्' का 'अंसोपान्तविळंबिनश्च।'

२. विदूषक के 'अशनपुरुषार्थ' के 'पत्तां पन्तियिल् चोरु वन्नु'.............से शुरु होने वाला।

३. 'तोरण-युद्धाङ्क' के 'संवृत्तं तुमुलं युद्धं कुमारस्य च तस्य च' प्रस्तुत भाग।

४. 'इन्दिर चन्दिरन् नमुक्कु वेण्टा, तेवकळारुं एनि वेण्टा', शूर्पणखाङ्क के शूर्पणखा नखी का प्रस्तुत भाग।

५. 'उण्णेटा उण्णेटा पाच्चोरुं वेण्णुयुं केरेटा, केरेटा कट्टिलुं मेत्तयुं'— प्रस्तुत नागानन्द का भाग। इस प्रकार कई हैं।

चेटीसहस्रनामम्—

नागानन्द के दूसरे अङ्क में 'हदासा मा तुवर' (हताश, मा त्वरस्व) आदि ग्रन्थ चेटी पढ़ने लगती है तो 'हताश' शब्द मात्र सुनकर विदूषक चेटी को गालियां देने लगते हैं। हताश! इस प्रकार चेटी कहती है तो 'कशपिशि कूट्टुन्न कुक्कुर चेरुमी', इति विदूषक कहता है। चेटी फिर 'हताश!' कहती है तब विदूषक 'काशिन् पिशकुं चेरुमी' इति कहता है' इस प्रकार कहने को बहुत है। इन सबके लिए दी गयी संज्ञा है 'चेटी-सहस्रनामम्'।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वैशेषिक-प्रकरण

'अक्किता' के श्लोक—

१. अगणित-फ़णि-फण-मणि-गण-किरणैररुणितनिजतनुमविरतफलदम्।
कटतटलुठगळदळिकुलनिनदं प्रणमत गणपतिमगणितफलदम्।।

२. अगणित-गुणगणमशरण-शरणं बहुमतफलततिवितरणनिरतम्।
अवनतमुनिजनकृतनुतिचरितं प्रणमत गणपतिमगणितफलदम्।।

३. स्फुटपटुपृथुतटकटतटविगळत्परिमळमदजळमसृणितवपुषम्।
सुरकरिवरमुखसुरुचिरवदनं प्रणमत गणपतिमगणितफलदम्।।

४. स्फुट-पटु-पृथुतट-कट-तट-विकटं मदजल-मलिनित-करतल-कमलम्।
पदसरसीरुहनत-दितितनयं प्रणमत गणपतिमगणितफलदम्।।

५. सुन्दरमेरुगिरिप्रतिमं वन्दितसुन्दरगणनमितम्।
कुन्ददलामळदन्तधरं वन्दे देवं गजवदनम्।।

६. हेलाविचलितनागयुतं लीलापङ्कजलोलदृशम्।
मालेयाचलसदृशतनुं वन्दे देवं गजवदनम्।।

७. मधुमदविलुळितभृङ्गकुलं विलुळितकाञ्चनगिरिसदृशम्।
मुदितभयङ्कर-भूतगणम् वन्दे देवं गजवदनम्।।

८. अङ्कुशधारिणमतुलबलं मूषिकवाहनगिरिसदृशम्।
मुदितभयङ्करभूतगणं वन्दे देवं गजवदनम्।।

९. अङ्कुशपाशवराभयहस्तं कुंकुमचन्दनचर्चितगात्रम्।
पङ्कज-पत्र-पवित्र-सुनेत्रं शंभुसुतं प्रणमामि गणेशम्।

१०. मदनारातेर्नृत्तारंभे रङ्गीभूतो धर्मवृषोऽयम्।
सुरभितनूजं सुरवरनमितं तं वै वन्दे वृषभं देवम्।।

११. गौरीभर्तुर्नर्त्तनकाले रङ्गस्थो यः प्राप युगादौ।
धर्मो दामो निर्मलदेहस्तं वै वन्दे वृषभं देवम्।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१२. अच्छस्फटिकसमानच्छायां चन्द्रकलाङ्कित-केशकलापान्।
वासविरिञ्चाद्यखिलगणेड्यां वन्दे वाणीमभयदवरदाम्।।

१३. अर्धसरोरुहमध्यनिषण्णाम् अस्तरजोमयपुस्तकहस्ताम्।
प्रस्तनिरस्तसमुत्तरलाक्षीं वस्तुधियां प्रणमे हृदि वाणीम्।

१४. अर्धशशाङ्कधराय नमो. दिव्य-गजेन्द्रमुखाय नमः।
नागकृताभरणाय नमो देवमुमासहिताय नमः।।

नित्यक्रिया के लिए—

वकूमार कुसुमास मा औळी ए ए वकूमार मुखरिय गीयरवे।
वियसीय सरोरुह नायरवे वियरैणायो वियतरुणि।।१।।

णा णा कुसुमास मा औळी ए अहिणव काम समा औळी ए।
अळियुळ काम मणोहरी ए वियरै सकळो हंस वरो।।२।।

लीलारामे हेमाम्भोजे रम्यारामे मध्ये।
हर-गगने हर दुरितम् अनने अनने अनङ्गलते।।३।।

क्षीरसागरफेनचन्दनहारजालपयोधरां
मारवैरिमुखारविन्दविकासबालरविप्रभाम्।
नारदादिमुनीन्द्रवृन्दनुतिप्रियामचलात्मजाम्
वीरभद्रमनोरमां शिरसा नमामि शिवात्मिकाम्।।
तातेन्ना तेन्ना तेन्नेन्ना तेन्न तातेन्ना तेन्न तेन्नन्ना।।४।

पङ्कजाक्षसरोरुहासनदुर्निरीक्षिततेजसं
अङ्कलालितपार्वतीकुचकुङ्कुमारुणवक्षसम्।
शङ्करं निजभक्तदत्तसमस्तलोकमनामयं
देवदेवमुमापतिं शिरसा नमामि शिवङ्करम्।
तातेन्ना तेन्न तेन्नन्ना तेन्न तातेन्ना तेन्न तेन्नेन्ना।।५।।

कुन्दनिर्मलमन्दहासविकासिताधरपल्लवा
इन्दुबिम्बनिभाननामरविन्दचारुविलोचनाम्।
चन्दनागरुपङ्करूषिततुङ्गपीनपयोधरां
चन्द्रशेखरवल्लभां प्रणमामि शैलसुतामुमाम्।।
तातेन्ना तेन्न तेन्नन्ना तेन्न तेन्नेन्ना तेन्न तेन्नन्ना।।६।।

निर्मलाय निरामयाय निरूपणाधिकमूर्तये
निर्मलस्तुतिसंहताखिललोकविस्मयकारिणे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निर्मदाय गजाजिनाय वसुन्धराधरकन्यका-
नन्दिताय नमश्शिवाय सदाशिवाय शिवात्मने।
तातेन्ना तेन्न तेन्ना तेन्न तातेन्ना तेन्न तेन्नन्ना।।७।।

अम्बिके गिरिजे शिवे शशिबिम्बसौम्यनिभानने
शुम्भसूदिनि चण्डिके करवाळखण्डितदानवे।
पुण्डरीकदळायताक्षिविलोलकुण्डलमण्डिते
शङ्खचक्रगदाधरे मुरारिसोदरि पाहि माम्।।८।।

अद्रिमविद्रुमलळितपदं, ततेन्ना ततेन्ना ततेन्नत्तेन्ना
रुद्रं भीमं भूतपतिं, ततेन्ना ततेन्ना ततेन्नत्तेन्ना
अद्रिपतेस्तनयारमणं ततेन्ना ततेन्ना ततेन्नत्तेन्ना
वन्दे शम्भुं परम-शिवम् ततेन्ना ततेन्ना ततेन्नत्तेन्ना।।९।।

जय मारशरीरविनाशकरं नागसहस्रजटामुकुटम्।
जय भूतगणेशमुमारमणं वन्दे शम्भुं परमशिवम्।।१०।।

कोकनवेन्दुसमानतनुं वृन्दारार्चितपदकमलम्।
गंगाचुम्बितपिङ्गजटं वन्दे शम्भुं परमशिवम्।।११।।

जय डिण्डिमडमरुकवाद्यरवं जय तुम्बुरुनारदगीतरवम्।
जय भस्मविलेपनपरशुधरं जय पार्वतिवल्लभशरणमहम्।।१२।।

विश्वजनाधिप वासव जय जय!
विश्वामरमुख वह्ने, जय जय!

सर्वप्रेताधिपते भगवन् जय जय!
रक्षोधिपते निर्ऋते जय जय!

पश्चिमदेशाधिपते भगवन् जय जय!
सर्वचराचरवायो जय जय!

वित्ताधिपते भगवन् जय जय!
भक्तदयापर शंभो जय जय!

ब्रह्म पितामह धातर्ज्जय जय!
देवगणाश्रय विष्णो जय जय!

अङ्गुलीयकाङ्क में हनूमान् की 'तट्ट' नामक क्रिया के लिए—
(ताल-द्रुतमात्रिक त्रिपुटा)

चिन्तितराघवरूपमुदारं वीरनिशाचरभावहुताशम्।
शारदमेघसमानशरीरं श्रीहनुमन्तमनन्तमुपासे।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सेवितरामपदाम्बुजरेणुं रावणमानविमर्दनशीलम्।
तीर्णमहार्णवमाहवरूपं श्रीहनुमन्तमनन्तमुपासे।।
गृध्रनिवेदितराघवपत्नीमार्गणतत्परमक्षतवीर्यम्।
शुभ्रशरीरमनुस्मृतरामं श्रीहनुमन्तमनन्तमुपासे।।
वानरराजनिबोधितमार्गं प्राप्तपयोनिधिमुत्तमरूपम्।
राघवपादरजःकणपूतं श्रीहनुमन्तमनन्तमुपासे।।

चौथे श्लोक में 'प्राप्तपयोनिधिमुत्तमरूपम्' के लिए 'प्राप्तपयोनिधिमनुस्मृतरामं' ऐसा पाठान्तर भी है।

मत्तविलास में कपाळी के 'तट्ट' के लिए (ताल द्रुतकाल का झम्पा)

त्रिशूलं कपालं जटाभस्मटङ्कं त्रिपुण्ड्रं दधानो गळे कालकूटम्।
करे पानपात्रं तृतीयञ्च नेत्रं समायात्यसौ सत्यसोमः कपाली ।।१।।

शिवं शङ्करं शम्भुमीशं पुरारिं त्रिनेत्रं परं शर्वमर्द्धेन्दुमौलिम् ।
स्मराराातिमाद्यं त्रिलोकाधिनाथं प्रणृत्तेन नृत्तप्रियं प्रीणयामि ।।२।।

भवाभावहेतुं भवानीशमेकं स्वभक्तेषु साधुं प्रदत्तापवर्गम् ।
महाभूतवृन्दैर्महेन्द्रादिदेवैर्वृतं नृत्तगीतप्रियं प्रीणयामि ।।३।।

सुरापानमत्तः सुरालिप्तगात्रः सुरागन्धयुक्तः प्रियाकण्ठसक्तः।
स्खलत्पादचारः सतामत्युदारः समायाति मत्तः सुदृप्तः कपाली।।४।।

मन्त्राङ्क में भ्रान्तम् का तट्ट—

(ताल-द्रुतमात्रिक झम्पा)

१. सुविश्वस्तचित्तेन वत्सेश्वरेण प्रशस्तेन जन्मान्तरोपात्तसख्यम्।
समस्तेषु शास्त्रेषु निष्णातचित्तश्चरत्येष मन्त्री निरस्तारिपक्षः।।

२. गजच्छद्मनासौ महासेनभृत्यैर्निजस्वामिनं तं निबद्धं निशाम्य।
अतिक्रुद्धचित्तो धृतोन्मत्तवेशः चरत्येष मन्त्री समुद्भूतरोषः।।

३. रजोराजिराजच्छिरोजाभिरामः जपारक्तनेत्रः प्रभादीपिताशः।
लतापाशजालं वसानं शरीरं चरत्येष मन्त्री निरस्तेतराशः।।

४. रुदन् दीनदीनं नदन् घोरघोरं वदन् धीर-धीरं व्रजन् दूर-दूरम्।
विमर्दन् तुदन् वैरिजालं हसन् हसन्नेति मन्त्री वहच्छद्मवेषः।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रंगप्रसादन् (अरंगु तेळियिक्कुक) के श्लोक

हरेक अंक के कूत्तु 'पुरप्पाट्' के समय रंगप्रसादन (अरङ्ङुतेळियिक्कुक) के लिए नान्दी-सूत्रधार के द्वारा पढे जाने वाले श्लोक—

श्रीकृष्णचरितं नंग्यारम्मा कूत्तु के लिए—

कृष्णः करोतु कल्याणं कंसकुञ्जरकेसरी।
कालिन्दीलोलकल्लोलकोलाहलकुतूहली।।

बालचरित के लिए—

पान्तु वो नरसिंहस्य नखलाङ्गलकोटयः।
हिरण्यकशिपोर्वक्षःक्षेत्रासृक्कर्दमारुणाः।।

मत्तविलास प्रहसन के लिए—

मत्तेभकृत्तिपरिकल्पितवस्त्रशाली मृत्युञ्जयः सततमुल्लसदस्थिमाली।
अद्रीन्द्रजाहृदयपङ्कजभानुमाली भद्राणि वो दिशतु भद्रमुखः कपाली।।

अङ्गुलीयकाङ्क (चूडामणि ६ अङ्क) के लिए—

रामाङ्गुलीयकधरो रघुवीरदूतः रागान्धरावणकुलक्षयमूलहेतुः।
रोषाभिभूतनिखिलारिबलो हनूमान् रक्षां तनोतु सततं पवनात्मजो वः।।

मन्त्राङ्क के लिए (प्रतिज्ञायौगन्धरायण, तीसरा अङ्क)

अव्यात् कपर्दकलितोज्ज्वलवत्सराजं वेषं वसन्तकमनीयतरं दधानः।
वृत्तो रुमण्वति तनूकृतकालदर्पवाहायुगन्धरसुतोपगताशिवो वः।।

तोरण युद्धाङ्क (अभिषेक नाटक-३ - अङ्क) के लिए

कालानले तूललवं वितन्वन् बालानले राक्षसराजधानीम्।
हालाहलग्रीवसमीरजन्मा मालां विपत्तेर्दहतात् कपिर्वः।।

सीतामाश्वास्य वाक्यैस्स्वयमपि मुदितस्तां प्रणम्य प्रयास्यन्
सञ्चूर्ण्योद्यानपालान् पुनरहितगणान् किंकरादींस्तथाक्षम्।
हत्वा ब्र६ ।स्त्रबन्धादचलधृतगती रावणं दृष्टमुक्त्वा
दग्ध्वा लङ्कां ।तस्थे निशिचरनगरीं यो हनूमान् स वोऽव्यात्।।

धनञ्जय पहले अङ्क के लिए—

कृत्वा प्रदक्षिणमशेषवसुन्धरायाः तीर्थावगाहपरिशुद्धमतिः प्रभासे।
श्रुत्वा मुकुन्दसहजामुदिताभिलाषः पायात्स वः पृथुलकीर्तिभुजः किरीटी।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नागानन्द दूसरे अङ्क के लिए—

अमलगुणविभूषां सिद्धराजेन्द्रपुत्रीं
अचलवरतनूजामन्दिरात् साधु दृष्टाम्।
मनसिजपरितापेनालिखन्निन्दुकान्ते
बुधजननयनेन्दुः पातु विद्याधरेन्द्रः।।

चूडामणि पहले अङ्क के लिए—

वाल्मीकिश्रुतिमन्दरेण मथितः सीतारमासंभवः
सुग्रीवामरभूरुहोऽङ्गदगजः सौमित्रिचन्द्रोदयः।
वातोत्पन्नमणिः विभीषणसुधः पौलस्त्यहालाहलः
श्रीरामायणदुग्धसिन्धुरपरः पुष्णातु वो मङ्गलम्।।

शूर्पणखाङ्क के लिए— (चूडामणि दूसरा अङ्क)

गोदावर्यास्तटान्ते मृदुपवनचलत्पङ्कजामोदहृद्ये
सेव्ये वैखानसानां सहजसहचरीसंयुतो वर्तमानः।
आविर्भूतस्मरार्तां दशमुखभगिनीं दर्शयन्तीं रिरंसा—
मारादालक्ष्य रामः स्मितरुचिरमुखः पातु वो वीररामः।।

मायासीताङ्क के लिए (चूडामणि तीसरा अङ्क)

कल्याणं खरदूषणादिरजनीसञ्चारिणां खण्डना-
दानन्दोल्लसदन्तरात्ममुनिभिः दत्तं वहन् वाहयन्।
भ्रात्रा पाणिविभूषणं च कवचं चूडामणिं भार्यया
रामो मायिदशाननाहितदशावस्थश्चिरं पातु वः।।

अशोकवनिकाङ्क के लिए (चूडामणि ५ अङ्क)

कन्दर्पातुरवेतसं निजगुणश्लाघापरं निर्दयं
निन्दन्ती निरपत्रपं जडमतिं नक्तञ्चराणां पतिम्।
ध्यायन्ती जगतां पतिं जनदृशामानन्दमिन्दीवर-
श्यामं राममशेषलोकजननी देवी शिवायास्तु वः।।

चूडामणि सातवें अङ्क (एषामङ्कम्) के लिए

हत्वा युद्धे दशास्यं त्रिभुवनविषमं वामहस्तेन चापं
भूमौ विष्टभ्य तिष्ठन्नितरकरधृतं भ्रामयन् बाणमेकम्।
आरक्तोपान्तनेत्रः शरदळितवपुः कोटिसूर्यप्रकाशो
वीरश्रीबन्धुराङ्गः त्रिदशपतिनुतः पातु वो वीररामः।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बालिवधाङ्क के लिए (अभिषेक नाटक)

सुग्रीवात्प्राप्तसख्यः चरणनखमुखोत्क्षिप्तदैत्येन्द्रकायो
विश्वासार्थं च सख्युः प्रविचलितमहासप्तसालः क्षणेन।
भ्रात्रा संघट्टमानं परमलघुतरं बालिनं बान्धवार्थे
निघ्नन् बाणेन सूर्यान्वयमुकुटमणिः पातु वो रामचन्द्रः।।

कल्याणसौगन्धिक के लिए—

द्रौपद्या वचनेन हर्तुमचिरात्सौगन्धिकाख्यं शुभं
पुष्पं शङ्खगदात्तपाणिरचलाद्यक्षेश्वराधिष्ठितात्।
गच्छन् क्रोधवशं गणं परिभवन् वीरेण सख्यं मुदा
कुर्वन् वायुसुतेन चारुहरिणा पार्थाग्रजः पातु वः।।

गोग्रहणाङ्क के लिए— (पञ्चरात्रम्)

यः श्रुत्वा कुरुवाहिनीकळकळं भीत्या विहायाहवं
धावन्तं प्रविगृह्य मात्स्यतनयं संस्थाप्य धन्वी रथे।
भीष्मद्रोणसुयोधनाद्यतिरथान् निर्जित्य तेषां बलं
वस्त्रं भूषणमायुधं च हृतवान् पायात् स वः पाण्डवः।।

तपतीसंवरणम्- (प्रथम अङ्क)

मेनकासेवितारम्भा पाराशर्याहिता मतिः।
तपती-तपनो भूत्यै राजा संवरणोऽस्तु वः।।

ब्रह्मचारी कूत्तु के लिए (स्वप्नवासवदत्तम्)

श्रीवत्सराजद्युतिशालिवक्षाः, नमस्यया वासवदत्तयाढ्यया।
वसन्तकालेन्दुसमानवक्त्रा, पद्मावती पातु हरेस्तनुर्वः।।

'आळाम' श्लोक

कटियाट्टम् के किसी-किसी कथापात्र के प्रवेश के पहले और बाद उनका स्वभाव तथा तात्कालिक दशा सूचित करने वाले नाटकेतर श्लोक नांगियारम्मा पढ़ा करती है। प्रवेश के पहले के श्लोकों को "आळाम" कहते हैं। प्रवेश के बाद के श्लोकों को "पुरप्पाट्" श्लोक कहा जा सकता है। नमूने के लिए कुछ आळाम नीचे दिये जा रहे हैं—

मत्तविलास में कपाली के लिए

भस्मालङ्कारगौरः शशिकुसुमजटाशूलकौपीनधारी
नृत्तारम्भप्रसक्तो मुखरडमरुको देवसोमासहायः।
पीत्वा पीत्वा कपालात् सहयुवति सुरामट्टहासं वितन्वन्
आधावत्येष मत्तः स्खलितपदयुगः सत्यसोमः कपाली।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मन्त्राङ्क में वसन्तक के लिए

डिण्डी-दण्डं दधानो भसितसिततनुः भस्मक्लृप्तत्रिपुण्ड्री,
भास्वत्कौपीनवासाः प्रविशति गणयन् दक्षिणां माषकाणाम्।
मन्त्रार्थं वह्निशालां प्रतिकृतसमयः सत्सखीभ्यामुभाभ्यां
नो पश्यामीति जल्पन् जड इव मतिमान् मोदकं देवपीठे।।

पञ्चरात्र के 'गोग्रहणाङ्क' में बृहन्नळा के लिए—

तीर्त्वा हस्तिरथाश्वपत्तिसहितं कौरव्यसैन्यार्णवम्
गोभिर्गोष्पदवत् बलेन महताप्यानीय गोमण्डलम्।
योषावेषविलासभूषणवती मात्स्यस्य राज्ञः सभां
सैषा याति बृहन्नळा नळवनन्नागीव हेलागता।।

प्रतिज्ञायौगन्धरायण के 'हासाङ्क' में गात्रसेन के लिए—

आतन्वानः स्खलितचरणः सस्वनं हासमुच्चैः
आयात्येष प्रतिनवजपापुष्पसंरक्तनेत्रः।
पानागारादभिमतरसं मद्यमाकण्ठपूरं
पीत्वा पीत्वा मदपरवशः प्राप्तवान् गात्रसेनः।।

मन्त्राङ्क में भ्रान्तन् (पागल) के लिए—

दूराद्रावितातारका द्रुततरं पर्यस्तसालेष्टको
भञ्जन् भाण्डशतानि तोरणगृहद्वाराणि संघट्टयन्।
स्वाङ्गं पांसुभिराकिरन्नतिजवादारोह्य बालद्रुमा-
नाधावत्यपरो नळागिरिरिव क्रुद्धोऽयमुन्मत्तकः।।

मायासीताङ्क में वृद्धर्षि के लिए—

निशिचरनाथागमनाज्जनितभयश्चकितगात्रयष्टिरसौ।
यात्रासंसारभरश्शनकैरायाति तापसो वृद्धः।।

पुरप्पाद् के श्लोक

पुरप्पाट के समय यवनिका हटाने पर पढे जाने वाले दो श्लोक नींचे दिए जाते हैं—

अशोकवनिकाङ्क के रावण के लिए—

चिन्तामन्थर(न्तर)चिन्तनीयविभवां धत्ते सृजत्यायतान्
निःश्वासानथ दूयते परिमृशत्यापीनदीर्घान् भुजान्।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भूयः कम्पयते शिरांसि हसति न्यस्तप्रमोदाङ्कुरो
वैदेही विमुखीति दीप्तमदनस्तापेन लङ्केश्वरः।।

चूडामणि के सातवें अङ्क में श्रीराम के लिए—

कौसल्यानयनेन्दुं दशरथहृदयारविन्दमार्तण्डम्।
सीतामानसहंसं रामं राजीवलोचनं वन्दे।।

नेपथ्यं चोल्लक्

नेपथ्य से पढे जाने वाले नाटकांश को 'नेपथ्यं चोल्लक्' कहते हैं। उसके दो उदाहरण नीचे हैं— एक श्लोक, दूसरा वाक्य।

नागानन्द दूसरे अङ्क से—

वृष्ट्या पिष्टातपस्य द्युतिमिह मलये मेरुतुल्यां दधानः
सद्यस्सिन्दूरदूरीकृतदिवससमारम्भसन्ध्यातपश्रीः।
उद्गीतैरङ्गनानां चलचरणरणन्नूपुरारावहृद्यै-
रुद्वाहस्नानवेलां कथयति भवतः सिद्धये सिद्धलोकः।।

चूडामणि के पाँचवें अङ्क से—

जयतु महाराजः, जयतु लङ्केश्वरः, जयतु भद्रमुखः, जयतु स्वामी, दशनडिका पर्णा, अतिक्रामति स्नानवेला, प्रध्वनन्ति शंखपटहाः, इत इतो महाराजः।

निर्वहण-श्लोक

मत्तविलासम् कूत्तु के श्लोक—

तस्मिन् विप्रकृताः काले तारकेण दिवौकसः।
तुरासाहं पुरोधाय धाम स्वायम्भुवं ययुः।।१।।

त्वया दत्तवरोदीर्णः तारकाख्यो महासुरः।
उपप्लवाय लोकानां धूमकेतुरिवोत्थितः।।२।।

संयुगे संमुखीनं तमग्रतः प्रसहेत कः।
अंशादृते निषिक्तस्य नीललोहितरेतसः।।३।।

उमारूपेण ते यूयं सुयमस्तिमितं मनः।
शम्भोर्यतध्वमाक्रष्टुमयस्कान्तेन लोहवत्।।४।।

तस्यात्मा शितिकण्ठस्य सेनापत्यमुपेत्य वः।
मोक्ष्यति स्वर्गबन्दीनां वेणीं वीर्यविभूतिभिः।।५।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अथ स ललितयोषिद्भ्रूलताचारुशृङ्गम्
रतिवलयपदाङ्के चापमासज्य कण्ठे।
सहचरमधुहस्तन्यस्तचूताङ्कुरास्त्रः
शतमखमुपतस्थे प्राञ्जलिः पुष्पकेतुः।।

तस्मिन् मघोनस्त्रिदशान् विहाय सहस्रमक्ष्णां युगपत् पपात।
प्रयोजनापेक्षितया प्रभूणां प्रायश्चलं गौरवमाश्रितेषु।।

स वासवेनासनसन्निकृष्टमितो निषीदेति निसृष्टभूमिः।
भर्तुः प्रसादं प्रतिनन्द्य मूर्ध्ना वक्तुं मिथः प्राक्रमतैनमेवम्।।

आज्ञापय ज्ञातिविशेषपुंसां लोकेषु यत्ते करणीयमेषु।
अनुग्रहं संस्मरणप्रवृत्तमिच्छामि संवर्धितुमाज्ञया ते।।

असम्मतः कस्तव मुक्तिमार्गं पुनर्भवक्लेशभयात् प्रपन्नः।
बद्धश्चिरं तिष्ठतु सुन्दरीणामारेचितभ्रूचतुरैर्विलासैः।।

प्रसीद विश्राम्यतु वीर वज्रं शरैर्मदीयैः कतमः सुरारिः।
बिभेतु मोदीकृतबाहुवीर्यः स्त्रीभ्योऽपि कोपस्फुरिताधराभ्यः।।

तव प्रसादात् कुसुमायुधोऽपि सहायमेकं मधुमेव लब्ध्वा।
कुर्यां हरस्यापि पिनाकपाणेः धैर्यच्युतिं के मम धन्विनोऽन्ये?

सर्वं सखे त्वय्युपपन्नमेतद् ह्युभे ममास्त्रे कुलिशं भवांश्च।
पूर्वं तपोवीर्यमहत्सु कुण्ठं त्वं सर्वतोगामि च साधकं च।।

आशंसता बाणगतिं वृषाङ्के कार्यं त्वया नः प्रतिपन्नकल्पम्।
निबोध यज्ञांशभुजामिदानीमुच्चैस्त्विषामीप्सितमर्थमत्र।।

तस्मै हिमाद्रेः प्रयतां तनूजां यतात्मने रोचयितुं यतस्व।
योषित्सु तद्वीर्यनिषेकभूमिः सैव क्षमेत्यात्मभुवोपदिष्टम्।

तथेति शेषामिव भर्तुराज्ञामादाय मूर्ध्ना मदनः प्रतस्थे।
ऐरावतास्फालककर्कशेन शृंगेन पस्पर्श तदङ्गमिन्द्रः।।

स माधवेनाभिमतेन सख्या रत्या च साशङ्कमनुप्रयातः।
अङ्गव्ययप्रार्थितकर्मसिद्धिः स्थाण्वाश्रमं हैमवतं जगाम।।

तं देशमारोपितपुष्पचापे मधुद्वितीये मदने प्रपन्ने।
काष्ठागतस्नेहरसानुविद्धं द्वन्द्वानि भावं क्रियया विवव्रुः।।

मधु द्विरेफः कुसुमैकपात्रे पपौ प्रियां स्वामनुवर्तमानः।
शृङ्गेण संस्पर्शनिमीलिताक्षीं मृगीमकण्डूयत कृष्णसारः।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लतागृहद्वारगतोऽथ नन्दी वामप्रकोष्ठार्पितहेमवेत्रः।
मुखार्पितैकाङ्गुलिसंज्ञयैव मा चापलायेति गणान् व्यनैषीत्।।

निष्कम्पवृक्षं निभृतद्विरेफं मूकाण्डजं शान्तमृगप्रचारम्।
तच्छासनात् काननमेव सर्वं चित्रार्पितारण्यमिवावतस्थे।।

मनो नवद्वारनिषिद्धवृत्ति हृदि व्यवस्थाप्य समाधिवश्यम्।
यमक्षरं क्षेत्रविदो विदुस्तमात्मानमात्मन्यवलोकयन्तम्।।

स देवदारुद्रुमवेदिकायां शार्दूलचर्मव्यवधानवत्याम्।
आसीनमासन्नशरीरपातः त्रियम्बकं संयमिनं ददर्श।।

सुरस्तथाभूतमयुग्मनेत्रं पश्यन्नदूरान्मनसोऽप्यधृष्यम्।
नालक्षयत् साध्वससन्नहस्तः स्रस्तं शरं चापमपि स्वहस्तात्।।

निर्वाणभूयिष्ठमथास्य वीर्यं सन्धुक्षयन्तीव वपुर्गुणेन।
अनुप्रयाता वनदेवताभ्यामदृश्यत स्थावरराजकन्या।।

तां वीक्ष्य सर्वावयवानवद्यां रतेरपि प्रीतिमिवादधानाम्।
जितेन्द्रिये शूलिनि पुष्पकेतुस्स्वकर्मसिद्धिं पुनराशशंस।।

तस्मै शशंस प्रणिपत्य नन्दी शुश्रूषया शैलसुतामुपेताम्।
प्रवेशयामास च भर्तुरेनां भ्रूक्षेपमात्रानुमतप्रवेशः।।

अथोपनिन्ये गिरिशाय गौरी तपस्विने ताम्ररुचा करेण।
संशोषितां भानुमतो मयूखैर्म्मन्दाकिनीपुष्करबीजमालाम्।।

प्रतिग्रहीतुं प्रणयिप्रियत्वात् त्रियम्बकस्तामुपचक्रमे च।
सम्मोहनं नाम च पुष्पधन्वा धनुष्यमोघं समधत्त बाणम्।।

हरस्तु किञ्चित् परिवृत्तधैर्यश्चन्द्रोदयारम्भ इवाम्बुराशिः।
उमामुखे बिम्बफलाधरोष्ठे व्यापारयामास विलोचनानि।।

अथेन्द्रियक्षोभमयुग्मनेत्रः पुनर्विदित्वा बलवन्निगृह्य।
हेतुं स्वचेतोर्विकृतेः दिदृक्षुः दिशामुपान्तेषु ससर्ज दृष्टिम्।।

स दक्षिणापाङ्गनिविष्टमुष्टिं नतांसमाकुञ्चितसव्यजानुम्।
ददर्श चक्रीकृतचारुचापं प्रहर्तुमभ्युद्यतमात्मयोनिम्।।

तपःपरामर्शविवृद्धमन्योः भ्रूभङ्गदुष्प्रेक्ष्यमुखस्य तस्य।
स्फुरन्नुदर्च्चिः सहसा तृतीयादक्ष्णः कृशानुः किल निष्पपात।।

कोपं प्रभो संहर संहरेति यावद् गिरः खे मरुतां चरन्ति।
तावत्स वह्निः भवनेत्रजन्मा भस्मावशेषं मदनं चकार।।

— (कुमारसम्भवम्)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

धनञ्जय के पहले अंक के लिए

अकृत्रिमप्रेमरसाभिरामं रामार्पितं दृष्टिविलोभिदृष्टम्।
मनःप्रसादाञ्जलिना निकामं जग्राह पाथेयमिवेन्द्रसूनुः।।

किमिदं साहसं भीरु, कृतवत्यसि भामिनि?
कस्यायं सुभगो देशः का च त्वं कस्य चात्मजा?

ऐरावतकुले जातः कौरव्यो नाम पन्नगः।
तस्याहं दुहिता पार्थ उलूपी नाम पन्नगी।।

साहं त्वामभिषेकार्थमवतीर्णं सरिद्वरम्।
दृष्टवत्यपि कौन्तेय कन्दर्पेणाभिपीडिता।।

ब्रह्मचर्यमिदं भद्रे मम द्वादशमासिकम्।
धर्मराजेन निर्दिष्टं नाहमस्मि स्वयंवशः।।

परित्राणं च कर्तव्यं आर्तानां पृथुलोचन।
कृत्वा मम परित्राणं तव धर्मो न लुप्यते।।

तत्र तीर्थाम्भसि स्नात्वा पार्थः पन्नगकन्यकाम्।
परिणीय सुतं तस्यामिरावन्तमजीजनत्।।

तत्र चित्राङ्गदां प्राप्य सुतां पाण्ड्यस्य पाण्डवः।
प्रददौ तनयं तस्यै सुभ्रुवे बभ्रुवाहनम्।।

अस्ति द्वारवती नाम पारे पश्चिमसागरम्।
पुरहूतपुरीभूतिपरिभूतिकरी पुरी।।

अस्ति प्रस्तुततारुण्या तत्रैवात्यन्तसुन्दरी।
भगिनी वासुभद्रस्य सुभद्रा नाम कन्यका।।

तोरणयुद्धाङ्क के लिए

धनदेन परित्यक्तां सुविभक्तमहापथाम्।
विवेश लङ्कां देवारिः स्वर्गं देवाधिपो यथा।।

ततोऽभिषिक्तः क्षणदाचरैस्तदा
प्रविश्य लङ्कां स्वपुरीं दशाननः।

निकामपूर्णा च बभूव सा पुरी
निशाचरैर्नीलबलाहकोपमैः।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दत्ताऽभूत् कालकेयाय रावणेनातिभीषणा।
स्वसा शूर्पणखा नाम विद्युज्जिह्वाय नामतः।।

अथ गत्वा दशग्रीवो मृगयामटते स्म सः।
तत्रापश्यन्महाबाहुं मयं नाम दितेः सुतम्।।

कन्यासहायं दृष्ट्वा तु दशग्रीवो निशाचरः।
अपृच्छत् को भवानेको निर्मनुष्यमृगे वने।।

मयं नाम दितेः पुत्रं मामवेहि दशानन।
मायावी दुन्दुभिश्चैव यौ तौ मम सुतावुभौ।।

इयं ममात्मजा राजन् हेमयाप्सरसा धृता।
कन्या मण्डोदरी नाम पत्न्यर्थं प्रतिगृह्यताम्।।

पिबन् मधु मुखं चुम्बन्नालिङ्गन् गाढमालपन्।
मण्डोदर्या चिरं रेमे रावणः काममोहितः।।

ततो मण्डोदरी पुत्रं मेघनादमसूयत।
रुदता संप्रमुक्तोभून्नादो जलधरोपमः।।

अक्षो नामाभवत्तत्र तस्य रक्षःपतेस्सुतः।
विक्षोभिताखिलारातिवक्षाः काल इवापरः।।

विरोचनस्य दौहित्रीं सप्तज्वालेति विश्रुताम्।
तां कन्यां कुम्भकर्णाय रावणः समुपाहरत्।।

गन्धर्वराजस्य सुतां शैलूषस्य महात्मनः।
सरमां नाम धर्मज्ञां लेभे भार्यां विभीषणः।।

सौभ्रात्रं दर्शयानस्तु दूतं वैश्रवणस्तदा।
लङ्कायां प्रेषयामास दशग्रीवहितेप्सया।।

चिन्त्यते हि वधोपायः सर्षिसङ्घैस्सुरैस्तव।
निवर्तस्व दशग्रीव! सुपापात् सुरविग्रहात्।।

त्रिलोकानपि जेष्यामि बाहुवीर्यमुपाश्रितः।
चतुरो लोकपालांस्तान् नयिष्ये यमसादनम्।।

ततो युद्धं समभवद् यक्ष-राक्षस-सङ्कुलम्।
पुष्पकं तस्य जग्राह विमानं जयलक्षणम्।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जित्वा वैश्रवणं देवं कैलासमवरुह्य च।
अपश्यत् पुष्पकं तत्र विष्टब्धं कामगं दिवि।।

ततः पार्श्वमुपागम्य भवस्यानुचरो बली।
नन्दीश्वर उवाचेदं राक्षसेन्द्रमशङ्कितः।।

निवर्तस्व दशग्रीव, शैले क्रीडति शङ्करः।
प्राणिनामेष सर्वेषामगम्यः पर्वतो महान्।।

कोऽयं शङ्कर इत्युक्त्वा शैलमूलमुपागतः।
तोलयामास शैलं तं सभूतगणशङ्करम्।।

चचाल पार्वती चापि समाश्लिष्टा महेश्वरम्।
पादाङ्गुष्ठेन देवोऽपि स्थापयामास पर्वतम्।।

यस्माल्लोकास्त्रयस्त्वेते रावणेन विराविताः।
तस्मात्त्वं रावणो नाम नाम्ना लोके भविष्यसि।।

यस्माद्वानरमूर्तिं मां दृष्ट्वा हासं विमुञ्चसि।
तस्माद्वधार्थं जायन्तां कुलस्य तव वानराः।।
ततो मरुत्तं नृपतिं यजन्तं दैवतैस्सह।।

उशरि बीजमासाद्य योद्धुकामस्समभ्यगात्।
इन्द्रो मयूरः संवृत्तो यमराजस्तु वायसः।।

कृकलासो धनाध्यक्षो हंसश्च वरुणोऽभवत्।
अथ जित्वा मरुत्तं सः प्रययौ राक्षसाधिपः।।

नगराणि नरेन्द्राणां युद्धकाँक्षी दशाननः।
अथाब्रवीद् दशग्रीवं नारदो भगवानृषिः।।

गच्छ रावण युद्धाय पितृराजपुरं प्रति।
ततः संरक्तनयनः क्रुद्धो वैवस्वतो यमः।।

कालदण्डममोघं तं तोलयामास पाणिना।
अथ विज्ञाय भगवान् युद्धं तन्नळिनासनः।।

सूक्तिभिः शमयामास द्वयोश्शमनरक्षसोः।
स तं जित्वा दशग्रीवो यमं त्रिदशपुङ्गवम्।।

ततो भोगवतीं प्राप्तः पुरीं वासुकिपालिताम्।
स्थाप्य नागान् वशे हृष्टो ययौ मणिवतीं पुरीम्।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निवातकवचा यत्र दैत्या लब्धवरास्थिताः।
पूजितस्तैर्यथान्यायं संवत्सरसुखोषितः।।

उवाच हर्षयन् हृष्टः कालकेयान् महौजसः।
अहं विजित्य त्रिदिवं वशे स्थाप्य पुरन्दरम्।।

निवृत्तो विहरिष्यामि त्रैलोक्यैश्वर्यशोभितः।
अहमिन्द्रो भविष्यामि वरुणो धनदो यमः।।

त्रिदशान् विनिहत्याजौ स्थापयिष्यामि चापरान्।
तस्य राक्षससैन्यस्य समन्तादुपयास्यतः।।
देवलोकं ययौ शब्दो भिद्यमानार्णवोपमः।।

श्रुत्वा तु रावणं प्राप्तमिन्द्रः सञ्चलितासनः।
देवानुवाच वै तत्र सर्वानेव समागतान्।।

आदित्यान् सवसून् रुद्रान् विश्वान् साध्यान् मरुद्गणान्।
सज्जीभवध्वं युद्धाय रावणस्य दुरात्मनः।।

ततो युद्धं समभवद् देवराक्षससैन्ययोः।
घोरं तुमुलनिह्लादं नानाप्रहरणोद्यतम्।।

अशोकवनिकाङ्क में चित्रयोधि के लिए—

मन्थानं मन्दरं कृत्वा नेत्रं कृत्वाथ वासुकिम्।
ततो मथितुमारब्धः देवदानवराक्षसैः।।

ततो वै विबुधास्सैव यतः पुच्छं ततः कृताः।
कृष्णेन वासुकेर्दैत्याः पूर्वकाये निवेशिताः।।

क्षीरोदमध्ये भगवान् कूर्मरूपः स्वयं हरिः।
मन्दराद्रेरधिष्ठानं भ्रमतोऽभून्महाद्युतिः।।

रूपेणान्येन देवानां मध्ये चक्रधरो हरिः।
चकर्ष नागराजं तं दैत्यमध्ये परेण च।।

बभूवात्र महान् घोषः महामेघरवोपमः।
उदधेर्मथ्यमानस्य मन्दरेण सुरासुरैः।।

तत्र पूर्वं विषं जातं तद्विष्णुवचनाच्छिवः।
प्राग्रसत् लोकरक्षार्थं नीलकण्ठस्ततो हरः।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मथ्यमाने ततस्तस्मिन् क्षीराब्धौ देवदानवैः।
हविर्द्धामाऽभवत्तूर्णं सुरभिस्सुरपूजिता।।

बभूव वारुणी देवी मदाघूर्णितलोचना।
कामदः पारिजातश्च देवस्त्रीनन्दनस्ततः।।

रूपौदार्य-गुणोपेतः ततश्चाप्सरसां गणः।
ततश्शीतांशुरभवद् जगृहे तं महेश्वरः।।

नागानन्द के दूसरे अंक में जीमूतवाहन के लिए—

(विद्याधरोत्पत्ति)

अस्त्यस्तदोषो निजमूर्धसङ्गि-गङ्गासमुद्भासितवारिपूरः।
हिमालयो नाम सुरासुराणां, वन्द्यो भवानीगुरुरद्रिराजः।।

तस्याचलेन्द्रस्य बभूव पृष्ठे विद्याधराणां कुलराजधानी।
तामध्युवास त्रिदिवं यथेन्द्रो जीमूतकेतुर्जितशत्रुलोकः।।

सिद्धार्थाह्वयसिद्धराजसुतया देव्या महापुण्यया
श्लाघ्यस्तुल्यधुरा स्वयंवरमहे सोऽसौ सुगात्र्या वृतः।

तत्पाणिग्रहणं विधाय विधिवत् कृत्वानलं साक्षिणं
रेमे सङ्गतयाऽनया विपुलधीर्विद्याधरेन्द्रश्चिरम्।।

तस्याःपुत्रोऽभवद् छ्रीमान् नाम्ना जीमूतवाहनः।
शक्तित्रयसमुद्भूतभूतलव्यापितेजसः।।

बोधौ स्थितः सकललोकहितं विधातुं
साक्षाज्जिनः करुणयार्जितचित्तवृत्तिः।

जीमूतकेतुतनयस्स बभूव देवो
जीमूतवाहन इति प्रथितः पृथुश्रीः।।

स बाल एव स्वकुलोचितानामृद्धिप्रभावातिशयाश्रयाणाम्।
विद्यागमानां विनयोपपन्नः पदं पयोधिः पयसामिवाभूत्।।

अधीतशास्त्रे प्रतिबुद्ध्य बोध्ये चित्रे प्रसादायतने जनानाम्।
ययावभिव्यक्तिमनल्पशिल्पे कलावतीवानुकलाकलापः।।

तस्य क्रमात् क्रतुसमिद्धहुताशदीप्ते, विद्याधरीनयनचित्रनिबन्धनस्य।
कल्पद्रुमद्युतिविभूषितबद्धरागं, कैशोरकेण वयसा वपुरालिलिङ्गे।।

अथ शपथशतैरनाकुलं तं विषयविषेषु विरक्तमध्यजस्रम्।
कथमपि तनयं नियुज्य राज्ये पथि ययतुः पितरौ सतां कृतार्थौ।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निशायां कैलासं सवितुरुदये मन्दरगिरिम्
निषिक्तं मध्याह्ने मलयशिखरं चन्दनरसैः।
दिनापाये सह्यं जलधरविमानेन पतता
सुहृद्वानैश्वर्यादभजत स विद्याधरसुतः।।

स क्षान्तिमान् नववयस्यपि शान्तचेताः
त्यागाय केवलमुपार्जितपुण्यकर्मा।
आहृत्य मेरुशिरसोऽर्थिजनप्रियार्थं
तत्याज दिक्षु सकलासु हिरण्यवृष्टिम्।।

तमेनमर्थिलोकस्य परितोषाय पर्वतात्।
प्रदिष्टमानो गन्धर्व-राक्षसाधिष्ठिताद्वसुम्।।

वारयामास सुमतिर्मतिमान् मन्त्रिसत्तमः।
छिद्रप्रहारिणः शत्रोः अपायं सम्प्रधारयन्।।

अवारणीया खलु दानशीलता तथापि वक्ष्यामि भवन्तमन्तरा।
तथा विधेहि त्वमपायदर्शिनो यथा न कुर्वन्ति परे पराभवम्।।

विषधरैर्निगडैरिव यन्त्रिता स्फुटितभूमिरजःपरिधूसराः।
तव गृहाण्यसिताम्बु(ज)दमूर्तयो गुणनिधेर्निधयः समुपासते।।

तवेह भवनाजिरे मणिशिलातलैराचिते
विलोक्य सहसा स्वबिम्बमवनीं स्पृशन्तः करैः।
भवन्ति सपदि प्रकोपपरिवृद्धदानाम्भसः
प्रतिद्विरदशङ्कयाऽऽकुलितचेतसो दन्तिनः।।

इति यत् पितुरस्ति मन्दिरे ते प्रणयिभ्यस्तदशेषमेव देहि।
स्वकुलस्थितिदममुष्माद्धनमन्यत्तु कुमारकल्पवृक्षात्।।

मुक्ताफलप्रचयरञ्जितमञ्जरीका पत्रान्तरेष्वनुगता शकलैर्मणीनाम्।
शाखाभुजैः प्रविततैः कलधौतवल्लीराशा इव प्रणयिनामवलम्बतेयम्।।

इत्यद्भुतास्पदमनोकहराजमेनं कुर्याः कुलाश्रय! तथा न यथा ददासि।
क्षीणेऽपि मन्दिरधने वसुमान् पितेव श्रीविस्तरं विटपवानयमेव सूते।।

विरतवचसि तस्मिंश्चिन्तयानास धीमान् मुहुरयममुनासौ वारितोऽभून्महीयान्।
तमहमभिमतार्थप्राप्तये वृक्षराजं भुवि धनविकलानामर्थिनां कल्पयामि।।

गामस्माद् भज, नौपुरः कलरवः संस्कारवान् वार्यतां
रत्नस्यन्दि तुषारजन्मशिशिरं धाराम्बु संरुध्यताम्।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

एताश्चोन्मदराजहंसमिथुनं व्याहार-वल्गुस्वनाः
संश्लिष्टा मणिभिः त्यजन्तु भवतो वाचालतां मेखलाः।।

जरामयनिपीडिता विकलचक्षुषः पङ्गवो
भवन्तमुपसेवितुं सुबहवो न शक्ता यतः।
अतस्तदुदयाय योजनसहस्रसंख्यातिगा-
स्तरुतम! दिशोगता भुवि भवन्तु शाखाश्च ते।।

अपेतः स्वस्थानात् स्फुटगुरुशिखालम्बितमणि-
र्नभः कुर्वन् वेगात् प्रतिविहितलेखं मणिरुचा।
गृहैः शाखाऽऽश्लिष्टैः कुसुमित इव क्षिप्तजलदः
स्थितिं प्रायाद्वल्लीवलयविवरोद्गीर्णशशभृत्।।

स भूमौ संस्थाप्य प्रणतजनसङ्कल्पफलदम्
गुणाकल्पः कल्पद्रुममतुलकारुण्यजलधिः।
वनं प्रायाद् द्रष्टुं सपदि सवयस्योऽथ पितरौ
तयोः पादद्वन्द्वप्रणतिसुखसम्मग्नहृदयः।।

उपयुक्तसमित्पुष्पकुशमूलफलोदकात्।
इतोऽन्यमाश्रमं वत्स, नातिदूरे निरूपय।।

'स्वप्नवासवदत्तम्' में ब्रह्मचारी के लिए—

उपनीतमिदं रत्नमवन्तिविषयामरम्।
प्रद्योतपारिजातस्य कोमला बालमञ्जरी।।

समुल्लसन्मालवराजनन्दना समागमानन्दमहासुधार्णवे।
निमज्जनोन्मज्जनकेलिविक्लवो न वेद कालं स महीपतिर्गतम्।।

मज्जन्निवौघेष्वमृतापगायाः प्रह्लादि बिम्बं प्रविशन्निवेन्दोः।
दिवोऽतितिष्ठन्नुपरीव लोकं प्राप्तप्रियासङ्गसुखोऽभिमेने।।

विक्षोभयन्त्यम्बु रुजन्ति वृक्षान् भजन्ति नः पर्णकुटीगृहाणि।
निघ्नन्ति धेनूः प्रहरन्ति चास्मान् नष्टा मृगैराश्रमभूमयो नः।।

न सन्ध्ययोर्नापि दिवा न नक्तं, जितात्मनां तत्र तपोधनानाम्।
आक्षिप्यमाणानि मृगोपसर्गैः, तिष्ठन्ति चेतांसि तपःसमाधौ।।

आस्तां शोकः शशिमुखि, मुखं मा वृथा बाष्पवर्षैः
एतत्क्लिन्नं सरसिजमिव प्रावृषेण्यैः पयोभिः।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आटव्यं ते भयमपनयान्यल्पकालेन' कान्ते
तावत्कालं विहर विविधक्रीडनाभिः सखीभिः।।

गन्तव्यं यदि नियतं प्रयाहि पूर्वं प्राणानामपगमनादमङ्गलान्मे।
सिद्धिस्ते भवतु भवान्तरेऽपि भर्ता भूयास्त्वं न तु पुनरीदृशो वियोगः।।

यास्यामीति न युक्तमप्रियवचः स्निग्धे जने भाषितुं
याहीत्येतदपि स्वभावपरुषं कः सज्जनो भाषते।
इत्थं सज्जनवागुरासु पतितस्योद्भ्रान्तचित्तस्य मे
तोयान्तर्गतचन्द्रबिम्बतरलच्छायेव धीः कम्पते।।

वीणाविनोदेन विदग्धशारिकासंसक्तसंल्लापरसान्तरेण वा।
सख्या समं काञ्चनमालयानया विश्रान्तविश्लेषविषादमास्यताम्।।

गच्छ गच्छसि चेत्कान्त! पन्थानः सन्तु ते शिवाः।
ममापि जन्म तत्रैव भूयाद्यत्र गतो भवान्।।

का मे तन्वि गतिः किमत्र शरणं किं वा करिष्ये मया
गन्तव्यं किमु सर्वथा गुरुतरः संजायते सङ्कटः।
आपृच्छे गमनाय दीनहृदये! त्वामद्य यत्नादहम्
प्राणाः प्रेयसि मां विहाय गमनं कुर्वन्त्वनुज्ञाप्यताम्।।

ग्रथितमौलिरसौ वनमालया नवपलाशसवर्णतनुच्छदः।
तुरगवल्गनचञ्चलकुण्डलो विरुरुचे रुरुचेष्टितभूमिषु।।

अभिषेक नाटक के 'बालिवधाङ्क' में श्रीराम के लिए—

अयि दयिते हा सीते न मुखेन्दुः किं प्रकाश्यते हा सीते।
मद्व्यसनं दस्युभयं क्वासि निलीनानवेक्ष्य नन्दस्युभयम्।।

हे चूत, मन्दारक, सिन्दुवार! हे चन्दनाशोक, तमाल, ताल!
हे यूथिके, माधवि, मल्लिके हा! सीता क्व युष्मज्जननी गता सा।।

अयि, वरचिल्लीनासा गोदावरि वरतनु क्वचिल्लीना सा।
इष्टधुनीपारामे दृष्टा चेत्, कथय सिन्धुनी पारा मे।।

रुधिरं पश्य सौमित्रे, सर्वतो धरणीतले।
मन्ये लक्ष्मण! वैदेही राक्षसैर्भक्षिता प्रिया।।

निकृत्तपक्षं रुधिरावसिक्तं तं पक्षिराजं परिरभ्य रामः।
क्व मैथिली प्राणसमा गतेति विमुच्य बाष्पं निपपात भूमौ।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

यामौषधिमिवायुष्मन् विचिनोषि महावने।
सा देवी मम च प्राणाः रावणेनोभयं हृतम्।।

तातस्य तातमित्रस्य वत्स वत्सलयोस्तयोः।
अहमेव गतः पापो निधनाय निमित्तताम्।।

अस्य च प्रवयसोर्जटायुषः स्वर्गिणः किं ननु शोच्यतेऽधुना।
येन जर्जर-कलेवर-व्ययात् क्रीतमिन्दुकिरणोज्ज्वलं यशः।।

दक्षिणो दक्षिणं बाहुं रामः सत्यपराक्रमः।
चिच्छेद च कबन्धस्य सव्यं वीरस्तु लक्ष्मणः।।

प्राप्नुहि पम्पापारे सुग्रीवं वानराधिपं पापारे।
सशुचस्तापं निरस्य स्थितिमेष्यति ते गुरुप्रतापनिरतस्य।।

तौ तदाश्रममागम्य द्रुमैर्बहुभिरावृतम्।
सुरम्यमभिवीक्षन्तो शबरीमभ्युपेयतुः।।

पूजितोऽहं त्वया भद्रे! नन्दितश्च यथासुखम्।
अनुज्ञाता मया चैव गच्छेष्टां गतिमात्मनः।।

सुग्रीवसचिवश्शैलादाञ्जनेयोऽहमागतः।
मारुतस्यौरसः पुत्रो हनूमान्नाम वानरः।।

आस्ते बालिभयाद्राजन् सुग्रीवः सूर्यनन्दनः।
माल्यवन्तं गिरिश्रेष्ठं मुनिशापबलात् कृतम्।।

दशरथसुत राम रावणारे! मनुकुलशेखर! लक्ष्मणाग्रजन्मन्।
अमलकमलनेत्र मय्यनाथे कुरु करुणां करुणाकरोऽसि लोके।।

अथ सुरसाराती तौ नृहरिवरौ बालिराक्षसाराती तौ।
तत्र वितेनतुरुचितं सख्यं प्रणयेन भावितेन तु रुचितम्।।

उपकारक्षमं मित्रं विदितं ते महाकपे।
बलिनं तं हनिष्यामि सत्यमेतत् ब्रवीमि ते।।

रसातले वा सा देवी वसन्ती वा नभस्तले।
अहमानीय दास्यामि सत्यमेतदरिन्दम।।

असुरस्यातनुं शुभ्रं दुन्दुभेः कायमुद्धृतम्।
पादांशेन स चिक्षेप संपूर्णशतयोजनम्।।

एते ते विपुलास्सालाः सप्त शाखावलम्बिनः।
एकैकं घटते बाली निष्पत्रयितुमोजसा।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अथ पृथुशाखाभोगान् बाणाशनिना खरस्पृशाखाभोगान्।
युगपत् सानुरुहस्तान् स बिभेद राक्षसानुरुहस्तान्।।

बालिवधाङ्क में सुग्रीव के निर्वहण श्लोक—

मयस्य दानवेन्द्रस्य हेमाप्सरसि जज्ञिरे।
मायावी दुन्दुभिश्चैव कन्या मण्डोदरी तथा।

असुरो दुन्दुभिर्न्नाम विरिञ्चादरिमर्दनः।
बलं नागसहस्रस्य धारयामास वीर्यवान्।।

वीर्योत्सेकेन दुष्टात्मा वरदानात् च मोहितः।
जगाम सुमहाकायः समुद्रं सरितां पतिम्।।

ऊर्मिमन्तमतिक्रम्य सागरं रत्नसञ्चितम्।
मम युद्धं प्रयच्छेति तमुवाच महाबलः।।

न समर्थोस्मि ते दातुमहं युद्धं महाबल!।
श्रूयतामभिधास्यामि द्वन्द्वयुद्धे तव क्षमम्।।

शैलराजो महावीर्यः तपस्विशरणं महत्।
शङ्करश्वशुरो नाम्ना हिमवानिति विश्रुतः।।

गुहाप्रस्रवणोपेतः बहुकन्दरनिर्झरः।
स समर्थस्तव प्रीतिमतुलां कर्तुमाहवे।।

तं भीतमिति विज्ञाय समुद्रमसुरोत्तमः।
हिमवद्वनमागच्छत् शरश्चापादिव च्युतः।।

बाली नाम महावीर्यः शक्रपुत्रः प्रतापवान्।
अध्यास्ते वानरः श्रीमान् किष्किन्धामतुलप्रभाम्।

स हि दुर्मर्षणो नित्यं शूरस्समरकर्मणि।
तं शीघ्रमभिगच्छस्व यदि युद्धमिहेच्छसि।।

श्रुत्वा हिमवतो वाक्यं क्रोधाविष्टः स दुन्दुभिः।
जगाम तां पुरीं तत्र किष्किन्धां बालिपालिताम्।।

धारयन् माहिषं रूपं तीक्ष्णश्रृङ्गो महारवः।
ननर्द्द कम्पयन् भूमिं दुन्दुभिर्दुन्दुभिर्यथा।।

अन्तःपुरगतो बाली श्रुत्वा शब्दममर्षणः।
निष्पपात वृतः स्त्रीभिः ताराभिरिव चन्द्रमाः।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

किमर्थं नगरद्वारमिदं रुद्ध्वा विनर्दसि।
दुन्दुभे विदितो मे त्वं रक्ष प्राणान् महासुर!

किं त्वं स्त्रीसन्निधौ वीरवचनं वक्तुमिच्छसि।
मम युद्धं प्रयच्छ त्वं तत्तो ज्ञास्यामि ते बलम्।।

तं लोलयित्वा बाहुभ्यां गतसत्त्वमचेतनम्।
चिक्षेप वेगवान् बाली वेगेनैकेन योजनम्।।

तस्य वेगप्रविद्धस्य वक्त्रात् क्षतजबिन्दवः।
प्रपेतुर्मारुतोत्क्षिप्ता मतङ्गस्याश्रमं प्रति।।

स तु विज्ञाय तपसा वानरेण कृतं हि तत्।
विससर्ज महाशापं बालिनं प्रति रोषितः।।

मायावी नाम तेजस्वी पूर्वजो दुन्दुभेः स्मृतः।
नर्दति स्म सुसंक्रुद्धो बालिनञ्चाह्वयन्मृधे।।

स तृणेशवृतं दुर्गं धरण्या विवरं महत्।
प्रविवेशासुरो वेगात् ततस्तौ तत्र संस्थितौ।।

इह त्वं तिष्ठ सुग्रीव बिलद्वारे समाहितः।
यावदेनं प्रविश्याद्य निहन्मि समरे रिपुम्।।

अथ दीर्घस्य कालस्य बिलादस्माद्विनिर्गतम्।
सफेनं रुधिरं दृष्ट्वा सुग्रीवो भृशदुःखितः।।

ततोऽवगम्य सुग्रीवः चिह्नैस्तैर्भ्रातरं हतम्।
तत् पिधाय बिलद्वारं शिलया गिरिमात्रया।।

शोकार्तश्चोदकं कृत्वा किष्किन्धामागतः पुनः।
सुग्रीवो मन्त्रिभिः सर्वैः अभिषिक्तः कृतस्तदा।।

मा च रोषं कृथाः सौम्य, मयि शत्रुनिषूदन।
याचे त्वां शिरसा, देव, मया बद्धोऽयमञ्जलिः।।

पश्यन्तौ गिरगहनानि सावधानं गोदण्डं सकलदुराननं दधानौ।
तन्वानौ मनसि नितान्तमाकुलं मां कावेतौ पवनतनूज चिन्तनीयौ।।

बिभ्राणौ धनुषी जटावलयिनौ त्रैलोक्यरक्षाक्षमौ।
शान्तौ बद्धनिषङ्गिणौ विदधतौ चीरान्वितौ वल्कलम्।।

कावेतौ तरुणौ मुनिव्रतधरौ क्षत्रान्वयव्यञ्जिनौ।
भ्रात्रा मे प्रहितौ मदर्थमथवा प्रच्छन्नवेषौ चरौ।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

धीरमना गच्छ त्वम्, तर्कय हनुमन्, यथामनः गच्छ त्वम्।
मनसि कृपापदमनयोः स्याद्यदि सख्यं ममास्तु पापदमनयोः।।

शरान्वितौ चापधरौ महाभुजौ दयापरौ दाशरथी महारथौ मनोरमौ।
सुरक्षितौ तौ सुरकर्मकारिणौ सुलोचनौ सुन्दररामलक्ष्मणौ।।

इसके अलावा बालिवधाङ्क में श्रीराम के निर्वहण श्लोकों के 'दशरथस्तराम' 'अथसुरसारातीतौ' 'उपकारक्षमं मित्रं' 'रसातले वा सा देवी' 'एते ते विपुला रशालाः' इत्यादि पाँच श्लोक भी सुग्रीवनिर्वहण में हैं।

'चूडामणि' के मायासीताङ्क में मारीच के लिए—

मारीचश्च सुबाहुश्च तयोश्चानुचरास्तदा।
आजग्मुर्मेघसंकाशा रुधिरौघानवासृजन्।।

यज्ञविघ्नं तदा कृत्वा पावकास्त्रेण सानुगः।
सुबाहुर्निहतः तेन मारीचस्ताडितो भृशम्।।

कच्चिद्धि कुशलं राजन् लङ्कायां राक्षसेश्वर।
केन चैवार्थजातेन तूर्णमेवमिहागतः।।

सौवर्णस्त्वं मृगो भूत्वा चित्रो रजतबिन्दुभिः।
आश्रमे तस्य रामस्य सीतायाः प्रमुखे चर।।

स रावणं त्रस्तविषण्णचेता महावने रामपराक्रमज्ञः।
कृताञ्जलिस्तत्त्वमुवाच वाक्यं हितं च तस्मै हितमात्मनश्च।।

अहं तु मन्ये तव न क्षमो रणे समागमः कोसलराजसुनुना।
इदं हि भूयः श्रृणु वाक्यमुत्तमं क्षमं च युक्तं च निशाचराधिप।।

अहं रामसहस्राणि भीतः पश्यामि रावण।
रामभूतमिदं सर्वमरण्यं प्रतिभाति मे।।

रेफान्वितानि नामानि रामात्त्रस्तस्य रावण।
राजा राजीव रजनी रमा रामो रथो रसः।।

राष्ट्रं रजो रणं रत्नं रजतं राक्षसा अपि।
राव इत्येवमादीनि त्रासं सञ्जनयन्ति मे।।

प्रसीद मोघं कुरु चित्तमोहं लङ्कां प्रसन्नो भज साधु गच्छ।
त्वं स्वेषु दारेषु रमस्व राजन् रामः सभार्यो रमतां वनेषु।।

शीर्षच्छेद्यमतोऽहं त्वां करोमि क्षितिवर्धनम्।
कारयिष्यामि वा कृत्यं विजिघृक्षुर्वनौकसौ।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चूडामणि के सातवें अङ्क में श्रीराम के लिए—

रामाय प्रतिपक्षकक्षशिखिने दास्यामि वा मैथिलीम्
युद्धे राघवसायकैर्विनिहतः स्वर्गं गमिष्यामि वा।
नीतिज्ञे कथयस्व देवि कतमः पक्षो गृहीतस्त्वया
सुश्राव्यं प्रिय अस्मदीयमभवन्मन्मात्रशेषं बलम्।।

दृष्ट्वा दैन्यं भगिन्याः सुनयखरवधं मातुलस्यापि नाशं
सालानां भेदनं तत् कपिवरहननं तच्च सुग्रीवसख्यम्।
कर्माण्युद्यानहर्तुः जलनिधिनियमं यो न जातस्तदानीं
सोऽयं नष्टे कुलेऽस्मिन् कथमिव कमितर्जायते ते विवेकः।।

सुग्रीवस्य पदाहतच्युतमणिर्मौलिर्मयाऽऽलोकितः
गण्डेष्वेव हनूमता करतलैस्ताडो मया लभ्यते।
रामेणापि रणाङ्गणे सकरुणा वाणी मया कर्णिता
पौलस्त्येन हतत्रपेण दयिते, किं जीवितव्यं मया।।

निर्ययावथ पौलस्त्यः पुनर्युद्धाय मन्दिरात्।
अरावणमरामं वा जगदद्येति निश्चितः।।

एतत् पानप्रसक्तं पुनरिदममराक्षेपि गर्जनपरं त्वा-
मन्यत् सीताप्रलापि स्तुतिमुखरमिदं बालशीतांशुमौलौ।
एतन्मांसाशियुद्धोन्मुखमिदमपरं सामगायन्मुनीन्द्रान्
न्यक्कुर्वन् सिंहनादप्रणयिदशमुखीं पश्य मर्यादहीनाम्।।

स्त्रीमात्रं ननु ताटका, भृगुसुतो रामस्तु विप्रः शुचि-
र्मारीचो मृग एव भीतिभवनं बाली पुनर्वानरः।
भोः काकुत्स्थ, विकत्थसे कथय किं वीरो जितः कस्त्वया
दोर्गर्वस्तु तथापि नाम यदि ते कोदण्डमारोपय।।

रामं पदातिमालोक्य लङ्केशं च वरूथिनम्।
हरियुग्यं रथं तस्मै प्रजिघाय पुरन्दरः।।

तमाधूतध्वजपटं व्योमगङ्गोर्मिवायुना।
देवसूतभुजालम्बी जैत्रमध्यास्त राघवः।।

तस्य स्फुरति पौलस्त्यः सीतासङ्गमशंसिनि।
निचखानातिसंक्रुद्धः शरं सव्येतरभुजे।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रावणस्यापि रामात्तो भित्वा हृदयमाशुगः।
विवेश भुवमाख्यातुमुरगेभ्य इव प्रियम्।।

वचसेव तयोर्वाक्यमस्त्रेणास्त्रं विनिघ्नतोः।
अन्योन्यजयसंरम्भो ववृधे वादिनोरिव।।

बालार्कप्रतिमेवाप्सु वीचिभिन्ना पतिष्यतः।
रराज रक्षःकायस्य कण्ठच्छेदपरम्परा।।

यन्मूलतो दश भवन्ति शिरांसि यच्च
छेदेऽपि तानि शतशोऽथ सहस्रशश्च।
तत्साधु राक्षसपतेः कथमन्यथाय-
मुत्सृज्यतां जनकजाहरणापवादः।।

गगनं गगनाकारं सागरस्सागरोपमः।
रामरावणयोर्युद्धं रामरावणयोरिव।।

आदित्यहृदयं पुण्यं सर्वशत्रुविनाशनम्।
जयावहं जपेन्नित्यं अक्षयं परमं शिवम्।।

अमोघं सन्दधे चास्मै धनुष्येकं धनुर्धरः।
ब्राह्ममस्त्रं प्रियाशोकशल्यनिष्कासनौषधम्।।

भो लङ्केश्वर दीयतां जनकजा रामः स्वयं याचते
कोऽयं ते मतिविभ्रमः स्मर नयं नाद्यापि किञ्चिद् गतम्।
नैवञ्चेत् खरदूषणत्रिशिरसां कण्ठासृजा पङ्किलः
पत्री नैव सहिष्यते मम धनुर्ज्याबन्धबन्धूकृतः।।

प्रादुर्भूतो यदि स्याद् भुवनगुरुरसौ भूतले मन्निमित्तम्
तद् भद्रं नात्र भीतिः मम भवतु भुवो भारभङ्गो हि भूयान्।
भाविन्यर्थे न मुह्यन्त्यधिगतविभवा भव्यभूताः पुमांसः
नैवं तां दद्मि देवीं वपुरिदमधुना विष्णुवह्नौ जुहोमि।।

न दीयते जनकसुता मया हृता न दीयते त्रिजगति रत्नसम्मता।
न दीयते विजयपदानुयामिनी मनस्विनां मनुज, न जातु संभ्रमः।।

वयसां पंक्तयः पेतुः हतस्योपरि रक्षसः।
तत्प्रतिद्वन्द्विनो मूर्ध्नि दिव्याः कुसुमवृष्टयः।।

दशग्रीवं हतं दृष्ट्वा रामेणाचिन्त्यकर्मणा।
पतिं मण्डोदरी तत्र कृपणा पर्यदेवयत्।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उत्तिष्ठोत्तिष्ठ किं शेषे प्राप्ते परिभवे नवे।
अद्य वै निर्भया लङ्कां प्रविष्टाः सूर्यरश्मयः।।

इन्द्रियाणि पुरा जित्वा जितं त्रिभुवनं त्वया।
स्मरद्भिरिव तद्वैरं इन्द्रियैरेव निर्जितः।।

पिता दानवराजो मे भर्ता मे राक्षसेश्वरः।
पुत्रो मे शक्रनिर्जेता इत्यहं गर्विता भृशम्।।

शुभकृत् शुभमाप्नोति पापकृत्पापमश्नुते।
विभीषणस्सुखं प्राप्तस्त्वं प्राप्तः फलमीदृशम्।।

"आट्टम्" (विशेषाभिनय) के लिए खास तौर पर प्रयुक्त होने वाले श्लोक—

गंगावर्तसमाननाभिविलसद्वल्मीकरन्ध्रान्तरो—
त्तन्वी कोमलरोमराजिभुजगी निर्गत्य कान्ते तव।
वक्त्रेन्दुं ग्रसतीति पन्नगभिया पीनौ स्तनौ संगता-
वित्याख्यातुमिव त्वदक्षियुगलं कर्णान्तमाशिश्रिये।।

प्यारी प्रियतमा, तेरी 'नाभि' देखने पर ऐसा लगेगा मानों गंगा के पानी का आवर्त हो। इतना ही नहीं, उस नाभि से निकल कर स्तन तक विराजमान सूक्ष्म रोमों की रेखा देखने पर ऐसा लगेगा कि उस नाभिचक्र रूपी वल्मीक से निकल कर ऊपर रेंगने वाली सांपिन हो। फिर स्तनों का जुड़कर रहना देखने पर ऐसा लगेगा कि रोमावली की सांपिन तेरे चेहरे रूपी चन्द्र को निगलेगी, इस डर से बचने के लिए इन दोनों ने मिलकर उसे रोक रखा है— यह समाचार गुप्त रूप से कहने के लिए आँखें मानों कानों के पास तक गयी हैं ऐसा ही प्रतीत होता है। इस प्रकार तेरे सब अंग अत्यन्त मनोहर लगते हैं।

अभिलषसि यदीन्दो, वक्त्रलक्ष्मीं मृगाक्ष्याः
पुनरपि सकृदब्धौ मज्ज, संक्षालयाम्बम्।
सुविमलमथ बिम्बं पारिजातप्रसूनैः
सुरभय वद नो चेत् क्व त्वमस्याः मुखं क्व।।

हे चाँद, अगर तुम्हें इस सुन्दर युवती के चेहरे के सौन्दर्य का प्रकाश मिलने की अभिलाषा है तो और भी एक बार तुम्हें समुद्र में गोता लगाना है और खूब रगड़कर अपने शरीर को निर्मल रखना है और पारिजात कुसुमों की माला पहनकर सुरभिल बनाना है। नहीं तो तुम कहाँ और सुन्दर इस युवती का चेहरा कहाँ? आपस में कोई समानता नहीं। इसके कलङ्करहित मुख की शोभा और सौगन्ध्य तुम्हें कभी नहीं मिलेगा।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नेदं मुखं मृगविमुक्तशशाङ्कबिम्बं
नेमौ स्तनावमृतपूरितहेमकुम्भौ।
नैवालकावलिरियं, मदनास्त्रधारा
नैवेदमक्षियुगलं, निगळं हि यूनाम्।।

मैंने जिसे चेहरा समझा था वह चीज़ मुख नहीं। मुख से भी अधिक सुन्दरता एवं महिमा दीख पड़ती है। इसलिये मुख से अधिक शोभा तथा मुख की समानता रखनेवाली दूसरी कोई वस्तु होगी। तो चाँद हो सकता है, पर चाँद में हिरण है। यह तो हिरण से मुक्त कलंक रहित दूसरा ही चन्द्रबिम्ब है। स्तनों की आकृति में दीखने वाले ये स्तन नहीं, स्तनों से भी अधिक विशेषता है। सन्ताप दूर करने वाले संजीवनी से बने अमृत से भरे दो सोने के कलश हैं। यह दिखाई पड़ने वाली लटें नहीं, लटों में काम को उद्दीपित करने की इतनी ताकत नहीं। इसलिए ये कामदेव के बाणों की पंक्ति है। ये दोनों आँखें नहीं, लोगों को धोखा नहीं दे सकतीं। ये तो कामी युवकों को बाँध रखने की जंजीर हैं। इन आँखों से जिस युवा की ओर दृष्टि जाती है वह तरुण और कहीं नहीं जायेगा। इसका चेहरा, स्तन, लटें, आँखे सब अन्य सुन्दरियों की अपेक्षा कुछ दूसरे ही हैं।

अस्याश्चेत् गतिसौकुमार्यमधुना हंसस्य गर्वैरलम्,
संलापो यदि धार्यते परभृतैर्वाचां यमत्वं व्रतम्।
अङ्गानामकठोरता यदि दृषत्प्रायैव सा मालती
कान्तिश्चेत् कमला किमत्रबहुना काषायमालम्बते।।

इस युवती की चाल देखने पर हंस फिर गर्व नहीं करेंगे। फिर 'हंस' दिखा कर उसके स्वाभाविक स्तोभ दिखा कर उड़ते खड़े होकर मेरी चाल के समान सुन्दरचाल और किसी की नहीं। इस प्रकार गर्व से खड़े हो जाने पर इस सुन्दरी की चाल देखकर लज्जित हो जाने का सा भाव अभिनय करें, इस प्रकार हंस का गर्व दूर करने योग्य है इसकी चाल। इसकी बोली सुनने पर उसी दम से कोयल मौन व्रत धारण करेंगे। शरीर के सौकुमार्य (मुलायम रहना) पर विचार करने पर कहना पड़ेगा कि मालती कुसुम चट्टानों के जैसे कठोर हैं। इसके शरीर की शोभा देखने पर साक्षात् लक्ष्मी जी गेरुआ कपड़ा पहन कर संन्यास स्वीकार कर लेगी। ज्यादा क्या कहना, इसके जैसे सभी नारी-गुणों से युक्त और किसी को हम देख नहीं पाते।

उदयाद्रिनावमधिरुह्य शनैश्शशिदाशकेन जगतीसरसि।
करजाल-जाल-मवतत्य युवत्यभिमानमीनकुलमाचकृषे।।

इसमें चाँद की कामोद्दीपकता का वर्णन करते हैं। चाँदरूपी मछुआ किरणों रूपी जाल को सँभालकर उदय-पहाड़ की नाव में चढ़कर धीरे से संसार रूपी सरोवर में

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वह जाल फेंककर युवतियों के मान रूपी मीनों को (मछलियों) को पकड़ता है। यहाँ मछुए का नाव में चढ़कर उसे खेकर सरोवर में जाल फेंकना, मछलियों को पकड़ कर जाल को अपनी ओर खींचना आदि मनोधर्म का विस्तार से अभिनय किया जाना चाहिए। चन्द्र की किरणें प्रेमी-प्रेमिकाओं के लिए असह्य हैं ऐसा अभिनय कर प्रकृत प्रसंग से जोड़ देना है।

किमिन्दुः, किं पद्मं, किमु मुकुरबिम्बं किमु मुखम्?
किमब्जे, किं मीनौ, किमु मदनबाणौ, किमु दृशौ?
खगौ वा गुच्छौ वा, कनककलशौ वा, किमु कुचौ?
तडिद्वा, तारा वा, कनकलतिका वा, किमबला?

यह जो दिखाई दे रहा है वह क्या चाँद है? कलंक नहीं दिखाई पड़ता। इसलिए चाँद नहीं। तो क्या कमल है? चमक दिखाई पड़ती है, इसलिए कमल नहीं। कमल को चमक नहीं। तो क्या आईना होगा? नहीं, यह तो सौरभ्यपूर्ण वस्तु है। आइने को सौरभ्य नहीं। तो चाँद का सा सौन्दर्य, कमल का सा सौरभ्य आईने की सी प्रतिबिम्बन की शक्ति तीनों से युक्त कोई वस्तु होगी। क्या मुख होगा? हाँ मुख ही है, मुख में चाँद जैसी आह्लादन की शक्ति, कमल के जैसा सौगन्ध्य, सुन्दरता तथा आइने के जैसे चमकते रहने वाली चमक भी है। इसलिए यह मुख ही है, सन्देह नहीं। फिर भी देखकर क्या ये दोनों कमल के दल हें? नहीं, गतिशीलता दिखाई देती है। कमल में गतिशीलता नहीं। तो क्या दोनों मछलियाँ होंगी? नहीं मछलियों में दर्शकों में दुःख पैदा करने का सामर्थ्य नहीं, इनमें ऐसी शक्ति है। तो क्या मदन के बाण हैं? वह भी नहीं, बाण कहीं रखें तो वहीं रहेंगे, छोड़ने पर चलेंगे। अलावा इसके-इधर उधर चलेगें नहीं। तो क्या दो आँखें होगीं। आँखों में कमलदलों की सदृशता, मछलियों की आकृति, कामदेव के बाणों के जैसे कामी लोगों को दुःखी बनाने की शक्ति भी है। इसलिए ये दोनों आँखें ही हैं। फिर थोड़ा नीचे देखकर, ये दिखाई पड़ने वाले क्या दो चकवे हैं? नहीं चकवे बीच-बीच में उड़ेंगे। ये स्थिर हैं। क्या फूलों के गुच्छे हैं? नहीं, ये कान्तिपूर्ण हैं। तो क्या सोने के कलश हों? वह भी नहीं, सोने के कलश देखने पर किसी को काम का आवेग नहीं होगा। इनमें वह शक्ति दिखाई पड़ती है। तो क्या दो स्तन होंगे, हाँ, चकवों की समानता, सौरभ्य, लावण्य और कामावेग पैदा करने की शक्ति इन तीनों की सम्मिलित शक्ति होने से ये स्तन ही हैं, सन्देह नहीं। पैर तक देखकर क्या यह बिजली की रेखा होगी? नहीं बिजली के जैसी क्षण-प्रभा नहीं; तो क्या तारों की पंक्ति है? नहीं, एकाकार शोभायमान वस्तु है। क्या कनकलता है? नहीं, कनकलता तो स्थावर वस्तु है। यह तो जङ्गम है। तो क्या कोई सुन्दरी नारी होगी? बिजली की सी कान्ति, नक्षत्रों का सा प्रकाशमान अंग, कनकलता की सी शरीर की शोभा, इन तीनों के समवाय से यह तो एक सुन्दर नारी ही है, सन्देह नहीं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सौन्दर्याद्यैस्समस्तैः वरयुवतिगुणैः प्रीतिमुत्पादयन्ती
केयं हर्षाद्भुताभ्यामधिकतरलिते मानसे मामकीने।
पद्मा पद्माक्ष-वक्षःस्थल-कृतनिलया किन्नु? किं लाल्यमाना
स्वांगे शर्वेण गौरी? किमु विधिवदनैर्भारती चुम्ब्यमाना।।

इन्दीवरेण नयनं मुखमम्बुजेन कुन्देन दन्तमधरं नवपल्लवेन।
अंगानि चम्पकदलैश्च विधाय वेधाः कान्ते कथं रचितवानुपलेन चेतः।।

इयं गेहे लक्ष्मीः इयममृतवर्तिर्नयनयोः
असावस्याः स्पर्शो वपुषि बहुलश्चन्दनरसः।
अयं कण्ठे बाहुश्शिशिरमसृणो मौक्तिकसरः
किमस्याः न प्रेयो यदि परमसह्यस्तु विरहः।।

चित्रं चित्रं क्षितितल-गता स्थायिनी कापि विद्युत्
तस्याश्चाग्रे तिमिरभरभृत् पार्वणं चन्द्रबिम्बम्।
तस्मिन् बिम्बे कुवलययुगं, विद्रुमस्तत्समीपे
तस्याधस्तात् कनककलशौ नैव किञ्चित्ततोऽधः।।

अलमलमति वृद्ध्या किन्न पश्यस्यवस्था-
मकरुण! हरिणाक्ष्याः खिद्यते मध्य एषः।
इति गुरुजघनाज्ञां बिभ्रती रोमराजिः
स्तनयुगमबलायाः वक्तुमारोहतीव।।

रोमावली भुजङ्गी नाभेरुदिता मुखेन्दुमालेढुम्।
दृष्ट्वा कचभरबर्हं कुचगिरिमध्ये निलीयते तन्व्याः।।

चित्रं तपोवनमिदं शिशवः पशूनां
शार्दूलिकास्तनममी बहुशः पिबन्ति।
व्यर्थीकरोति च गतागतमादधाना
बह्नेरियं दहननाम पतङ्गपालिः।।

चन्द्रं गता पद्मगुणान् न भुंक्ते पद्माश्रिता चान्द्रमसीमभिख्याम्।
अस्या मुखन्तु प्रतिपद्य लोला द्विसंश्रया प्रीतिमवाप लक्ष्मीः।।

यत्त्वन्नेत्र-समान-कान्ति-सलिले मग्नं तदिन्दीवरं
मेघैरन्तरितः प्रिये तव मुखच्छायानुकारी शशी।
येऽपि त्वद्गमनानुसारिगतयस्ते राजहंसा गता-
स्त्वत्सादृश्य-विनोद-मात्रमपि मे दैवेन न क्षम्यते।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जटा नेयं वेणीकृतकचकलापो, न गरळम्
गळे कस्तूरीयं, शिरसि शशिलेखा न कुसुमम्।
इयं भूतिर्नांगे प्रियविरहजन्मा धवळिमा
स्मरारातिभ्रान्त्या कुसुमशर! किं मां प्रहरसि?।।

कान्तं प्राह कपोतिकाकुलतया नाथोऽन्त्यकालोऽधुना
व्याधोऽधो धृतचापसंयुतकरः श्येनोपरि भ्राम्यति।
एवं सत्यहिना स दष्ट इषुणा श्येनोपि नाशं गतः
प्राप्तौ तौ तु यमालयं विधिवशाद्दैवी विचित्रा गतिः।।

विदूषक के पुरप्पाद् के श्लोक—

ब्रह्मा येन कुलालवन्नियमितो ब्रह्माण्डभाण्डोदरे
विष्णुर्येन दशावतारगहने क्षिप्तो महासङ्कटे।
शंभुर्येन कपालपाणिपुटको भिक्षाटनं सेवते
सूर्यो भ्राम्यति नित्यमेव गगने तस्मै नमः कर्मणे।।

मणिप्रवाल शैली का भाषा-श्लोक है—

''जयिक्केणम् भवाने ट्टंक्षयिक्केणम् विपत्तुते
नशिक्क तव शत्रुक्कळ् नयं साधिक्क भूपते।।''

ञानु-मच्छनु मोतीला मुत्तच्छनुमते पुनः।
नालामच्छनु पुण्याहं पातियोळं सलक्षणम्।

उपदंशपदे तिष्ठन् पुरायं शिग्रुपल्लवः,
इदानीमोदनस्यापि धुरमुद्वोढुमीहते।।

विवाद के कुछ श्लोकः—

विवादो नैव कर्तव्यः कर्तव्यश्चेत् समेन हि।
असमानविवादेन लघुतैवोपजायते।।

मार्गे सत्रे नदीमध्ये केळीनाञ्च पराजये।
परराष्ट्रे परगृहे विवादं नाचरेद् बुधः।।

किटप्पवट्टे किटयातवट्टोटणच्चु कोण्डेट्टमनन्वितानि।
पदानि तान् मूरिक लेक्कणक्के कविक्करिङ्क्य्यर चमटक्कयन्ति।।

कविता वनिता चैव स्वयमेवागता वरा।
बलादाकृष्यमाणा चेत् सरसा विरसा भवेत्।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitization by eGangotri

युधिष्ठिराद्या राजानः मातृन् घ्नन्ति पितृन् घ्नन्ति।
त्वं पुनर्मशकमपि न हन्येथ जघन्येथ।।

कथमरियाण्टिह केचित् कथयन्ति कथां कवित्वमाप्तुमहो?
संकरमाकुंवण्णं शङ्काहीनं बुधेन्द्रजनसदसि।।

पाञ्चालीं दशकन्धरो नृपसभे चक्रे विकृष्टाम्बरां
भीमस्तत्परिरक्षणार्थमकरोत् सेतुं बदर्याश्रमे।

नाराचैश्च घटोत्कचं निहतवान् रोषाकुलो राघवः
साकेतं प्रययौ सुयोधन इति प्रायेण रामायणम्।।
प्रासमेव प्रमाणं हि पद्य-निर्माणकर्मणि।
तत्र घोषाक्षरं चेद्वा चित्रं श्रोत्रसुखावहम्।।

पायात्सत्सरणो रणो रणरणो राणो रणो रावणो
रक्ता येन रमा रमा रम रमा रामा रमा सारमा।
साश्रीरुद्वदयो दयो दयदयो दायो दयो वेदयो
विष्णुर्जिष्णुरभीरभीरभिरभीराभीरभीभीरभी।।

सा कविता सा वनिता यस्याः श्रवणेन दर्शनेनापि।
कविहृदयं युवहृदयं सरलं तरळं च सत्वरं भवति।।

कोत्तेनोलेण मोरो पद मिटयिल् नरुं पालिल् नीरेन्न पोले।
च्चेर्त्तीटेणं विशेषच्चतिललित मलङ्कार मुण्टाय्वरेणम्।।

वेर्कुं पिन्नर्थमोर्ताल् निरुपमरुचि तोन्नेणमेन्नित्रवन्ने।
तीर्तीटाबू शिलोकं शिव शिव, कवितारी वैषम्यमत्रे।।

वीर्क्कुं वियर्क्कु हृदयं विरक्कुं मुखं केटुं वा वरळुं विशेषात्।
पुरप्पेटा वाक्क् सभा प्रभावात् एनिक्कु चोल्लानरुते शिलोकम्।।

नाषिभिरुरिभिरुषक्भिः पाति मणद्भिः तथैव चपलरिभिः।
यत्रमनोरथमुटने सिद्ध्यति तस्यै नमो नमः चक्कयै।।

पोकुन्नवन्नु निजशोकनिवेदनोत्था,
हर्षाश्रुतामुपगता हिवरुन्नवन्न्।

वेण्टुन्नवण्ण मुदिता मदनातुरान् वो,
रक्षन्तु वेशवनिता नयनाम्बुधाराः।।

करुणाकरपार्वत्योः मध्ये कातरतां गतः।
कण्ठसंस्थापितगरः पातु वः परमेश्वरः।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शिक्षा-रक्षणदक्षो रक्षोऽमरसंघयोः सदा भगवन्।
अक्षतमङ्गलदायी रक्षतु वो भवभयात् स लक्ष्मीशः।।

येन ध्वस्तमनोभवेन बलिजित्कायः पुरा स्त्रीकृतो
यश्चोद्वृत्तभुजङ्गहारवलयो गङ्गां च यो धारयन्।
यस्याहुः शशिमच्छिरो हर इति स्तुत्यञ्च नामामरैः
पायात्स स्वयमन्धकक्षयकरः त्वां सर्वदोमाधवः।।

विनोद के कुछ श्लोक—

वक्त्राम्भोजात् कदाचिन्नहि कमलभुवा मुच्यते भारती सा
वक्षःपीठेन धत्ते स हि मधुमथनः कन्यकामम्बुराशेः।
देवः कन्दर्पवैरी शिव! शिवया संविभक्तार्धगात्रः।
सुत्राम्णे स्वस्ति वाचा जगति विजयते मान्मथोऽयं विलासः।।

आमन्त्रणं ब्राह्मणानां हि धर्मः सेवा राज्ञामर्थमूलं नराणाम्।
वेश्यास्त्रीषु प्राप्तिरेवात्र कामः भूयस्तासां वञ्चनं मोक्षहेतुः।।

क्रीडा वारवधूजनैर्वरगुणैः तेषां ततो वञ्चनं
यत्र क्वापि समेत्य भोजनविधिश्चाकण्ठमामन्त्रणे।
भूयः श्री-बल-शालिनां कृतधियां राज्ञां च संसेवनं
चत्वारीति विदूषकस्य चतुरैरुक्तानि कृत्यानि हि।।

दाररतिस्सन्तत्यै कण्डूतिशमाय चेटिकागमनम्।
तच्च हि सुरतं सुरतं कृच्छ्राल्लब्धं यदन्यवनितासु।।

अर्थानर्थग्रहणविहतिप्रेप्सया वा यशो वा
सौजन्यं वा प्रथयितुमियं नूनमन्यैस्सहास्ते।
मय्येकस्मिन् मदनविवशा लीयते व्याजवर्ज्यं
मुग्धेत्येवं प्रतिकमितृ या वर्तते सैव वेश्या।।

अति दीर्घा अति ह्रस्वा यातिस्थूला भृशं कृशा।
अति गौरी भृशं काली षडेता वर्जिताः स्त्रियः।।

कष्टां कष्टान्ववायां कलहकलुषितां मार्गदृष्टामदृष्टा-
मन्यासक्तामसक्तामतिविपुलकृशांगीमतिह्रस्वदीर्घाम्।
रोगार्तां भोगलोलां प्रतिपुरुषचलां राजकान्तामकान्तां
काकाक्षीमेकजारां गृहकुसुमयुतां न स्पृशेदिन्दिराक्षीम्।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वित्तार्थिनी विशरणा विपरिछदार्ता तीर्थोपमा परवशा परिहास्-पात्री।
नित्य-प्रसूरमधुरा स्ववयो-विरुद्धेत्येता दश प्रणयिनां परिवर्जनीयाः।।

पत्तच्चवङ्ङु पटिप्पुरक्कु पुरमे निल्पानकं पूकुवा
नेट्टानक्कळभानकत्तोरुपदं वेप्पान् सुवर्णाचलम्।
मट्टेक्काल्क् सुरद्रुमं पुणरुवान् विश्वं तरेणं नमुक्कित्थं
चोन्ननतांगि मारोटणमुन्नोर्केयुष बद्धाञ्जलिः।।

नन्नाय् विळक्क् तिरुनेद्यघृताभिवेकं
कूत्तोत् नन्नोत्त पाट्ट तिरुवुत्सवमेन्नितेल्लाम्।

माट्टिक्कळञ्ञु निजसन्तलिए क्केटुप्पा,
नूराळरेन्नु चित्र राक्षसर सञ्चरन्ति।।

अनुदिन पितृपूजा भोजने वन्नु वीङ्ङुं,
वलिय वयरेटुप्पान् वेच्च चुमनाटु पोले।
पुषुकिन मटिवट्टं ताङ्ङि् मन्दं करं को
ण्टपिचुटु चटं गोट्टुच्चकैरु च्वन् सः।।

शान्तिं द्विजः प्रकुरुते बहु दीपशान्तिं
पक्वाज्यपायसगुळैः जठराग्निशान्तिम्।
तत्रत्यबालवनिता मदनार्तिशान्तिं
कालक्रमेण परमेश्वर शक्तिशान्तिम्।।

वरुन्न नेल्लुं पणवुं देवनोटाक्रमिक्कयाल्।
एल्ला जनंगळुं नन्नाय् चोल्लुन्न् समुदायमाय्।।

वषिवाट्टरि पाट्टरिक्कळन्नि ट्टतिनालेत्तिय कुष्ठभग्न देहः
उरिमात्रमवन् निवेद्यमाक्कुं पुतुवाळ् मूत्तवरेन्नु युक्तरेफम्।
मट्टु-ळळ देवा भुवि पोन्नावारे विषादमायीकमलासनन्न्
अवरे क्केटुप्पानिवरे चमच्चू इवर्क्कु पेरुं पुतुवळितेन्न्।।

ओङ्ङ-ण्णम् पषमाल मान्तोलि मरप्पूळेन्निते भूषणं
मञ्च च्चुन्नि, चिरट्ट, चाण पोळितोल् ताळं, कुक्काल् मुरि।
एल्लां केट्टियेटुक्कुमां मुतुभटन् तान् नंबियार नंङ्ङया-
रित्येतैः सह दीनवृत्तिरिह पोन्नायाति शैलूषकः।।

अंगं तन्ने मृदंगमाक्कि नितरां कैवीच्च कोण्टुच्चकै
रंग श्रीयेळुताक्कि माट्टुतुणियुं नङ्क्कुटुंबं बहन्।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भंगिक्काय तमिष् चेर्त्त पुस्तकवरं कैकोण्टु कक्षान्तरे
संगीतार्थ-महो समाहित-मति स्तन्नम्बियार वन्निता।।

वेदं पठन् पुस्तकदत्तदृष्टिः पूषारोयमायाति भटार्चितांघ्रिः।
अन्तं निरञ्चिट्ट पुरत्तु निर्यत् ब्रह्ममेव तोन्नुन्न सितोर्ध्वपुण्ड्रः।।

पूक्कोट्टयुं नल्लोरु किण्टि पुल्लुं माल् केट्टुमारङ्ङवनुच्चयोळम्।
माल केट्ट तीर्नालोरु विप्रभावं काट्टुन्नवन् पुष्पकनभ्युपैति।।

पेण वा पुमान् वायस संविभागी माप्रः करीभ्यां खलु मृष्टभोजी।
जाया प्रदानात् द्विजलालनीयः श्वकाष्ठवारी खलु वारियोसौ।।

वञ्चनम् के कुछ श्लोकः—

मौलौ किन्नु महेश. मानिनि जलं किं वक्त्रमम्भोरुहं
किं नीलाळकवेणिका, भ्रमरिका किं भ्रूलते वीचिका।
नेत्रे किं शफरी, किमु स्तनयुगं, प्रेङ्खद्रथांग-द्वयं
साशङ्कामिति वञ्चयन् गिरिसुतां गंगाधरः पातु वः।।

मुखं श्लेष्मागारं तदपि च शशाङ्केन तुलितं
स्तनौ मांसग्रंथी, कनककलशावित्युपमितौ।
शकृन्मूत्रक्लिन्नं करिवरशिरस्पर्द्धि जघनं
मुहुर्निन्द्यं रूपं कविजनवचोभिर्नुतिपदम्।।

सुन्दर! परिहर दूरं गणिकाजनेन सहवासम्।
रजकशिलातलसदृशम् तासां वदनं तथैव जघनं च।।

मारितोत्तानमण्डूकदारितोदरसन्निभे।
क्लेदिनि स्त्रीव्रणे सक्तिरकृमेः कस्य जायते।।

मांसखण्डं द्विधा भिन्नं अपानोगारि धूपितम्।
वस्त्रेणाच्छादनं नो चेत् मक्षिकाणां महोत्सवम्।।

आलोके हरते दृष्टिमालापे हरते मनः।
संभोगे हरते प्राणान् नारी प्रत्यक्षराक्षसी।।

दन्तांशुकं दर्शयित्वा रञ्जयित्वा च लोचने।
वाचं शर्करदां चोक्त्वा वञ्चयन्ति नरं स्त्रियः।।

अशनम् के कुछ श्लोक—

यस्यासौ प्रातराशाय धनेशोपि न शक्नुयात्।
अपरिच्छेद्यरूपं तं गणेश्वरमुपास्महे।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सम्यक्प्रजापालनजागरूकः सर्वप्रियः क्षुद्रजनैरदृश्यः।
चतुर्विधामात्यरसानुकूलो जयत्यसावोदनभूमिपालः।।

वेण्ण-स्मेरमुखीं वरुत्तु वरळुं वृन्ताक-दन्तच्छदां
चेट्टोमन्मधुरक्करिस्तन भराम्म्लोपदंशोदरीम्।
केल्पार्नो रेरुमत्तयिर कटितटां चिंगंपषोरुद्वयीमेनां,
भुक्ति वधूं पिरिञ्जयि सखे लोकः कथं जीवति?

सरसविरसगेहं भोक्तुकामो न गच्छेद्विरससरसगेहं कष्टपक्षे प्रयातु।
विरसविरसगेहं माक्षुधापीडितोऽपि सरससरसगेहं यातु तापोपशान्त्यै।।

आयाता न च तण्डुलाः परिजनोप्यन्यत्र संप्रेषितः
सा याता पितृमन्दिरं वयमपि प्रायेण यात्रोन्मुखाः।
गन्तव्यं भवतान्यदीयभवनं भोक्तुं यदीच्छास्ति चेत्
नो चेदत्र वसुन्धरैव भवतस्तल्पाय कल्पिष्यताम्।।

आयाते तु तिरोहिते यदि भवे दृष्टोन्यकार्यत्वरो
व्याजस्मेरमुखो विषण्णवदनः स्वक्लेशवादी मुहुः।
अन्तर्वेश्म निवासमिच्छति सदा व्याजेन दूरं गतो
भृत्यानामपराधजल्पनपरस्तन्मन्दिरं न व्रजेत्।।

मार्जारको महाप्राज्ञः श्मश्रुराजिविराजितः।
पञ्चास्यगुरुरप्येष क्षुत्पिपासार्दितो भवान्।।

मीशया शोभते मोन्त मोन्तया मीशयुं तथा।
मीशया मोन्तया चैव भवानेट्टम् विराजते।।

पुकतट किन चोरुं पुत्तुरु क्कोणृ नेय्युं।
पुष्षुकिन बृहतीनां पूवलुं नालुमूर्न्।।

पुतिय तयिरु मुच्चै रुण्णि मांगाया् मेल्लाम्।
पुलरिल् विरविल् नलूकुन्नम्मर्माकायी नमोस्तु।।

उरुट्टी ट्टम्मतन् कम्याल् तरुन्नोरुरुरळक्कु आन्।
विरुणिप्वेन् विशेषिच्चुं चेरुप्पं पोयता किलुम्।।

अटक्कमेल्लाक्करियुं चमच्चिट्टटक्कमयिट्टु, वटिक्किनीयिल्।
अटुक्कळ श्राद्ध मतुण्टु कोण्टाल् अटुक्कलेत्तुं सुखमेन्तु चोलव्।।

चात्तं चोरुण् पिरन्नाळ चविळमुपनयं प्राम्मरुट्टेवमादीन्।
प्रार्थिक्कुन्निल्ल भोक्तुं विरविनोटु यथा प्राप्तवस्तूपजातम्।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

काले सूक्षिच्चु नन्नायुपचित विभवाक्रान्त गेहान्तराळे।
पन्त्रण्टाम्मास-मेङ्किल् पेरिकवाषिनटन्नुं भुजिक्केण मल्लो।।

पन्त्रण्टाम्मास मेन्नुळ्ळ मन्त्रं पञ्चाक्षरं परम्।
मन्त्रवुं तन्त्रवुं वेण्टा मन्त्रिच्चाक् तन्ने सौख्यमाम्।।

चात्तं चोरुणुमित्यादि भोजनं न तु भोजनम्।
तदेव भोजनं मन्ये पन्त्रण्टाम्मासभोजनम्।।

आसन्नसन्ध्यमवलोकितनीचवर्ग-
मभ्यर्णपङ्कमसिताभमनाज्यसिक्तम्।
उद्विग्नकर्तृकमनुष्णमगोरसार्द्र—
मन्धो भवत्यरुचयेप्यमृतोपमानम्।।

मच्चुं माळिकयुं निरञ्ञ पणवुं पात्रंगळ् भण्डारबुं
मुट्टुं क्ष्मापतियोटु चेर्न्न धनिकन् तन्मान्ययामम्मतन्।
अच्छन् तान् सहसा मरिच्चु विरविल् संवत्सरान्ते नृणा-
मिच्छापूर्ति वरुत्तुवान् तुनियुमां मासं भुजिच्चीटणम्।।

मण्णारत्तुरयिल् श्मशान पृथिवीलारोहण क्षोणियिल्
कैकोट्टुन्न निलत्तु तच्च भवने प्यालोक्य वासांसि च।
धूमालोकनवुं वेळुत्त पलकाजालंगळ् मासोत्सवभ्रान्त्या
हन्त, निवृत्य यान्ति च पुनः केप्यूणिनः पश्यताम्।।

पुकयन्ति पुराः पचन्ति केचित् पुनरन्ये पुटवाश्च तूक्कयन्ति।
करयन्ति कळिच्चु निन्नु काकाः यदनेनालपेन मास एषः।।

अट्टोन्नु तल्लि तलतम्मिलुच्चैः पेट्टोन्नकं पुक्कु पटिप्पुरायाम्
मृष्टाशनायाखिल भूसुराणामोट्टल्ल घोषं प्रळयाब्धिपोले।

समागतानामखिलद्विजानां मृष्टाशनं स्यादिति किंवदन्तीम्।
आकर्ण्य काका द्विजनामयोगात् मासे प्रयान्तीव महाजनेन।।

उत्सारितास्तत्र समस्तलोकैर्विमृश्य चान्योन्यममी वदन्ति।
का भूसुराणां द्विजता ऽ स्मदीया काकेति नामापि रुतच्छलेन।।

काष्चक्कळ् वेच्चुमेट्टुत्तुं कण्टुं तोषुत्तुं नटन्नु भटकीर्णा।
दीक्षितभवनपुरो भूरीक्षणसुभगो नितान्तमाभाति।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पूवट्टक-सन्निभया तरुलतया शोभमानशिराः।
श्मश्रु-विराजित-वदनो महोदरो दीक्षितोयमाभाति।।

इटं पिटिक्कुन्नितु केचिदन्ये पटं मुलं वेच्चिट्ट विक्कयन्ति।
तुटङ्ङयन्ते चिलरेण्णतैन्ते चिलरुपिरान्तु।।

तुटंगयन्ते चिलरेण्णतेप्वानु-रङ्ङयन्ते चिलरूण्-पिरासुः।
पळिळप्पेट्टु वटिच्चुरुण्टु पुकषप्पेट्टूळ नेन्त्र क्कुल।
क्कूट्टं केट्टिन्न तेण्टिका निवह खिन्नां सैरसंख्यैर्भटैः।।

तेङ्ङाक्कोट्ट चुमन्निटुं निजगळप्रोलिन्न नानाजनै—

आकीर्णं पुरतो विभाति भवनं मासोत्सव-स्वामिनः
गुळगुळिकातैलाद्यैः पूरितभरणीन् विलोक्य सखे।
मम कौतुकमुत्पन्नं माससमृद्धिर्न हीदृशी क्वापि।।
मासे प्रत्यासन्ने स्वानां नाशं निरूप्य वेदनया।
उद्बन्धनमाचरितं नूनं वाष़प्पष़क्कुलाभिरिह।।

कैलासो वज्रिभयात् पष़यरि निवहछलेन कलवुरयिल्।
कूष्माण्डवेषधारी स्वसुतैः परिवेष्टितशिशवश्शेते।।

पायिल् कुन्निच्चीटुं बालप्पयरोर्त्तु काणकिललार्यम्।
मरकतशैलश्शेते भूमाविव वज्रमेट्टु मूर्छनया।।

वाषक्काप्पन्ति मोर्पाळकळ् विविध पषक्कूट्ट मुच्चेर्त्तुतात्ति
त्तूक्कि केट्टुं तयिरप्पाळकळ् मुषुवनिवट्टाल् विकीर्णोर्ध्वभागः।

तैलादि-द्रव्य-सम्पूरित-भरणि-घट-द्रोणि-कुम्भादि-पात्रैः
पूर्णा ताषत्तु मास क्कलवुर पुरतो दृश्यते विश्ववन्द्या।।

अरीनरिच्चिट्टिह वेक्कयन्ति।
करीन् तिकञ्चिट्टिह वांगयन्ति।।
तेंगा मुरिच्चिट्टु चिरक्कयन्ति वरक्कुवान् मूल्य मिळक्कयन्ति।।

चोट्टुंकुन्न-त्युदग्रं कुट्टचन चिरवच्चवक्कुमन्यत्रतेंगा-
च्चक्कंङन्यत्र नानाजनपतनहसन्मानुषाक्षेपरम्यम्।

ईट्टिक्कूटुं घटं पात्तिकळ् करिकळोरु भागत्त् कुत्रापि कोणे
पाटीरं वेष्टि बालद्विजकुल माखिळं भ्राजते पाकशाला।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चिरच्च तेंगा क्कुन्निन्मेल् नृत्तमाटुन्नु मे मनम्
यथा कैलासशिखरे भगवान् परमेश्वरः।।

वरच्चुं मुण्ट्वरिच्चिट्टुमिषच्चुं काल्मटम्पिनाल्।
स्थलं पिटिच्चू विप्रन्मार् अलंभावं विना सखे।

कारेळ्ळुनन्नाय कषु की ट्टुणक्कि
कोरीट्टु चक्किल् पुनरिट्टरञ्ञाल्।

नीरल्पमाय् वीत्ति ये टुत्तोरेण्ण—
क्केट्टं कोतिक्कुन्नितु गात्रमेण्टे।।

एण्ण पार्नु तरेणं मे पोन्नुं किण्णत्तिलादरात्।
अल्लाय्किल् मासमत्यन्तं नन्नल्लेन्नितु घोषमाम्।।

कुत्तिक्कुषिच्चु सुखमे चिल कल्लु कोण्टु
केट्टिप्पटुत्त पटवुं ते-ळिवुळ नीरुम्।
कण्टाल् कु ळिच्चु करकेरुव तिन्नु नून—
मुण्टाक्कुवानितु चमच्चतोरेतु धन्यन्।।

नेन्मेनिवाकत्तरि वेर पेट्टुत्तु
कन्मेलुश्च्चप्पतकोण्टु तेच्चाल्।

अम्मेनि काण्मानमराधिपन्नुं
कण्णेन्नु पोरा कळियोल्ल चोल्लाम्।।

ओटिच्चु कोळू चरतिच्चु वेट्टियुं
वेकुत्तताणेङ्किलतेरे नन्न्—।

ओरच्चु कोळ्ळू कटवोत्त पारमेल्
मिषुक्कुपों तानति शीतळञ्ञ।।

कल्लोलङ्ङ ळललच्चेट्टं वल्लुतायुळ वेळ्ळवुम्
नल्लोरू कल्लुं कटवुमिल्लाय्किल् कुळियिल्ल मे।।

नेन्मेनि वाक प्योटि कोण्टु वेणं
नन्मेनि वेण्टुन्नवर् तेच्चुकोळ्वान्।

इम्मेलिलिट्टिट्टतु तेच्चु कोण्टाल्
पोन्मेनिपोले योरु शोभ तोन्नुम्।।

ताळि तन्नु सुखमे मिषुक्कु पों
वारि शीतल मतीव निर्मलम्।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वारिजाक्षि कुळिर कोङ्ङ पुलकुवान्
पोरुवन्नु कुळियिन्नु मादृशाम्।।

वेळुक्कलक्कि चरतिच्चु नाम्मोळं
मुरिच्चु वेव्वेरे मटक्कि वेच्च्।

कुळिच्चु केटित्तलयुं तुकर्तिना
लओटुक्क मिल्लिन्नितिनुळ्ळ सौख्यम्।

पतिनारु मुषं वेणं पुटवक्किट मारु चाण्।
हितमायतुटुत्तीटिल् पुरहूतनहं भुवि।।

कुडप्पुरत्तु विन्यस्तवास्तवस्त्रा शतसहस्रशः।
अणिनो हन्त सम्भ्रान्ताः प्रविशन्ति हन्त नटुम्बुराम्।।

यात्राढ्या यात्रविद्वांसो यात्राभाण्डः प्रतिष्ठितः।
तत्र तत्र तु न स्थेयं मन्दकोणं च वर्जयेत्।।

अरियिल्लरू तिरिप्पन् नलवेलिचत्तु वेणम्
मरयिल्लसतिनिक्को निम्नवुं कुन्नु मवा।

परक, परक चोल्लां केळिटत्तुं वलत्तुम्
इरिवर सरसर वेणं भोजनं मृष्टमांवान्।।

वेट्टिप्पालमरं पोळिच्चु वटिविल् चेत्तिच्चुचन्द्रोज्जवल-
स्तंभान् नाट्टि विधाय चूप्रिककळुं मीते मुकन्तायुवम्।
ओक्के क्कोर्त्तु विशालमायुवचितैः केट्टट्टि चुट्टुम् मर-
च्चीटुन्न् चिल भुक्ति शाल कळहो नेत्रोत्सवं तन्वते।।

नीळं कोलालो रिक्कोलु यरमतिनरच्चाण, रक्कोल् परप्पाय
चाले कल्पिच्चु चेत्तिच्चतिने मिनुमिनिप्पिच्चु कण्णाटिपो-ले।
कण्टाल् पोय्वेन्निरिप्पान् मनसिकोति मुषुक्कुं प्रकारं निनच्चि-
ट्टुण्टाक्कुं नल्ल कुमषिन पलक तरुमवर्केष ञान् कैतोषुन्नेन्।।

करुमुर यरयाते नन्म नेर्पिच्चरच्चुं
परिमळ भरमिश्रं चन्दनं किञ्चिदार्द्रम्।
ओरुवनुरियिलेट्टं कोळ्ळुमोट त्तिलाक्कि-
त्तरिकिलवनिलल्लो मादृशां पक्षपातम्।।

चन्तत्तिल् कोण्टु पोन्नीटुक सरस, भवानन्तिके मे नितान्तं
सन्तोषं पूण्टुमम्मा परिमळमियलुं चान्तेटो लोभनीयम्।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

एन्तोष्ठा, हन्त चोल्लामपगतकपटं चान्तुकुत्ताय्किलेल्लाम्
पन्त्रण्टाम्मास घोषं निखिलपि न साफल्यमायाति नूनम्।।

कुण्डलालंकृतम्माराय् कुण्डिका मुद्धरिच्चुटन्।
मण्डलं मिषुकिन्निप्पोळ् कण्णिनन्नानन्द मेत्रयुम्।।

नाक्किन्नोरू मटल् ताषे काक्क करेरात्त तूशनाकृष्य।
एट्टं खड्गभुयर्त्ति खण्डिच्चोरेल कोति तिच्चु चावेन् आन्।।

इलवेच्चालतिवेगात् जलवुमेटुत्तङ्ङुपस्तरिच्च्।
कदंळिप्पषवुं शर्करयुं मुम्पे विळम्पण-मितु शास्त्रम्।।

वेळिळपोले वेळुत्तोरु वेळ्ळं मुम्पिल् तळिक्केटो।
उळ्ळंनन्नाय् तेळिञ्जिट्टु कत्तिक्काळुन्नु मे कोति।।

आषे कुषिच्चु कुषि चुट्टोरु वाष वेच्चा-
लेषेट्टु पत्तु पटलक्कु - विरोधमिल्ल।
नालञ्चु नाळिलकमे कनिविलू पषुत्त्
वाषप्पषं कदळि कोण्ट्ओरिकञ्चु मून्न्।।

तोटुवान् तुनि युन्नेरं पुटियुन्नोरु शर्कर।
इटुवान मटियिल्लात्तोर्किटुवन् वळ कैक्कु आन्।।
तुम्पप्पूवेन्तिलयिलिटुवानेन्नु सन्देह मुळ्ळिल,
तळिलच्चीटुं धवळतकलर्न्नञ्चितं किञ्चिदुष्णम्।

संभाविच्चेन् परमष्ठकताय् चोरु तन्नोकर्कु नित्य
कुम्पिट्टालेन्तोरु कुरव् अवर्क्केंट्ट मुण्टीश्वरत्वम्।।

भद्रमाय् पुत्तुरुक्कुं नेय् पत्तुकैल् कोण्टुपोरिक।
पोट्टल्ल् परयुन्निप्पोळ् पुत्रन् पत्तुळवां तव।।

अलच्चलच्चङ्ङु चिलच्चुवेन्त नेय्
कलत्तिनोटे कमिषे च्चेरिञ्ञाल्।
कुषच्चु पोत्तीट्टु मुरच्चु नोक्कियाल्
कुटिक्कु नीरिन्नुट नावलाति—।।

अटुत्तु चोरु काणुम्पोळ् अटङ्ङा मम मानसम्।
कुटुक्कुनीर् वराताकिलटुक्कुमतु पिन्नेयाम्।।

ञेट्टट्टीटिन वेळरिक्क यिळवन् वन्चेनयुं कूर्क्कयुं
पोट्टिच्चिट्ट पयट्टु चक्कु वळरे पतञ्चु नेगलुम्।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हृष्टश्रीमणि नल् चरक्किल् विरविल् पालिच्चुवेच्चादरात्
अष्टिक्कद्धु मेरिच्च करि कोण्ट्वा सके कूट्टुवान्।।

चेलोटिळन् वषुतिनङ्ङ परिच्चु नन्नाय्
नालाय् पोळिच्चु नटुवे च्चेरुताय्नुरुक्कि।
आलोल नील मिषिमारतु वेच्चु तन्नाल्
ओलोल नोन्नु मतियेन्तिनु नूरु कुट्टम्।।

वडुकपुल्लि नारंगा वटिवोटे – चमच्चत्।
कटुकाल् कोण्टु सरसं अटुके कोण्टुपोरिक।।

चेरुतायुळ्ळ नारङ्ङा करिवेच्चालतिन् गुणम्।
परयान् पणियुण्टेट्ट मुरगादिपनेङ्किलुभ्।।

विरिञ्ञतञ्ञं पतिनञ्ञु मञ्ञं
कषिञ्ञनाळे कयरि प्परिच्च्।
व्रणप्पेटुत्तीट्टतिलुप्पु चेर्त्ताल्
चिरट्टमाङ्ङक्केतिरिल्ल पार्त्ताल्।।

मूत्तमाङ्ङ करिवेच्चु कूट्टुवान् आर्तिपूण्टु मरुवुन्नु वासवन्।
धूर्तनेङ्किलुमतिन्नु कूट्टुकिल् तीर्तिटां मम जरानरामयम्।।

पुळियिञ्चि निनय्कुम्पोल् कळियाटुन्नु मे कोति।
कळियल्लितु कूट्टाय् किल् प्रळयान्तं मरिच्चिटा।।

नेल्लिक्क नन्नाय् करिवेच्चु तन्नाल्
चोल्लित्तरा मिन्नतिनालनेकम्।

कल्याण मुण्टामतुमल्ल पार्त्ताल्
इल्लातयायीटुमवन्नु जन्मम्।।

पञ्चसारये नेञ्चाक्कुं वञ्चिक्कुममृतिन् मदम्।
अञ्चितं कटुकालेट्ट मिञ्चत्तैर कोण्टु पोरिक।।

वाषक्कायुं वलिय पयरुं कूर्क्कयु पाल् किषङ्ङुम्
कूट्टितेङ्ङा मुळकुलवणं काय मेन्नेव मादीन्।
कूट्टीट्टुण्टां वलिय करि ताम् वन्नु चोरे मिषुक्कि
तानेयावान् हृदि करुतिनेन् भुंक्तिसाम्राज्यमल्लो।।

कादळं तोलि कळञ्ञु नुरुक्कि नन्ना-
युप्पोट्टु चेर्त्तु विरवोटु वरु त्तु नेय्यिल्।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मैक्काण्णिमार सरस मायुटने वरुत्तो—
रुप्पेरि कोण्ट्वरिक सम्प्राति वेण्टुवोळम्।।

पनसच्चोळ वटिवोटे सरसन्मार वरुत्तत्।
विलसुं पत्रकोणेषु तरसा कोण्टु पोरिक।।

वन् चेन वन्नाय चेरुताय् नुरुक्कि
प्रक्षाळ्य भूयो लवणाबु मिश्रम्।
आज्यत्तिलिट्टिट्टतु वेन्तुवेन्नाल्
वरुत्त चेनक्के तिरिल्ल पार्त्ताल्।।

तेन पषं माम्पषं नल्ल पाल्गुळं पञ्चसारयुम्।
तेम्पिच्चोमल् प्रभावेन चेम्पुप्पेरि विलंबुक।।

कूर्कमूलं वरुत्तिट्टु पार्कति तरिकिल् तोषाम्।
ओर्किलिन्नवने स्नेहं नीक्कमिल्लोरु कालवुम्।।

पाटत्तिन् करे नीळे नील निरमाय वेलिक्कोराघोषमाया-
टित्तूङ्गियुलञ्ञलञ्ञु सुकृतं कैकोण्टु निल्कुं विधौ।

पाराते वरिकेण्टे कय्यिलधुना पीयूषडंभीन्नेयुं
भेदिच्चम्पोटु कय्यवळ्ळि तरसा पेट्टुळ्ळ पैतङ्गले।।

भुरिङ्ङ तेङ्ङयुं नन्नाय् अरिञ्ञने वरुत्तत्।
तेरुन्नने वरुत्तेणं मरुन्निद मरोचके।।

न बीजसाध्यं न कृषिप्रसूतं न राजभोग्यं न पशूपघातम्।
निष्किञ्चनानामुपजीवनार्थं पुन्नाटकं कल्पितवान् विधाता।।

बृहत्यश्च युवत्यश्च सर्वांगमधुरा अपि
विशेषतोऽतिमधुरा वृन्तमूलोरुमूलयोः।।

किराततिक्ततिक्तत्वं भूषणं न तु दूषणम्।
उपदंशपदे प्राप्ते सुरते ताडनं यथा।।

चिरच्च काळिक्कायेत्तान् नुरुक्कीट्टाज्य संयुतम्।
वरट्टु मुप्पुकरिये मरप्पेनिल्लोरिक्कलुम्।।

ओट्टोट्टुमूत्त कदलिक्कुल वेट्टि नन्नाय् वट्टत्तिल् मून्नु लवणांबुनि वेन्तुवेन्नाल्।
पेहट्टेन्नु नेय्यिलषकोटुटनिट्टुलर्तिक्किकट्टुन्नताकिल् अवनायतमायुरस्तु।।

चक्क मूप्पिळयतुप्पिल् वेन्तुटनिटिच्चुनल्ल मुळकुं तळि—
च्चोक्के नेय्यिलुलरुक्कुम्पो वेण भषकोटु तेंग वितरीटुवान्।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तक्कमोट्टु पुतुजीरकं चेरुत्तु पार्त्तु चेर्त्तु कुटुकं वरुत्ताक्क
मोटिल यिलाक्कुवोर्क्कु तरुवन् तदैव तरिकङ्कणम्।।

नेन्त्रक्काय् नालु कीरिप्पुनरत्तु चतुराकार खण्डं नुरुक्कि-
च्चन्तत्तिल् चारु मोरिल् करयुमथ कळञ्ञुष्ण तोये पचिच्च्।

भूयो नेय्यिल् वरुत्तिट्टषकोट्टु गुळवुं जीरकं चुक्कुमेल्लां
कूट्टिच्चेर्त्तङ्ङु वेच्चालमृतिनु सममां शर्क्करुप्पेरि कोण्टवा।।

अमृतुण्टेन्नु चोल्लुन्नू वनिताधर पल्लवे।
स्वर्गत्तिलुण्टु पोलेन्नुं मे मतिः पञ्चसारयिलू।।

अप्पप्पा पषभायतं कोटिममरं तीक्कीं · पुनक्कप्पलिल्
कल्पिक्कां चिल पामरंगमतियां पालत्तिनां मोयिला।
इप्प क्वंगल् विळबिपयाल् कलशला मुच्छिष्ट मोन्निक्कुमे-
न्नल्पत्वेन मुरिच्चु चेण्टमुरियेन्निप्पेरुमिट्टू सखे!।।

एणाङ्ङ मण्डलं पोले चेणार्न्नीटिन पप्पटम्।
उनणिन्नुकालामाकुम्पोल् वेणं काच्चि विलंबुवान्।।

शिल्पत्तिल् सर्पिषा काच्ची—ञेरु ञेरुत्तव।
पप्पटंगल् वरुत्तेणं पप्पपट परयायेटो।।

एणाङ्क प्रतिमं तोषा पप्पटं कोण्टुपोरिक।
नालुवल्लं निरच्चिविट्टिङ्ङि टुकिल् काण्क विस्मयम्।।

कण्णन् पषक्कुलकळ काणुक काणुकच्चो
कण्णिन्नु जन्मफल मिन्निह वन्नु कूटि।
तिण्णम् विळम्पुकिलोरयूम्पत् तिन्नुकोळ्ळा—
मय्यो कोतिच्चु मरुवुन्नु मदीय जिह्वा।।

कण्णिन्नु कौतूहल मेट्टमुण्टां
वण्णन् पषं सम्प्रति वेण्टुवोळम्।
एण्णाते तन्नीटिलवर्क्कु नित्य—
मेण्णायिरत्तेट्टु नमस्करिक्काम्।।

नाषिप्रमाणं वळरुन्न वट्टा—
ले-षेट्टु पत्तिल् कुरयाते वेणम्।
कोषप्पेटाते कदलीफलानाम्
वाषप्पषं कि-ट्टुकिलिन्नुरङ्ङाम्।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इळिच्चवाया पोळि पाळतन्निल् पुळिंच्च कूट्टानिह कोण्टुवाटा
विळिच्चतोळोलनतोटुकूटिक्कळिच्चु तुळ्ळुन्नितु मानसं मे।।

अट तेंगा गुळं पालुं चेतरुं शुष्ठि जीरकम्।
अटप्पुकूट्टि वेन्तिट्टुळ्ळटक्करि तरेण मे।।

नेन्त्रप्पषं पुतिय शर्क्कर नल्ल तेङ्ङा
कान्तैरमीभिरिटचेर्नु कलर्नु नन्नाय्।

सान्द्री भविच्च मधुरक्करियाँ तटाके
नीन्तिन्तुटिच्च तु कुटिच्चु मरिप्पनो ञान्।

चेरु पयरु वरु तीट्टा दराल् कुत्तिनन्नाय्
पोटित पोटि तालीकळ् कळञ्ञि ट्टञ्ञसा मञ्जुवाण्या।
पुतिय धवळवेल्लं नल्ल पालुं पकर्नाल्
अमृतु मतिने वेल्लुं सूपनामग्रगण्यन्।।

नन्नाय् मूत्तुपषुत्तु ञङ्ङिन वरिक्कच्चक्क सूक्षिच्चु
मूर्न्नो त्तेङ्ङा गुळ शुण्ठि जीरक युतं पालिल् तिकर्नादराल्।
उण्टामम्धुरक्करिक्कु सदृशं पार्त्ताल पयोराशियिल्
पण्टुण्टाय सुधारसायन मोषिञ्ञोन्निल्ल चोल्लावत्।।

चाले पषुत्त कदळिप्पष मोन्निल् मूर्न्न्
पालिल् त्तिकत्ति विलसुं मधुरोपदंशम्।
नालञ्चुकोरिक नमुक्किटुमाकिलिप्पोळ
कालुं कवच्चुषरियुण्टोरु वेल पिन्ने।।

ओर्त्तेन पापि मरन्नुपोयितु संखे, पूवम्पषत्तोटु चे–
र्त्तामोद मुषुत्तुकोण्टु पचिता भोगं चमच्चादराल्।
माध्वीसोदर नाळिककेरपयसा सार्धं निरञ्ञीटुम-
प्पात्रं कूटे मिषुङ्ङुवोरु विरुणन् ञानेन्नरिञ्ञीटणम्।।

पाल् पायसं परिचिनोटि ह कोण्टुवन्नि–
ट्टल्पेतरं तरु मवर्कटनंगल् तीर्त्त्।
आकुन्न वण्ण मतिमात्र मनुग्रहिकक्का
माकल्पककालमवनायत भायुरस्तु।।

माहिषं दधि सारादायास्यति सिंह पक्वपरिवारः।
अम्लोपदंश भगवन्, गच्छ पवित्रेषु पत्रकोणेषु।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चोल्पेट्ट करिकलकेकल्लां केल्पु नल्कुन्न जीवितम्।
कर्पूर द्युति तोन्नीट्टुमुप्पल्पं कोण्ट वोरिक।।

नूरा यिरं करिककल् मट्टुलवाकिलुं केळ्
मोरिल्लयाकिलशनं चितमल्ल पार्त्तल्।
पूरायमल्ल परमुन्नतु काणकिलच्चो
नांरायणाय नम मोरिनु कैतोषुन्नेन्।।

स्वच्छं सज्जनचित्तवल्लघुतरं दीनार्तिवच्छीतळं
पुत्रालिङ्गनवत् स्वभावमधुरं बालस्य संजल्पवत्।
एलोशीरलवंगचन्दनमिलत्कर्पूरपारीमळम्
पाटल्युत्पलकेतकीसुरिभलं पानीयमानीयताम्।।

कुळिचतुरं कुरि सुभगं भोजनाश्चर्यमखिलमपि भद्रम्।
किमिह बहूक्तिभिरद्य भवतु भवद्गेहमासमुटन्।।

इन्नेटुंपुरयिल् तन्ने वरुं कोल्लवुमादराल्।
पन्त्रण्टाम्मासमुण्टावान् प्रार्थिक्कुन्नेन् निरन्तरम्।।

राजसेवा के कुछ श्लोक—

राजसेवा मनुष्याणामसिधारावलेहनम्।
पञ्चाननपरिष्वङ्गो व्याळीवदनचुम्बनम्।।

चेय्वानो पट काल नोटु नरके पोयचेन्नु वींपुं विधौ
चेयवानो परिरक्षणं परमोषिप्पानो पुनर्ज्जन्मताम्।
पोय्येप्पुञ्चिरियिट्टु पोय् पर कोषिञ्ञासेवकानां नृणां
कय्यिल् कैकमिषात्त मन्नवरे नामेन्तिन्नु सेवामहे।।

तट्टिक्कोट्टि क्कथमपि काषिक्कुन्न माटम्पि वीट्टिल्
पुक्किकट्टुच्चैः पकल् कषिवोळं पार्तिरुन्नर्धरात्रौ।
नेल्लुं कल्लुं ताविट्टु मुमियुं कूट्टि वेन्तिट्टिरिक्कु
पक्क प्राशास्तदनु तेरुवत्तय्यवुं नूरुकूरुम्।।

ओरुवण्णमियन्न पच्चनेल्भि
स्त्वरया ताडळुटन् वरत्तु कुत्ति।

करि ही नमत क्रकं कळत्रं
मुरिमाटम्पिकळ् मुन्न मूट्टयन्ति।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्तब्धो मौनान्मधुरवचसा बन्दितुल्यः प्रभूणां
युक्तायुक्तं हितमपि वदन् स्यान्नरो दुर्विदग्धः।
प्रेमन्यूनः प्रविरलगतिर्न्नित्यसेवी त्वमान्य-
स्सेवाधर्मः परमगहनो योगिनामप्यगम्यः।।

सा श्रीराश्रितमन्दिरेषु सततं दृश्येत या क्ष्माभृताम्
कीर्तिस्सा खलु किन्नरीगणमुखाम्भोजेषु या गीयते।
शौर्यं तत्परराष्ट्रमर्दनविधौ यन्निर्दयं वर्तते
स्वावासे स्वजनानने स्वविषये हास्यं तदेतत् त्रयम्।।

स्नात्वा ञरुत्त पुटवामेतिरे तुकर्ति
मीशा कुटुम्ब नख शिक्षण तल्पराणाम्।
पक्कक्किटार परिघट्टन चट्टुकत्तिन्
नादो मुदं दिशतु राजकुलाशिनां नः।।

अदातारं दातृप्रवरमवनीतं विनयिनं
विरूपं रूपाढ्यं विमतविजितं विश्वजयिनम्।
अकल्यं कल्यं त्वामहमवदमाशापरवशो
मृषावादो युक्तस्तव नृप मृषावादिनि मयि।।

नोच्छिन्नौ चरणौ न वा निगळितौ नैवोद्धृते चक्षुषी
जिह्वा मे नृपतिस्तुतिव्यसनिनी नैव त्वया दारिता।
आपृच्छे गमनाय जीवतु भवान् भूयात् पुनर्दर्शनम्
लाभोऽयं नृपमन्दिरेषु वसतामङ्गैःस्वकैर्निर्गमः।।

दातारो वाञ्छितानां समरविजयिनः सागरान्तां धरित्रीं
रक्षन्तः कीर्तिमन्तः खलकुलदळने हन्त नैर्घृण्यवन्तः।
कर्तारः सत्क्रियाणां नयनिपुणधियो विश्वमातुः कटाक्ष-
श्रेणीभृङ्गारविन्दायितनिजतनवः सेवनीया नरेन्द्राः।।

राजसेवा में जीमूतवाहन के सेवक बन जाने के श्लोक—

विद्याविद्योतमानो गुरुहितनिरतः स्थूललक्षाग्रगण्यः
पुण्यात्मा पुण्यकर्मप्रणिहितहृदयः शूर्पकारातिकान्तः।
लोकालोकान्तवर्ती प्रथिततरयशो धीरगम्भीरवृत्ती
राजा जीमूतकेतोस्सुत इति विदितो भासते भूतधात्र्याम्।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विक्रमाधारनृपते विजितारातिमण्डल!
चिरं जीव सुखं जीव समं जीव सुहृज्जनैः।।

लक्ष्मी कीर्तिः कृपाणीत्ययि तव दयितास्सन्ति राजेन्द्र! तिस्र—
स्तास्वेकापि क्षणार्धं निवसति न भवत्सन्निधौ कष्टमेतत्।
आद्या भात्याश्रितानां वसतिषु सततं मध्यमा दिक्षु धाव-
त्यन्त्या सा वीतशङ्कं विहरति विमतव्रातदोरन्तराले।।

क्षुत्तृडाशाः कुटुम्बिन्यो मयि जीवत्यनन्यगाः।
तासामन्त्या प्रियतमा तन्नियोगादिहागतः।।

पृथुकार्तस्वरपात्रं भूषितनिश्शेषपरिजनं राजन्।
विलसत्करेणुगहनं सम्प्रति सममावयोः सदनम्।।

अर्धं दानववैरिणा गिरिजया चार्धं शिवस्याहृतम्
देवेत्थं जगतीतटे स्मरहराभावे समुन्मीलति।
गङ्गा सागरमम्बरं शशिकला नागाधिपः क्ष्मातलं
सर्वज्ञत्वमधीश्वरत्वमगमत्त्वां मां च भिक्षाटनम्।।

महाराज श्रीमन्, जगति यशसा ते धवळिते
पयःपारावारं परमपुरुषोऽयं मृगयते।
कपर्दी कैलासं कुलिशभृदभौमं करिवरं
कलानाथं राहुः कमलभवनो हंसमधुना।।

इस प्रकार विदूषक के पुरुषार्थों मे से कुछ श्लोक यहाँ पर उदाहृत हैं।

विदूषक के प्रतिश्लोक

नाटकश्लोकों के बदले या उनके सीधे उल्टे कुछ श्लोक देशी भाषा मलयालम में विदूषक पढ़ा करता है। इनको प्रतिश्लोक कहते हैं। नाटक की चूर्णिकाओं के गद्यात्मक संवाद तथा भाषा-श्लोक भी विदूषक पढ़ा करते हैं। मूलश्लोकों के नीचे उनके विदूषक श्लोक हैं।

मूल—

शशिमणिशिला सेयं यस्यां विपाण्डरमाननं
करकिसलये कृत्वा वामे घनश्वसितोद्गमा।
चिरयति मयि व्यक्ताकूता मनाक् स्फुरितैर्भ्रुवो
र्न्नियमितमनोमन्युर्दृष्टा मया रुदती प्रिया।।

(नागानन्द दूसरा अङ्क)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उरलटिशिला सेयं यस्यां विजृम्भितमासनं
करपुटतले कृत्वा वामे बहिश्श्वसितोद्गमा।
चिरयति मयि व्यक्तोद्वेगा दुरुक्तिविकत्थनैर्
नियमितमनोमन्युर्दृष्टा मया रुदती प्रिया।।

मूल—

''निष्यन्दत इवानेन मुखचन्द्र मुखचन्द्रोदयेन ते।
रातद्बाष्पांबुनासिकान्त चन्द्रकान्तशिलातलम्।।
(नागानन्द दूसरा अंक)

नि न्नुटे मूक्कु जलत्तालिन्नेटं ननयुमोरुरत्तोहम्।
न न्नितु कण्टालिप्पोल् तोन्नुन्नेवंकिनाविल् मून्निच्चो।।

मूल—

भो। वयस्स, अधच्चककांपि णाम एव्वं आलिह दिति अच्छरीयम्।

छाया—

भो वयस्य, अप्रत्यक्षेऽपि नाम एवं आलिखतीत्याश्चर्यम्।
(नागानन्द दूसरा अंक)

इस नाटक-वाक्य का भाषाश्लोक—

प्रत्यक्षमिल्लात्तोरु वल्लभायाः प्रत्यंगमीवण्णमहो वरयक्कान्।
एन् तोषरेन्ये पुनरन्यनुण्टो सन्तोषराशे, बहुचित्रमेतत्।।

इसके लिए हास्यात्मक भाषा श्लोक-प्रतिश्लोक—

नमुककुं चिन्तिकिकल् चेरुमियुटे रूपं करालिव-
न्नुदिककुं नेल् कुत्तुन्नलविलुलवां वेर्प्पुजलवुम्।
करे कुट्टिच्चूलं, मुखुमोरु वायूनाट्टवुमहो
वरयक्कामो तोषा वशतं पुनरिड्ङिल्ल नियतम्।।

मूल—

सौन्दर्यं सुकुमारता मधुरता कान्तिर्मनोहारिता
श्रीमत्ता महिमेति सर्गविभवान् निश्शेषनारीगुणान्।
एतस्यामुपयुंज्य दुर्विधतया दीनः परामात्मभूः
स्त्रष्टुं वाञ्छति चेत् करोतु पुनरप्यत्रैव भिक्षाटनम्।।
(सुभद्राधनञ्जयम्)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वानाट्टं कवरन् नाहमीरमु भावं कट्टुं क्रूरमा,
वाककुं नोककुमितादि सर्गविभवान् निश्शेषचक्कीगुणान्।
इच्चक्यामुपयुज्य पद्मजनहो शक्यो न चक्यन्तरं,
सृष्टिप्पानिनिवेण मेङ्किलिहवननेल्ला मिरननीटणम्।।

मूल—

याच्ञा प्रेम्णा प्रतीच्छ प्रणयमिति मम त्वं प्रियोसीति रागः
संकेतस्त्वां प्रपत्स्ये पुनरिति पुरतस्ते स्थितास्मीति लज्जा।
किं भूयोभिर्वचोभिर्द्युतिमुषिललितभ्रूलतालास्यधन्ये
मन्ये नासीन्नकिञ्चिद्विजितकुवलये तत्र नेत्रत्रिभागे।।

(सुभद्राधनञ्जयम्)

पाक्कुं वेट्टिलयुं तरिम्पु तरुमो तानेन्नोरम्यर्थनं
पार्क्कन्नुण्टिह आनुरप्पुरयिलेन्नुल्लोरु संकेतवुम्।
ओककुम्पोलति विस्मयं चेरुमितन् नेत्रत्रिभागाञ्चले
पाकर्कुन्नोरु विलास मिङ्ङितु महासन्तोषमेन्तोषरे।।

मूल—

स्मराम्यवन्त्याधिपतेस्सुतायाः प्रस्थानकाले स्वजनं स्मरन्त्याः।
बाष्पं प्रवृत्तं नयनान्तलग्नं स्नेहान्ममैवोरसि पातयन्त्याः।।

(स्वप्नवासवदत्तम्)

स्मरामि वा नारियुटे सुतायाः नलकुत्तुकाले तविटुं स्मरन्त्याः।
श्लेष्मं प्रवृत्तं नयनान्तलग्नं स्नेहान्ममैवोरसि पातयन्त्याः।।

मूल—

बहुशोऽप्यपदेशेषु यया मां वीक्षमाणया।
हस्तेन स्रस्तकोणेन कृतमाकाशवादितम्।।

(स्वप्नवासवदत्तम्)

बहुशोष्युमि चेरुम्पोल् यया मां नोक्कमाणया।
हस्तेन स्रस्तशूर्पेण कृतमाकाशचेष्टितम्।।
एञ्चि ककुषियटि ककुम्पोलिच्छया नोक्किनोक्किमाम्।
अच्चूलु पोयतोकुर्कति पूच्चिराटंगल् काट्टिनाल्।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मूल—

अपरगिरिनिषण्णं वासरं वासरश्रीरभिमतमभिसर्त्तुं प्राणनाथं प्रदोषे।
स्वतनुमतनुरागात् संवृणोतीव साक्षादसितजलदनीरेणान्धकारांशुकेन।।

(सुभद्राधनञ्जयम्, पहला अङ्क)

काक्ककक्कूटं करञ्जू कलितकलकलंकाननान्तं निरञ्जू
कोकद्वन्द्वं पिरिञ्ञु कुमुदकुवलयश्रेणियेल्लांविरिञ्ञू।
ताराजालं परन्नु तरुणतरुणिमार वीटुतोरुं निरन्नू
माराटोपं वलर्न्नू मनतलिरकामे मानिनीनां तलर्न्नू।।

अटुककुन्नू सन्ध्या निभृतममिसारी तरुणिमार
नाटक्कन्नू ताने मलशरमेटुक्कुन्नु मदनन्।
तोटुक्कुंन्नू चापे पुरुषयुवतीनां मनमतिल्
कटक्कुन्नू कामं पलरसमिदानी मुदयते।।

मट्टोलुं वाणिमार तङ्ङटे शयनगृहं तन्निलाकुन्नवण्णं
वट्टं कूट्टित्तुटङ्ङी वरनुटे वरवुं मेल्ले नोक्कित्तुटङ्ङी।
वाट्टं कूटाते मल्लीमलरशर विरुतन् विल्लेटुत्तान् कुलच्चान्
कोट्टं नोक्कित्तुटङ्ङी शरमपि सरसं हन्त सन्ध्या विलासनम्।।

ताप्पूट्टयन्ति तकराःकरिकोयुत शेषाः मिन्नामिनुंगयन्ति निवहाश्च।
मण्टन्ति पान्थनिवहाः पटिबन्धपेट्या, काकाः करञ्जु मरमेरियुरङ्ङयन्ति।।

(सुभद्राधनञ्जयम्)

पेक्कथा— (एक प्रकार की दन्तकथाएँ)

"मन्त्राङ्क" में महासेन के कारावास से वत्सराज को छुड़वा लाने के लिए मन्त्रिगण सोचते हैं कि कौन सी नीति अपनानी है। 'आत्मोदय नय रूपी बृहस्पति की नीति या परज्यानि स्वरूप शुक्र-नीति'। अन्त में इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि 'परज्यानि' रूपी शुक्रनीति छोडनी है, शुक्रनीति की परित्याज्यता साबित करने लिए दोषांश पर प्रकाश डालने वाली एक कपोल-कल्पित कथा नीचे दी जाती है।

किषुककान्तला की घंटी बजाने वाली कथा

अनधीति-मंगलम् ग्राम में मेक्कान्तला और कीषुक्कान्तला नामक दो ब्राह्मण रहते थे। दोनों के भवन पास-पास थे। लेकिन मेक्कान्तला तो बडे धनी और कीषुक्कान्तला बड़े दरिद्र थे। मेक्कान्तला की दो पत्नियाँ थीं, तो कीषुक्कान्तला के एक पत्नी थी। थोड़े दिनों के बाद बच्चे देने में भी दोनों पत्नियों में मानों स्पर्द्धा सी रही। मेककान्तला की दोनों पत्नियों ने मिलाकर हजार लड़कों तथा कीषुक्कान्तला की स्त्री ने पाँच सौ

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लड़कियों को जन्म दिया। दोनों गृहस्थों के बीच कलह था तो भी उनके बच्चों में मेल था। वे एक साथ खेला करते थे। विविध खेल खेलते एक दिन बच्चों ने टट्टी जाने का खेल खेलना आरम्भ किया तब लड़कों ने लड़कियों से पूछा तुम लोगों की विष्ठा क्यों काली है? और हमलोगों की एक़दम सफेद होने की वजह क्या है? तब लड़कियों ने कहा— "हम तो विविध पौधों का शाक ही खाती हैं और तुम तो दही और अच्छी तरकारियों के बने व्यञ्जन तथा खीर खाते हो। यह सुनकर लड़कों ने कहा आज दुपहर को हम सब एक साथ हमारे घर पर खाना खाएँगे। ऐसा कहकर लड़के उनको अपने घर ले गए और सब ने एक साथ खाना खाया। अच्छे मीठे भोजन के मिलने की खुशी में फूले न समाकर लड़कियों ने अपने घर जाकर माँ बाप से सारी बातें बता दीं। यह सुनकर उनके पिता कीषुककान्तला ने क्रुद्ध होकर लड़कियों की खूब पिटाई की। बच्चों को पीटते देखकर मारो मत, मारो मत, अरे दूसरों के घर जाकर बच्चे पेट भर खाएँ तो इसके लिए बच्चों को पीटना कैसी बुद्धिमानी है? तुम्हें तो यही करना है कि खुद खिलाओ बच्चों को। अब छूना मत मेरे बच्चों को— इस प्रकार कीषुककान्तला की स्त्री ने बीच में ही कहा। तब कीषुककान्तला यह कह कर कि अरे, पत्नी की गालियाँ सुनकर जीना? कभी नहीं, चला गया। जंगल में जाते-जाते आधी रात को किसी महाकाली के मन्दिर में जा बैठा। भद्रकाली जी ने शिकार कर पास आते देखा कि गरीब ब्राह्मण बैठा है। उन्होंने पूछा— "कौन है? क्यों यहाँ बैठा है"? तब कीषुककान्तला ने कहा 'मैं तो मर जाने को आया हूँ। जब पत्नी ने गालियाँ सुनायी तब जीना भी कैसे'? यह सुनकर देवी को मालूम हो गया कि इनकी निराशा का कारण गरीबी है, तो उन्होंने उसकी गरीबी दूर करने के लिए मन्दिर के सामने लटकती घंटियो में से एक घण्टी निकाल कर किषुककान्तला को देकर वर देते हुए कहा ब्राह्मण देवता, आप जो कुछ भी मन में विचार कर यह घण्टी बजा दें, तो वह अभीष्ट वस्तु तुरन्त मिल जाएगी। तब कीषुककान्तला ने सन्देह दूर करने हेतु प्रश्न किया— 'क्या यह बजाने पर मेककान्तला का भवन नष्ट हो जायगा'? तब देवी ने क्रुद्ध होकर कहा— "वहाँ सब दुगना बढ़ता रहेगा"। किषुककान्तला घण्टी कपड़े में लपेट कर घर वापस आया और घण्टी कहीं रखकर नहाने गया। तब लड़कियों ने 'पिताजी मीठे फल लाये हैं' कहकर घण्टी निकाल कर बजायी तब कई फल निकल आये। दूसरी कुछ लड़कियों ने यह "अप्पम्" (मीठा पकवान) है क़ह कर घण्टी पकड़ी तो कई 'अप्पम्' मिले। इस प्रकार कई चीज़ें बनने लगीं तो स्त्री ने आकर घण्टी बजाते हुए कहा कि मुझे आभूषण, बर्तन आलीशान मकान मिले तो सबके सबं बने। जब ब्राह्मण स्नान करके आया तो देखा कि अपने से दुगुना वैभव मेककान्तला को मिला है, तो ईर्ष्या से घण्टी उनसे छीनकर बजाकर एक-एक करके सब चीज़ें मिटा दी। उसने अपनी एक पत्नी को मिटाया, तो मेककान्तला के दोनों स्त्रियाँ मिट गयीं। इस प्रकार बच्चे भी सब मिट गये। फिर

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कीषुककान्तला ने घण्टी बजाकर कहा मेरे एक आँख, एक पैर और एक हाथ भी मिट जाएँ, तो मेककान्तला के दोनों आँखे, दोनों पैर, और दोनों हाथ मिट गए। एक पैर से कूद-कूद कर तब किषुककान्तला ने मेककान्तला के पास जाकर कहा, 'रे मेककान्तला इन विपत्तियों का समाधान हो जाएगा। मेरा कहना अगर तुम मान लोगे तो सब ठीक कर दूँगा'। सुनकर निरुपाय होकर मेककान्तला ने सब मान लिया। किषुककान्तला ने जब कहा कि तुम्हारी सम्पत्ति का आधा हिस्सा, लड़कों में आधा हिस्सा मुझे देना है। बाकी पाँच सौ लड़कियों की शादी भी करानी है तो मेककान्तला को मजबूर होकर सब बातं माननी पड़ी। किषुककान्तला के कहे अनुसार सब करने का निश्चय हुआ। इस प्रकार किषुककान्तला धनी और सुखीं बना। इसलिए हमें चाहिए कि हम परज्यानि रूपी शुक्रनीति छोड़ दें और आत्मोदय रूपी बृहस्पति की नीति को अपना कर कार्य सिद्ध करने की कोशिश करें।

विड्ढी के घर का तोता—

यह बृहस्पति की नीतियों के अन्तर्गत "प्रच्छन्न बार्हस्पत्यं नीति" का स्वरूप प्रस्तुत करने योग्य एक दन्तकथा है।

"शठं प्रति शठं कुर्यादार्जवे पुनरार्जवम्।
त्वया मे लुञ्चितौ पक्षौ मया ते मुण्डितं शिरः।।

अनधीतिमंगलं गाँव के अन्तर्गत ब्राह्मण परिवारों में एक भवन है 'विड्ढी' का। वहाँ पैदा होने वाले बड़े चतुर भी होते थे, लेकिन अब की बार का वयस्क ब्राह्मण अपने घर के नाम को सार्थक बनाने वाला ही रहा— असली बेवकूफ़ाविड्ढी शब्द का अर्थ है बेवकूफ। खेत में धान पैदा होगा, चक्की जो दासी है, चावल तैयार करेंगी, और मैं खाऊँगा— इतना ही तो वह जानता था। इसके अलावा कोई दूसरा ज्ञान उसे नहीं था। लेकिन परिवार में सम्पत्ति भी खूब थी। उन दिनों घर-बार सम्हालने में गृहिणी की मदद के लिए और उपदेश देने के लिए एक तोता था। वह हमेशा बाहर लटकाये एक पिंजड़े में रहता था। वहाँ जो भी कोई आता था, उसकी जरूरतें तोता पूरा करता था। उन दिनों वहाँ शासन करने वाले राजा ने अपनी नयी स्त्री 'मीशककोटिप्पुस्तु इठुण्णूली' के लिए आलीशान महल बनवाया था। वहीं वह स्त्री अपनी बूढ़ी माता और नौकरानी के साथ रहती थी। चूँकि राजा का महल पास ही था इसलिए इठुण्णूली को राजा से मिलने यां आने जाने में बड़ी सुविधा भी थी। वे दोनों इस प्रकार सुखी जीवन बिता रहे थे कि बूढी माता अपनी जवानी की वीर गाथाएँ बेटी को सुनाने लगीं। उसने उसे बुलाकर कहा "प्यारी बेटी इठुण्णूली, यहाँ आवो, यहाँ आवो, मैंने अपनी जवानी में कितने गाँवों को मिट्टी में मिला दिया, पर तुझसे तो अभी तक एक घर भी सही बरबाद नहीं हो पाया। तू खा, मजे से खाते ही रह" ऐसा कहकर दोनों हाथों से

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उसके मुख पर इशारे से हँसी उड़ायी। तब इठुण्णूली ने माँ से पूछा "मैं उसके लिए क्या करूँ"? "बेटा तुझे 'पेरुंदृकोविल' (शिवजी के मन्दिर) में देव दर्शन करने जाना है। वहाँ जो बेवकूफ़ ब्राह्मण पुरोहित है उनको अपनी ओर आकृष्ट करना है"— माँ ने उपदेश दिया। यह सुनकर इठुण्णूली मन्दिर की ओर रवाना हुई तो बूढ़ी ने फिर से बुलाकर उपदेश दिया— 'बेटा, तू जब बड़े बड़ों से मिले तो उनका कुशल ज़रूर पूछना, भूलना मत', इठुण्णूली "वैसा ही करूँगी माँ" कहकर दास-दासियों के साथ बड़े ठाट बाट से देव-दर्शन के लिए निकली। बड़े मन्दिर में पहुँची तो ऊँचा गोपुर देखकर उसने समझा यहाँ यह तो बड़ा है, जरूर कुशल पूछना है। "हे गोपुर— आप कैसे हैं? क्या'गो' गायें अब तेरे पास नहीं आती?" प्रश्न किया। अन्दर घुसी तो बलि देने का बड़ा पत्थर देखा तो कुशल पूछने लगी— "ऐ बलि के पत्थर, अब क्या कोई बलि नहीं देते? बाल-बच्चों को चारों ओर बिठाकर आराम से रहता है न?" फिर ध्वज-स्तंभ-देखकर समझा कि यह तो सबसे बड़ा है, जरूर कुशल पूछना चाहिए, माता ने ऐसा कहा है। ऐसा सोचकर उससे पूछ बैठी "(ऐ कोटि मरमें) ऐ ध्वजस्तंभ आज कल कोई कोटि नहीं डालते क्या?" कोटि शब्द का अर्थ है— पान की लता, 'मरं' शब्द का अर्थ है— पेड़। सो कोटिमरं माने वह खम्भा जिसमें पान की लता लिपटी हो। "खैर तो है न?" इस प्रकार प्रश्न करते मन्दिर के अन्दर प्रवेश कर देव-दर्शन कर माँ के उपदेशानुसार सब काम कर वापस आयी। मन्दिर तथा रास्ते में खड़े सब लोग विशेष कर ब्राह्मण लोग राजा की नयी स्त्री को गौर से देखते रहे।

दूसरे दिन स्नान-घाट में ब्राह्मण लोग नहाने उतरे, बातें करने के बीच पिछले दिन मन्दिर में आयी इठुण्णूली के सौन्दर्य और महिमा की चर्चा होने लगी तो बीच में हमारा 'विड्ढि' ब्राह्मण बोल उठा— "अरे मैनें कल सपने में देखा कि मैंने उसके साथ कामलीला की। मेरा अहो भाग!" तब इट्टिवासु नामक एक ब्राह्मण जो विड्ढि की धन-सम्पत्ति पर जलता था उसे नीचा दिखाने और उसका गर्व मिटाने का उपाय सोचने लगा। घर जाकर खाना आदि कर सीधे इठुण्णूली के महल गया। उसने ब्राह्मण की आवभगत की। उसे बिठा दिया और कुशल पूछने लगी— "कितने दिनों पर देख सकी, ब्राह्मण देवता, खैर तो है न? घर पर सब कुशल तो है? कभी-कभी यहाँ तक आने का कष्ट उठाना। कोई खास बात तो नहीं है" ब्राह्मण बोलने लगा "विशेष कुछ कहने को नहीं? 'यहाँ आपको मिलने वाली सम्पत्ति बराबर मिलती है न। आपके विशेष अधिकार की वस्तुएँ समय-समय पर मिलती हैं न?" इठुण्णूली ने कहा— "मुझे पता नहीं ऐसे कुछ विशेष अधिकार मुझे हैं। बताइए, ज़रा सुन लूँ।" इट्टिवासु बोलने लगा। "इस देश में अगर आपको सपने में कोई देख ले तो उसकी सारी सम्पत्ति पर आपका ही अधिकार है।" "लेकिन यह बात कोई किसी से नहीं बताएगा तब क्या करूँ"

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इठुण्णूली ने खेदपूर्वक कहा। इट्टिवासु ने कहा— "उपाय से वह समझ लेना है।" इठण्णूली "क्या आपको मालूम है कि किसी ने ऐसा सपना देखा है? अगर आपको मालूम हो तो कृपया मुझे सूचना दें। यह आप ही जैसे लोगों के वश की बात है।" तब इट्टिवासु ने कहा— "कल विड्ढि नामक ब्राह्मण ने सपना देखा है, बेवकूफ़ी के कारण स्नान घाट में दूसरी बातों के बीच उसने यह भी कह डाला। उसके पास तो भारी संपत्ति है।" स्त्री ने कहा— "बहुत अच्छा, और भी ऐसी कोई बात हुई तो ज़रा आ के कह देना बीच-बीचमें यहाँ आते-जाते रहना, समझे?" तब इट्टिवासु से विदा लेते हए कहा "मैं जा रहा हूँ"।

जब राजा आये तो इठुण्णूली शिकायत करने लगी— "राजा की पत्नी रह कर मुझे क्या दिया? क्या मिला? मेरे हक की सम्पत्ति तक मुझे नहीं दिलवायी? मेरी तक़दीर ही कितनी खोटी है?" यों कह कर सिसकने लगी तो राजा ने कहा— "अगर तू बता दे कि तेरा क्या-क्या हक है, तो मैं ज़रूर वह तुरन्त तेरे सामने पहुँचा दूँगा"। इस पर इठुण्णूली ने कहा— "देखिए जो कोई मुझे सपने में देख ले, उसकी सारी सम्पत्ति मेरी है, कल विड्ढी नामक आदमी ने मुझे स्वप्न में देखा है।" यह सुनकर राजा ने तुरन्त ही अपने नायर सेनानियों को बुलाकर आज्ञा दी कि वे जाकर विड्ढी के भवन की सभी जंगम वस्तुएँ वसूल कर ले आवें।

चार-पाँच नायर सेनानी तुरन्त विड्ढी के घर पहुँचे। बाहर किसी को न देख कर वे घबरा ही रहे थे कि वहाँ पिंजड़ें में कैद तोता पूछने लगा—"वह कौन आया है, क्या नायर सेनानी है?" क्यों आये हैं? यह सुनकर सेनानियों ने उससे सब बातें कहीं। तब उसने कहा— "हाँ जरा ठहरिए सब दिलवा दूँगा।" इतना कहकर उसने गृहस्वामिनी को बुलाकर कहा— देखिए, राजा की आज्ञा लेकर लोग आये हैं, यहाँ की सारी सम्पत्ति ले जाने के लिए, इसलिए सब सम्पत्ति निकाल कर रखिएगा। तदनुसार माता ने जब सारा सामान बर्तन वगैरह निकाल कर रखा तो तोते ने कहा— "माँ एक आईना भी तो है न? उसे भी दे दीजिए माँ ने मन ही मन खीझती हुई उसे भी निकाल कर रखा। तोते ने कहा— "माँ अन्दर जाइये"। नायर सेनानियों ने अन्दर घुस कर देखा तो मालूम हुआ कि सामान तो सौ से कम लोगों से नहीं उठाया जा सकेगा। क्या करना है इसी सोच में घबराने लगे। तब तोते ने पूछा— "अरे भाईयों चीज़ें, उठा ले जाने में कोई तकलीफ़ तो नहीं, क्या कोई उपाय करना है।' तब सेनानियों ने आपस में कहा— प्यारे दोस्तों, यह तोता बड़ा चालाक़ है, अगर वह कोई उपाय कर दे तो बड़ा अच्छा ही होगा। उन्होंने उपाय कर देने की प्रार्थना की। तब तोते ने उनको बुलाकर कहा— "आप लोग ऐसा कर लीजिए, वह आईना उठाकर बर्तनों के ऊपर पकड़ लीजिए, सब बर्तन उसके अन्दर घुस जाएँगे"। यह सुनकर सेनानियों ने आईना उठा कर पकड़ा तो देखा कि सभी बर्तन उसमें दिखाई दे रहे हैं। हाँ सभी बर्तन उसके अन्दर दिखाई

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दे रहे हैं। नायर सेनानी सब विस्मित हो गये। अब तोते ने कहा— "उस आइने को उठा ले जाइए, बर्तन सब तो उसमें चले ही गये हैं? सब साथ चले जायेंगे, अगर राजा कुछ पूछें तो इतना ही बताइये कि स्वप्न में देखे अपराध के लिए आईने में देखी वस्तु ही काफी है"।

तोते की बाते सुनकर टूटे आईने को उठा कर नायर लोग.विदा हो गये। राजधानी में पहुँच कर टूटा आईना राजा के सामने रख कर हाथ जोड़ कर खड़े हो गये। जब राजा ने पूछा कि क्या केवल यही टूटा आईना है, तो नायर लोगों ने कहा, 'नहीं' बहुत से छोटे बड़े बर्तन गहने सब इसके अन्दर हैं। इतना कह कर जब आईना उठा कर दिखाने लगे, तो कुछ भी नहीं दिखाई पड़ा। वे बोलने लगे— "महाराज, जब इतना अधिक सामान हम उठा न सके तो वहाँ के एक चालाक तोते ने ही हमको यह बता कर सब आईने के अन्दर प्रविष्ट करा दिया। फिर उसने यह भी कह कर हमें भेज दिया कि अगर राजा कुछ पूछें, तो बता देना कि सपने में देखे अपराध के लिए आईने में देखी वस्तु ही काफी हैं। यह सच है"। यह सुन कर राजा को अपनी बेवक़ूफ़ी मालूम हुई और बात बाहर कहीं फैलने न देना ही अच्छा है ऐसा सोचकर चुप हो गया। लेकिन इठुण्णूली चुप न रह सकी। उसने सोचा मेरा हक का सब धन उस तोते ने ही नष्ट कर दिया है, उसे खाये बिना अब जीना नहीं; आखिर उसने एक उपाय सोच लिया। वह पेट दर्द का बहाना करने लगी। इलाज से कोई फायदा नहीं हो रहा था। आखिर दूसरे दिन ज्योतिषी बुलाए गए लेकिन इठुण्णूली ने पहले ही अपने नौकर के जरिए सूचना दी कि राजा के पूछने पर वह यही बता दें कि इस रोग की मुक्ति के लिए बातचीत करने वाले तोते का मांस खाना है। इसके अलावा दूसरी कोई चिकित्सा नहीं चाहिए ज्योतिषी ने मान लिया और दूसरे दिन राजा के सामने उसने वैसा ही कहा। राजा की स्त्री ने चुपके से उसे इनाम देकर भेज दिया और राजा से अनुरोध किया कि उस विड्ढी के घर में जो बोलने वाला तोता है, उसे तुरन्त मँगा ले। राजा ने मान लिया और नायकों को तोते को तुरन्त लाने की आज्ञा दी।

राजा की आज्ञा पाकर जब नायर लोग विड्ढी के घर पहुँचे तो तोता पूछने लगा— कौन आये हैं? नायर लोग हैं? क्यों आये हैं? इस पर नायर लोगों ने कहा— "तुम्हें राजमहल ले जाने की आज्ञा है" तब तोते ने कहा— "यही बात है, ठहरो, अभी दिलवा दूँगा" इतना कह कर उसने माँ को बुला कर कहा— "माँ, मुझे ले जाने के लिए राजा ने आज्ञा निकाली है, इसलिए सन्देह नहीं करना चाहिए। इन्हें मुझे दे दीजिए मैं यहीं वापस आऊँगा माँ, तुम दुःखी मत होना"। गृहस्वामिनी ने यह सुनकर तोते का पिंजडा खोल दिया "नायर लोग मुझे उठाकर ले चलिये— तोते ने कहा नायर लोगों ने तोते को ले जाकर राजा के सामने रख दिया। उनकी प्रतीक्षा में ही रहने वाली इठुण्णूली

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ने तोते को तुरन्त पकड़ कर "अरे चोर, तू ने ही तो मेरी सारी सम्पत्ति छीन ली? अब तुझे मैं खा डालूँगी, बदमाश", इत्यादि कह कर उसके शरीर के पंख सब निकाल उसे रसोई घर में ले गयी और नौकरानी को यह कह कर सौंप दिया कि इस तोते का मांस तैयार करना है। नौकरानी ने समझा कि इसका तो पँख नहीं अब कहाँ जाएगा? वह उसे रसोईघर के कोने में रख अन्य कार्यों में जुट गयी इसी बीच में तोता कूदते कूदते चुपके से रसोई घर के अन्दर से बाहर की ओर पानी बहा ले जाने वाली नाली के अन्दर छिप गया। थोड़ी देर में नौकरानी ने देखा कि तोता कहीं नहीं, वह घबरा गयी। उसको डर था कि अगर मालकिन मालूम कर लेगी तो उसके सिर पर अङ्गारे बरसा देगी वह चुपके से बाहर तालाब में जाकर देखने लगी तो एक बड़ा मेंढक पड़ा था। उसने उसे मार डाला और काटकर उसका व्यञ्जन भी तैयार किया। खाने का समय आया तो इठुण्णूली व्यग्र हो उठी और तोते का व्यञ्जन परोसने की आज्ञा दी। नौकरानी ने मेंढक का व्यञ्जन परोस दिया। क्रोध से जब इठुण्णूली "अरे तूने ही मेरी सम्पत्ति मिटा दी अब मैं तुझे खा रही हूँ" कह कर खाने लगी तो वह तोता नाली के अन्दर से बोला कि वह तोते का व्यञ्जन नहीं मेढक का है, मेढक का। राजा की नयी पत्नी ने गुस्से में वह पूरा व्यञ्जन खुद ही खा डाला चार पाँच दिन बीत गये तो देखा उसके शरीर भर में मेढक की आकृति की ग्रंथियाँ दिखाई देने लगीं। राजा घबरा गए कि यह कौन सी व्याधि है? उन्होंने उसकी कई चिकित्साएँ करायीं पर विशेष फायदा न हुआ तो आखिर उसके पास के बड़े देवी के मन्दिर में इकतालीस दिन की उपासना कराने के लिए मन्दिर में ही रहने की व्यवस्था करा दी। ईश्वर की कृपा के अभाव का ही परिणाम है। ऐसा सोच कर इठुण्णूली देवी की उपासना भी करने लगी।

इधर तोता तो उस नाली में रहकर उसमें से वह कर आने वाले दाने बगैरह खा कर जीने लगा। थोड़े दिनों में उसके शरीर में पंख निकलने लगे। राजा की स्त्री की उपासना के अन्त तक तोता भी पहले जैसे उड़ने में समर्थ हो गया। सारी बातें जानकर तोता उपासना के अन्तिम दिन मन्दिर के अन्दर मूर्ति के आड़ में छिप कर जा बैठा। जब इठुण्णूली देवी के सामने खड़ी होकर प्रार्थना करने लगी तो तोता अन्दर से यों बोला— "कौन है? राजा की पत्नी! मैं प्रसन्न हो गयी, कल बड़े सवेरे उठकर सिर से पैर तक बाल बना कर, स्नान कर, बिना कपड़े पहने शरीर भर तेल मिला काजल लगा कर, यहाँ मन्दिर के सामने खेत में खड़े वटवृक्ष के नीचे जाकर हाथ जोड़कर 'काक्कश्याय नमः, करिन्तेरट्याय नमः" यों जोर से मन्त्रोच्चारण कर उस वृक्ष की परिक्रमा करती रहोगी तो देवराज इन्द्र आकर वायुयान में चढ़ा कर इन्द्राणी बनाने के लिए स्वर्ग ले जाएँगे, फिर इन्द्राणी हो कर तुम आराम से रहोगी"— यह सुनकर इठुण्णूली ने अन्दर की ओर झाँका तो वहाँ कोई नहीं था। "यह तो देवी की ही आज्ञा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

है, मुझे इन्द्राणी बन जाने का भाग्य मिला है'' ऐसा सोचकर पूजा के अन्त में ब्राह्मणों को दान पुण्यकर राजा के साथ महल की ओर गयी। महल में आ कर बूढ़ी माता ने पूछा— "अरी बेटी, देवी का अनुग्रह कैसा है?'' बेटी ने कहा— "माँ कुछ कृत्यों को पूरा कर वटवृक्ष के नीचे जाकर परिक्रमा करने पर देवराज इन्द्र विमान में आकर मुझे स्वर्ग ले जाकर अपनी पत्नी बनाएँगे, यही तो देवी का अनुग्रह है।'' यह सुनकर बूढ़ी ने कहा— "बेटी मैं भी आती हूँ। जब तू इन्द्र की पत्नी बनेगी तब मैं इन्द्र के पिता की पत्नी बन सकूँगी'' यह कह कर बूढ़ी माता भी बेटी के साथ निकली।

यह सब जानकर राजा क्रोधित हुए और इन्द्र से लड़ने के लिए सेना सहित वटवृक्ष के पास जा खड़े हो गये। शरीर सहित स्वर्ग जाने का दृश्य देखने के लिए जनता की बड़ी भीड़ भी वहाँ आ लगी।

ठीक उसी समय इठुण्णूली और उसकी बूढ़ी माँ दोनों सिर मुड़ा कर। शरीर भर काजल मल कर नग्न हो वटवृक्ष के नीचे आकर मन्त्रोच्चारण के साथ हाथ जोड़े परिक्रमा करने लगीं— आगे-आगे इठुण्णूली और पीछे-पीछे बूढ़ी माँ। पहले बेटी "काक्कश्याय नमः करिन्तेरय्याय नमः'' कहती तो बूढ़ी उसी को दुहराती रही। उसी बीच तोता उड़कर उस वटवृक्ष की डाली पर आ बैठा और पूछने लगा— "कौन है वहाँ, राजा की स्त्री इठुण्णूली?—

''शठं प्रति शठं कुर्यादार्जवे पुनरार्जवम्।
त्वया मे लुञ्चितौ पक्षौ मया ते मुण्डितं शिरः।।

इन्द्र भी नहीं चन्द्र भी नहीं, विमान लाकर तुम्हें कोई कहीं न ले जाएगा तू इन्द्र की पत्नी भी नहीं बनेगी। तू ने मेरे पंख नोंच लिये, मैंने तेरा सिर मुड़ा दिया, बस इतना ही है। मैं विड्ढी के घर की ओर ही जा रहा हूँ।'' इतना कह कर तोता उड़ गया।

इस प्रकार 'प्रच्छन्नबार्हस्पत्य' नीति अपना कर ही, तोते ने अपने कार्य में सफलता हासिल की। जैसा हमारे प्रति काम किया वैसा ही काम उल्टे भी करना है। इसलिए हाथी के धोखे में स्वामी वत्सराज को बन्दी बनाने वाले वैसे महासेन को हाथी के धोखे में डाल कर ही स्वामी को मुक्त कर ले आना है— ऐसा कहकर प्रकृत कथा से सम्बन्ध स्थापित किया जाता है।

उपकथा

'सुभद्राधनञ्जय' पहले अंक के कुटियाट्टम् में अर्जुन के एक वाक्य के लिए विदूषक के द्वारा सुनाई जाने वाली उपकथा नीचे दी जा रही है—

"तदुभयप्राप्तये प्रयतिष्ये'' अर्जुन के इस वाक्य के लिए विदूषक कहने लगता है— "प्यारे वयस्य, उभय-प्राप्ति के लिए प्रयत्न करना बुरा है। दो पत्नियाँ रहें तो

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अनर्थ ही हो जाएगा। सुनिए एक कथा— किंसी देश में बड़े गुणी और धनी पुरुष थे। उन्होंने एक शादी की, थोड़े ही दिनों के बाद दूसरी शादी भी की। दोनों स्त्रियाँ सुन्दर और सुशील थीं। उनका पति दोनों को समान रूप से प्यार करता रहा और दोनों के लिए प्रिय भी रहा। थोड़े दिन बीत जाने पर छोटी को ऐसा लगा— "क्यों बड़ी बहन रोज़ पतिदेव को खाना परोसने तैयार रहती है? क्या मैं परोस नहीं सकती? कल मैं ही खाना परोस दूँगी" दूसरे दिन जब खाने का समय आया तो छोटी बर्तन कलछुली आदि लेकर खड़ी है। यह देखकर बड़ी ने उसके हाथ से बर्तन कलछुली आदि छीन ली, खाना खुद परोसने लगी। लेकिन पति ने दोनों से विशेष कुछ नहीं कहा, तब बड़ी को लगा कि पतिदेव छोटी को ज्यादा चाहते हैं? वे चाहें तो बता सकते थे कि खाना अक्सर बड़ी पत्नी ही परोसा करती है, उसके अभाव में या अनुपस्थिति में छोटी परोसा करे; कुछ बोले तो नहीं। पर मन में सन्देह प्रबल होने लगा कि पतिदेव मुझसे अधिक छोटी को ही प्यार करते हैं। धीरे-धीरे वह बढ़ते-बढ़ते दोनों में बड़े विरोध में परिणत हो गया। उनके पति तो उनके लिए अप्रिय बोलना नहीं चाहते थे, फिर भी कोई विपत्ति न हो जाय इस विचार से दोनों को बुलाकर कहा— तुम दोनों में परस्पर सुख नहीं यह जानकर मैं भी सुखी नहीं। इसलिए अगर तुम दोनों सहमत हो जाओ तो मैं ऐसा करूँगा कि तुम दोनों के लिए अलग-अलग रहने की सुविधा कर दूँगा और दोनों के साथ महीने के दिन बराबर कर निवास करता रहूँगा। तब तुम दोनों का प्यार तथा सेवा-शुश्रूषा मैं पाता रहूँगा। क्या तुम दोनों को यह मंजूर है?

इस पर दोनों पत्नियाँ सहमत हो गयीं। तुरन्त पास दो सुन्दर मकान बनवाये और उन में दोनों को बसाया। पति अगर दो दिन बड़ी पत्नी के घर रहते तो दो दिन छोटी के घर। अगर चार दिन होते, तो चार दिन। इस प्रकार बराबर बारी-बारी दोनों के साथ रहने लगे। अब दोनों तृप्त हो गयीं।

कई दिन गुज़र गए। एक दिन पति ने दोनों से कहा— "मैं पिता के घर जा रहा हूँ। शायद चार दिन बाद ही आ सकूँगा, बराबर ध्यान देकर होशियारी से रहना।" इतना कहकर दोनों से विदा लेकर चला गया। सचमुच उस दिन से बड़ी के घर में रहने की बारी थी। इस प्रतीक्षा में रही कि पतिदेव लौटकर उसी के घर आयेंगे। पर उनके वापसी में और चार दिन लग गये। बड़ी का मकान उत्तर में और छोटी का उसके दक्षिण में था। पति तो आ रहे थे उत्तर की ओर से। चलते चलते बहुत थक गये थे। भोजन न करने से बहुत भूखा और प्यासा भी था। दोपहर का समय भी था। जब बड़ी के घर के पास पहुँचा तो वह दरवाजे पर ही खड़ी थी। देखते ही उसने पूछा इतनी थकावट क्यों? आइये कहकर लिवा लाने को आयी तो पति ने कहा छोटी भी राह देखती होगी— "इससे क्या, यहाँ आकर कुछ जल-पान कर थोड़ी देर आराम करने

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

के बाद वहाँ जाइए'' यों कहकर बड़ी पति का हाथ संभाल कर उन्हें अपने घर ले आयी।' मैं थोड़ा कञ्जी (पानी मिला चावल) तैयार करूँगी। कह कर चावल पकाने अँगीठी पर चढ़ाया। चावल तैयार होने ही वाला था कि छोटी पत्नी खबर पाकर वहाँ पहुँची ''क्यों यहाँ बैठे हैं'' वहीं जाएँ, यों कहकर छोटी पति का हाथ पकड़कर उन्हें ले जाने वाली ही थी कि बड़ी पत्नी ने कहा ''मैने कञ्जी तैयार कर थाली में परोसा है उसे पीकर जाने दो। इसी बीच में पति कञ्जी पीने बैठ चुके थे। तब छोटी ने ''मैं कञ्जी दूँगी, इसे मत पीना'', कहकर कञ्जी में मिट्टी डाल कर उनको पकड़ कर उठाया। फाटक तक पहुँचाया कि बड़ी ''ओहो, यहाँ तक आ गयी, इतना बड़ा धिक्कार! कि मेरे घर आ कर जबरदस्ती पकड़ ले जावे! ये तो पहले मेरे पति रह कर इसका पति बन गया। कञ्जी पीने के बाद चाहे, तो वे जो भी कह सकते थे?'' यों कहते वहं भाग आयी और पति को पकड़ कर अपनी ओर खींचने लगी। खीचातानी बढ़ी तो थका माँदा पति और भी परेशान हो गया और वहीं गिर पड़ा। तब दोनों स्त्रियां— ''हाय पतिदेव बहुत थक गये हैं, क्या करें? यों सोचने लगीं। बड़ी पास बैठ कर उसका दाहिना पैर थपथपाने लगी तो छोटी बाँया, बड़ी का हाथ बाएँ पैर पर अनजान में छू गया। इस पर छोटी— 'क्यों, मेरा पैर छूती हो? मैं तुम्हारा भी छूऊँगी— यों कंहकर दाहिना पैर छुआ। तब बड़ी ''अरे मेरे हाथ अनजान में छूने के बदले इतनी जोर से छूने की क्या ज़रूरत? मैं भी जोर से छूऊँगी'' कहकर दूसरे पैर पर हाथ से मारा। तब छोटी 'अरी मेरे पैर पर मारती है तो मैं इसका बदला ज़रूर लूँगी कह कर बहुत जोर से दो बार मारा। तब दूसरी मूँठ बाँधकर पीटने लगी। तब पहली ने पत्थर लेकर जोर से पीटा तो दूसरी एक बड़ा लकड़ी का डण्डा लाकर जोर से बार-बार मारा। इस प्रकार दोनों पैरों पर दोनों पत्नियों के पीटने से परेशान हो मारे दर्द के पति जोर-जोर से चिल्लाने, रोने लगा। तब बड़ी ने पानी लाकर पति के मुँह में उँड़ेल दिया। छोटी 'उसका दिया पानी मत पीना' कहकर मुँह में मिट्टी फेंक दी। ''मैं पानी दूँगी'' कहकर छोटी ने पानी मुँह में उड़ेल दिया। तब बड़ी ने भी मिट्टी डाल दी और मुँह हाथों से बन्द कर दिया। थोड़ी देर में बेचारा साँस फूल कर मर भी गया। अब स्त्रियों का झगड़ा भी मिट गया। दो शादियाँ करने से उस व्यक्ति को यही अनुभव हुआ। इसलिए प्यारे वयस्य, दो शादियाँ करने का प्रयास न करें। यह मेरी प्रार्थना है।''

इन दन्तकथाओं में वक्ता की युक्ति के अनुसार फलितोक्तियाँ तथा हास्योक्तियाँ मिलायी जाती हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कूत्तु और कूटियाट्टम् के लिए निर्दिष्ट कुछ विशेष रङ्ग-विधान

१. अभिषेक-नाटकान्तर्गत बालिवधाङ्क कूटियाट्टम् के लिए 'मिड़ावोच्चप्पेटुत्तल्' सन्ध्या के समय मन्दिर के प्रवेश-द्वार गोपुर में रखकर चलाने का नियम है।

२. चूडामणि नाटक में 'शूर्पणखाङ्कम्' में शूर्पनखा का "निणमणिञ्ञ" (कर्णनासिका छेदन के बाद रक्तरूषित हो) रंग प्रवेश, रंगमंच छोड़ दूरी पर से है।

३. चूडामणि के 'अशोकवनिकाङ्कम्' 'उद्यान प्रवेश' के लिए रावण को, तालवृन्त (आलवट्टम्) सफेद चँवर, सफेद छाता (श्वेतातपत्र) दीपशिखा (पन्तम्) 'तेल्लि' कुत्तुविलकक् (लम्बा डण्डेवाला हाथ में लेने योग्य दीप) परिज़न आदि का विधान है।

४. 'उद्यान प्रवेश' में सीता के स्थान पर रंगमंच पर दीप के दाहिनी ओर एक छोटा दिया जला कर रखा जाता है और सामने एक लाल व सफेद कपड़ा बिछा दिया जाता है, वहाँ 'अष्टमंगल्य' भी रखा जाता है। उस बिछे लाल कपड़े में ही रावण उपहार समर्पण करते हैं।

५. 'स्वप्न वासवदत्ता' के 'स्वप्नाङ्क' में खाट, सेज, तकिया, माला आदि उपकरण, टिमटिमाता हुआ भद्रदीप, कपूर, अगरबत्ती, जलधारा यन्त्र, शीतोपचार की सामग्रियाँ आदि चाहिएँ।

६. नागानन्द के दूसरे अङ्क में (केट्टिञालुक) के लिए ६४ इञ्च लम्बे कपड़े से रंग मंच के दाहिने कोने में छत का तख्ता निकाल कर ऊपर उत्तर के लकड़े में कपड़े का छोर बाँध कर नीचे की ओर दो बार लपेट कर लटका दें और ज़मीन पर से गले के परिमाण में निशान लगा कर फन्दा बनाकर रस्सी के रूप में वस्त्र में ग्यारह घुमाव बनाकर वस्त्र का अग्र एक ओर बाँध कर रखे 'केट्टिञालल्' के समय दो-तीन पीठ एक के ऊपर एक के क्रम से रखकर उसके ऊपर चढ़कर गले में फंस जाने से बचाकर बाँध दोनों हाथों से उसे पकड़ लेने पर दोनों पीठ नीचे से निकाल दिये जा सकते हैं।

७. नागानन्द के चौथे अंक में "परक्कुंकूत्तु" के लिए लायक मैदान में 'वास्तु' (आवश्यक स्थान) अलग तैयार कर वहाँ कूतम्पलम् बनाकर ग्यारह दण्ड ऊँचाई पर एक छत बनावे उसके ऊपर भी रंगमंच तैयार करना चाहिए छत के ऊपर मिड़ाव, दीप, आदि रंग सज्जीकरण जरूर होना है। एक व्यक्ति को दोनों पार्श्वों में 'तुक्कुविलकक्' जंजीर पर लटकने वाले दीप के साथ नीचे उतर आने लायक छेद छत में होना चाहिए। कुट्टियाट्टम में गरुड के साँप को चोंच में उठाकर उड़ते जाने का प्रसङ्ग आने पर गरुड ऊपर बताए छंत के द्वार से मण्डल बनाकर नीचे की ओर उड़ने लगेंगा। इसके लिए गरुड भूमिका धारी नट के हाथों-पैरों आदि में रस्सियाँ जोर से बँधी रहेंगी, और सभी रस्सियों को फिर एक साथ जोड़कर

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

एक ही रस्सी में बाँध कर धीरे-धीरे नीचे उतारते रहेंगे नीचे के रंग में आकर लाल कपड़ा ओढ़े जीमूतवाहन को (बदले में एक लाल कपड़े को) चोंच मार उठा लेने पर रस्सियाँ ऊपर की ओर खींचते हुए चढ़ाई जाती हैं।

८. 'नागानन्द' पाँचवें अंक में गौरी के 'पुरप्पाड' के लिए गौरी की भूमिका-धारिणी नंगियारम्मा हाथी पर चढ़कर सोने की कुण्डिका में तीर्थजल लेकर प्रवेश कर तीर्थजल छिटका कर जीमूतवाहन को जिन्दा कर देती है।

९. 'संवरणम्' तीसरे अंक में तपती को बह जाने के लिए रंगमंच पर जरा सी कोने की ओर ताना बाना तैयार कर लेने के जैसे सूत डालकर नदी के बहाव की सी प्रतीति बनाने लायक तैयार कर उस पर बहना। इसके निर्माण के समय उसका एक छोर अवश्य जरा सा ऊँचा रखना जरूरी है।

१०. जटायुवधाङ्क में जटायु के 'पुरप्पाड्' के लिए रंगमंच पर बाएँ कोने में रंगमंच से आधा दण्ड परिमाण ऊँचाई पर १६ दण्ड ८ अंगुल परिधि में एक छत तैयार करनी है। उसी पर रंगप्रवेश होता है।

११. 'माया शिरस्स' अङ्क कूटियाट्टम् में सीता के सामने रावण के द्वारा लाकर रखने वाले माया राम और माया लक्ष्मण के सिर लकड़ी के बने रहते हैं। 'पच्चा' और चुट्टी आदि गले से ऊपर का सभी वेश-विधान इन नकली चेहरों के लिए भी अनिवार्य है।

कुछ सिद्धान्त

कूटियाट्टम् से सम्बन्धित तत्त्वों और नियमों में कुछ के वर्णन नीचे दिये जाते हैं—

१. नाटक आदि दशरूपों का ही अभिनय कूटियाट्टम् में होता है ।

२. इसका रंगमंच नाट्यप्रासाद है— याने कूत्तम्पलम् का नाट्यमण्डप।

३. परक्कुंकूत्तु के लिए पवित्र किये गये मैदान में दुमंजिला कूत्तम्पलं बना कर उसी रंग में उड़ना (परक्कल) होता है। (नागानन्द में गरुड का उड़ना)।

४. 'कूत्तुपुरप्पाट्' सवेरे या रात को ही चलाना चाहिए।

५. कूत्तु नृत्य के लिए उपयुक्त बाजे हैं मिऴाव 'तालक्कूट्टम्' 'इडक्का', शंख, कुऴल (तुरही) आदि।

६. नटी के स्थान में रहने वाली नंगियार का स्थान रंगमंच के दाहिनी ओर है।

७. कूत्तु नृत्य के दीप में तीन शिखाएँ जलानी हैं। एक शिखा रंग के सामने की ओर बाकी दो रंग में नट की ओर।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

८. नट को "तलयिल् केट्टल' कर लेने पर मन्दिर की चहारदीवारी के बाहर जाना मना है। अगर जाने की ज़रूरत पड़े तो सिर पर कपड़ा डालना है और कोई आगे-आगे चलना भी चाहिए।

९. एक मन्दिर में एक नट को, एक कहानी में एक ही वेश पहनने का अधिकार है।

१०. 'तलयिल् केट्टल्' के बाद उस नट को अशौच आदि कुछ भी नहीं लगता।

११. कूत्तू शुरु कर समाप्त करने के पहले सन्ध्यावन्दन असम्भव हुआ तो सन्ध्या का आवर्तन करने की आवश्यकता नहीं।

१२. कूत्तु के लिए नट के 'तलयिल् केट्टल्' हो जाने पर ही "मिष़ावोच्चप्पेटुत्तल्" करना चाहिए। लेकिन 'बालिवधांक' के लिए सन्ध्या समय में ही गोपुर में (मन्दिर के फाटक पर) ही मिष़ावोच्चप्पेटुत्तल् चलाने का विशेष विधान है।

१३. नया कपड़ा, लालकपड़ा (पट्टू) या धोबी का साफ किया कपड़ा ही कूत्तु नृत्य में वस्त्र के रूप में इस्तेमाल किया जाना चाहिए।

१४. जब कूत्तम्पलं अपवित्र हो जाता है तो मन्दिर की देवता की भी पुण्याह से शुद्धि करानी है। अगर मन्दिर में अशुद्धि हुई तो शुद्ध होने तक कूत्तु को बन्द कर देना चाहिए।

१५. सन्ध्या के समय कूत्तु बन्द कर मुड़ कर खड़े होना फिर जारी रखना चाहिए।

१६. कूत्तु के लिए दीप जलाकर मिष़ाव ओच्चप्पेटुत्तल् हो जाने पर रंग काट कर अगर कोई जावे तो उसका उचित प्रायश्चित्त करना चाहिए।

१७. कुत्तू शुरु होने पर चाक्यार, नंबियार और नंगियार को कूतम्पलं छोड़ कर जाना मना है। अगर जाना है तो कूत्तु बन्द करके जा सकते हैं।

१८. अगर मिष़ाव की अशुद्धि हुई, तो पुण्याह से उसे शुद्ध करना है।

१९. चाक्यार को उपनयन के पूर्व ही, चाहें तो, यज्ञोपवीत पहनकर कूत्तु चलाने का अधिकार है।

२०. कूत्तु के लिए 'निलविलक्कु' ही चाहिए उसमें घी, तिल का तेल या नारियल का तेल मात्र डालने का विधान है। दूसरा कोई तेल नहीं डालना चाहिए। दीप जलाने पर फिर उसमें तेल डालने, बत्ती उठाने, आदि के लिए नंबियार, चाक्यार या ब्राह्मण लोगों के अलावा और किसी का अधिकार नहीं। अगर कोई दीप रखा हो तो फिर उसे बदल कर उस दिन दूसरा दीप भी नहीं रखा जाना चाहिए।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२१. 'तलयिल्केट्टल्' के बाद किसी कारणवश अगर कूत्तु चला नहीं सकता तो वह रुकावट दूर कर कूत्तु चलाने के बाद ही, चाहे कितने ही दिन बीत जाएँ चाक्यार को मन्दिर छोड़कर बाहर जाना चाहिए।

२२. 'कूत्तम्पलम्' के कलश के लिए 'तलयिल केट्टिरिक्कल्' के लिए अगर चाक्यार नहीं रहा तो उसके स्थान पर कोई ब्राह्मण वह काम कर-सकता है। लेकिन फिर वह ब्राह्मण, ब्राह्मण न रहकर चाक्यार ही बन जाएगा।

वेन्निमला मन्दिर में (कोट्टय जिला)

मकर महीने में रोहिणी तिथि में ध्वजारोहण। उस दिन से कूत्तु शुरु करना है उस दिन सूत्रधारन्-'पुरप्पाट्'। फिर दो दिन सूत्रधार ही। चौथे दिन कूत्तु का निश्चय होगा, प्रधान पुजारी की विधि सुनने के बाद 'कूत्तुपुरप्पाट्' होगा। प्रधान पुजारी की विधि सुनने के बाद 'कूत्तुपुरप्पाट्' करें। दूसरे दिन संवरण का "मुत्तलङ्कम्" पुरप्पाट् है।

दूसरे दिन से 'प्रबन्ध कुत्तू' शुरु होगा। 'उत्र' तिथि में 'विवादु तीर्कल'। 'अत्तम्' के दिन 'चूड़ामणि' के पर्णशालाङ्क में लक्ष्मण का पुरप्पाट्। चित्तिरा में चूडामणि सातवें अंक का श्रीरामन् पुरप्पाट्। स्वाति के दिन दूतवाक्य के श्रीकृष्ण का पुरप्पाट्। विशाखम् के दिन सुभद्राधनञ्जयम् के पहले अंक के दूसरे दिन का कूटियाट्टम्। तृक्केट्टा के दिन स्वप्नवासवदत्ता का 'शेफालिकाङ्कम्'। मूलम् के दिन 'चूडामणि' एड़ामङ्कम् दूसरा कूटियाट्टम। पूराटम् के दिन चूडामणि एड़ामङ्क का विभीषणन् कूटियाट्टम्। उत्राटम के दिन 'स्वप्नवासवदत्तम्' का "स्वप्नाङ्क" कूटियाट्टम्। तिरुवोणम् के दिन दूतवाक्यम् कूटियाट्टम्। अविट्टम के दिन 'धनञ्जयम्' मुतलङ्कम् कूटियाट्टम्। चतयम के दिन अभिषेक नाटक का 'तोरणयुद्धम्' कूटियाट्टम् 'पुरुरुट्टाति' के दिन कल्याण सौगन्धिकम् कूटियाट्टम्। उत्रट्टाति के दिन संवरणं का दूसरा अंक कूटियाट्टम। 'रेवति' के दिन 'दूतघटोत्कच' का घटोत्कचाङ्कम् कूटियाट्टम्। 'अश्वति' के दिन अभिषेक नाटक का 'बालिवधम्' कूटियाट्टम्। भरणि के दिन चूडामणि का 'शूर्पनखाङ्कम्' कूटियाट्टम्। कार्तिका के दिन 'बालचरितम्' का 'मल्लाङ्कम्' कूटियाट्टम्। कुंभ महीने के रोहिणी के दिन बालचरित का सूत्रधारन् (शंखक्षीरवपुः)।

इसके साथ कूत्तु की परिसमाप्ति भी की जाती है। इस मन्दिर में कूत्तु चलाने का अधिकार 'पोतियिल् चाक्यार' वंश वालों को है।

किष्णुवळ्ळूर मन्दिर में—

चिंग (सिंह) महीने के 'तिरुवोणम्' तिथि के अठाईस दिन पहले कूतु शुरु करना है। उस दिन 'बालचरितं' सूत्रधारन् शंखक्षीरवपु का पुरप्पाट् दूसरे दिन रिवाज़ के अनुसार

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मुख्य पुजारी 'कूत्तु' का प्रख्यापन करेगा। प्रख्यापन सुनकर 'तलयिल् केट्टि' 'संवरणम्' कूटियाट्टम् का 'मुतलङ्कम्' पुरप्पाट् है। फिर विधि के अनुसार 'पुनर्वसु' तिथि में उसकी परिसमाप्ति करनी है। 'पूयम्' (पुष्य) तिथि में 'समुद्रतरणाङ्क' में श्रीरामन् का पुरप्पाट्। 'आयिलम्' (आहि) तिथि में प्रतिमानाटक का विच्छिन्नाङ्क कूटियाट्टम् 'मकम्' के दिन 'दूतघटोत्कचाङ्कम्' कूटियाट्टम्। 'पूरम्' के दिन दूतवाक्यं कूटियाट्टम्। उत्रम् के दिन 'चूडामणि' का अशोकवनिकाङ्कम् कूटियाट्टम्। 'चित्तिरा' के दिन 'चित्रफलकाङ्क' कूटियाट्टम्। स्वाती के दिन स्वप्नवासवदत्तम् का शेफालिकाङ्क। 'विशाखम्' के दिन 'एषामङ्क' का 'श्रीरामन् पुरप्पाट्' 'अनिषम' के दिन उसका निर्वहण। तृक्केट्टा के दिन उसका बाकी निर्वहण। 'मूलम्' के दिन चूडामणि एषामङ्कम् कूटियाट्टम्। पूराटम के दिन प्रतिज्ञा यौगन्धरायण के आराट्टङ्क का कूटियाट्टम्। 'उत्राटम्' के दिन बालचरित मल्लाङ्कं कूटियाट्टम् 'तिरुवोणम्' के दिन 'बालचिरत' के सूत्रधारन पुरप्पाट्, इसके साथ उस वर्ष को कूत्तु के परिसमाप्ति होती है। इस मन्दिर के अधिकारी (कूत्तु नृत्य के) 'पोतियिल्' चाक्यार और 'चेतुपरिष' चाक्यार लोग है।

श्रीमन्नाट्यलताप्रफुल्लकुसुमैरामोदसन्दायकै-
रुन्मीलत्भरताक्षिकोणमधुपश्रेणीसमासेवितैः।
शृङ्गारादिमरन्दसुन्दरतरैर्न्नद्धा मयाराधिता
दृश्येयं नवमालिकास्तु कमलावासस्य संप्रीतये।।

अर्थात् सहृदयों के हृदय में आनन्द के सुगन्ध की अनुभूति देने वाले, भरतों (नटों) के उत्फुल्ल नयनों के कटाक्ष-रूपी भौंरों के समूह से सर्वदा समाश्रित तथा शृङ्गार आदि नवरस-रूपी मधुर मधु से युक्त नाट्यरूपी कल्पलता के खिले हुए फूलों की बनी मेरी यह दृश्य-रूपी नवमालिका (दृश्य-प्रतिपादक ग्रन्थ) कमलाधिवास भगवान् ब्रह्मा की प्रीति का साधन बन कर सर्वदा विराजमान रहे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विशिष्ट-पद-सूची

[इस पद-सूची में प्रो. अय्यप्पा पणिक्कर द्वारा सम्पादित और संगीत-नाटक-अकादमी, नई दिल्ली, द्वारा मार्च, १९९५ में प्रकाशित 'सङ्गीत नाटक' के 'कूटियाट्टम्'— विशेषाङ्क में समाविष्ट पद-सूची का आधार लिया गया है। देवनागरी के वर्णानुक्रम के अनुसार क्रम-परिवर्तन किया गया है और अंग्रेजी से हिन्दी में मुक्त अनुवाद किया गया है। कहीं-कहीं अपनी ओर से स्पष्टता के लिए कुछ जोड़ा भी गया है। जो नये पद जोड़े गए हैं उन पर ❀ चिह्न लगा दिया गया है। —सम्पादिका]

अभ्यास (क)— चाक्यार और नांगियार या नंग्यार के लिए दैनिक प्रशिक्षण-क्रम, जो कि तड़के तीन बजे से प्रारम्भ होता है। पहले श्लोक-पाठ, फिर नेत्र-सञ्चालन के व्यायाम, स्थानक, अनुष्ठान, नाट्यप्रयोग इत्यादि इस अभ्यास-क्रम में सम्मिलित रहते हैं। यह सब-कुछ प्रातः ८ बजे तक चलता है। अपराह्ण में 'ग्रन्थ' (पाठ्य) मुखस्थ करना, रात्रि में नेत्र-सञ्चालन का प्रशिक्षण, हाथ-मुख इत्यादि की मुद्राओं के व्यायाम होते हैं।

(ख) नम्बियारों के लिए दैनिक प्रशिक्षण-क्रम मिझाववादन में ताल की जटिलताओं पर केन्द्रित रहता है। अभ्यास भोर में ही शुरू हो जाता है। तीसरे पहर तमिळ के 'ग्रन्थों' की लोकगम्य भाषा में, सामान्य दर्शकों के लाभार्थ प्रस्तुति के साथ वादन होता है। नम्बियार को वेश-विन्यास (कोप्पुपणि) और प्रसाधन (चुट्टुप्पणि) की तैयारी में भी कौशल अर्जित करना होता है।

अम्बरायणम्— आकाश में सञ्चरण, अभिनेता का लाक्षणिक अङ्ग-सञ्चालन, जिस से वायु में या आकाश में सञ्चरण का आभास हो।

आळाम-श्लोक- नांगियार के द्वारा पात्र के गुणों का परिचय जिन श्लोकों के पाठ से और सीधे-सादे रागालाप से दिया जाता है।

आसुर भाव— असुर का स्थानक, जिसमें हाथ छाती पर बँधे हुए और बाँयी टाँग उठी हुई रहती है। यह वीर रस का सूचक है।

इळकियट्टम्— अभिनेता द्वारा शैलीबद्ध अङ्ग-सञ्चालन और नृत्य-गतियों के द्वारा विस्तृत अभिनय। यह सब कुछ अभिनेता की कल्पना के आधार पर होता है, जिसका कोई 'ग्रन्थ'-गत आधार नहीं होता।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उत्तरीयम्— हाथ का बुना सफ़ेद रेशम का कपड़ा, जिसमें कमल के आकार की झालर लगी होती है, जिसे धड़ पर आड़ा-तिरछा पहना जाता है।

उष्णीषम्— कपड़े की पगड़ी, जो सिर पर बाँधी जाती है।

कटकम्— कलाई पर पहने जाने वाले लकड़ी के कड़े या चूड़ी।

कटिसूत्र— कमर के सामने माट्टु (कमर पर पहना जाने वाला ढेर-सारे कपड़े का फुलाया हुआ कटिवस्त्र) पर पहना आभूषण, जिस में लकड़ी के टुकड़े, काँच के टुकड़े तथा धातु की पट्टियाँ डोरी में पिरोई रहती हैं।

कपालम्— शैव पात्रों के हाथ में रहने वाला चाँदी का कटोरा जो खाली खोपड़ी के समान आकार वाला होता है।

कमलपरिवर्तन्तिल-तोझक— विभिन्न दिशाओं में कमल के खुलने के सदृश हस्तमुद्राओं द्वारा प्रेक्षकों को प्रणाम।

कलप्पुरतु-नटक्कुक— रङ्ग के तीन कोनों में टाँगों को घुमाते हुए जाने और आने की सशक्त गति।

कलश-मोळुक्कुक— शुद्धीकरण के अनुष्ठान में अभिनेता के सिर पर पानी उँड़ेलना।

कलि, जाति— मेय्युतट्टु, निर्गीत-चेड़ियप्पु, वलियक्कु इत्यादि नृत्य की विभिन्न गतियाँ और शैलीबद्ध चालें।

कलियम्-वेच्चुतिरियल्— मिझाव के सम्मुख प्रारम्भिक पद-सञ्चालन, एक चरण आगे करके घूम कर एक चरण पीछे जाना।

कळकळवाद्यम्— मिझाव के साथ द्रुत झम्प ताल में, टाँगों को जोड़ कर, रङ्ग के तीन कोनों में विशेष पाद-सञ्चालन।

किरीटम्— मुख्य शिरस्त्राण, जो लकड़ी के ढाँचे का बना होता है, जिस पर पत्थर, धातु की पत्तियाँ और अर्धचन्द्राकार सज्जापरक उभार जड़े रहते हैं।

कुडुम— विदूषक द्वारा पहना जाने वाला विशेष शिरस्त्राण। यह काले कपड़े की बनी टोपी होती हैं, जिस पर लाल और काले कपड़े की पट्टियाँ लगी होती हैं, और केशों के सदृश झालर कन्धे पर लटकी होती है।

कुण्डलम्— कर्ण-भूषण, जिस की आकृति पात्र के अनुसार भिन्न-भिन्न होती है। जैसे कि १. वीर पात्र लकड़ी के बड़े कुण्डल पहनता है, जो कि नारियल के खप्पर जैसे दिखते हैं और जिन पर चमकीले पत्तरे और अभ्रक के चमकीले टुकड़े जड़े रहते हैं। २. मन्त्राङ्क में वसन्तक 'पल' लकड़ी के अण्डाकार कुण्डल पहनता है। ३. हनुमान्

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रुई से बने गेंद-सदृश कर्णभूषण पहनता है। ४. मन्त्राङ्क में पागल आदमी के कुण्डल ताड़ के पत्ते से बने होते हैं, जिन में लाल और काले कपड़े को टुकड़े लिपटे रहते हैं। ५. मत्तविलास में कपाली अथवा यायावर गेंद जैसे लाल फूल कानों में पहनता है। ६. शूर्पणखा ताड़ के पत्ते की तीलियों और पत्तों से बने बाली जैसे आभूषण कानों में पहनती है, जिसमें लाल और काले कपड़े लिपटे होते हैं।

कुन्तनाट्टम्— दोनों टाँगों के बीच लकड़ी फँसा कर रङ्ग (मञ्च) की तीन दिशाओं में कूदने की तालबद्ध गति।

कुप्पायम् कुप्पायम्— वीर पात्रों द्वारा धड़ को ढकने का वस्त्र, जो काले और लाल कपड़े का सिला होता है, पीछे से खुला होता है। हनुमान् के लिए इस वस्त्र पर रुई चिपकाई रहती है, जिससे लोमों का आभास हो।

कूट्टु— स्त्री-पात्रों का शिरस्त्राण जो लाल रेशम का बना होता है, और अर्धगोलाकार होता है, माथे पर नाग-फण बना होता है, और सज्जापरक मोती चारों ओर लगे रहते हैं।

कूत्तू— चाक्यार के द्वारा पौराणिक आख्यानों का लोकप्रिय वर्णन, जिसमें अनेक प्रकार की उपकथाएँ जुड़ी रहती हैं और समसामयिक पात्रों तथा परिस्थितियों पर करारा व्यङ्ग्य रहता है।

कुत्तू-मुतिक्कुक— रात भर के नाट्य-प्रयोग का उपसंहार, अभिनेता प्रेक्षकों के सम्मुख विदाई लेने जाता है, रङ्ग के फ़र्श को छूता है और मिझाव की दाहिनी ओर आहार्य कक्ष की ओर निष्क्रमण करता है। (प्रवेश मिझाव की बाईं ओर से होता है।

केट्टदुक— शब्दार्थ 'सुनो और करो'। नाट्यगत एक तकनीक, जिसमें एक अभिनेता दूसरे के शब्दों को सुनकर स्वयं उस पर अभिनय करता है। "क्या आप ने ऐसा कहा?" इस आशय की मुद्रा से इसका उपसंहार होता है। वेशभूषा के परिवर्तन के बिना एक ही अभिनेता द्वारा अनेक भूमिकाओं और भावों का स्वयं ही निरूपण करने में अभिनेता की बहुमुखी प्रतिभा का परीक्षण इस तकनीक में हो जाता है।

केशभारम्, पीडिप्पु के साथ— देखें केशभारम्, उसी में और भी सूक्ष्मतायें बाली के पात्र के लिए जुड़ती हैं।

केशभारम्— शिरस्त्राण की समष्टि का अङ्ग; जो कि बारह इंच चौड़ा, गोलाकार, छोटी शलाकाओं से बना होता है, मध्य भाग में थोड़ा गहरा एक वृत्त होता है, उसे काले कपड़े से लपेट कर उस पर रुई और तेच्चि फूलों की मालायें बाँधी जाती हैं। इसे किरीट के पीछे रखकर दोनों को परस्पर जोड़ कर सिर के पिछले भाग पर लगाया जाता है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

केशादिपादम्— हस्त-मुद्राओं, मुखज अभिनय और नेत्र-सञ्चालन के द्वारा नायक-नायिका का सिर से पैर तक कां वर्णन। हिन्दी-काव्य में यह 'नख-शिख'-वर्णन के नाम से प्रसिद्ध है। कुटियाट्टम् में इसका बहुधा प्रयोग होता है क्योंकि 'नाट्यधर्मी' और 'लोकधर्मी' के उचित सम्मिश्रण से यह लोकप्रिय होता है।

कोळलु— माथे पर पहनने का वलय जो काले कपड़े से ढका होता है, इस के साथ एक और कपड़ा जुड़ा रहता है जो माथे पर बाँधा जाता है।

कोप्पनियुक्कुक— कूटियाट्टम् का एक लोकप्रिय अङ्ग, जिसमें दासियाँ नायिका का शृङ्गार करती हैं। इस की विभिन्न क्रियाएँ— जैसे कि बाल काढ़ना, चन्दन-लेप और काजल लगाना, विविध आभूषणों से सज्जित करना इत्यादि— लोकधर्मी रीति से की जाती हैं।

कौपीनम्— तह किये हुए कपड़े की पट्टियाँ, जिन्हें कमर पर पहना जाता है और घुटनों तक लटकती हैं।

गदा— लकड़ी की गदा, जिसपर पिसे चावल का घोल पुता रहता है।

गोष्ठिकोट्टुक— प्रयोग के आरम्भ का सूचक मिझाव-वादन। इसके साथ नांगियार का मँजीरा-वादन और श्लोकपाठ चलता है।

ग्रन्थ— प्रयोग का आधारभूत पाठ्य (श्लोक या गद्यांश)।

चारी— नाट्यशास्त्र से लेकर पूरी शास्त्र-परम्परा में कटि के नीचे के (पैर तक के) अङ्गों की स्थिति गति का पारिभाषिक नाम। ये अभिनेता की विशेष गतियाँ हैं, जिनमें सशक्त चरणों का उपयोग होता है, जिनका चरित्र-निरूपण में भी प्रभाव रहता है। यह त्रिपुट ताल में द्रुत गति में मिझाव के साथ की जाती है।

चिल्लम्पू— चाँदी के घुँघरुओं वाली पायल जो नाचते समय बजती है।

चुण्टप्पुवु— 'चुण्ट'-फूल का सूखा गर्भकेसर जिसे अभिनेता की आँखें लाल करने के लिए लगाया जाता है, ताकि नेत्र-सञ्चालन का सौन्दर्य बढ़ जाय।

चुट्टित्तुणि— माथे (भाल) पर पहनने का लाल फीता। इस पर सफ़ेद रेखायें खिंची या सिली रहती हैं, कुछ पात्रों के लिए दो रेखायें और कुछ के लिए तीन रेखायें होती हैं। तीन रेखाओं वाली चुट्टित्तुणि के बीचोबीच एक फूल भी होता है।

चुण्टप्पोटि/चुण्डिळपोडि— शब्दार्थ— ओठों में लगाने का चूर्ण। हल्दी और चूने का मिश्रित चूर्ण जिसका रंग गहरा लाल होता है और ओठों में लगाया जाता है।

चूर्णि— गद्य के 'पद्य' जिनका पात्रों द्वारा अल्प प्रयोग होता है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चेविप्पूवु— लकड़ी का बना पुष्पाकृति कर्ण-भूषण, जिसमें चमकीले पत्थर (नग), धातु की पत्तियाँ आदि का जड़ाव होता है।

चोल्लियाट्टु— शब्दार्थ 'ग्रन्थ' का पाठ और अभिनय अभिनेता स्वयं श्लोकपाठ करता है और उसके अर्थ का अभिनय करता है। इस के विपरीत निर्वहण में पहले अभिनय करता है और बाद में नांगियारम्मा उन श्लोकों का पाठ करती है जिन का अभिनय हो चुका होता है।

चोप्पुतुणि/चुवप्पुतुणि— शब्दार्थ लाल कपड़ा। सूत या रेशम के कपड़े की दो पतली पट्टियाँ, जिन्हें दोनों सिरों पर एक-एक डोरी रखकर एक साथ सी दिया जाता है। इनमें बीच में लाल पट्टी रहती है, इसे अभिनेता सिर पर बाँधता है।

चोल्लण्टिनटक्कुक— चलने की एक शैलीबद्ध रीति।

छन्नवुरम्— छाती पर पीठ की ओर बाँधा जाने वाला आभूषणात्मक कवच, जो चालीस के ऊपर लकड़ी के टुकड़ों का बना होता है, जो ढीले-ढाले ढंग से गुँथे रहते हैं और जिनमें नगों आदि की जड़ाई रहती है।

तलयिल केट्टुक— शब्दार्थ, सिर पर बाँधना। यह अभिनेता के आहार्य-प्रारम्भ का प्रथम आनुष्ठानिक कृत्य है। मुख्य मन्दिर और प्रयोगस्थल पर विस्तृत प्रार्थना और अनुष्ठानों के बाद अभिनेता अपने सिर पर लाल कपड़ा बाँध लेता है। यह नाट्य-प्रक्रिया का प्रथम चरण है। इसके बाद किसी भी कारण से अभिनेता उस स्थल से बाहर नहीं जा सकता। यहाँ से आहार्य-प्रक्रिया चालू हो जाती है, जिसके बाद पूर्वरङ्ग और फिर रङ्ग पर प्रस्तुति चलने लगती है।

तटि— विभिन्न प्रकार की दाढ़ियाँ, जो कि बाली, सुग्रीव जैसे पात्रों के अनुसार 'टेच्चि' फूल या रुई के रेशों की बनी होती हैं।

तमिळ-कूत्तु— नम्बियार अथवा सूत्रधार के द्वारा भारी भरकम मूल 'ग्रन्थ' की लोकगम्य भाषा में व्याख्या।

ताल— काल को मापने का साधन। यथा— ध्रुवताल-१४ मात्रा, एकताल-१ मात्रा, त्रिपुट-७ मात्रा, अटन्त-१४ मात्रा, चेम्पट-८ मात्रा, झम्प-१० मात्रा,

तालक-कूत्तम्— काँसे के छोटे मँजीरों की जोड़ी। नांगियारम्मा श्लोक-पाठ करते समय ताल रखने के लिए उपयोग में लेती है।

तुङ्ङुमाला— सफेद और लाल फूलों की माला, जो गले में पहनी जाती है।

तोळवळा—कन्धों के नीचे भुजा पर पहनने का लकड़ी का सुसज्जित बाजूबन्द।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दंष्ट्रम्— कुछ (राक्षस) पात्रों द्वारा धारण किये जाने वाले शंख के बने दो बड़े दाँत, जिन्हें ऊपर के ओठ के नीचे दबा लिया जाता है। ये दोनों दाँत बाहर निकले दिखते हैं।

धीरललित— नायक के चार शास्त्रोक्त प्रकारों में से एक। यहाँ ऐसा सामान्य पात्र अभिप्रेत है जो अच्छे स्वभाव का, उदार और ओजःपूर्ण है।

धीरप्रशान्त— नायक के चार शास्त्रोक्त प्रकारों में से एक। ध्यानरत पात्र, जो शान्तरस फैलाता है।

धीरोदात्त— नायक-प्रकार। वीररस प्रधान नायक

धीरोद्धत— नायक-प्रकार। यह क्रोधभाव से भरा होता है।

धूसरम्— तीन इंच चौड़ी, एक गज़ लम्बी, लपेटी हुई, सफ़ेद कपड़े की पट्टी।

नखम्— रुपहले नाखून, जो कि (राक्षस पात्रों द्वारा) उंगलियों पर पहने जाते हैं। इन में छल्ले लगे होते हैं।

नांगियारम्मा— (१) स्त्री पात्रों का अभिनय करने वाली अभिनेत्री, (२) प्रयोग के समय मंजीरा बजाकर ताल रखने वाली, (३) श्लोकपाठ करने वाली महिला। प्रयोग के पूरे समय तक इसे रङ्ग पर रहना होता है। लम्बे प्रयोगों के लिए एक से अधिक नांगियारम्मा की आवश्यकता होती है।

नायिका-भाव— नायिका की मुद्रा या स्थानक। इसमें 'पोयनखम्' के दोनों छोर तथा उत्तरीय का एक छोर मिला कर नाभि पर पकड़ कर लज्जा का अभिनय किया जाता है, सिर थोड़ा सा बाँयी ओर झुका रहता है।

नित्यक्रिया— कुछ ऐसी नृत्य गतियाँ, जो कि प्रायः सभी प्रयोगों में आती हैं।

निणम्— हल्दी-चूना और पिसे चावल का घोल जिसे शूर्पणखा तब लगाती है जब उसके नाक-कान कट जाते हैं।

निर्वहणम्— शब्दार्थ, प्रयोग का निष्पादन। यह कूटियाट्टम् की एक असाधारण प्रक्रिया है, जिसमें एक ही पात्र भूतकाल की अनेक घटनाओं का अभिनय करता है। कभी-कभी यह कई दिन तक चलता है। जैसे कि आश्चर्य-चूडामणि के अङ्गुलीयकाङ्क में हनुमान्।

पञ्चाङ्गम्— एक जाना-पहचाना कथाक्रम, जिसमें शरीर के पाँच अङ्गों का वर्णन होता है। ये पाँच अङ्ग हैं— केश, नेत्र, मुख, स्तन अथवा पुरुषों का वक्षः स्थल, पैर। इस विषय में 'केशादिपादम्' भी देखें।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पटपुरप्पाटु— बहुधा प्रस्तुत होने वाला प्रयोग, जिसमें भावी युद्ध की तैयारी रहती है। इस में वीरत्व के प्रदर्शन में विभिन्न शस्त्रास्त्रों को गर्व से प्रदर्शित किया जाता है और विजय का विश्वास दिखाया जाता है।

पणक्केट्टु/फणक्कूडु— टोप, शिरस्त्राण का एक भाग जो काले कपड़े और मोरपंख से बना होता है।

पन्तम्— मशाल। लम्बी गोल लकड़ी या छोटे डण्डे के सिरे पर तेल में भींगा कपड़ा लिपटा रहता है, जिसे प्रकाश के लिए जलाया जाता है।

परिक्रमम्— पद-क्रम का एक शैलीबद्ध रूप जो द्रुत त्रिपुट ताल के साथ प्रयुक्त होता है।

पालिका— चाँदी की गोल तश्तरी।

पिञ्छोरा— स्त्रियों के वेष-विन्यास का अङ्ग जो लाल और काले कपड़े की पाँच या छह पट्टियों का बना होता है। इन्हें तह कर के एक सिरा बाँध दिया जाता है। इसे कमर के पहनावे के ऊपर बाँधा जाता है।

पिरिशङ्खिन् माला— माथे पर लपेटा हुआ आभूषण, जिस में 'पलै' नामक लकड़ी के ग्यारह शङ्खाकृति टुकड़े लगे रहते हैं।

पिलिप्पट्टम्— माथे का एक अलङ्करण, जिसमें एक मोटी रस्सी पर काला कपड़ा लिपटा रहता है, और मोर पंखों की डण्डियों की तीन कतार सिली रहती हैं।

पूवु— कत्ति असुर जैसे वेषों में माथे या नाक पर चिपकाया हुआ चावल के आटे का गोला।

पेटरि— रंगे हुए रेशे के बने बनावटी बाल।

पोळुंगु— अर्धचन्द्राकार लकड़ी का टुकड़ा, जिसमें पत्थर और धातु के टुकड़े जड़े रहते हैं। इसे गर्दन पर पहना जाता है।

पोयूनखम्/पोय्तकम्— कमर पर सामने की ओर लटकाये जाने वाले दो कपड़े के लम्बे टुकड़े।

भोव्क्कण्डम्— कन्धे पर डाली जाने वाली कपड़े की पोटली, जिसमें राख बँधी होती है, जिसे हल्दी-चूने के घोल से रंग दिया जाता है। इस पर शङ्ख-चक्र की आकृति और चारों ओर सात बिन्दियाँ आंकी जाती हैं।

मरयिल्, मरयिल् क्रिया— पर्दे के पीछे की क्रियाएँ, (नृत्य की गतियाँ) जो कि मिश़ाव के साथ होती हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मयिलमुति— जाम्बवान् द्वारा पहना जाने वाला मोर-मुकुट।

मयिलात्तम्— पंख फैलाये हुए मोर की भाँति अर्धचन्द्राकार में नाचना।

मात्तु/माट्टु— बारह गज सफ़ेद कपड़े को झाग की तरह दिखने वाले चुन्नटों में समेट कर कमर पर प्रमुख पात्र पहनते हैं।

मारमाला— 'तेच्चि' फूलों की माला, जिसे गले में पहनते हैं, कमर तक लटकती है।

मिड़ावणा— मिड़ाव को टिकाने और वादक के बैठने का लकड़ी का चौखटा।

मिड़ावु— रङ्ग पर अभिनेता की संगत करने वाला प्रमुख अवनद्ध वाद्य। यह बड़ा-सा लम्बा-गोल खोखला ताँबे का घड़ा होता है, जिस के सँकड़े मुँह पर चमड़ा कस कर बाँधा जाता है। इस वाद्य की ध्वनि के असाधारण गुण हैं। इस वाद्य को बहुत सम्मान दिया जाता है, इसे ब्रह्मचारी ब्राह्मण विद्वान् के सदृश माना जाता है।

मिड़ावोच्चपेट्टुत्तुक— नंबियार (मिड़ाव वादक) आनुष्ठानिक रीति से रङ्ग पर प्रवेश करता है, कुछ संक्षिप्त आनुष्ठानिक कृत्य एवं मङ्गलकामना मिड़ाव के प्रति करता है, तब बजाने के आसन पर बैठ जाता है। मिड़ाव पर विभिन्न ताल-रूपों की शृङ्खला बजाता है, और इस प्रकार रङ्ग-मञ्च पर प्रयोग की स्पष्ट घोषणा करता है।

मुद्रा या हस्तमुद्रा— हस्तलक्षण-दीपिका जैसे पुराने ग्रन्थों में वर्णित अभिनय की वर्णमाला, जो कि भारतीय नाट्य का वैशिष्ट्य है। ये आधारभूत प्रमुख मुद्रायें चौबीस बताई गयी हैं।

मुतियक्किकत— प्रयोग का आनुष्ठानिक उपसंहार, जो कि नाटक के एक अङ्क की समाप्ति पर किया जाता है। चाक्यार अपना शिरस्त्राण उतार कर आनुष्ठानिक स्नान करता है, पवित्र जल से प्रोक्षण करता है, इत्यादि।

मूटिचोल्लुक— कुछ पात्र किसी भी आहार्य-विधान के बिना, मुँह और शरीर को रेशम के कपड़े से ढँक कर, कथा के विकास, अभिनय के निर्देश इत्यादि को कहते हैं।

यवनिका— रङ्गमञ्च के परिजनों द्वारा पात्रों के प्रवेश के समय पकड़ा जाने वाला लाल पर्दा।

रङ्गम्— नाट्य-अभिनय की प्रस्तुति का स्थल (रङ्गमञ्च)। इस पर परम्परागत रीति से सज्जा-व्यवस्था रहती है। तदनुसार सामने बीचोबीच एक बड़ा प्रदीप रखा जाता है, जिसमें त्रेताग्नि की प्रतीक तीन बत्तियाँ रहती हैं। मिड़ाव और उसके वादक नंबियार पीछे रहते हैं। नांगियारम्मा दाहिनी ओर मँजीरा ले कर बैठती है और 'पीठम्'

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अर्थात् ऊँचा काष्ठासन दीपक की बाँयी ओर रहता है। रङ्ग की सज्जा में फल, ताड़ की कोमल फलाङ्कुरों वाली टहनी, हल्दी कुमकुम, नारियल, केला, गुड़, धूप, पान के पत्ते, सुपारी इत्यादि माङ्गलिक द्रव्य भी एक साथ रखे जाते हैं।

रत्नपट्टम्— एक आभूषण, जो कि धागे में पिरोए गये 'टेच्चि' फूलों की लड़ी का बना होता है। वह लड़ी नारियल के पत्ते की नस पर टँकी होती है।

राक्षसीभाव— राक्षसी का विचित्र चीख सहित अभिनय। विशिष्ट प्रभाव उत्पन्न करने के लिए बाहुओं के अग्रभाग को परस्पर गूँथते हुए सर्पाकृति में चलाया जाता है। यह क्रिया अत्यन्त व्यञ्जक होती है। यह नाट्यधर्मी शैलीबद्धता का उदाहरण है।

वल्कलम्— वृक्षों की छाल के बने (या उस रंग के) वस्त्र।

वळा/वका— हाथ में कड़े या चूड़ी की भाँति पहनने के आभूषण, जो धातु या 'पलई' लकड़ी के बने होते हैं और धातु से मढ़े होते हैं।

वाल्— (१) 'पलइ' लकड़ी या लोहे की बनी तलवार।

(२) हनुमान् की पूँछ, जो ताड़ के पत्ते और रुई की बनी होती है। कपड़े में लिपटी होती है।

वासिकम्— राम, लक्ष्मण जैसे पात्रों द्वारा पहना जाने वाला सिर का आभूषण (मुकुट) जो अर्धचन्द्राकार में लकड़ी का बना होता है। इस पर धातु के पतरे और चमकीले नग जड़े होते हैं।

वास्तुबलि— रङ्गशाला का निर्माण पूरा होने पर किया जाने वाला अनुष्ठान, जो कि अपदेवताओं, अनिष्ट-ग्रहों आदि की शान्ति के लिए होता है।

विदूषक-भाव— विदूषक के द्वारा आमोद-प्रमोद फैलाने वाली मुद्रायें, ओठों को फुलाना, मुख के अन्दर हास्यकारक रीति से जीभ चलाना, नायक के हाथ पर थपकी देना आदि।

विलक्कुक— हाथ अथवा घुटने से मिझाववादक को रुकने का सङ्केत देना।

संक्षेपमाट्टुक— अभिनेता द्वारा आरम्भ में ही किसी प्रसङ्ग का पूर्वाभास दिया जाना। 'सभानिरीक्षणम्' एवं 'कमलपरिवर्तनम्' के बाद 'संक्षेप' का बहुत महत्त्व होता है। इसका बहुत नाटकीय प्रभाव होता है।

सखीभाव— सखी, दासी अथवा वेश्या का अभिनय जिसमें सिर झुकाकर दृष्टि नायिका पर टिकी होती है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सभानिरीक्षणम्— अभिनेता द्वारा प्रेक्षकों का निरीक्षण करने के लिए और उनका मनोभाव जानने के लिए किया गया विशिष्ट नेत्र-सञ्चालन।

सूलम्— अष्टभुजाकार 'पलई' लकड़ी का टुकड़ा, जिस के एक छोर पर त्रिकोणाकार प्रक्षेपण होते हैं और बीच में कुल्हाड़ी के आकार का लकड़ी का टुकड़ा जड़ा होता है।

स्त्रीग्रन्थ— स्त्री पात्रों द्वारा बोलने के लिए बनी शब्द-रचना।

स्वर (राग)— इस शब्द को राग को पर्याय के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। इसमें स्वरों का विस्तार बहुत कम होता है। प्रायः तीन स्वरों तक ही यह मर्यादित, रहता है— उदात्त,अनुदात्त, स्वरित (ऋग्वेद के पाठ के सदृश)। इसके प्रकार निम्नलिखित हैं— मुड्डन, श्रीकण्ठी, थोण्डु, अर्तन्, इन्दळम्, मुरळीन्दळम्, वेळाधूलि, दलम्, वीरतर्कन्, तर्कन्, कोरक्कुरुञ्चि, पौराली, पुरुनीरु, दुःखगान्धार, चेटीपञ्चमम्, श्रीकामरम्, कौशिकी, घट्टन्तरि इत्यादि।

'राग' शब्द का भी यहाँ विशिष्ट अर्थ में प्रयोग होता है, अर्थात् वह केवल स्वरसन्निवेश नहीं; कभी-कभी वह काकु का सूचक भी होता है— जैसे कि दुःखगान्धार। आलाप-सदृश स्वतन्त्र स्वर-विस्तार का उस में कोई स्थान नहीं है।

प्रस्तुत ग्रन्थ में प्रारम्भ में ही संज्ञा-प्रकरण एवं परिभाषा-प्रकरण के अन्तर्गत प्रायः सभी विशिष्ट शब्दों का सविवरण उल्लेख है, अनेक शब्द ऐसे भी हैं जिनका इस पद-सूची में समावेश नहीं है, एवं इस सूची के शब्दार्थों का भी अधिक विवरण उन प्रकरणों में प्राप्य है। अतः पाठकों से निवेदन है कि शब्द-अर्थ के लिए उक्त प्रकरणों को अवश्य देख लें।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi